नेपाली

भानुभक्त रामायण

(मूलपाठ सहित हिन्दी अनुवाद)

नेपाली काव्य के अमर रचयिता

श्री भानुभक्त

स्व. विनोद चन्द्र पाण्डे स्मा
की स्मृति में उत्तराधिकारी से
अकादमी जयपुर
भेंट स्वरूप प्राप्त।

अनुवादक

श्री नन्दकुमार आमात्य

सुश्री तपेश्वरी आमात्य

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

वर्तमान पता:— मौसम बाग़ (सीतापुर रोड), लखनऊ—२२६०२०

'प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ॥'

प्रथम संस्करण— १९७६ ई०

पृष्ठसंख्या— १८×२२÷८=३४४

मूल्य— ३०·०० रुपया

मुद्रक

वाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चोपटियां रोड, लखनऊ—२२६००३

ग्रन्थ - विमोचन

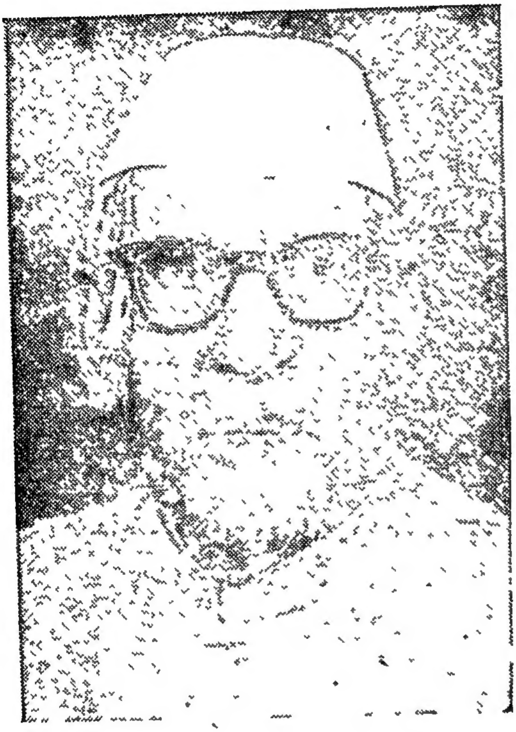

कर्नाटक प्रदेश के महामहिम राज्यपाल
श्री पं० उमाशंकर दीक्षित के
कर-कमलों द्वारा।

स्व. विनोद चन्द्र पाण्डे सा
की स्मृति में उत्तराधिकारी से
प्राकृत भारती अकादमी जयपुर
... पुस्तकालय को भेंट स्वरूप प्राप्त।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
ग्रन्थ-विमोचन—महामहिम राज्यपाल श्री उमाशंकर दीक्षित	३
विषयसूची	४
माल्यार्पण डॉ० राजेन्द्रकुमारी बाजपेयी	५
समर्पण	६
भारत-नेपाल मैत्री युग-युग सम्म अमर रहोस्	७
उपहार	८
प्रकाशकीय	९-१६
आमुख—अनुवाद	१७
ग्रन्थारम्भ एवं 'श्रीरामपञ्चायतन' का चित्र	१८
बालकाण्ड	१९
अयोध्याकाण्ड	५४
अरण्यकाण्ड	८४
किष्किन्धाकाण्ड	११२
सुन्दरकाण्ड	१४७
युद्धकाण्ड	१८५
उत्तरकाण्ड	२८१

परमविदुषी डॉ० राजेन्द्रकुमारी वाजपेयी

को

माल्यार्पण

भानुभक्त रामायण

भानुभक्त विरचित

:—:*:—:* नेपाली काव्य *:—:*:—:

माननीया स्वायत्तशासन मंत्री, उत्तरप्रदेश, परमविदुषी डॉ० राजेन्द्रकुमारी वाजपेयी को भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ की ओर से, अपने अद्वितीय भाषाई-सेतुबन्ध में नवीन शिलार्पण स्वरूप 'नेपाली' का यह अनुपम ग्रन्थ 'भानुभक्त रामायण' सादर माल्यार्पित।

२९ जून, १९७६
रथयात्रा दिवस

प्रतिष्ठाता—भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

अर्पण

श्री भानुभक्त !

संस्कृत भाषा में ही परिसीमित पुष्कल रामचरित्र को, विभिन्न भाषाई अञ्चलों के अन्य रामायण-रचयिताओं की भाँति, आपने भी जनभाषा में प्रस्तुत करके, सामान्य जनता के प्रति अनन्य उपकार किया है।

हे नेपाल के तुलसी !

आपके अनुपम काव्य का मूल नेपाली पाठ सहित यह हिन्दी अनुवाद 'भानुभक्त रामायण' आपही को सादर समर्पित है।

नन्दकुमार अवस्थी
मुख्यन्यासी सभापति
भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

भारत-नेपाल मैत्री

युग-युग सम्म अमर रहोस्

श्री ५ महाराजाधिराज वीरेन्द्र विक्रम
शाहदेव, नेपाल को भारत की
ओर से सस्नेह उपहार।

उपहार

....

....

....

....

प्रस्तावना

वाणी, भाषा और लिपि.

मन के भावों और उद्गारों को मुख से प्रकट करना, यही वाणी है। पशु, पक्षी अथवा मनुष्यों में जब कोई वर्ग, एक प्रकार की वाणी बोलता है, उस बोली से परस्पर भावों को कहता, सुनता और समझता है, तब वाणी के उस 'प्रकार' को उस विशिष्ट-वर्ग की भाषा की संज्ञा दी जाती है। और उसी भाषा को जब चिह्नों-आकृतियों में लिखकर प्रकट किया जाता है, तब उन्हीं चिह्नों और आकृतियों को उस भाषा-विशेष की लिपि कहा जाता है।

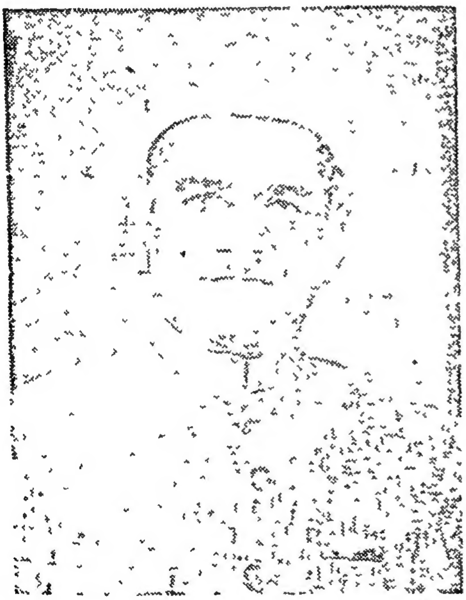

कुछ विद्वानों के मत से धरातल पर पृथक्-पृथक् भूखण्डों में विभिन्न समयों पर मानवों की सृष्टि और विकास होता रहा है। वे सब एक ही स्थान पर एक ही मानव से उत्पन्न नहीं हैं। फलतः उन सब की भाषाएँ भी एक दूसरे से बिलकुल पृथक् और स्वतंत्र हैं। इन पृथक् कुलों को ये विद्वान् आर्य, मंगोल, सेमेटिक, हेमेटिक, द्रविड आदि की संज्ञा देते हैं।

किन्तु भारतीय मत की घोषणा इसके विपरीत है, और इस्लामी तथा ख्रीष्ट मान्यता भी उसका अनुमोदन करती है। इस मत के अनुसार सारी मानव जाति एक ही मूल पुरुष मनु अथवा आदम की सन्तान होकर मानव अथवा आदमी कहलायी। कालान्तर में विभिन्न भूखण्डों में फैलने, एक दूसरे से अलग-थलग होने, और वहाँ की विशिष्ट जलवायु और संस्कारों से प्रभावित होने के फलस्वरूप वह मानव जाति अनेक रूप, रंग, आकार और बोलियों में विभक्त होती गयी। यह परिवर्तन लाखों वर्षों से चलते आ रहे हैं और इसलिए उन मानव-समूहों के रूप, रंग, आकार और बोलियों के अन्तर भी इतने जटिल हो गये हैं कि ज्ञान की उपेक्षा करनेवाले और केवल तर्क,

अनुमान, प्रयोग, अनुसंधान आदि भौतिक साधनों को ही ज्ञान मानकर उन पर निर्भर रहनेवाले पाश्चात्य विद्वानों तथा उनके अनुवर्ती भारतीयों का भ्रमित हो जाना स्वाभाविक ही है। यह बात इनसे ओझल हो जाती है कि कितना भी बड़ा वैषम्य इन जातियों के लक्षणों में दिखाई देता हो, उनकी आकृतियों और भाषाओं में कुछ ऐसे तथ्य लाखों वर्ष बाद भी झलकते हैं जो सारी मानव जाति को किसी पुरातन काल में एक मूल मानव का पितृत्व प्रदान करते हैं।

भारतीय वाङ्मय के सृष्टिक्रम-सम्बन्धी विशाल-ज्ञानकोश को विस्तार-भय से किनारे भी रख दें, तो भी जन-साधारण की समझ में आनेवाली कुछ बातें तो हमारे मत की पुष्टि करती ही हैं। उदाहरण के लिए— (१) द्रविडकुल की भाषाएँ आर्यकुल की भाषाओं से पाश्चात्य मत में मूलतः पृथक् मानी गयी हैं। किन्तु संस्कृत की वर्णाक्षरी, उनका वर्गीकरण तथा लिपि का बायें से दाहिने लिखा जाना दोनों कुलों में समान ही है। इसके विपरीत, आर्यकुल की फ़ारसी जैसी अनेक भाषाओं का खरोष्टी लिपि में (दायें से बाये) लिखा जाना और वर्णो की संख्या, क्रम, वर्गीकरण आदि में बड़ा अन्तर है। (२) अरबी और संस्कृत की शब्दावली और लिपि में नाममात्र को भी मेल नहीं है, किन्तु उनकी व्याकरण में बड़ी समानता है, जबकि संस्कृत का अपने आर्यकुल ही की अन्य भाषाओं के व्याकरण से साम्य नगण्य सा है। (३) उत्तर-पश्चिम में सुदूरस्थ ईरान की अवेस्ता और गाथाओं की भाषा में असुर का अहुर उच्चारण है। बीच के पूरे आर्यावर्त्त में इसका अभाव होने के बाद उत्तर-पूर्व में असम प्रदेश में फिर दस को दह और गोसाईं को गोहाईं बोलते हैं। (४) नेपाल के आदिम निवासी तथाकथित आर्यकुल के रूप, आकृति से सर्वथा भिन्न हैं। किन्तु वहाँ कुछ ही समय से आबाद आर्यकुल के राज-परिवार तथा राना-परिवार की आकृतियों पर नेपाली प्रभाव प्रत्यक्ष है; आदि, आदि।

भारतीय भाषाएँ

अस्तु, जब मानव मात्र एक मनु (आदम) की सन्तान हैं और आज पृथ्वी पर उपलब्ध विविध भाषाओं और बोलियों का आदि-स्रोत एक है, तब भारत के निवासियों और भारतीय भाषाओं को मूलतः पृथक् मानना, उनका बुनियादी वर्गीकरण करना कहाँ तक समुचित है? जहाँ तक हिन्दी, गुरुमुखी, सिन्धी, राजस्थानी, ओड़िया, बंगला, असमिया, गुजराती, मराठी, कश्मीरी, मैथिली, नेपाली, सिंहली आदि भाषाओं, लिपियों अथवा बोलियों का सम्बन्ध है इन सब की वर्णमाला, शब्दावली, व्याकरण आदि में इतना अधिक साम्य है कि उनको एक परिवार से बाहर समझने

की रत्ती भर गुंजाइश नहीं। ये सभी प्राचीन संस्कृत की पौत्री और भारतीय जनपदो में शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री आदि प्राकृत अथवा उनके अपभ्रंशों की पुत्रियाँ हैं।

उर्दू को तो हिन्दी से पृथक् मानना ही भूल है। उसका तो हिन्दी से वही सम्बन्ध है जो एक रूह का दो क़ालिब से—एक प्राण का दो शरीर से। अरबी लिपि में लिखी जाने अथवा अरबी-फ़ारसी भाषाओं के शब्दों के अधिक समाविष्ट हो जाने से उसे ग़ैर भाषा समझना भूल है। कदाचित् लोगों को कम पता है कि नगरों में नहीं, ग्रामों तक में नित्य बोली जानेवाली और हिन्दी कही जानेवाली भाषा में एक तिहाई से अधिक शब्द अरबी, फ़ारसी, तुर्की आदि के बार-बार बोले जाते हैं। उनमें ऐसे भी अरबी शब्दों की भरमार है जिनको लोग ठेठ हिन्दी की सम्पत्ति समझने लगे हैं, उनके अरबी-फ़ारसी होने की कल्पना भी नहीं करते। जैसे हलुआ, साइत (मुहूर्त्त), मेहरिया, हमेल, तरह, अन्दर, अगर, अचार, अजगर, अतलस, अबीर, अमीर, गरीब, अरक, मेवा, मल्लाह, मसखरा, मक्कर, लाला, लहास, स्याही, संदूक, रुमाल आदि।

अलबत्ता भारत की दक्षिणी भाषाओं—मलयाळम, तेलुगु, कन्नड और तमिळ—का शेष भारतीय भाषाओं और लिपियों से भेद अधिक दूर का है। किन्तु उनके अक्षरों का वर्गीकरण देवनागरी वर्णमाला के समान है। इसके अलावा संस्कृत के शब्द तत्सम और तद्भव रूप में इतने अधिक दक्षिणी भाषाओं में घुलमिल गये हैं कि उनका अन्य भारतीय भाषाओं से तादात्म्य प्रत्यक्ष है, भले ही कलेवर पृथक् दिखाई दे।

उद्देश्य

उपर्युक्त भाषाई पहलुओं के अलावा, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक दृष्टि से भी सारा देश परस्पर ऐसा गुथ गया है कि उसमें एकात्म-भाव के सर्वत्र दर्शन होते हैं। उसके प्रभाव की छाप सभी भाषाओं के साहित्य पर मौजूद है। इसलिए अपने-अपने क्षेत्र में विभिन्न लिपियों के फलते-फूलते रहने के बावजूद, यह जरूरी है कि राष्ट्र में सबसे अधिक सुपरिचित और व्याप्त देवनागरी लिपि के माध्यम से प्रत्येक क्षेत्रीय भाषा और साहित्य को भारत के कोने-कोने तक पहुँचाया जाय। भारत भूमि के हर कोने में प्रस्फुटित वाङ्मय को हर भारतवासी तक पहुँचाया जाय। लिपि और भाषा के सेतुकरण द्वारा सारे राष्ट्र का एकीकरण—यही 'भुवन वाणी ट्रस्ट' का उद्देश्य है।

उद्देश्य-पूर्ति का माध्यम देवनागरी लिपि

आसेतु हिमालय, सारे देश के साहित्य, संस्कृति, आचार-विचार और सन्तों की वाणी को, किसी एक क्षेत्र अथवा समुदाय तक सीमित न रहने देकर, सारे भारतीयों की सामूहिक सम्पत्ति बनाना ही राष्ट्रीय एकीकरण की उपलब्धि है। नरसी मेहता के भजन, टैगोर की गीताञ्जलि, तिरुवल्लुवर का तिरुक्कुरळ् और सन्त नानक की अमर वाणी क्रमशः गुजरात, बंगाल, तमिळनाडु और पञ्जाब को ही नहीं, अपितु सारे देश को प्राण प्रदान करे, यह उनके अनुवाद मात्र के द्वारा संभव नहीं। जिस भाषारूपी सुधाभाण्ड से यह अमृत प्रवाहित हुए हैं उस भाषा के बोध के बिना वह प्राण सुलभ नहीं। किन्तु यह भी सत्य है कि एक व्यक्ति के लिए इतनी लिपियों को सीखकर उन भाषाओं पर अधिकार प्राप्त करना संभव नहीं।

प्रत्यक्ष-प्रणाली (डाइरेक्ट मेथड)

अस्तु एक ही मार्ग है। देवनागरी लिपि, जो सारे देश में अपेक्षाकृत सर्वाधिक व्याप्त है, भारतीय प्राचीन वाङ्मय की भाषा—देवभाषा संस्कृत की अपनी लिपि है, उसके माध्यम से हम आरंभिक ज्ञान प्राप्त करें। देवनागरी लिपि में क्षेत्रीय भाषाओं की वर्णमाला, उनके विशेष अक्षर, उच्चारण, मात्राएँ, सामान्य व्याकरण, वाक्यरचना, देशज शब्द एवं संस्कृत से प्राप्त तत्सम और तद्भव शब्दों के उदाहरण आदि का कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त करने के उपरांत सम्बन्धित क्षेत्रीय भाषा के किसी मान्य लोकप्रिय ग्रंथ को चुनकर उसके अध्ययन द्वारा अपने अर्जित उपर्युक्त ज्ञान का अभ्यास किया जाय। धीरे-धीरे, अभ्यास के द्वारा उस भाषा में अभीष्ट ज्ञान सुलभ होगा। ग्रन्थ के चयन में यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि उसका कथानक देश के दूसरे क्षेत्रों में पूर्वपरिचित हो। रामायण, महाभारत, इस्लामी हदीस, पारसी गाथा, सिख गुरुओं की वाणी आदि ऐसे विषय हैं जिनमें वर्णित कथानक और उपदेश सारे देश की जनता को भली-भाँति मालूम हैं। अक्षर-बोध, सामान्य शब्द-परिचय और व्याकरण-बोध के साथ-साथ, कथा का विषय जाना-समझा होने पर शिक्षार्थी को—लिपि, भाषा और साहित्य के माध्यम से अपने को— सारे राष्ट्र का व्यावहारिक दृष्टि से सच्चा नागरिक बनने के अभिलाषी को— उस भाषा अथवा ग्रन्थ को समझने में सरलता होगी। इस मार्ग से एक क्षेत्र का निवासी, सब अथवा अधिक से अधिक क्षेत्रों की भाषाओं और वहाँ के लोक-साहित्य को आत्मसात् कर सकता है। अलबत्ता यदि किसी भाषा-विशेष में अधिक पारंगत होने की अभिलाषा है, तो उस भाषा के विशेष अध्ययन का मार्ग अपनाना ज़रूरी होगा।

यह तो हुई भावात्मक एकता की वात। देवनागरी लिपि के माध्यम से अन्य भारतीय भाषाओं के पढ़ने-समझने की एक और ज़रूरत भी पैदा हो गयी है। बहुत बड़ी संख्या में एक क्षेत्र या राज्य के निवासी दूसरे क्षेत्र अथवा राज्य में स्थायी तौर पर बस गये और बसते जा रहे हैं। वह अपने परिवार और सक्षेत्रीयों के साथ परस्पर तमिळ, बंगला, सिन्धी आदि अपनी मातृभाषाएँ वोलते हैं, और परम्परा के अभ्यास से सदैव बोलते भी रहेंगे, किन्तु उस क्षेत्र-विशेष में शिक्षा-दीक्षा पाने के कारण बच्चे अपनी लिपि के ज्ञान से अपरिचित रह जाते हैं। फलतः नित्य की बोलचाल को छोड़कर अपनी मातृभाषा के सम्पन्न और बहुमूल्य वाङ्मय से वे अपरिचित होते जा रहे हैं, और इस प्रकार अपनी क्षेत्रीय संस्कृति से दिन-प्रतिदिन दूर होते जायेंगे। अन्य क्षेत्रों में आवासित उन परिवारों, जिनकी संख्या आज के आज़ाद भारत में अपरिमित है, के लिए तो अनिवार्यतः आवश्यक है कि देवनागरी लिपि में अपनी मातृभाषा के अमूल्य साहित्य को पढ़कर अपनी क्षेत्रीय साहित्यिक निधि को अपने बीच संजोये रखें।

उपर्युक्त प्रयास से यह किसी प्रकार अभीष्ट नहीं कि भारत में प्रयुक्त अन्य लिपियों के शिक्षण अथवा प्रचार में ज़रा भी कमी हो। वह वैसे ही, वरन् अधिक फलती-फूलती रहें। किन्तु यह भी न भूलना चाहिए कि अन्य भाषाओं और लिपियों से सम्बन्धित जन, अथवा आपकी लिपि और भाषा के ही लोग जो परिस्थिति-वश दूसरे क्षेत्रों में स्थायी तौर पर बस गये हैं, उनको आपके प्रचुर साहित्य से वञ्चित होने की परिस्थिति पैदा न होने पाये। दो हज़ार वर्ष पूर्व तमिलनाडु के अमर सन्त तिरुवल्लुवर का 'पञ्चम वेद' समझा जानेवाला नीति-ग्रन्थ 'तिरुक्कुरळ्' अपनी लिपि के साथ-साथ, देवनागरी लिपि के कलेवर में राष्ट्र के कोने-कोने में लोकप्रिय होने के स्थिति में आ जाय, यह संकल्प भी कम पुनीत नहीं।

नेपाली लिपि और भाषा

हिमाञ्चल में सरोवर-स्वरूप नेपाल का भव्य राष्ट्र शोभायमान है। भगवान् पशुपतिनाथ और माता गुह्येश्वरी का पावन धाम है। उस पुनीत क्षेत्र में एक बार मुझे जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। वहाँ की आदिम लिपि और भाषा नेवारी है। किन्तु धार्मिक और सांस्कृतिक प्रभावों के फलस्वरूप संस्कृत भाषा और नागरी लिपि का बोलबाला हुआ; और कोने-अँतरे के अञ्चलों में 'नेवारी' के वर्तमान रहने के बावजूद, नागरी लिपि और संस्कृत भाषा से उद्भूत नेपाली भाषा का ही प्राचुर्य है।

ज्ञातव्य है कि नागरी लिपि को नेपाली लिपि की संज्ञा वहाँ दी जाती है। एक अति मनोरञ्जक प्रसङ्ग है। विगत फरवरी १९७४ ई०

में पवनार आश्रम (वर्धा) में होनेवाले 'नागरी लिपि' समारोह में भारत में नेपाली दूतावास के सांस्कृतिक सहचारी प्रो० श्री मानन्धर धूस्वां सायमि ने भाग लिया था। उन्होंने अपने भाषण में चर्चा की कि प्रथम बार दिल्ली आने पर, उनकी धर्मपत्नी ने हिन्दी साइनबोर्डों पर दृष्टि डालकर बड़े कुतूहल से कहा, "अरे! यहाँ तो ये सारे बोर्ड 'नेपाली' में लिखे हुए हैं!"। सारांश यह कि नेपाल की सम्प्रति लिपि नेपाली है, उसका रूप वही है जो नागरी लिपि का।

भानुभक्त रामायण

जन साधारण की यह धारणा है कि नेपाल में शिव और शक्ति की उपासना का ही प्राधान्य है। भगवान् राम की चर्चा, यदि है भी तो नगण्य सी। संयोग से उत्तरप्रदेश ग्रन्थ अकादमी के तत्कालीन अध्यक्ष प्रख्यात विद्वान् डॉ० रामकुमार वर्मा जी से एक बार भेंट हुई। मेरे और भुवन वाणी ट्रस्ट के भाषाई सेतुबन्ध के विपुल कार्य को देखकर वे अति मुग्ध हुए। उन भाषाई कार्यों में, देश के समस्त भाषाई रामायण-साहित्य को नागरी लिपि के माध्यम से, एक मञ्च पर आते देखकर, उन्होंने 'भानुभक्त रामायण' की मुझसे चर्चा की। उनके सुझाव पर ही नेपाली का यह ग्रन्थरत्न 'भानुभक्त रामायण', आज पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है।

नेपाल में भगवान् शिव के अतिरिक्त राम की भी इतनी विशद चर्चा और भक्ति है, इसकी पुष्टि इसी वर्ष के आरम्भ में दिल्ली में पुनः हुई। नेपाली दूतावास के सांस्कृतिक सहचारी प्रो० धूस्वां सायमि ने चर्चा की कि न केवल नेपाली में भानुभक्त रामायण, वरन् नेवारी भाषा में भी एक रामायण लिखी गयी है, और उसकी प्रति काठमाण्डू जाने पर भेजने का उन्होंने आश्वासन भी दिया है।

भक्तशिरोमणि भानुभक्त

नेपाल राज्य के एक छोटे से पर्वतीय प्रदेश के पश्चिम में सप्तगण्डकी सलिला द्वारा सिञ्चित 'तनहूँ' उपत्यका के 'रम्घा' नामक ग्राम में विक्रम संवत १८७१ आषाढ़ २९ गते के पुण्यदिवस पर 'भानु' का उदय हुआ। परमविद्वान् ब्राह्मण-कुल के प्रख्यात आचार्य श्रीकृष्ण के छः पुत्रों में ज्येष्ठ धनञ्जय जी के एकमात्र पुत्र श्रीभानुभक्त जी हुए। इनका अधिकांश समय पितामह के साथ व्यतीत होने के फलस्वरूप वे संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित हुए। किशोरावस्था के आरंभ होते-होते व्याकरण, ज्योतिष एवं पुराणादि पर अधिकार प्राप्त कर लिया था।

किंवदन्ती है कि २२ वर्ष की आयु में, एक दिन एक वृक्ष की छाया में

उनका एक श्रमिक घसियारे से साक्षात् हुआ। वह अपनी दीन-हीन अवस्था में भी अपने ग्राम में सार्वजनिक उपयोग के लिए एक कुआँ बनवाने हेतु, कठिन कमाई में से धन सञ्चित कर रहा था। इसने भानुभक्त के मन में सार्वजनिक सेवा की प्रवृत्ति को जन्म दिया। उस समय वालमीकि, अध्यात्म आदि संस्कृत रामायणों का ही सर्वत्र आदर था। क्षेत्रीय भाषाओं में धार्मिक चरित्रों का गान पवित्र नहीं समझा जाता था। यह बात कुछ नेपाल में नई नहीं थी। हिन्दी में तुलसी, बंगला में कृत्तिवास, तेलुगु में कुम्हारिन मोल्ल आदि सभी के सामने संस्कृताभिमानी पण्डितों की ओर से यह अवरोध उपस्थित हुआ।

किन्तु इन्हीं सब के अनुसार, श्री भानुभक्त ने भी जनभाषा में रामायण की रचना करके समाज-कल्याण का व्रत लिया। इस सद्भावना का स्रोत वही श्रमिक घसियारा था। अस्तु, भानुभक्त-रामायण की रचना हुई। लिपि नागरी, भानुभक्त रामायण की भाषा नेपाली, किन्तु छन्द-रचना में संस्कृत छन्दों का अनुकरण है। शिखरिणी, शार्दूलविक्रीडित, वसन्ततिलका आदि संस्कृत छन्दों की शैली पर ही काव्य की रचना है। पाठकों को पढ़ते समय ध्यान रखना चाहिए कि हलन्त और सस्वर को लेखानुसार पाठ करें। 'राम' और 'राम्' का भेद ध्यान में रखना आवश्यक है। हिन्दी के अनुसार 'राम' लिखकर 'राम्' जैसा उच्चारण करने पर छन्दोभङ्ग हो जायगा। 'भानुभक्त रामायण' का आधार अध्यात्म रामायण है।

नेपाल के तुलसी, भानुभक्त महाराज की पुण्यलीला वि० सं० १९२५ आश्विन शुक्ल पञ्चमी के दिन ५४ वर्ष की अवस्था में समाप्त हुई। प्रति वर्ष १३ जुलाई को उनकी जयन्ती मनाई जाती है।

काशी में कुछ नेपाली प्रकाशकों ने भी भानुभक्त रामायण के संस्करण प्रकाशित किये हैं। किन्तु उनमें उन्होंने व्यवसायिक लक्ष्य से जनरुचि को अधिक आकर्षित करने के लिए अनेक अन्तर्कथाएँ प्रक्षिप्त कर दी हैं; अपनी ओर से भानुभक्त की शैली पर रच कर जोड़ दी हैं। दूसरे उनमें हिन्दी अनुवाद का अभाव होने से वे नेपाली पाठक के ही प्रयोजन की रह जाती हैं। अस्तु, प्रस्तुत ग्रन्थ 'सानुवाद भानुभक्त रामायण' को पाकर हिन्दी-जगत् धन्य है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' के भाषाई सेतुबन्धन में एक और शिलारोपण हुआ।

अनुवाद

नेपाली रामायण के अनुवादक को सुलभ करने में कुछ कठिनाई हुई। हम श्री नन्दकुमार आमात्य और उनकी धर्मपत्नी सुश्री तपेश्वरी

आमात्य के अनुग्रहीत हैं कि उन्होंने इस कार्यभार को सुचारु ढंग से सम्हाला। यह हिन्दी अनुवाद उन्हीं की देन है।

विमोचन

श्री उमाशंकर जी दीक्षित, महामहिम राज्यपाल, कर्नाटक प्रदेश की, इन पंक्तियों के लेखक पर एक बड़े समय से कृपा रही है। ट्रस्ट के कार्यक्रम को भी उनसे सराहना प्राप्त है। एक साथ हमारे तीन प्रकाशनों— १. (मराठी) श्रीराम-विजय, २. (तमिळ) तिरुवल्लुवर कृत तिरुक्कुड्ळ् और ३. (नेपाली) श्रीभानुभक्त रामायण— का विमोचन अपने पुष्कल कर-कमलों से उन्होंने स्वीकृत किया। वे हमारे अनन्य सहायक हैं, अनन्य अनुग्रहकर्ता हैं।

आभार-प्रदर्शन

ट्रस्ट को, कई उदार सदाशयों, विद्वानों, एवं उत्तरप्रदेश शासन से प्राप्त सहायता से बड़ा सहारा मिलता रहा है। अन्य ग्रन्थों के साथ, नेपाली 'भानुभक्त रामायण' भी अपनी सहज गति से प्रकाशित हो रहा था। सौभाग्य से केन्द्रीय उपशिक्षामंत्री माननीय् श्री डी० पी० यादव, भारत सरकार के राष्ट्रभाषा सलाहकार बहुभाषामर्मज्ञ श्री रमाप्रसन्न नायक और शिक्षा एवं समाजकल्याण मंत्रालय के शिक्षानिदेशक एवं उपसचिव श्री सनत्कुमार चतुर्वेदी जी की अनुकम्पा हुई। उसके परिणाम-स्वरूप ग्रन्थ परिपूर्णता को प्राप्त हुआ। हम उनके अतिशय अनुग्रहीत हैं। हम विश्वास के साथ निवेदन करते हैं कि भुवन वाणी ट्रस्ट की भाषाई सेतुकरण की विशाल और अद्वितीय योजना उत्तरोत्तर फलवती होकर शासन और जनता को संतुष्ट करती रहेगी।

श्री रघुमल ट्रस्ट, कलकत्ता के भी हम अत्यन्त आभारी हैं। उन्होंने पाँच हजार रुपये की राशि से ट्रस्ट की सहायता की। उसका उपयोग इस ग्रन्थ में किया गया। प्रशंसित ट्रस्ट एवं न्यासीगण के प्रति हम अतिशय कृतज्ञ हैं।

नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति,
भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

भानुभक्त-रामायण

(नेपाली काव्य)

[अनुवादक—नन्दकुमार आमात्य]

आमुख

संतकवि भानुभक्त का जन्म विक्रम संवत १८७१ आषाढ़ २९ गते कृष्णाष्टमी तदनुसार १३ जुलाई १८१४ को पश्चिम नेपाल के तनहुँ उपत्यका के रम्घा नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम धनञ्जय आचार्य था। उनके पितामह श्रीकृष्ण आचार्य संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे, फलस्वरूप भानुभक्त को प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत में उन्हीं से प्राप्त हुई।

उस समय अधिकांश कवि अपनी रचनादि संस्कृत में ही करते थे और पर्वतीय अथवा क्षेत्रीय भाषा में रचना करनेवाले कवियों का मान नहीं था। परन्तु भानुभक्त को इसकी परवाह नहीं थी। मन मे दृढ़ संकल्प था। इसलिए उन्होंने जनसाधारण के समझ में आनेवाली भाषा में शार्दूलविक्रीडित और वसन्ततिलका जैसे संस्कृत छन्दों के ढंग पर सुन्दर और सुमधुर ग्रामीण शैली में, अध्यात्म रामायण के सातों काण्ड का अनुवाद कर नेपाली जगत् के हृदय को जीता।

स्व० मोतीराम भट्ट ने अथक परिश्रम से इस सम्बन्ध में खोज की है। उन्होंने कवि की जीवन-कथा में लिखा है कि भानुभक्त को कविता रचने की प्रेरणा एक गरीव घसियारा से मिली थी। इस प्रसंग पर विद्वानों के अलग-अलग मत है। भानुभक्त ने लगभग २०-२२ वर्ष के अकथ परिश्रम से अन्य रचनाओं के साथ रामायण के सातों काण्डों का मञ्जुल काव्य पूर्ण किया। सरल भाषा और सरल शैली में भानुभक्त-कृत रामायण की उपलब्धि से नेपाली जगत् कृतार्थ हुआ है। सवत १९२५ आश्विन शुक्लपक्ष पंचमी के दिन ५४ वर्ष की अवस्था में अमर कवि भानुभक्त का देहावसान हुआ। प्रतिवर्ष, १३ जुलाई उनका जयन्ती-दिवस है।

सौभाग्य से भुवनवाणी ट्रष्ट, लखनऊ के प्रतिष्ठाता श्रीनन्दकुमार अवस्थी से भेंट होने पर 'वाणी सरोवर' त्रैमासिक के माध्यम से राष्ट्र की समस्त भाषाओं के सद्ग्रन्थों और विशेष कर रामायणों के हिन्दी अनुवाद सहित देवनागरी लिप्यन्तरण के उनके महान् आयोजन को देखा। नेपाली की भानुभक्त-रामायण को भी नेपाली क्षेत्र से बढ़ाकर समग्र देश के सम्मुख प्रस्तुत कर देने का पुनीत संकल्प और प्रस्ताव उन्होंने मेरे सामने रखा। सुतरां भगवान् का ध्यान कर उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर, नेपाली रामायण का मूल-सहित हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत कर रहा हूँ।

आशा है पाठकवृन्द मेरी कमियों की ओर ध्यान न देकर पावन ग्रंथ का प्रसाद ग्रहण करेंगे। जहाँ तक नेपाली लिपि और भाषा की बात है, वह हिन्दी-भाषी के लिए अपने ही परिवार जैसी है। उच्चारण के सम्बन्ध में एक वात उल्लेखनीय है कि किसी शब्द के अन्तिम अक्षर में हलन्त-चिह्न न लगा होने पर उसे सस्वर ही पढ़ें। हिन्दी के समान हलन्त न पढ़ें। 'राम' लिखा होने पर 'राम्' नही, वरन् रा+म (Rama) उच्चारण करें।

—नन्दकुमार आमात्य

श्रीराम-पञ्चायतन

भानुभक्त-रामायण

बालकाण्ड

ब्रह्मा-नारद-संवाद

एक् दिन् नारद सत्यलोक् पुगिगया लोक्को गरूँ हित् भनी ।
ब्रह्मा ताहिं थिया पऱ्या चरणमा खूशी गराया पनि ॥
क्या सोध्छौ तिमि सोध भन्छु म भनी मर्जी भयेथ्यो जसै ।
ब्रह्माको करुणा बुझेर ऋषिले बिन्ती गऱ्या यो तसै ॥१॥
हे ब्रह्मा ! जति हुन् शुभाशुभ सबै सूनी रह्याँछू कछु ।
बाँकी छैन तथापि सुन्न अहिले इच्छा म यो गर्दछु ॥
आऊला जब यो कली बखतमा प्राणी दुराचार् भई ।
गर्न्याछिन् सब पाप् अनेक् तरहका नीच्का मतीमा गई ॥२॥
साँचो बात गरैन् कोहि अरुकै गर्नन् ति निन्दा पनि ।
अर्काको धन खानलाइ अभिलाष् गर्नन् असल् हो भनी ॥
कोही जन् त परस्त्रिमा रत हुनन् कोही त हिंसामहाँ ।
देहैलाइ त आत्म जानि रहनन् नास्तिक्पशू झैं तहाँ ॥३॥

ब्रह्मा-नारद-संवाद

एक दिन नारदजी लोकहित के लिए स्वर्गलोक पहुँचे । ब्रह्माजी वहाँ विराजमान थे, तत्काल उनके चरणों में झुककर नारद ने उन्हें प्रसन्न किया । ब्रह्माजी द्वारा जैसे ही आज्ञा हुई, तुम क्या पूछना चाहते हो, पूछो, तैसे ही ब्रह्माजी की अनुकम्पा समझकर ऋषि ने इस प्रकार विनती की । १ हे ब्रह्मा! [संसार में]जो कुछ भी शुभाशुभ हो रहा है वह मैं सुन रहा हूँ, मुझे सुनने को कुछ भी बाकी नहीं है । फिर भी मैं इस सम्बन्ध में जानने का इच्छुक हूँ कि जब कलियुग का समय आयेगा तो प्राणी दुराचारी और बुद्धिभ्रष्ट होकर अनेक प्रकार के पाप करेंगे । २ सच्ची बातों का कुछ भी पालन नहीं करेंगे वरन् औरों की निन्दा करेंगे । दूसरों के धन को हड़पना ही ठीक समझकर उसकी कामना करेंगे । कुछ लोग तो परस्त्री पर आकर्षित होंगे । नास्तिक लोग पशु के समान शरीर को ही आत्मा समझते रहेंगे । ३ भोग-विलास के सेवक बनकर स्त्री को देवता

कामका चाकर झैं भयेर रहनन् स्त्रीलाइ द्यौता सरी ।
मान्नन् पितृ र मातृलाइ बुझि खुप् शत्रू सरीको गरी ॥
ब्राह्मण् भैकन वेद बेचि रहनन् कोही पढुन् तापनि ।
धन् ठूलो छ पनी भन्या सहज धन् आर्जन् गरौंला भनी ॥४॥

जाती धर्म रहैन क्षत्रिहरुमा जो छन् इ नीचाहरू ।
शूद्रादी त तपस्वि होइ रहनन् ब्राह्मण् सरीका बरु ॥
स्त्री धेर् भ्रष्ट हुनन् पतीर ससुरा- को द्रोह ठूलो गरी ।
यस्ता नष्ट कसोरि मुक्त त हुनन् संसार सागर् तरी ॥५॥

यो चिन्ता मनमा भयो र अहिले सोधूँ उपायै भनी ।
आयाको छु दयानिधान ! कसरी तर्नन सहज ई पनि ॥
यस्तालाइ उपाय तर्न सजिलो कुन् हो उ आज्ञा गरी ।
मेरो चित्त बुझाइबक्सनुहवस् क्याले इ जान्छन् तरी ॥६॥

नारद्ले दुनियाँउपर् गरि दया विन्ती गर्न्या यो जसै ।
ब्रह्माजी पनि खुप् प्रसन्न हुनुभै मर्जी भयो यो तसै ॥
हें नारद् ! सब पाप हर्नकन ता रामायणैंले सरी ।
आर्को मुख्य उपाय छैन सबको हित् यै छ अमृत् सरी ॥७॥

के समान मानेंगे । माता-पिता की उपेक्षा कर उन्हें शत्रु के समान मानेंगे । ब्राह्मण होकर भी वेदों को बेचकर [अर्थात् लोभवश वेदों के अर्थ का अनर्थ कर] धनोपार्जन को ही सब कुछ समझेंगे । ४ क्षत्रियों में व्याप्त जाति-धर्म भी नहीं रहेगा वरन् शूद्र लोग ब्राह्मणों की तरह तपस्वी बनेगें । पति और ससुर से द्रोह कर अनेक स्त्रियाँ भ्रष्ट होंगी । इस प्रकार नष्ट हुए लोग किस तरह संसार-सागर को पार करके मुक्त हो सकेंगे ? ५ यही चिन्ता मेरे मन में उत्पन्न हुई है, अतः मै आपसे इसका उपाय पूछने आया हूँ । हे दयानिधान ! ये प्राणी सहज ही कैसे पार होंगे ? ऐसों के लिए वह कौन सा उपाय है, आज्ञा करके मेरे चित्त को समझाइए कि ये कैसे पार होंगे । ६ नारद ने जैसे ही संसार की इन समस्याओं के विषय में बिनती की, ब्रह्माजी ने अत्यन्त प्रसन्न होकर इस प्रकार आज्ञा दी । हे नारद ! सब के पापों को मिटाने के लिए रामायण के सिवा और कोई मुख्य उपाय नही है । अमृत के समान सबके हित इसी में निहित है । ७ महादेवजी से [उपर्युक्त] इन सव तत्व की बातों को सुन कर पार्वती जी राम-नाम की अपार महिमा जानकर गान करती हैं और आनन्दित

शम्भू देखि सुनेर तत्त्व सब यो गान् पार्वती गर्दछिन् ।
राम्को नाम अपार जानि बहुतै आनन्दमा पर्दछिन् ॥
जस्ले गान्कन गर्दछन् त ति सहज् संसार पार् तर्दछन् ।
कालैको पनि ताप् हुँदैन भय सब् तिन्का सहज् टर्दछन् ॥८॥

यो सब् शास्त्रविषे बड़ो छ रघुनाथ्- को रूप् जनाईदिन्या ।
जो छन सब इ पुराण् हरू इ सबमा यै मुख्य जानीलिन्या ॥
गर्छन् कीर्तन सुन्दछन् पनि भन्या यो पाउँछन् फल् भनी ।
तिन्को पुण्य बखान गर्न त सबै सक्तीनँ मैले पनि ॥९॥

सून्याथ्याँ शिव देखि यस्कि महिमा एक् श्लोक् पढुन् तापनि ।
भक्तीले यदि यो पढ्यो पनि भन्या पाप् छुट्तछन् सब् भनी ॥
जो एक् चित्त गरेर पाठ खुशि भै गर्छन् सदा यै भन्या ।
जीवन्मुक्त तिनै त हुन् नर भई ईश्वर् सरीका बन्या ॥१०॥

पूजा पुस्तकको गर्न्या पनि त फल् एक् अश्वमेध्का सरी ।
पाऊँछन् सुनि यो कहीं पनि भन्या पाप् छुट्तछन् तेस् घरी ॥
जो ती पुस्तकका नजीक् गइ नमस्- कारै फगत् गर्दछन् ।
तेस्ता जन् सब देवता पुजि हुन्या फल् भोगमा पर्दछन् ॥११॥

चारै वेद पढेर शास्त्रहरुको व्याख्यान गर्दा पनि ।
पाईदैन उ फल् त पाउँछ सहज् पुस्तक् दिनाले पनि ॥

होती है। जो उनका गुण-गान ध्यान से करता है वह सहज ही संसार-सागर से पार उतर जाता है। उसे काल का भी भय नहीं होता। ८ रघुनाथ का परिचय कराने वाले ये सब शास्त्रादि महान् हैं। पुराण में जो भी है उसी को मुख्य मानकर जो कीर्तन करते है और सुनते हैं या जानते हैं कि उन्हें अवश्य फल प्राप्त होगा, उनके पुण्यों का पूरा वर्णन करने में मैं समर्थ नहीं हूँ। ९ इसकी महिमा मैंने शिवजी से सुनी थी जो कि प्रसन्नतापूर्वक सदैव एकाग्र मन से (रामचरित का) पाठ करते है। भक्ति भाव से [रामचरित का] एक ही श्लोक पढ़ने पर सब पापों से छुटकारा मिलता है और जीवन से मुक्त होकर पुरुष ईश्वर के समान हो जाता है। १० (रामचरित की) पुस्तक-पूजा से भी एक अश्वमेध यज्ञ के समान फल मिलता है, उसी क्षण पाप मिट जाता है। जो उस पुस्तक के निकट जा कर केवल नमस्कार ही करते हैं वे जन भी सब देवताओं के पूजन से मिलने वाले फल को भोग करते हैं। ११ चारों

भक्तीले कहिं भक्तका घर गई एकादशीमा कह्या ।
चौबीस् पल्ट पुरश्चरण् गरि हुन्या गायत्रिका फल् भया ॥१२॥
जस्ले राम्नवमी उपासि खुशिले जाग्रन् समेतै गरी ।
यो रामायण पाठ् गरोस् कि त सुनोस् तन् मन् यसैमा धरी ॥
उस्ले तीर्थपिछे तुलापुरुष दान् सूर्य्य-ग्रहण्मा गर्‍यो ।
यस्मा संशय छैन जान्नु सवले आनन्दमा त्यो पर्‍यो ॥१३॥
रामायण् कन गाउन्या पुरुषको आज्ञा त इन्द्रै पनि ।
मान्छन् श्रीरघुनाथका प्रिय इ हुन् मान्नया इनै हुन् भनी ॥
रोज्-रोज् यस् कन पाठ् गरेर जनले सत् कर्म गर्छन् जति ।
कोटीगुण् फल बढ़ति मिल्छ सवको घट्तैन तिन्का रति ॥१४॥
यस्मा राम् हृदयै छ पाप् हरि लिन्या क्वै ब्रह्मघाती पनि ।
शुद्धात्मा बनिजान्छ तीन् दिन पढ्या गर्छन् कृपा राम् धनी ॥
रोज् रोज् तीन पटक् अगाड़ि हनुमान् राखेर पाठ् गर्छ जो ।
जस्तो भोग्कन गर्न खोज्दछ उ भोग् सम्पूर्ण पाऊँछ सो ॥१५॥
जो यो पाठ् तुलसी पिपल् वरिपरी गर्छन् प्रदक्षिण् गरी ।
तिन्का पाप् सव जन्मका जति त छन् छुट्छन् ति तेसै घरि ॥

वेदों को पढ़कर व्याख्या करने पर भी वह फल प्राप्त नहीं होता जो केवल पुस्तक का दान करने से प्राप्त होता है। एकादशी में भक्तों के घर जाकर भक्तिपूर्वक (कथा) कहने से तथा चौवीस वार गायत्री का पुरश्चरण जाप करने से प्राप्त होने वाले फल के समान पुण्य प्राप्त होगा। १२ रामनवमी में उपवास करके तथा प्रसन्नतापूर्वक जागरण करके जो व्यक्ति इस रामायण का पाठ करे अथवा ध्यान देकर इसे सुने, उसको (सूर्यग्रहण मे) तीर्थ के पश्चात् तुलादान करने के तुल्य पुण्य तथा परम आनन्द प्राप्त होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। १३ रामायण गाने वाले पुरुष को श्रीरघुनाथ का प्रिय जानकर इन्द्र भी उसकी आज्ञा का पालन करते है। मनुष्य प्रतिदिन इसका पाठ कर, जितने भी सत्कर्म करते है उन सवके फल की करोड़ों गुणा वृद्धि को प्राप्त होते हैं, उसमें किञ्चित् मात्र भी कमी नहीं होती। १४ इसमें ब्रह्मघातक के पापों को भी नष्ट करने वाला राम-हृदय है। राम की कृपा से तीन दिन पाठ करने पर आत्म-शुद्धि होती है। प्रतिदिन हनुमान का आवाहन करके जो पाठ करते है वे जिस प्रकार के भोगों को प्राप्त करना चाहते हैं वे सभी भोग उन्हें पूर्णतया प्राप्त होते हैं। १५ जो तुलसी तथा पीपल

तेस्मा रामगिता छ झन् अति ठुलो जस्को महात्म्यै पनि।
सब् जान्नया शिवमात्र छन् अरु त को जान्नया छ यस्तो भनी॥१६॥

आधा पार्वति जान्दछिन् म त सबै चौथाइ पो जान्दछु।
गीता पाठ गरेर नाश नहुन्या पाप् छैन यो मान्दछु॥
राम्ले वेद मथन् गरीकन झिक्या गीता र अमृत् सरी।
लक्ष्मण् लाइ दिया यही पढ़िलिया जाइन्छ संसार् तरी॥१७॥

मार्छू निश्चय कार्तवीर्य भनि खुप् ठूलो इरादा गरीं।
पढ़थ्या श्रीशिवथ्यैं गयी परशुराम् दिन्-दिन् चरण् मा परी॥
पढ़थिन् पार्वति राम्गिता तहिं सुनी पाठ् गर्न लागी गया।
राम्गीता तहिं देखि पाठ् गरि लिया नारायणै ती भया॥१८॥

मैन्हा दिन् यहि राम्गिता पढ़िलिया सब् ब्रह्महत्त्याहरू।
छुट्छन् निश्चय छुट्तछन् सकल पाप् भन्न्या बखान् क्या गरूँ॥
शालिग्राम् तुलसी पिपल् कि त बड़ा संन्यासिथ्यैं जो गई।
राम्गीताकन पाठ् गर्‍यो पनि भन्या ठूलो महात्मा भई॥१९॥

के चारों ओर घूमकर इसका पाठ करते है उनके सब जन्मों के किये हुए पाप उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं। इसमें अत्यन्त महान् और माहात्म्यपूर्ण रामगीता है। [ब्रह्मा ने कहा] इसको पूर्णरूप से जानने वाले केवल शिव ही हैं। १६ [इसकी महिमा का]अर्द्धांश पार्वती जानती हैं, मैं तो केवल चौथाई ही जानता हूँ। मैं यह मानता हूँ कि संसार में कोई ऐसा पाप नहीं जो रामगीता का पाठ करने से नष्ट न हो। राम ने वेदों का मंथन कर गीता और अमृत को निकाला और लक्ष्मण को दिया, इसे पढ़ने से सभी प्राणी संसार सागर से तर जायेंगे। १७ कार्तवीर्य (तथा उसके वीरों) को मारने का निश्चय कर वहुत बड़ी इच्छा ले करके परशुराम प्रतिदिन श्रीशिव के चरणों की वन्दना करने गये। वहीं पार्वती रामगीता पढ़ती थीं, इसी को सुनकर वे भी रामगीता का पाठ करने लगे और [फलतः] नारायण-रूप हो गये। १८ जब एक महीना यह राम गीता पढ़ने से ब्रह्महत्यादि सभी पाप समाप्त हो जाते हैं तो और सभी पापों के मिटने के बारे में क्या वर्णन करूँ। शालग्राम, तुलसी, पीपल या महान् संन्यासियों के पास जाकर रामगीता का पाठ करने से भी बहुत से लोग महात्मा वन गये हैं। १९ जिस फल के बारे में मुँह से वर्णन नहीं किया जा सकता है उसी फल का वह [रामगीता को पढ़ने वाला] भोग करता

जुन् फल् छन मुखले भनी न सकिन्या सो फल् ति भोग् गर्दछन् ।
कोही श्राद्धविषे पढुन् त तिनका पितृ सबै तर्दछन् ॥
पैल्हे खूब नियम् गरी दशमिमा एकादशीमा पनि ।
आसन् बाँधि अगस्ति-वृक्ष-मुनि पाठ् गर्छू म गीता भनी ॥२०॥

राम्गीता उपवास् गरीकन वहुत् आदर् गरी पढ़छ जो ।
तेस्लाई त नभन्नु मानिस भनी रामै सरीको छ त्यो ॥
दान् ध्यान् तीर्थ कदापि केहि नगरी यो रामगीता पढ़ी ।
बस्छन् जो ति अनन्तका पदविमा पुग्छन् सहज् पार् तरी॥२१॥

धेरै वात गरेर हुन्छ अव क्या रामायणै हो जवर् ।
पाप् हर्नाकन छैन केहि वुझियो येसै सरीको अवर् ॥
जो छन् तन्त्र पुराण् श्रुति स्मृति इ ता सोह्रै कलामा पनि ।
पुग्दैनन् त वखान् कहाँतक गरूँ यो फेरि ठूलो भनी ॥२२॥

जो रामायणको महात्म्य विधिले नारद्जिलाई कह्या ।
जुन् सूनीकन चित्तले वुझिलिदा नारद् पनी खुश् भया ॥
पाठ् गर्छन् कित सुन्दछन् यदि भन्या यो येति सुन्दा पनि ।
जान्छन् सब् उहि विष्णुका पुरिमहाँ खुप् पूज्य सब्का वनी॥२३॥

हैं। कोई श्राद्ध के वारे में भी पढ़े तो उसके सब पितर तर जाते हैं। प्रथम नियमों का पालन करके दशमी या एकादशी में आसन बाँधकर अगस्ति वृक्ष के नीचे वैठकर मैं रामगीता का पाठ करता हूँ। २० जो उपवास करके रामगीता को वहुत आदर के साथ पढ़ता है उसे मनुष्य नहीं कहना चाहिए वह तो राम के समान है। दान, ध्यान, तीर्थ आदि कुछ भी न कर केवल इसी रामगीता को पढ़कर जो रहता है वह अनन्त-पदों को सहज ही पार करके तर जाता है। २१ अधिक वात क्या करना, जब यह जान लिया कि रामायण ही वलिष्ठ (सर्वश्रेष्ठ) है और इसके समान पाप को हरण करने वाला (दूसरा) कुछ नहीं, जो भी तन्त्र, वेद, पुराण और धर्मशास्त्रादि हैं वे इसकी सोलहवीं कला के भी समान नहीं, तो फिर इसकी महत्ता का कहाँ तक वर्णन करूँ? २२ विधिवत् कहे गये रामायण के इस माहात्म्य को चित्त से समझकर नारद अत्यन्त प्रसन्न हुए और इतना कहा कि जो भी इसका पाठ करते अथवा सुनते हैं वे सबके अत्यन्त पूज्य बनकर विष्णुलोक में जाते हैं। २३ भगवान् सदाशिव कैलाश में वैठे हुए, बायीं ओर अपनी गोद में अति प्रिय तथा हितैषिणी

कैलास्मा भगवान् सदाशिव थिया ध्यान्मा बहुत् मन् दिई ।
बायाँ काखमहाँ पियारि हितकी श्री पार्वतीजी लिई ॥
एक् दिन् पार्वतिले तहीं शिवजिथ्यैं सोधिन् चरण्मा परी ।
आफू ता सब जान्दथिन् तर दया सम्पूर्ण लोक्मा गरी ॥२४॥

हे नाथ् ! बिन्ति म गर्दछू हजुरमा राम् हुन् जगत्का पति ।
राम्देखी अरु कोहि छैन जनका संसार तर्न्या गति ॥
जस्मा भक्ति गर्‍यो भन्या अति गँभीर् संसार सागर्महाँ ।
नौका झैं तरिजान्छ झट्पट गरी तेस् नर्को देहै तहाँ ॥२५॥

यस्ता राम्कन लोकमा जनहरू एक् ईश्वरै मान्दछन् ।
कोहि तत्त्व नपाइ मूर्खहरु ता मानिस् सरी जान्दछन् ॥
क्या भन्छन् ति कि राम ईश्वर भया शोक् क्यान तिन्ले गर्‍या ।
सीता रावणले जसै हरिदियो ठूलै विपत्मा पर्‍या ॥२६॥

ईश्वर्लाइ त शोक् हुँदैन र भनूँ हूँदैन अज्ञान् पनि ।
इन्मा यो सब देखियो त कसरी जान्नू इ ईश्वर् भनी ॥
लोक् यस्तो पनि भन्छ कोहि भगवान् यस्मा विचार् खुप् गरी ।
जस्तो हो सब यो बताउनुहवस् सन्देह मेरो हरी ॥२७॥

पार्वती जी को बैठाये अत्यन्त ध्यानमग्न थे । एक दिन पार्वती जी ने चरणों में झुककर, स्वयं सब जानते हुये भी, सम्पूर्ण लोक के प्रति दयालु होकर कहा—। २४ हे नाथ ! मै विनती करती हूँ कि राम ज़गत्पति हैं । राम के सिवा [भक्त-] जनों को संसार से तारने वाला और कोई नहीं है । उनकी भक्ति रूपी नौका के सहारे मनुष्य अत्यन्त गंभीर संसार-सागर से तुरन्त पार हो जाता है । २५ ऐसे राम को जगत् में (बुद्धिमान्) मनुष्य केवल ईश्वर ही मानते है । पर मूर्ख लोग तो कोई तत्व न पाकर [उनको] मनुष्य की तरह ही जानते हैं । उनका कहना है कि यदि राम ईश्वर हैं तो रावण के सीताहरण करने पर उन्होंने शोक क्यों किया और इतनी विपत्ति में क्यों पड़ गये ! २६ ईश्वर को शोक नहीं होता और अज्ञान भी नहीं होता । राम में शोक, अज्ञान—दोनों ही देखा गया, फिर इन्हें ईश्वर कैसे मानें—कोई मनुष्य ऐसा भी कहते हैं । भगवन् ! इस पर विचार करके, जैसे भी हो, मेरे मन के सदेह को दूर करने के लिए यह सब बताने की कृपा करें । २७ पार्वतीजी के ऐसे प्रश्नों को सुनकर शिवजी अत्यन्त प्रसन्न हुए । राम ऐसे ही प्रभु हैं, यह कहते

यस्ता प्रश्न सुन्या र पार्वतिजिको शम्भू खुशी खुप् भया ।
राम् यस्ता प्रभु हुन् भनेर शिवले सब् तत्त्व ताहीं कह्या ।।
सून्यौ पार्वति ! राम् अनादि परमे- श्वर् हुन् ति आकाश् सरी ।
सब् ढाकीकन बस्तछन् अधिविराट् सम्पूर्ण सृष्टी गरी ।।२८।।

जस्तै चुम्बकका नजीक् परिगया नाच्छन् इ लोहा पनि ।
तेस्तै जस्कन पाइ नाच्तछ जगत् नाना प्रकार् को वनी ।।
यस्तो तत्त्व नजानि मानिस सरी राम्लाइ जो गर्दछन् ।
संसार्का इ अनन्त ताप्हरु तिनै- लाई सदा पर्दछन् ।।२९।।

बादल्ले अरु ढाक्छ ढाक्छ अरु क्या श्रीसूर्य्यलाई पनि ।
लोक् ता भन्छ उठ्यो र बादल ठुलो सब् सूर्य्य ढाक्यो भनी ।।
त्यस्तै तत्त्व न जानि बोल्छ जन जो सो भन्छ मानिस् पनि ।
योगी ज्ञानि त चिन्दछन् इ रघुनाथ् त्रैलोक्यका नाथ् भनी।।३०।।

जस्लाई रिङ्टा छ भन्छ उ फगत् घुम्छन् उ पर्वत् भनी ।
घुम्दैनन् इ त घुम्छ तेहि रिङ्टा जान्दैन कोहि पनि ।।
अज्ञान् रूप् रिङ्टा हुन्या जनहरू भन्छन् ति मानिस् पनि ।
राम् ता हुन् परमेश्वरै सकल यस् चौधै भुवन्का धनी ।।३१।।

हुए शिवजी ने सब तत्व कह सुनाया । सुनो पार्वती, राम आकाश की भाँति अति महान् हैं और सम्पूर्ण सृष्टि को उत्पन्न करके सबको आच्छादित कर रहने वाले अनादि परमेश्वर हैं । २८ जैसे चुम्बक के निकट जाने पर लोहा नाचने लगता है, वैसे ही जिसके आधार पर जगत् अनेक प्रकार के रूपों में होकर नाच रहा है, ऐसे तत्व को न जानकर, जो लोग राम को मनुष्य की भाँति समझते हैं उन्हीं को संसार की ये अनन्त पीड़ाएँ सदा दुखी करती रहती हैं । २९ बादल सबको तो ढक ही लेता है। यहाँ तक कि सूर्य को भी ढक लेता है । जग तो कहता है कि घना बादल उठा है और उसने पूरे सूर्य को ढक लिया है । जो जन तत्व को नहीं जानते वेही ऐसा कहते हैं । योगी ज्ञानी तो इन रघुनाथ को त्रिलोक के नाथ कहकर ही पहचानते हैं । ३० जिसको चक्कर आता है वही कहता है कि पर्वत घूमता है, परन्तु वह घूमता नहीं । कोई नहीं जान पाता कि वही स्वयं चक्कर में घूमता है । अज्ञानरूपी चक्कर से युक्त मनुष्य ही राम को मनुष्य कहते है । राम तो इन चौदह भुवनों के स्वामी साक्षात् परमेश्वर ही है । ३१ सूर्य में भी कही अंधेरा है, क्या ऐसा ही

सूर्य्यँमा पनि अन्धकार् छ कहिं क्या तस्तै छ रामूमा पनि ।
शोक् अज्ञान् रति छैन जान्नु सबले आत्मा इनै हुन् भनी ।।
आर्को गोप्य रहस्य भन्छु सुन यो सम्वाद् सितारामको ।
भूभार् हर्नु थियो हन्या जब सबै छिन्छान् भयो कामको।।३२।।

भूमीको सब भार् हरेर रघुनाथ् राज् गर्न लाग्या जसै ।
देख्या श्रीहनुमानलाइ र दया आयो प्रभूको तसै ।।
सीतालाइ हुकूम् तहाँ दिनुभयो सीते ! हनूमान् बड़ा ।
ह्राम्रा भक्त भया इ तत्त्व लिनका खातिर् यहाँ छन् खड़ा।।३३।।

इन्लाई तिमि तत्त्व देउ भनि यो हूकूम् भयेथ्यो जसै ।
सीताले हनुमानलाइ दिनुभो जुन् तत्त्व हो सो तसै ।।
आर्को तत्व त केहि छैन हनुमान् कुन् आज आर्को कहूँ ।
राम् हुन् ब्रह्म इनैकि शक्ति बलियो माया भन्याकी म हूँ।।३४।।

रामको सन्निधि पाइ गर्छु सबको सृष्टी र पालन् पनि ।
आरोप् रामविषै गरिन्छ सब यो गर्न्या इनै हुन् भनी ।।

राम के संबंध में भी नहीं है ? शोक, अज्ञान आदि दोषों का उनमें लेशमात्र भी नहीं । सभी यह जान लें कि वही सबकी आत्मा हैं । दूसरा गोपनीय रहस्य कहता हूँ, यह सीताराम का सम्वाद सुनो । पृथ्वी के भार को हरण करने वाला कौन था । जब उन्होंने ही पृथ्वी को भार से रहित किया तभी सब कार्य पूर्ण हुए। ३२ [असुरों को मार कर] पृथ्वी के भार को हरण करके जब श्रीरघुनाथ राज्य-सिंहासन पर बैठे तो उन्होंने श्रीहनुमान को देखा । उन्होंने कृपा करके उसी समय सीता को आज्ञा दी, हे सीते ! हमारे महान् भक्त हनुमान तत्वज्ञान को प्राप्त करने के लिए खड़े हैं। ३३ जैसे ही राम का यह आदेश हुआ कि इन्हें तुम तत्वज्ञान दो, वैसे ही सीता ने जो भी तत्व था हनुमान को प्रदान किया । हे हनुमान ! राम के अतिरिक्त संसार में और कोई दूसरा तत्व नहीं । हे हनुमान ! और क्या कहूँ, राम ही साक्षात् परब्रह्म हैं और मैं इन्ही की शक्ति-स्वरूप हूँ । ३४ राम का आश्रय पाकर [प्रकृति-स्वरूपा] मैं सब प्राणियों की सृष्टि करती हूँ, सबका पालन करती हूँ । वास्तव में सब कुछ करने वाले राम ही हैं— विद्वान् लोगों का ऐसा ही कथन है । [किन्तु राम ब्रह्मस्वरूप हैं । पृथ्वी पर जो कुछ उनकी लीलाएँ है, वे तो उनकी प्रकृति-स्वरूपा मैं कर रही हूँ ।] अत्यन्त पवित्र रघुवंश में प्रभु रामचन्द्र जी ने जन्म

यस्निर्मल् रघुवंशमा प्रभुजिले जो जन्म याहीं लिया।
विश्वामित्र निमित्त यज्ञहरुमा राखी दया मन् दिया॥३५॥

जो पाप् गौतमपत्निका हरिदिया जो भाँचिदीया धनु।
जो मैंलाइ बिहा गऱ्या सब कुरा यस्ता कहाँ तक् भनूँ॥
जो ता गर्व हऱ्या ति वीर् परशुराम्-का जो अयोध्या बस्या।
बाह्रै बर्ष बिहा गऱ्यापछि बसी जो ता वनैमा पस्या॥३६॥

यस्ता काम् जति काम् भया ति सब काम् गर्न्या म हूँ तापनि।
भन्छन् लोक त रामलाइ सबका कर्ता इनै हुन् भनी॥
अन्तर्यामि अनादि साक्षि तिनिहुन् कर्ता कहाँ ती थिया।
मेरा गुण लिंदा त लोकहरुले कर्ता भनी पो दिया॥३७॥

येती ताहिं सिताजिबाट उपदेश् पाई सक्याथ्या जसै।
आफै राम् प्रभुले पनी दिनुभयो फेर् तत्त्वको ज्ञान् तसै॥
यस्तो हुन्छ परात्म आत्म यहि हो यो हो अनात्मा भनी।
आत्मा और परात्मलाइ बुझ्दा पाइन्छ मुक्ती पनि॥३८॥

आत्माको र परात्मको छ कति फेर् त्यो एक जानीलिनू।
जुन् जड् चीज अनात्म हुन् उ त झुटा जानेर छोडीदिनू॥

लिया, जिन्होंने विश्वमित्र द्वारा आयोजित यज्ञों में दया कर मन को अर्पित किया। ३५ जिन्होंने गौतम-पत्नी (अहिल्या) के पापों का निवारण किया, जिन्होंने शिवधनुष तोड़ा और जिन्होंने मुझे विवाहा—इस प्रकार की सब बातों को कहाँ तक कहूँ। जिन्होंने उन वीर परशुराम के दर्प को शांत किया, जिन्होंने विवाह के पश्चात् ही बारह वर्ष के लिए वन में प्रवेश किया। ३६ इस प्रकार के जितने कार्य हैं उन सबको वास्तव में मैं ही करती हूँ। जग कहता है कि राम इन सभी कार्यों के कर्ता हैं। वे तो अन्तर्यामी, अनादि, द्रष्टा [मात्र] हैं, वह कर्त्ता कहाँ? मेरे इन [प्रकृति के] गुणों को जानकर ही संसार ने [द्रष्टा राम को] कर्त्ता कह दिया। ३७ जब हनुमान सीता से इतना ज्ञानोपदेश प्राप्त कर चुके तो स्वयं प्रभु ने भी उन्हें पुनः तत्व का ज्ञान दिया। आत्मा ही परमात्मा है। आत्मा और परमात्मा को समझने से ही मुक्ति प्राप्त होती है। ३८ आत्मा और परमात्मा में क्या भेद है इसे ज्ञात कर लेना और जो जो वस्तुएँ जड़ और आत्मा से परे हैं उन्हें मिथ्या जान कर छोड़ देना [यही तत्वज्ञान है]। आत्मा और परमात्मा को विचार कर

आत्माको र परात्मको गरि विचार् एक् तत्त्व जान्यो जसै ।
अज्ञान् सब् छुटिजान्छ ती पुरुषको मै तुल्य हुन्छन् तसै ।।३९।।

यो मेरो हृदयै त हो प्रिय छ यो खुप् गुप्त राख्नू पनि ।
तत्त्वज्ञान् भनि यै कहिन्छ बुझिल्यौ सून्यौ हनुमान् ! भनी ।।
तत्त्वज्ञान् हनुमानलाइ रघुनाथ्- ले यै दिनूभो तहाँ ।
सोही ज्ञान् तिमिथ्यैं कहीकन सक्याँ सम्पूर्ण मैले यहाँ ।।४०।।

सून्यौ पार्वति ! रामको हृदय यो जो जो त पाठ् गर्दछन् ।
जो छन् जन्म सहस्रका सकल पाप् तिन्का सबै टर्दछन् ।।
जाति भ्रष्ट अधंम् हवस् तपनि लौ यस्लाइ खुप् पाठ् गरी ।
राम्को ध्यान् पनि गर्छ यो पनि भन्या त्यो जान्छ संसार् तरी।।४१।।

सूनिन् पार्वतिले अपार महिमा यो रामजीको जसै ।
फेर् विस्तार् गरी सुन्नलाइ मन भो ती पार्वतीको तसै ।।
बिन्ती फेर् शिवथ्यैं गरिन् पनि तहाँ हे नाथ् ! सबै रामको ।
लीला सुन्न मलाइ मन् हुन गयो येही बुझ्याँ कामको ।।४२।।

सूनोस् राम-लिला भनेर म उपर् माया बहुतै धरी ।
सब् लीलाहरु फेर् बताउनु हवस् जो छन् ति विस्तार् गरी ।।

[उनके] एक तत्व होने का जैसे ही ज्ञान होता है वैसे ही उस पुरुष की सारी अज्ञानता नष्ट हो जाती है और वह मेरे समान हो जाता है। ३९ यह जो तत्वज्ञान मैंने दिया है यह मेरा हृदय है, यह मेरा प्रिय है; इसे अत्यन्त गुप्त रखना। यह समझ लो कि तत्वज्ञान इसी को कहते हैं। [शंकर ने कहा—] राम ने हनुमान को यही तत्वज्ञान दिया था। हे पार्वती, वही मैने तुमसे कहा। ४० हे पार्वती, सुनो जो लोग इस राम-हृदय का पाठ करते हैं उनके सहस्र जन्मों में किये गये सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं। जातिभ्रष्ट तथा अधर्मी होने पर भी इसका पाठ करके जो राम का ध्यान करता है वह संसार से तर जाता है। ४१ पार्वती ने जब श्रीरामजी की इस अपार महिमा को सुना तो पुनः विस्तारपूर्वक सुनने का उनका मन हुआ। फिर उन्होंने शिवजी से विनती की, हे नाथ ! मुझे राम की लीला को श्रवण करने की पुनः इच्छा हुई है; मैं इसे ही कल्याणकारी समझती हूँ। ४२ रामलीला की कथा सुना कर आपने मेरे ऊपर महती कृपा की है। फिर भी राम की यह लीला विस्तारपूर्वक सुनने की मुझे उत्कण्ठा है। पार्वती जी का यह प्रेमाग्रह सुनकर शिवजी ने बड़े प्रेम के साथ सम्पूर्ण

यो प्रेम् पार्वतिको सुन्या र शिवले खुप् प्रेम राखिन् भनी ।
जो जो हुन् सब राम्-चरित्र शिवले ताहाँ वताया पनि ॥४३॥

ई भूमिकन रावणादि विरले भारी वनाई दिया ।
भारी भै ति रुँदै गइन् उहिँ जहाँ ब्रह्मा वस्याका थिया ॥
पापी धेर् भइ भार् भयो मकन ता यो भार छूटोस् भनी ।
आयाँ आज दयानिधान् चरणमा यो विन्ति पारिन् पनि॥४४॥

यस्तो बिन्ति सुनी दया पनि उठ्यो ती भूमिमाथी तहाँ ।
दौडी क्षीर समुद्रका तिर गया विष्णू रहन्थ्या जहाँ ॥
इन्द्रादीहरु साथमा लिइ स्तुती ताहाँ गऱ्याथ्या जसै ।
सर्वात्मा भगवान् प्रसन्न हुनु भै दर्शन् दिनूभो तसै ॥४५॥

देख्या सुन्दर रूप् जसै प्रभुजिको ब्रह्मा चरण्मा पऱ्या ।
भक्तीले स्तुति खुप् गरेर खुशि भै हात् जोरि बिन्ती गऱ्या ॥
हे नाथ्, रावण दुष्ट भै सकल लोक्-लाई विपत्ती दियो ।
इन्द्रादीहरुको त तेज् सहजमा खँचेर तेस्ले लियो ॥४६॥

यस्लाई अव मारिबक्क्सनु हवस् मानिस् सरीका वनी ।
मानिस्देखि मऱ्यास् भनेर वरदान् दीई रह्याँछू पनि ॥

राम-चरित्र का वर्णन किया । ४३ इस धरती को रावण जैसे [दुरात्मा] वीरों के पाप ने वोझिल वना दिया । [निदान्] जहाँ ब्रह्माजी वैठे थे, पापों के वोझ से व्याकुल होकर धरती रोती वहाँ गई । पापियों की वृद्धि होने से मुझ पर भार अधिक पड़ा है । इस भार से छुटकारा तो मिले, हे दयानिधान! इसी आकांक्षा से आज मैं आयी हूँ । यह कहती हुई पृथ्वी ने [चतुरानन ब्रह्मा के] चरणों में विनती की । ४४ इस प्रकार विनती सुनकर ब्रह्मा को पृथ्वी पर दया उत्पन्न हुई और शीघ्रही वे पृथ्वी को लिए हुए क्षीरसागर की ओर चले जहाँ विष्णु भगवान् निवास करते थे । इन्द्रादि देवों को साथ लेकर जैसे ही स्तुति की, वैसे ही सर्वात्मा भगवान् ने दर्शन दिया । ४५ प्रभुजी का भव्य रूप देखते ही ब्रह्माजी उनके चरणों में गिर-पड़े । प्रसन्न-भाव से भक्तों ने स्तुति की और ब्रह्मा ने हाथ जोड़कर विनय की । हे नाथ ! रावण दुष्ट आचरण से सारे संसार को विपत्ति में डाले हुए है । इन्द्रादि देवताओं के पराक्रम को तो उसने वड़ी सरलता से खींच लिया है अर्थात् उन्हें पराजित कर दिया है । ४६ [सो कृपा करके] मानव रूप धारण कर अव उसका संहार कीजिए ।

ब्रह्माको बिनती सुनेर भगवान्- को यो हुकूम् भो अनि ।
रावण्लाइ म मारुँला सहजमा मानिस् सरीको बनी।।४७।।

माया मेरि सिता भयेर रहनिन् छोरी जनक्की भई ।
छोरो भैकन जन्मुँला म दशरथ् जीका घरैमा गई।।
सीतालाइ लियेर पूर्ण गरुँला ब्रिन्ती म तिम्रो भनी ।
अन्तर्धान् भगवान् तहीं हुनुभयो त्रैलोक्यका नाथ् अनि।।४८।।

अन्तर्धान् भगवान् जसै हुनुभयो इन्द्रादिलाई पनि ।
ब्रह्माले खुशि भै अह्राउनुभयो भूलोक जाऊ भनी ।।
मानिस् भै भगवान् जती त रहनन् तेस् पृथ्वितल्मा गई ।
बानर् भैकन सब् तिमि बसिरह्या साहाय जस्ता भई ।।४९।।

ब्रह्माजी पनि सत्यलोक् गइगया येती अह्राईवरी ।
इन्द्रादी पनि वानरै भइ रह्या सब् पृथ्विलोक्मा झरी ।।
यै बीच्मा दशरथ् बडा विर थिया राजा अयोध्यामहाँ ।
तिन्को बृद्ध उमेर् भयो र पनि एक् छोरा भयेनन् तहाँ ।।५०।।

ताप्ले पूर्ण भई गुरूसित गया सोध्या उपायैं पनि ।
हे सर्वज्ञ मुने ! कसो गरि हुनन् छोरा मलाई भनी ।।

'मनुष्य के हाथों मरेगा' ऐसा वरदान भी मैं उसको दे चुका हूँ । ब्रह्मा की इतनी विनती सुनकर भगवान् की यह अनुग्रहवाणी हुई, मैं मानव-रूप धारण कर सहज ही रावण का विनाश कर दूँगा । ४७ मेरी शक्ति, सीता नाम से जनक की पुत्री होगी; मैं दशरथ के घर में उनके पुत्र के रूप में जन्म लूँगा । सीता को लेकर मैं तुम्हारी आकांक्षा पूरी करूँगा। इतना कह कर त्रिलोकीनाथ भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्द्धान हो गये । ४८ जैसे ही भगवान् अन्तर्द्धान हुए, प्रसन्न होकर ब्रह्मा जी ने इन्द्र को भी मानवलोक में जाने का आदेश दिया । जब तक भगवान् मानवलोक पृथ्वी में मनुष्य होकर रहें तब तक तुम बन्दर होकर उनके सहायक की तरह रहो । ४९ इतना कहकर ब्रह्मा जी भी स्वर्गलोक को चले गये । इन्द्रादि [देवता] भी पृथ्वी में उतर कर वानर बनकर रहने लगे । इन्हीं दिनों अयोध्या में महान् वीर राजा दशरथ [राज्य कर रहे] थे । उनकी वृद्धावस्था आजाने तक भी कोई पुत्र नहीं हुआ । ५० चिन्ताग्रस्त होकर राजा दशरथ ने गुरु (वसिष्ठ) के पास जाकर अपनी चिन्ता के निवारण का उपाय पूछा । हे मुनिवर ! मुझे किस प्रकार पुत्र-प्राप्ति

यस्कामले फल मिल्छ यो भनि सबै जान्या वशिष्ठैं थिया ।
यस्तो बिन्ति सुनी वशिष्ठ गुरुले युक्ती बताई दिया ॥५१॥

हुन्छन् पुत्र अवश्य जल्दि महाराज् एक् यज्ञ ऐले गन्या ।
शान्ताका पति ऋष्य श्रृंग ऋषि छन् ती डाकन ऐले पन्या ॥
ती हामी बसि यज्ञ एक् हजुरको खातिर् गरौंला जसैं ।
चार् छोरा अति वीर् हुनन् हजुरका सब् ताप छुट्नन् तसैं॥५२॥

यस्तो अर्ति वशिष्ठ को जब सुन्या राजा बहुत् खुश भया ।
शान्ताका पतिलाइ डाकीकन खुप् याग् गर्न लागीगया ॥
ऋष्यैश्रृंग वशिष्ठ दूइ ऋषिले होम् गर्न लाग्या जसै ।
पायस्को थलिया लिईकन तहाँ आया ति अग्नी तसै ॥५३॥

यस् पायस्कन आज लेउ महराज् ! छोरा हुन्याछन् भनी ।
राजालाइ दिया र पायस तहाँ लुक्या ति अग्नी पनि ॥
राजा खूशि भई दुवै ति ऋषिका कोमल् चरण्मा परी ।
कौशल्या र ति कैकयाकन दिया पायस् दुवै भाग् गरी॥५४॥

खानैं बाँकि थियो तसै बखतमा आइन् सुमित्रा पनि ।
कौशल्या र ति कैकयीसित भनिन् ख्वै भाग मेरो भनी ॥

होगी। इस कर्म से यह फल प्राप्त होगा—यह जाननेवाले गुरु वसिष्ठ ही थे। [राजा की]ऐसी विनती सुनकर गुरु वसिष्ठ ने उपाय बता दिया। ५१ महाराज ! एक [पुत्रेष्ठि] यज्ञ करने से शीघ्र ही पुत्र की निश्चय प्राप्ति होगी। शान्ता के पति ऋष्यश्रृङ्ग एक ऋषि हैं, उन्हें अभी बुलाना चाहिए और उनके साथ बैठकर हम लोग आपके लिए वैसा ही एक यज्ञ करेंगे। [उसके फलस्वरूप] आपके चार अत्यन्त वीर पुत्र होंगे और आप सब तापों से मुक्त होंगे। गुरु वसिष्ठ का यह परामर्श सुनकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुए। शान्ता के पति ऋष्यश्रृंग को बुलाकर [उनके आदेशानुसार] संविधि यज्ञ का आरम्भ किया। जैसे ही ऋष्यश्रृङ्ग और वसिष्ठ, दोनों ऋषि हवन करने लगे, वैसे ही अग्निदेव खीर की एक थाली हाथ में लिए वहाँ प्रगट हुए। ५३ प्रस्तुत इस खीर को ग्रहण करें, स्वयं भगवान् पुत्र रूप में आपके यहाँ जन्म लेंगे। यह कहते हुए राजा को खीर देकर उसी समय अग्नि-देव अन्तर्द्धान हो गये। राजा ने प्रसन्न होकर दोनों ऋषियों के कोमल चरणों में साष्टांग प्रणाम किया। खीर के दो भाग करके, कौशल्या और कैकेयी को [एक-एक भाग] दिया गया। ५४

दूवैले दुइ भागदेखि झिकि भाग् तिनको पुऱ्याई दिया।
तीन् रानी मिलि तेहि पायस तहाँ संपूर्ण खाई लिया ॥५५॥

तीनै रानि ति गर्भिणी पनि भया तेज् देवताको सरी।
देखी यो सब रानिका सकल लोक् खूशी भया तेस् घरी॥
कौशल्या जननी गराइ भगवान् श्रीराम पैदा भया।
देखिन् श्रीप्रभुको चतुर्भुज स्वरूप् सब् माइका ताप् गया॥५६॥

हात् जोरी बहुतै स्तुती पनि गरिन् ईश्वर् इनै हुन् भनी।
जान्याँ नाथ! हजूरलाइ सबका आत्मा स्वरूपी भनी॥
यो ब्रह्माण्ड पनी सहज् उदरमा लिन्या त आफै थियौ।
मेरा आज उदर्विषे बसि यहाँ यो जन्म ऐले लियौ॥५७॥

देख्याँ भक्त-उपर् दया हजुरको हे नाथ्! शरण्मा पऱ्याँ।
यै मूर्ती प्रभुको सदा मनमहाँ झल्कोस् पुकारा गऱ्याँ॥
यस्तो दिव्य शरीर् लुकाइकन बेस् बालक् स्वरूप्का बनी।
दर्शन् देउ मलाइ हेर्छु भगवान्! फेर् बाललीला पनि॥५८॥

तेही बालक मूर्तिलाइ म यहाँ आलिङ्गनादी गरी।
सब् पाप् नष्ट गराउँला र करुणा होला र जाँला तरी॥

(खीर) खाने ही वाली थीं कि सुमित्रा भी उसी समय वहाँ आ पहुँची और कहा कि मेरा भाग कहाँ है। दोनों ने अपने-अपने हिस्से में से निकाल कर उसके लिए भाग पूरा किया। तीनों रानियों ने मिलकर सब खीर खाई। ५५ तीनों रानियाँ गर्भवती भी हो गई। उनके मुखमण्डल दिव्य तेज़ से पूर्ण थे। ऐसा देखकर सारा ब्रह्माण्ड हर्षोल्लास से भर गया। कौशल्या ने भगवान् श्रीराम को जन्म दिया। भगवान् का चतुर्भुज स्वरूप देखकर माता का ताप समाप्त हो गया। ५६ राम ईश्वर हैं, ऐसा समझकर हाथ जोड़कर [कौशल्या ने] उनकी स्तुति भी की—नाथ मैं आपको पहचान गई। आप सबके आत्मास्वरूप हैं। इस ब्रह्माण्ड को भी सहज ही पेट में धारण करने वाले आप ही थे। आज मेरे गर्भ में स्थित होकर यहाँ जन्म लिया है। ५७ हे नाथ! आपकी ऐसी महान् कृपा देखकर आपके चरणों में पड़ती हूँ। मेरे हृदय की यही पुकार है कि आपकी यह मूर्ति सदैव मेरे हृदय-पटल पर विराजमान रहे। इस दिव्य रूप को अदृश्य कर सुन्दर बाल-स्वरूप में मुझे दर्शन दीजिए। तब मैं बाल-लीला देखकर आनन्द प्राप्त करूँगी। ५८ आपके उसी बाल-रूप की मूर्ति को मैं आलिंगन करके सब पापों से मोक्ष पाऊँगी। यही

यो बिन्ती महतारिको सुनि हुकूम् यो भो प्रभूको तहाँ ।
मातर् ! जुन् छ हजूरको हित कुरो होओस् सबै थोक् यहाँ ॥५९॥

दूवै स्त्री पुरुषै भई अघि ठुलो मेरो तपस्या गऱ्यौ ।
तीमीलाइ म पुत्र पाउँ भनि खुप् इच्छा यसैमा धऱ्यौ ॥
हूँला पुत्र भनेर वर् पनि दियाँ सोही कुराले यहाँ ।
तिम्रो पुत्र भयेर जन्मन गयाँ व्यर्थै म गर्थ्या कहाँ ॥६०॥

कौशल्यासित बात् पनी यति गरी वालक् सरीका वनी ।
चेष्टा वालककै लिया प्रभुजिले खुप् रून लाग्या पनि ॥
थाहा भो दशरथ्जिलाइ र गया दर्शन् गऱ्याथ्या जसै ।
देख्तैमा परिपूर्ण मन् हुन गयो आनन्द पाया तसै ॥६१॥

तत्क्षण्मा तहिं जातकर्म पनि भो सब् काम् गुरूले गऱ्या ।
कैकेयीतिर ता भरत् हुन गया आनन्दमा सब् पऱ्या ॥
जम्ल्याहा दुइ पुत्र पाउँदि भइन् ताहाँ सुमित्रा पनि ।
जेठा लक्ष्मण ता भया ति दुइमा शत्रुघ्न कान्छा वनी॥६२॥

तीन् रानीतिर चार पुत्र सुकुमार् जन्मी सक्याथ्या जसै ।
भूमि रत्न सुवर्ण वस्त्रहरुका भारी भया दान् तसै ॥

आपकी मेरे ऊपर महान् कृपा होगी । माता की यह विनती सुन कर वरदान-स्वरूप भगवान् ने कहा, हे माता ! आपके हितार्थ सभी कुछ आपकी इच्छानुसार हो जाये । ५९ किसी समय आप दोनों स्त्री-पुरुष ने इस आकांक्षा से महान् तप किया था कि मुझे आप पुत्र-रूप में प्राप्त करो। उस समय मैंने आपको वरदान देकर आपका पुत्र होना स्वीकार भी किया था । इसीलिए मै आपका पुत्र बनकर आया हूँ । व्यर्थ ही मैं ऐसा कहाँ करता ! ६० माता कौशल्या से इतनी बातें करके प्रभु ने वाल-रूप धारण किया और वालक की भाँति रोने लगे । और वाल-क्रीड़ाओं से माता को प्रमुदित करने लगे । राजा दशरथ को मालूम होते ही वे दर्शनों के लिए आये । देखते ही उनका हृदय आनन्द से विभोर हो गया । उन्हें एक तृप्ति की अनुभूति हुई । ६१ गुरु ने उसी समय जाति-कर्म आदि सब सम्पन्न करवाये । [राजा-प्रजा] सभी आनन्दित हुए । कैकेयी से भी भरत तथा सुमित्रा से जुड़वे पुत्र ज्येष्ठ लक्ष्मण और कनिष्ठ शत्रुघ्न ने जन्म लिया । ६२ जैसे ही तीनों रानियों के चार सुकुमार पुत्र उत्पन्न हुए वैसे ही [महाराज दशरथ की ओर से] भूमि, रत्नादि, स्वर्ण तथा वस्त्रों का दान किया जाने लगा । गुरु वशिष्ठ ने कौशल्या से

कौशल्यासुतको वशिष्ठ गुरुले नाम् 'राम' भन्नू भनी।
राख्या कैकयिपुत्रको 'भरत' नाम् जमल्याहकोनाम् पनि॥६३॥

जेठाको शुभ नाम 'लक्ष्मण' गरी जुन् चाहिं कान्छा थिया।
तिन्को नाम् पनि काम-माफिक असल् 'शत्रुघ्न' राखी दिया॥
लक्ष्मण् राम्सित खेल्दछन् भरतथ्यैं शत्रुघ्न खेल्दा भया।
पायस्कै अनुसारले हुन गयो प्रीती त वढ्दैगया॥६४॥

बालक् काल् बितिगैगयो प्रभुजिको सब् वाललीला गरी।
चारैको व्रतबन्ध भो पढिसक्या सब् शास्त्र खुब् बोध् गरी॥
खेल्या क्यै दिनमा शिकार बनमा सच्चा शिकारी बनी।
राज्काज्गर्नुजती थियो सकल त्यो राज्काज् चलाया पनि॥६५॥

राम् हुन् परात्मा ति कहाँ विकारी।
यस् लोकमा छन् नररूपधारी॥
काम् गर्न लाग्या ति नरैसरीका।
लीला अपार् छन् भगवान् हरीका॥ ६६ ॥

राम् नारायण हुन् भनेर मनले जान्या र भेट्छू भनी।
विश्वामित्र ऋषी बहुत् खुशि हुँदै आया अयोध्या पनि॥
देख्या श्री दशरथ्जिले र वहुतै आदर् ऋषीको गरी।
सोध्या काम् किन आज आउनु भयो भन्दै बहुत् प्रेम् धरी॥६७॥

उत्पन्न बालक का नाम राम और कैकेयी से उत्पन्न बालक का नाम भरत रक्खा। ६३ जुड़वे बालकों में से ज्येष्ठ पुत्र का नाम लक्ष्मण तथा कनिष्ठ का नाम उसके कार्यों के अनुसार शत्रुघ्न [अर्थात् शत्रु का नाश करने वाले] रक्खा गया। लक्ष्मण राम के साथ तो शत्रुघ्न भरत के साथ खेलते हैं। यह सारा विधान खीर के अनुसार ही हुआ। ६४ प्रभु का वाल्यकाल वाल-लीलाओं में व्यतीत हुआ। चारों भाइयों का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। उन्होंने सभी शास्त्रों का अध्ययन समाप्त किया। एक कुशल आखेटक के रूप में कितने ही दिन वन में शिकार खेलते फिरे। राज-काज में भी प्रवीण हुए। ६५ राम परमात्मा है। वे तो निर्विकार हैं, उनमें, विकार कहाँ? इस संसार में उन्होंने मानव-रूप धारण किया है। वे मनुष्य की ही तरह कार्य करने लगे। भगवान् हरि की लीला अपरम्पार है। ६६ ऋषि विश्वामित्र ने हृदय से यह अनुभव किया कि राम नारायण विष्णु हैं। वे वहुत हर्पित

आदर्पूर्वकका सुन्या प्रिय वचन् यस्ता ऋषीले जसै ।
आफ्नू दर्द जउन् थियो मनमहाँ सोही वताया तसै ।।
हे राजन् ! सव पर्व पर्वहरुमा ईश्वर्विषे मन् धरी ।
गर्छू होम्हरु कर्म तेस् बखतमा आयेर होम् नाश् गरी।।६८।।

मारिच्ले र सुवाहुले वहुत दिक् गर्छन् र पापी भनी ।
दूवैलाइ मराउनाकन उठ्यो रिस् आज मेरो पनि ।।
सोही विन्ति गरूँ भनेर अहिले आयाँ हजुर्मा यहाँ ।
जेठा पुत्र मलाइ वक्सनु हवस् लैजान्छु ऐले वहाँ।।६९।।

लक्ष्मण् साथ् गरि रामलाइ अधिराज् ऐले हजुर्ले दिया ।
मारिच्लाइ सुबाहुलाइ सहजै मार्न्या यिनैले थिया ।।
यस्मा अर्ति वशिष्ठको लिनुहवस् दीना नदीना महाँ ।
भन्छन् दीनु त बक्सनू पनि हवस् यै काम आयाँ यहाँ।।७०।।

विश्वामित्रजी को सुन्या वचन यो राजा सकस्मा पर्‍या ।
दिऊँ कि नदिऊँ यही मनमहाँ चिन्ता वहूतै गर्‍या ।।
सोध्या ताहिं वशिष्ठथ्यैं पनि गुरो यस्तो पर्‍यो क्या गरुँ ।
कल्याण् हुन्छ कसो गरेर अहिले अर्ती मिलोस् एक् वरु।।७१।।

हुए और दर्शनार्थ अयोध्या आये । दशरथ जी ने ऋषि को देखकर उनका भव्य स्वागत किया और अत्यन्त प्रेम-पूर्वक आने का कारण पूछा । ६७ ऋषि ने दशरथ के प्रिय वचनों को सुनकर अपने मन की सारी व्यथा कह सुनाई । हे राजन् । सभी पर्वो मे ईश्वर के प्रति मन लगाकर जव हवन कर्मो को करता हूँ, तो राक्षसगण हवन-कार्य में वाधा डालते हैं । ६८ मारीच और सुबाहु अत्यधिक कष्ट दे रहे हैं । आज मेरे मन में भी इतना क्रोध उठा है कि मै उन दोनों को मरवा डालूँ । अतः मैं आपसे यही विनती करने आया हूँ कि इस कार्य के लिए मुझे अपना ज्येष्ठ पुत्र देने की कृपा करें; मैं उन्हें अभी वहाँ ले जाऊँगा । ६९ महाराज ! यदि आप लक्ष्मण सहित राम को देते तो मारीच तथा सुवाहु को सरलता पूर्वक मार डालते । देने न देने के विषय मे आप गुरु वशिष्ठ से परामर्श कर लेने की कृपा करें । इसी काम से मैं यहाँ आया हूँ । ७० विश्वामित्र के वचन सुनकर महाराज संकट में पड़ गये । दें या न दें ? यही चिन्ता उनके मन में उठने लगी । उन्होंने वशिष्ठ से पूछा, गुरुदेव ! ऐसी समस्या आ पड़ी है, क्या करूँ । किस प्रकार कल्याण होगा यही वताने की कृपा करें । ७१ एक तो यही कठिन है कि राम को देखे विना मैं

रामलाई म नदेखि बाँच्छु कसरी एक् यै कठिन् भो अनि ।
इन्लाई नदिया सराप् पनि दिनन् की लाग्छ यस्तो पनि ।।
यस्मा श्रेय यसो छ यो गर भनी पाऊँछु आज्ञा जसो ।
सोही काम म गर्दछू हित हुन्या कुन् पाठ् छ गर्नू कसो।।७२।।
यो बिन्ती दशरथ्जिको जब सुन्या ताहीं गुरूले पनि ।
रामको गुह्य कुरा सबै भनि दिया यस्ता इ राम् हुन् भनी ।।
हे राजन्! तिमि रामलाइ अहिले हुन् पुत्र मेरा भनी ।
भन्छौ पुत्र ति हुन् तथापि इ त हुन् चौधै भुवन्का धनी।।७३।।

भूभार् हर्न निमित्त आज भगवान् यस् पृथ्वितल्मा झर्‍या ।
कौशल्यातिर जन्मनू पनि थियो सो सत्य ऐले गर्‍या ।।
कौशल्या दशरथ् दुवै तिमिहरू कश्यप् अदीती थियौ ।
ईश्वर्लाइ म पुत्र पाउँ भनि तप् गर्दै समाधी लियौ।।७४।।
खुशी भै वरदान् दिया प्रभुजिले छोरो म हूँला भनी ।
सोही सत्य गराउनाकन यहाँ जन्म्या परात्मा पनि ।।
शेष्हुन् 'लक्ष्मण' शङ्खहुन् 'भरतजी' 'शत्रुघ्न' चक्रावतार् ।
हुन् को जान्दछ तत्त्व यो वुझ तिमी लीला प्रभूको अपार्।।७५।।

किस प्रकार जीवित रह सकूँगा। यदि मैं इन्हें न दूँ तो ऐसा लगता है कि कहीं विश्वामित्र श्राप न दे दें। इसमें कौन कार्य कल्याणकारी होगा, आप आज्ञा दें; वही हितकर कार्य मैं करूँ। कौन सा आदेश किस प्रकार पूर्ण करना है मुझे आज्ञा दें। ७२ गुरु ने राजा दशरथ की विनती सुनकर उन्हें राम के समस्त गुणों से परिचत कराया। उन्होंने कहा, हे राजन्! आप तो राम को अपना पुत्र कहते हैं। सो तो है ही, तथापि ये वही चौदह भुवन के मालिक हैं। ७३ पृथ्वी के भार को हरण करने आज भगवान् धरती पर पधारे है। कौशल्या माता की गोद में जन्म लेना था सो भी अब सत्य हुआ। कौशल्या और दशरथ आप दोनों पूर्व जन्म में अदिति और कश्यप थे। तपस्या में रत होकर भगवान् को अपने पुत्र के रूप में पाने की कामना की थी। ७४ प्रभु ने तपस्या से मुग्ध होकर आपका पुत्र होने का वरदान दिया। उसी को सत्य प्रमाणित करने के लिए प्रभु ने यहाँ जन्म लिया। शेष का (शेषनाग) लक्ष्मण, शंख का भरत, चक्र का शत्रुघ्न अवतार है। इन तत्वों को कौन जानता है। अतः आप प्रभु की इस अपार लीला को समझें। ७५ स्वयं प्रभु की मूल शक्ति, अनन्त गुणों से पूर्ण दिव्य मूर्ति वनकर जनक जी की पुत्री

मूल् शक्ति प्रभुको अनन्त गुणकी सो दिव्य मूर्ती बनी।
छोरी भै ति वस्याकि छन् जनककी सीता छ नाऊँ पनि ॥
सीता राम् दुइको विवाह विधिले संयोग् गराऊँ भनी।
विश्वामित्रजिको भयो र मनमा आई रह्या छन् पनि॥७६॥

दीन्यै योग्य म मान्दछू भनि गुरू— ले अर्ति दीया जसै।
खूशी भै दशरथ्जिले पनि दिया लक्ष्मण् सहित् राम् तसै ॥
राम् लक्ष्मण्कन पाउँदा ऋषि पनी अत्यन्त खूशी भया।
आशीर्वाद् दशरथ् जिलाइ दिइ राम् लक्ष्मण् लिई ती गया॥७७॥

केही दूर् गइ रामलाइ ऋषिले विद्या सिकाई दिया।
जुन् विद्या पढि भोक्थकाइ कहिल्यै लाग्दैन यस्ता थिया ॥
गङ्गाका तिरमा बडो बन थियो पुग्या जसै ती तहाँ।
विश्वामित्रजिले कह्या प्रभुजिथ्यैँ राम्! ताड़का छे यहाँ ॥७८॥

त्यो हो राक्षसि कामरूपि छ बहुत् लोक्लाइ बाधा पनि।
गर्छे यस्कन मारिबक्सनु हवस् यो पापिनी हो भनी ॥
विश्वामित्रजिको वचन्कन सुनी श्रीरामजीले पनि।
टंकार् खुप् धनुको गऱ्या सुनि यहाँ त्योजल्दिआवस्भनी॥७९॥

त्यो टंकार् सुनि ताड़का पनि तहाँ दौड़ेर आई जसैं।
हान्या बाण् प्रभुले गड़्यो हृदयमा त्यो बाण्, मरी त्यो तसैं ॥

होकर बैठी है और नाम भी सीता है। सीता और राम दोनों का विवाह का विधिवत संयोग उत्पन्न कराने की इच्छा विश्वामित्र जी के मन में हुई है, इसी लिए ये आए हुए हैं। ७६ जैसे ही गुरु ने ऐसा परामर्श दिया कि देना ही उचित है, वैसे ही प्रसन्न होकर दशरथ जी ने भी राम को लक्ष्मण सहित दे दिया। राम-लक्ष्मण को पाकर ऋषि भी अत्यन्त हर्षित हुए और दशरथ जी को आशीर्वाद देते हुए राम-लक्ष्मण को लेकर चले गए। ७७ कुछ दूर जाकर गुरु ने राम-लक्ष्मण को ऐसी मंत्र-विद्या की शिक्षा दी जिसे प्राप्तकर क्षुधा तथा श्रम का अनुभव कभी नहीं होता। गंगा के किनारे एक वड़ा जंगल था। वे जैसे ही वहाँ पहुँचे विश्वामित्र जी ने प्रभु राम से कहा कि ताड़का राक्षसी यहीं रहती है। ७८ यह राक्षसी मनमोहिनी है और वहुतों के शुभ कार्यो में विघ्न-बाधा पहुँचाती है। यह पापिन है। अतएव इसे मारने की कृपा करें। विश्वामित्र के वचनों को सुनकर रामचन्द्र जी ने धनुष को जोर से टंकारा, जिसे सुनकर वह शीघ्र ही आ जाय। ७९ धनुष की टंकार को सुनकर

यक्षी थी अघिकी सराप् परि तहाँ तेस्ती भयाकी थिई।
राम्ले मारिदिदा त श्राप् पनि टऱ्यो फेर् यक्षिको रूपलिई।।८०।।

श्रीराम्चन्द्रजिका वरीपरि घुमी प्रेम्ले नमस्कार् गरी।
स्वर्गैमा गइ रामका वचनले वेस् एक् विमान्मा चढी।।
विश्वामित्र ऋषि बहुत् खुशि भया यो कार्य देख्या जसै।
जो सब् शास्त्र-रहस्य हो सब दिया ती रामलाई तसै।।८१।।

कामाश्रम् रमणीय थल् तहिं थियो एक्रात् तहाँ वास् गरी।
फेर् सिद्धाश्रममा गया रघुपती सब्लाइ मङ्गल् गरी।।
तेस् सिद्धाश्रममा अनेक् ऋषिथिया पूजा सबैले गऱ्या।
मारिच् फेक्न सुबाहु मार्नकन राम् ताहाँ अगाड़ी सऱ्या।।८२।।

विश्वामित्रजिलाइ भन्नु पनि भो मारिच् सुबाहू कहाँ।
वस्छन् यज्ञ ठुलो गरी लिनुभया ती आउँथ्या की यहाँ।।
भेटै आज भयेन मार्नु कसरी यो मर्जि सून्या जसै।
विश्वामित्र ऋषी अरू ऋषि लिई होम् गर्न लाग्या तसै।।८३।।

ताड़का ज्योंही वहाँ आयी, प्रभु ने वाण छोड़ा। वह बाण जाकर उसके हृदय में लगा। वह तत्काल मृत्यु को प्राप्त हुई। यह राक्षसी पूर्व जन्म में यक्षिणी थी। शाप के कारण वह इस दशा को प्राप्त हुई थी। राम के हाथों मरने से उसे इस भयंकर शाप से भी मुक्ति मिल गई। ८० अपने राक्षसी जीवन से मुक्त होकर ताड़का ने प्रभु की परिक्रमा की और प्रेमपूर्वक प्रणाम किया। प्रभु की आज्ञा से वहाँ एक उत्तम विमान प्रस्तुत हुआ, जिस पर चढ़कर वह स्वर्ग लोक को गई। इस कार्य को देखकर विश्वामित्र उनसे अत्यधिक प्रसन्न हुए और जो भी शास्त्र-ज्ञान का रहस्य था उससे राम को परिचित कराया। ८१ इसके बाद उन्होंने कामाश्रम नामक एक रमणीक स्थान में एक रात विश्राम किया। तत्पश्चात् सबका कल्याण करके रघुनाथ जी सिद्धाश्रम को गए। उस सिद्धाश्रम में अनेक ऋषि थे, उन सब लोगों ने राम का सत्कार किया। फिर मारीच और सुबाहु को मारने के लिए राम अग्रसर हुए। ८२ विश्वामित्र से उन्होंने कहा कि मारीच और सुबाहु कहाँ रहते हैं। उनसे तो भेंट ही नहीं हुई। उन्हें मारा किस प्रकार जाए। उन्हें यहाँ तक बुलाने के लिए एक यज्ञ करना चाहिए। रामचन्द्र की ऐसी बातें सुनकर विश्वामित्र अन्य सभी ऋषियों को साथ लेकर यज्ञ करने लगे। ८३

दिन् मध्यान्ह भयो तसै बखतमा आया ति राक्षस् पनि ।
मान्र्याकाल्कनचाल्नपाइ अघिझैं होम् नाश् गरौंला भनी ॥
काहीं हाड़ खसाउँछन् कहि रगत् यस्तै प्रकार्ले गरी ।
आया ती जब यज्ञमा प्रभुजिले हान्या अगाड़ी सरी॥८४॥

मारिच्लाइ त वाणले जलधिका तिर्मा पुन्याई दिया ।
अग्नीबाण धरी सुबाहुकन ता भस्मै गराई दिया ॥
तिन्का फौज् पनि ताहिं लक्ष्मणजिले मारी सक्याथ्या जसै ।
खूशी भैकन पुष्पवृष्टि गरियो सब् देवताले तसै॥८५॥

विश्वामित्र बहुत् प्रसन्न हुनुभै राम्लाइ काख्मा लिया ।
भोजन् गर्न निमित्त राम्कन तहाँ मीठा फलादी दिया ॥
तीन्दिन् ताहिं मुकाम् गऱ्या प्रभुजिले वार्ता कथाको गरी ।
चौथादिन् ऋषिले गऱ्या विनति एक् राम्का अगाड़ी सरी॥८६॥

हेराम्! जाउँ जनक्जिका पुरमहाँ राजा जनक् छन् बड़ा ।
गर्नन् आदर भक्तिले हजुरका साम्ने हुन्याछन् खड़ा ॥
ताहाँ एक् शिवको धनुष् पनि छ वेस् देखीयला त्यो पनि ।
यो बिन्ती ऋषिको सुनेर रघुनाथ् खूशी भया वेस् भनी॥८७॥

मध्याह्न का समय हुआ, तत्काल राक्षसगण वहाँ आये । षडयंत्र की चाल को न समझकर सदा की भाँति हवनादि को नष्ट करने के लिए कहीं अस्थियाँ कहीं रक्तादि गिराने लगे । जैसे ही वे यज्ञ में आये और विघ्न-कार्य आरम्भ किया वैसे ही प्रभु ने आगे बढ़कर प्रहार किया । ८४. मारीच को तो वाण द्वारा समुद्र के किनारे पहुँचा दिया और सुबाहु को अग्निवाण से भस्म कर दिया । उनकी समस्त सेना भी लक्ष्मण द्वारा मारी जा चुकी थी । तब हर्षोल्लास से पुलकित होकर देवताओं ने पुष्प-वर्षा की । ८५ विश्वामित्र ने अत्यन्त हर्षित होकर राम को गोद में उठा लिया और भोजन हेतु उन्हें फलादि दिये । कथा-वार्ता करते हुए प्रभु जी वहाँ तीन दिन रहे । चौथे दिन ऋषि ने राम के सम्मुख आकर एक विनती की । ८६ हे राम ! आप जनकपुर चलें, जहाँ एक बड़े प्रतापी राजा जनक जी हैं । वह आपको पाकर आपके सम्मुख उपस्थित होकर आपका बड़ा ही आदर करेंगे और भक्ति-भावना से भर उठेंगे । वहाँ शिवजी का एक उत्तम धनुष भी है, आप उसे भी देख लेंगे । ऋषि की यह विनती सुनकर रघुनाथ जी बड़े ही प्रसन्न हुए । ८७

विश्वामित्र र भाइ लक्ष्मण लिई श्रीराम् हिंड्याथ्या जसै ।
आश्रम् गौतमको पऱ्यो नजरमा गंगा-किनार्मा तसै ॥
आश्रम्का नजिकै असल् फल सहित् फूल्को बघैंचा थियो ।
जन्तू नाम् त थियेन कोहि तपनी संभार् बिना त्यो थियो॥८८॥

मालुम् राम्कन क्या कहीं कमि थियो जो ता जगत्का धनी ।
सोध्या तैपनि यो असल् छ किन हो रित्तै बघैंचा भनी ॥
विश्वामित्र थिया सबै गुणनिपुण् विस्तार् सुनाया पनि ।
गौतम्को अघि बस्ति हो अब भन्या छैनन् यहाँ क्वै पनि॥८९॥

भार्या गौतमकी समान गुणकी भक्तै अहिल्या थिइन् ।
ब्रह्माकी त्ति त पुत्रि हुन् गुणि हुँदा सब् खुश् गराई लिइन् ॥
गौतम् कार्य-निमित्त दूर् जब गया रूप् गौतमैको सरी ।
धारी गौतम-पत्निका नजिकमा इन्द्रै अगाड़ी सरी॥९०॥

आई भोग विलास् गरेर खुशि भै फर्की गयाथ्या जसै ।
देख्ता गौतमलाइ गौतमजिले आश्चर्य मान्या तसै ॥
आफ्नू रूप दुरुस्त देखिकन खुप् गौतम् रिसाया पनि ।
सोध्या होस् तँ कउन्? बता नहिं भने हेर् भस्म गर्छू भनी॥९१॥

विश्वामित्र तथा भाई लक्ष्मण को साथ लिये श्रीराम जी जा रहे थे । उन्होंने गंगा नदी के किनारे स्थित गौतम ऋषि का आश्रम देखा । आश्रम के निकट एक सुन्दर फूलों से भरा उद्यान देखा; सांभर (हरिण) के अतिरिक्त अन्य कोई भी पशु वहाँ न था । ८८ जगत्पति राम को क्या नहीं मालूम था । तिसपर भी उन्होंने इस सुनसान उद्यान के विषय में पूछ लेना ही उत्तम समझा । विश्वामित्र सर्वज्ञ थे, अतः उन्होंने विस्तारपूर्वक राम को वताया कि वहाँ कोई भी नहीं है । ८९ गौतम के ही समान गुणवती एवं भक्त उनकी पत्नी भी थी जिसका नाम अहिल्या था । वह तो ब्रह्मा की पुत्री थी जिसने अपने गुणों से सवको प्रसन्न किया । जव गौतम किसी कार्यवश कहीं दूर गए हुए थे उस समय इन्द्र गौतम का रूप धारण करके गौतम पत्नी के पास आया । ९० भोग-विलास के पश्चात् जैसे ही वह प्रसन्न होकर लौट रहा था वैसे ही गौतमी (अहिल्या) दूसरे गौतम को देखकर आश्चर्यचकित हो गई । अपने ही रूप को देखकर गौतम अत्यन्त क्रोधित हुए और इन्द्र से प्रश्न किया कि बताओ तुम कौन हो; अन्यथा अभी तुम्हें भस्म कर दूँगा । ९१ तव भयभीत होकर वह बोला कि हे ब्राह्मण! मैं इन्द्र

ब्राह्मण्! इन्द्र म हूँ भनेर डरले विन्ती गऱ्याथ्या जसै ।
गौतम्ले पनि रीसमा परि दिया यस्तो सराप् पो तसै ॥
योनीमा अति लुब्ध आज भइछस् यत्नो वडो भै पनि ।
तेरा येहि शरीरमा अव हुनन् हज्जार योनी भनी॥९२॥

दीया येति सराप् र इन्द्र पनि फेर् आफ्ना स्थलैमा गया ।
पत्नीलाइ सराप् दियेर ऋषिले पत्थर् वनाई दिया ॥
जन्तू कुछ् नहुनन् यहाँ अव उपर् पत्थर् भई तैं रह्यास् ।
जैले श्रीरघुनाथ् चरण् धरिदिनन् तैले तँ मुक्तै भयास्॥९३॥

यस्तो सत्य सराप् पऱ्यो र पतिको ताहीं अहिल्या पनि ।
पृथ्वीमा गिरि गैगइन् अचल एक् पत्थर् स्वरूप्की वनी ॥
पादस्पर्श ति खोज्दछिन् हजुरको पाप् मुक्त होला भनी ।
तिन्लाई करुणा गरी हजुरले कुल्चीदिन्या हो पनी॥९४॥

यस्तो विन्ति सुन्या जसै ति ऋषिका श्रीराम् तुरुन्तै गया ।
देख्ता पत्थर एक् ठुलो प्रभुजिले कुल्चीदिँदा त्यो भया ॥
सुन्दर् मूर्ति भई खड़ा भइगइन् ताहाँ अहल्या पनि ।
श्रीराम्चन्द्रजिले प्रणाम् पनि गऱ्या ई ब्राह्मणी हुन् भनी॥९५॥

देखिन् श्री रघुनाथलाइ र तहाँ खूशी अहिल्या भइन् ।
पूजा स्तुति गरेर राम्सित विदा मागी पति थ्यैं गइन् ॥

हूँ। इसे सुनकर क्रोधित गौतम ने भी शाप देदिया कि जब इतने महान् होकर भी तुम यौवन के वशीभूत हुए हो तो तुम्हारे इस शरीर में हज़ारों योनि-चिह्न उत्पन्न हो जायेंगे। ९२ इस प्रकार का शाप पाकर इन्द्र पुनः अपने लोक को चले गए। पत्नी अहिल्या को भी ऋषि ने शाप देकर पत्थर वना दिया। उन्होंने कहा कि यहाँ अव कोई जीव-जन्तु नहीं रहेगा; केवल तुम्हीं यहाँ अकेली पत्थर वनकर रहोगी। जव रघुनाथ अपने चरणों से तुम्हें स्पर्श करेंगे तभी तुम इस शाप से मुक्त होगी। ९३ पति के इस शाप से अहिल्या धरती पर गिर पड़ी और एक निश्चल पत्थर हो गई। वह शाप से मुक्ति पाने के लिए आपके चरणों का स्पर्श चाहती है, कृपा करके उसे अपने चरणों से स्पर्श कर दें। ९४ ऋषि की ऐसी विनती सुनकर श्रीराम तुरन्त वहाँ गये। रघुनाथ जी ने एक वड़ी शिला देखी और उसे अपने पाँव से स्पर्श किया। अहिल्या तुरन्त ही एक सुन्दर स्त्री वन कर खड़ी हो गई। ब्राह्मणी जान कर श्रीराम ने उसे प्रणाम

ताहाँ देखि चल्या र जल्दि रघुनाथ् गङ्गाजिका तीर् झर्‍या ।
तर्नाको प्रभुले जसै मन गर्‍या माझी चरण्मा पर्‍या॥९६॥
स्वामित्! ई दुइ पाउको अति असल् धूलो जसै ता पर्‍यो ।
पत्थर हो तपनी मनुष्य सरिको सुन्दर् स्वरूपै धर्‍यो ॥
तेस्तै पाठ यहाँ भयो पनि भन्या डुङ्गा स्वरूप् धर्दछन् ।
डुङ्गाले पनि रूप् धर्‍यो यदि भन्या हाम्राजहान्मर्दछन् ॥९७॥
तस्मात् पाउ पखालि वारि तिरमा हाम्रा शिरोपर् धर्‍यौ ।
येती बात गर्‍यौ भने त तिमि ता गंगाजिका पार् तर्‍यौ ॥
यस्तो बिन्ति सुनी तहाँ प्रभुजिले पाऊ अगाड़ी दिया ।
माझीले जलले पखालि उहि जल् आफ्नाशिरोपर्लिया॥९८॥
यस्ता रित् सित नाउमा चढ़ि सहज् गंगाजिका पार् गया ।
श्याम्सुन्दर् रघुनाथ् बहुत् खुशि हुँदै दाखिल् जनक्पुर् भया ॥
विश्वामित्र ऋषी बहुत् खुशि हुँदै दूई कुमार् साथ् गरी ।
आया यस् पुरिमा भनी जब सुन्या दौड़्याजनक् तेस् घरी॥९९॥
पुग्या प्रश्न गर्‍या सबै कुशलको पाऊमहाँ शिर् धरी ।
देख्या सुन्दर राज्कुमार् जनकले पूज्या ति ईश्वर् सरी ॥

भी किया । ९५ श्रीरघुनाथ जी को देखकर अहिल्या प्रसन्न हुई और पूजा-स्तुति के पश्चात् राम से आज्ञा प्राप्त करके पति के पास गई । वहाँ से चल कर रघुनाथ जी शीघ्र ही गंगा जी के किनारे पर पहुँचे । जैसे ही प्रभु ने तैर कर पार होने के लिए सोचा वैसे ही मल्लाह उनके चरणों में आ पड़ा । ९६ हे स्वामी ! आपकी अति उत्तम चरण-रज लगते ही पत्थर भी मनुष्य-रूप धारण कर लेती है । उसी प्रकार यहाँ भी यदि मेरी नाव ने स्त्री का रूप धारण कर लिया तो हमारे समस्त परिवार नष्ट हो जायेंगे । ९८ इसलिए हे प्रभु ! पहले मुझे अपने चरणों को पखारने दें और वह पवित्र चरणामृत हमें माथे से लगाने दें । तभी हम आपको गंगा के पार उतरने देंगे । यह विनती सुनकर प्रभु ने अपने पाँव आगे बढ़ा दिये और मल्लाहों ने उनके चरण पखार कर जल को माथे में लगाया । ९८ इस प्रकार विधिपूर्वक नाव में चढ़कर श्रीराम सरलता से गंगा जी के पार हो गये । श्याम-स्वरूप वाले रघुनाथ जी जनकपुर आये । विश्वामित्र के दोनों राजकुमारों सहित जनकपुर की नगरी में आने का समाचार सुनकर राजा जनक तुरन्त ही प्रसन्न होकर दौड़ पड़े । ९९ वहाँ पहुँच कर चरणों में झुककर कुशल-समाचार ज्ञात

पक्का गर्न निमित्त फेर् जनकले सोध्या ऋषिथ्यैं पनि ।
जान्याँ जान्न त चित्तले त भगवान् विष्णूइनै हुन् भनी॥१००॥

ब्रह्मन्! पुत्र इ हुन् कउन् पुरुषका विस्तार् हवस् वेस् गरी ।
क्लेश्को लेश नराखि यस् बखतमा मेरो लग्या मन् हरी ॥
विश्वामित्रजिले सुन्या विनति यो राजा जनक्को जसै ।
यस्ता हुन् इ भनेर सब् ति ऋषिले विस्तार् बताया तसै॥१०१॥

हे राजन्! दशरथ्जिका इ सुत हुन् नाम् राम लक्ष्मण् भनी ।
भन्छन् मानिसले गरी नसकिन्या गर्छन् पराक्रम् पनि ॥
मारिच्लाइ सुवाहुलाइ अरु ता को जित्न सक्न्या थिया ।
राम्ले मारिचलाइ फेकि सहजै सूवाहु मारीदिया॥१०२॥

पत्थर् भै कति वर्षसम्म रहँदा गौतम् कि नारी थिइन् ।
पाऊले तहिं कुल्चँदा उठि गइन् जस्ता कि तस्ती भइन् ॥
याहाँ एक् शिवको धनुष् छ भनि यो सूनेर आया यहाँ ।
देख्नाको मतलब् छ आज त यहाँ राखी रह्याछौ कहाँ॥१०३॥

चाँडो आज नजर् गराउ भनि यो विस्तार् गर्‍याथ्या जसै ।
मन्त्रीलाइ हुकूम् दिया जनकले लौ ल्याउ भन्न्या तसै ॥

किया। सुन्दर राजकुमारों को देखकर राजा जनक ने उनकी ईश्वर सदृश पूजा की। अपने मन में निश्चय करने के लिए जनकजी ने ऋषि से पूछा कि क्या भगवान् विष्णु यही हैं। १०० ब्रह्मन्! ये किन महापुरुष के पुत्र हैं, विस्तारपूर्वक कहने की कृपा करें। इस समय मेरा मन क्लेश-रहित हरि के ध्यान में लगा हुआ है। विश्वामित्र ने राजा जनक की यह विनती सुनते ही श्रीराम के विषय में सविस्तार वर्णन किया। १०१ हे राजन्! ये दशरथ जी के पुत्र राम तथा लक्ष्मण है। लोग कहते हैं कि ये अभूतपूर्व पराक्रमी हैं, जो मनुष्य के लिए सम्भव नहीं। मारीच और सुबाहु को दूसरा कौन पराजित कर सकता था। राम ने ही मारीच को पटक कर सुबाहु का वध किया।१०२ इनके चरणों का ही प्रताप इतना है कि कितने ही वर्षों से शिला हुई गौतम की पत्नी को केवल इनका चरण-स्पर्श पाकर ही पुनः अपना पूर्व रूप प्राप्त हो गया। यहाँ एक शिव-धनुष है, ऐसा सुनकर उसे देखने की आकांक्षा से यहाँ आये हुए हैं; सो कृपया उसे दिखाने का कष्ट करें। १०३ ऐसा आग्रह सुनकर मंत्री को धनुष लाने की आज्ञा जनक ने दी। इसी बीच जनक ने ऋषि से कहा कि मैं अधिक क्या

यै बीच्मा ऋषिथ्यै भन्या जनकले रामले उचालून् धनू।
सीता छोरि म दिन्छु रामकन गरुन् बीहा बहुत् क्या भनूँ॥१०४॥

साँचा बाणि सुन्या र सोहि रितका बात्चित् गऱ्याथ्या जसै।
पाँच् हज्जार् विरले उचालि बलले ल्याया धनूषै तसै॥
ताहाँ श्री रघुनाथ् उठेर नजिकै सोही धनूथ्यैं गया।
वाम् हातमा सहजै उचालि धनु त्यो राम् ले त लींदाभया॥१०५॥

ताँदो जल्दि चढाइ खैंचनुभयो ताहाँ धनुष्कै जसै।
दूई टूक भई गिऱ्यो उ धनु ता खूशी भया सब् तसै॥
हर्षैंहर्ष भयो तसै बखतमा सारा जनक्पुर् भरी।
आदर् खुप् प्रभुको गऱ्या जनकले आलिंगनादी गरी॥१०६॥

सीताजी पनि रामका शिर-उपर् माला कनक्को धरी।
छम्छम् पाउ गरी फिरिन् घरमहाँ मंगल् भयो तेस् घरी॥
मालिक्हुन् दशरथ् खबर् दिनुपऱ्यो ती छन् अयोध्यामहाँ।
जाउन् पत्र लिएर मानिसहरू चाँडो तिआउन् यहाँ॥१०७॥

यस्तो बिन्ति जनक्जिले पनि गऱ्या लेखेर विस्तार् दिया।
विस्तार् पत्र लियेर दुत्हरु पनी जल्दी अयोध्या गया॥

निवेदन करूँ। राम शिवधनुष को उठा लें तो मै अपनी पुत्री सीता का विवाह राम से कर दूँ। १०४ ज्योंही इन सत्य वचनों को सुना और यह बातचीत हुई। जैसे ही पांच हजार वीरों ने बल लगा कर धनुष लाकर रक्खा। उसी समय श्रीरघुनाथ जी उठकर उस धनुष के पास आये। बायें हाथ से राम ने सहज ही धनुष को उठा लिया। १०५ वाण चढ़ा कर जैसे ही धनुष को खीचा, वह दो टुकड़े होकर रह गया। यह देख कर सभी अत्यन्त हर्षित हुए। उस समय सम्पूर्ण जनकपुर में हर्षोल्लास छा गया। प्रभु को आलिगन में लेकर जनक जी ने उनका बड़ा ही आदर सत्कार किया। १०६ सीता जी ने भी राम के गले में स्वर्णमाला पहनाई और छम-छम करती हुई लौट गई। दरवार में उत्सव हुआ। उनके स्वामी तो दशरथ जी हैं अतः उन्हें अयोध्या में यह शुभ समाचार भेजना चाहिए। पत्र लेकर तुरन्त जाओ और यह शुभसन्देश शीघ्र वहाँ पहुँचाओ, जिससे वह यहाँ शीघ्र आ जायें। १०७ इस प्रकार जनक जी ने यह विनती की और सविस्तार पत्र लिखकर दिया। दूत लोग भी पत्र लेकर तुरन्त अयोध्या चले गये। राजा दशरथ पत्र को सुनकर

यो विस्तार सुन्या जसै नृपतिले आनन्दमा ती पऱ्या।
सब्ले जानु पऱ्यो जनक्पुरमहाँ भन्न्याहुकूम् योगऱ्या॥१०८॥

जम्मा लश्कर भै गयो क्षणमहाँ जल्दी जनक्पुर् पुग्यो।
क्या वर्णन्भिडको गरूँ त्यस बखत् खाली अयोध्या भयो॥
यस्ता रीत्सित सब् गया जतिथिया सेना जनक्पुर् महाँ।
दाखिल् भो दशरथ्जिको हुकुमले हर्ष बढ्यो खुप् तहाँ॥१०९॥

ताहाँ श्री दशरथ्जिको जनकले आदर् बहूतै गऱ्या।
लक्ष्मण्ले सँग राम् पनी तहिं पिता- जीका चरण्मा पऱ्या॥
बस्नालाई हबेलि सुन्दर जनक्- जीले खटाया जहाँ।
खूशी भै दशरथ् पनी गइ बस्या तेसै हबेली महाँ॥११०॥

सुन्दर् लग्न खटन् गऱ्या जनकले मंगल् सहर्मा चल्या।
नाच् कीर्तन् सितका प्रकाश्कन हुन्या रात्मा चिराक् खुप् बल्या॥
जो मण्डप् छ विवाहको तेस उपर् झुम्का हिराका झुल्या।
मूगा मोति जुहार् जनक्पुरमहाँ घर्घर् सबैका झुल्या॥१११॥

यस्तै रीत् गरि भो विवाह विधिले चारै जना भाइको।
हर्षले परिपूर्ण मन् हुन गयो सीताजिकी माइको॥

आनन्दमग्न हो गये और सबको जनकपुर चलने की आज्ञा दी। १०८
दशरथ जी की आज्ञा पाकर क्षण भर में ही सेना की सेना एकत्र हो गई और जनकपुर चल पड़ी। भीड़ का वर्णन तो किस प्रकार किया जाये! यही कहना पर्याप्त होगा कि पूरी अयोध्या ही खाली हो गई थी। इस प्रकार अपने सब दल सहित दशरथ जी जनकपुर पहुँचे और दशरथ जी की आज्ञा से सभी लोग हर्षित होकर अन्तःपुर में जा कर विराजमान हुए।१०९
वहाँ जनक जी ने श्री दशरथ जी का भव्य स्वागत-सत्कार किया। लक्ष्मण के साथ राम ने भी पिता के चरणों में झुककर प्रणाम किया। श्री दशरथ जी के ठहरने के लिए जनक जी ने बहुत ही सुन्दर महल का प्रबन्ध करवाया, जहाँ उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक निवास किया। ११०
जनक जी ने उत्तम मुहूर्त्त निकलवाया। नगर में मंगलगान, उत्सव, कीर्त्तन तथा नृत्य आदि का सुन्दर आयोजन हुआ। रात्रि में दीपक जलाकर सजाया गया। विवाह-मण्डप में हीरे-मोती-मूँगा तथा जवाहरों की झालरें लटकाई गई। नगर के घरों-घरों को मालाओं से सजाया गया। १११ इस प्रकार चारों भाइयों का विधिवत विवाह सम्पन्न

राम् लक्ष्मण् दुइलाइ ता जनकले आफ्ना ति छोरी दिया ।
भाईका त भरत्‌जिलाइ र ति वीर् शत्रुघ्नलाई दिया।।११२।।

सीता पत्नि भइन् रमापतिकि ता लक्ष्मण्‌जिकी उर्मिला ।
पत्नी हुन् श्रुतकीर्ति ता भरतकी शत्रुघ्नकी माण्डवी ।।
जस्तै आफु थिया अनन्त गुणका चौधै भुवन्‌का धनी ।
अभ्यन्तर् मनले विचार गरदा तस्तै ति पत्नी पनि।।११३।।

विश्वामित्र वशिष्ठ दूइ ऋषिथ्यै यस्ती सिता हुन् भनी ।
उत्पत्ती अघिको सबै जनकले विस्तार् बताया पनि ।।
जान्थ्यौं भूमि पवित्र गर्न भनि एक् क्वै यज्ञ गर्दामहाँ ।
जोत्तामा त सिताजि निस्किन गइन् आश्चर्यमान्याँ तहाँ।।११४।।

पाल्याँ छोरि भनेर नाम् पनि असल् सीताजि राखीदियाँ ।
गर्थिन् बालकमा अनेक् तरहका लीला म खूशी थियाँ ।।
राम् नाम्‌ले दशरथ्‌जिका सुत भई खेल्छन् अयोध्यामहाँ ।
तिम्री पुत्रि सिता उनै प्रभुजिकी माया ति आइन् यहाँ।।११५।।

यो लीला छ बुझी सिताकन तिनै राम्‌लाइ दीया भनी ।
नारद्‌जी उठि गै गया, उहि सुनी याद् भो मलाई पनि ।।

कर सीता जी की माता का मन हर्ष से भर गया। राम और लक्ष्मण को तो जनक ने अपनी ही पुत्रियों को विवाहा और अपनी भतीजियों को वीर भरत तथा शत्रुघ्न को समर्पित किया। ११२ सीता राम की, उर्मिला लक्ष्मण की, माण्डवी भरत की तथा श्रुतिकीर्ति शत्रुघ्न की पत्नी हुई। जैसे वे स्वयं अनन्त गुणों से युक्त चौदह भुवन के स्वामी थे उसी प्रकार अन्तर मन से विचार करने से पत्नियाँ भी वैसी ही थीं। ११३ ऋषि विश्वामित्र और वशिष्ठ दोनों को सीता जी की उत्पत्ति के विषय में सविस्तार बताया गया। एक यज्ञ हेतु भूमि को पवित्र करने के लिए जोतते समय सीता जी प्रकट हुई, जिसे देख सभी आश्चर्य-चकित रह गये। ११४ पुत्री-रूप में ग्रहण करके इन्हें पाला और नाम भी सीता रख दिया। बाल्यावस्था में ये अनेक प्रकार की लीलाएँ करती थीं जिसे देख कर मैं बड़ा प्रसन्न होता था। उधर राम दशरथ-पुत्र बनकर अयोध्या में खेलते थे। आपकी पुत्रवधू सीता जो यहाँ आ गई यह उसी प्रभु की शक्ति है। ११५ सीता की इन सब लीलाओं को समझ कर ही राम से उसका विवाह कर दिया। ऐसा [एक दिन] कह कर नारद जी उठकर चले गए। यही सुनकर मुझे भी स्मरण हुआ और सोचा कि किस

कुन् पाठ्ले अब रामलाइ म सिता पारूँ विचार् यो गरचाँ ।
थीयो यो शिवको धनुष् यहि यसै- मा यो प्रतिज्ञागरचाँ॥११६॥
ताँदो यस् धनुको चढाउन जउन् वीर्ले त सक्ला यहाँ ।
सीता छोरि दिन्याछु तेस्कन फिका होवैन यस् बात्महाँ ॥
जानुन् सब् विरले भनीकन गऱ्याॅ यस्तो प्रतिज्ञा जसै ।
यो सूनीकन देशका विरहरू आया तुरुन्तै तसै॥११७॥
को सक्थ्यो धनु त्यो उठाउन विना श्रीराम् अगाडी सरी ।
हिक्मत् हारि सबै घरै फिरिगया दर्शन् धनूको गरी ॥
राम्ले पूर्ण गराइबक्सनुभयो मेरो प्रतिज्ञा पनि ।
यो चीन्ह्या पनि सब् कृपा चरणले गर्दा भयाको भनी॥११८॥
विश्वामित्रजिथ्यैं पनी जनकले बिन्ती अगाडी गरी ।
सीतानाथ् रघुनाथको स्तुति गऱ्या आनन्दमा ती परी ॥
दाईजो सय कोटि दौलत सहित् वेस् बेस् अयुत् रथ दिया ।
घोडा ता सय लाख् दिया छ सय ता खुप् मत्तहात्ती थिया॥११९॥
पैदल् लश्कर एक लाख् र सय तीन् कोटी दियाथ्या जसै ।
पूजा फेरि वशिष्ठको पनि गऱ्या भारी डबल्ले तसै ॥
पूजा ताहिं भरत्जिको पनि भयो लक्ष्मण्हरूको पनि ।
इच्छा भो रघुनाथको अब फिरौं जाऊँ अयोध्या भनी॥१२०॥

विधि से अब मैं राम का सम्बन्ध सीता से करूँ। इसी कारण शिव के इस धनुष की ऐसी [कठिन] प्रतिज्ञा रक्खी। ११६ जो वीर इस धनुष की प्रत्यंचा चढ़ा सकेगा उसी के साथ मैं अपनी पुत्री सीता का विवाह कर दूँगा। मेरे इस वचन में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आयेगा। जनक की इस प्रतिज्ञा को सुनकर देश-विदेश के वीर वहाँ आए। ११७ श्रीराम के अतिरिक्त और कौन आगे बढ़कर उस धनुष को उठा सकता था। सभी वीर अपना साहस खोकर शिव धनुष का केवल दर्शन करके ही अपने-अपने देश लौट गए। मेरी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने की कृपा केवल राम ने की। यह भी जान लिया कि ये सब इन्हीं चरणों की कृपा से हुआ है। ११८ जनक ने आगे बढ़कर विश्वामित्र से विनती की, आनन्दमग्न होकर सीतापति श्रीरघुनाथ की स्तुति की, और दहेज में एक पद्म धन सहित दस-हजार उत्तम रथ, एक करोड़ घोड़े और छः सौ मत्त हाथी दिए। ११९ एक लाख पैदल सेना तथा तीन सौ सेविकाएँ देकर पुनः वशिष्ठ एवं भरत तथा लक्ष्मण की भी भव्य पूजा की।

जानाको मतलब् बुझी जनकजी रामको चरण्मा पऱ्या ।
खुशी मन् सबको गराइ बहुतै बीदा जनक्ले गऱ्या ।।
सीताजी महतारिका अगि गई अलिङ्गनादी गरी ।
लागिन् रूनर सोहि सूनि सबका आँसू खसे बर्बरी।।१२१।।

सीताजीकन अर्ति यो पनि दिया सासू ससूरा सरी ।
आर्को छैन बडो यही बुझि गऱ्या तिन्को टहल् बेस् गरी ।।
स्त्रीको धर्म पतिव्रता हुनु ठुलो जानेर हूनू भनी ।
अर्ती येति दिया र तेस् बखतमा बीदा भया ती पनि।।१२२।।

यै बीच्मा नगरा बज्या प्रभुजिका भेरी मृदङ्गा पनि ।
स्वर्गैमा पनि हर्ष भो प्रभु गया फेरी अयोध्या भनी ।।
राम्को लश्कर बाह्र कोश् जनकपुर्- देखी जसै ता गयो ।
सब्का चित्तमहाँ वडो भय दिन्या उल्का वहूतै भयो।।१२३।।

यस् पृथ्वीतलका ति क्षत्रिहरुको ठूलो विनाशै गरी ।
आया तेस् बिचमा तहाँ परशुराम् उल्का भयो जुन् घरी ।।
पृथ्वी कम्प भइन् तसै बखतमा हा हा सबैमा परी ।
राजाका मनमा विचार् यहि पऱ्यो छोरा बचुन् क्या गरी।।१२४।।

अब श्रीरघुनाथ की इच्छा अयोध्या लौटने की हुई। १२० सबको अत्यन्त प्रसन्न करके जनक ने विदाई दी। सीता जी की माता आगे बढ़कर पुत्री को आलिगन में भर कर रोने लगीं। यह देख सभी की आँखों से अश्रु प्रवाहित होने लगे। १२१ सीता जी को यह सीख भी दी कि सास-ससुर के समान महान् और कोई नहीं। अतः उनकी सेवा-टहल भली प्रकार करना। पतिव्रता स्त्री का मूल धर्म तथा उसका पालन आदि उपदेश देने के पश्चात् उन्होंने सीता को विदा किया। १२२ इसी समय प्रभु [के कटक का] नगाड़ा बज उठा और यह जानकर कि प्रभु (राम) पुनः अयोध्या चले गए, स्वर्ग में भी मृदंगादि वज उठे। जनकपुर से वारह कोस ही लम्बे राम का जलूस गया था कि सवके मन में एक भयानक विघ्न उत्पन्न होने की आशंका हुई। १२३ इस पृथ्वी-तल पर तमाम क्षत्रियों का विनाश करने वाले परशुराम का उसी समय आगमन हुआ। उस समय पृथ्वी काँप उठी और चहुँ ओर हाहाकार मच गया, सभी भयभीत हो गए। राजा दशरथ मन में सोचने लगे कि पुत्र की रक्षा किस प्रकार हो। १२४ इस प्रकार विचलित

यस्तो चञ्चल चित्तले परशुराम्- का पाउमा झट् पऱ्या ।
मेरा पुत्र वचून् प्रभो परशुराम्! भन्न्या इ विन्ती गऱ्या ।।
यस्तो विन्ति पनी अनादर गरी कालाग्नि जस्ता भया ।
राम्को गर्व हरूँ भनी परशुराम् राम्कै अगाडी गया।।१२५।।

कस्को पुत्र तँ होस् बता मकन लौ जावो पुरानू धनू ।
भाँच्तैमा अति गर्व भो तँकन ता धेरै कुरा क्या भनूँ ।।
यो ता हो हरिको धनू विर भया ताँदो यसैमा चढा ।
भन्दै खुप् रिसले रह्या परशुराम् राम्कै अगाडी खडा।।१२६।।

ताँदो आज चढाउँछस् त यसमा संग्राम् तँथ्यैं गर्दछु ।
सक्तैनस् तब हेर् म राख्तिन सबै- को प्राण् सहज् हर्दछु ।।
यस्ता क्रूर वचन् गरी परशुराम् कालाग्नि झैं रूप् धऱ्या ।
पृथ्वी कम्प गराइ लोकहरुको सम्पूर्ण सातो हऱ्या।।१२७।।

यस्तो क्रूर वचन् सुनेर रघुनाथ् क्रोध्ले अगाडी सरी ।
खोसी लीनुभयो धनुष परशुराम्- को त्यो बलैले गरी ।।
ताँदो जल्दि चढाइ बाण् पनि तहाँ लीनूभयेथ्यो जसै ।
ठूलो वल् रघुनाथको बुझि सबै खूशी भयो लोक् तसै।।१२८।।

होकर दशरथ ने परशुराम के चरणों में पड़ कर विनती की कि हे प्रभु परशुराम ! मेरे पुत्र बच जायें। ऐसी विनय को भी ठुकरा कर कालाग्नि की भाँति क्रोधित हो, राम के वल के गर्व की परीक्षा लेने के लिए परशुराम उनके सम्मुख गए। १२६ तुम किसके पुत्र हो ? मुझे वताओ। एक साधारण पुराना धनुष तोड़ने से ही तुम पर अत्यन्त गर्व छा गया है; और ज्यादा क्या कहूँ। यह तो हरि का धनुष है; यदि वीर हो तो इसकी प्रत्यंचा चढ़ाओ। यह कहते हुए परशुराम अत्यन्त क्रोधित होकर राम के ही सम्मुख आकर खड़े हो गए। १२६ यदि आज तू इसमें प्रत्यंचा चढ़ा देता है तो तुझसे मैं युद्ध करूँगा और यदि चढ़ा नहीं सकेगा तो किसी को मैं जीवित नहीं छोड़ूँगा। सहज ही सव का वध कर डालूँगा। ऐसे क्रूर वचनों का उच्चारण करके परशुराम ने कालाग्नि का रूप धारण किया। पृथ्वी को कम्पित कर सम्पूर्ण मानवों को भयभीत कर दिया। १२७ ऐसे क्रूर वचनों को सुनकर श्रीरघुनाथ जी क्रोधित हो कर आगे वढ़े और परशुराम के धनुष को वलपूर्वक छीन लिया। शीघ्रता से जैसे ही प्रत्यंचा चढ़ाकर उन्होने वाण भी ले लिए, वैसे ही श्रीरघुनाथ जी की शक्ति को समझकर सव लोग अत्यन्त हर्षित

हूकुम् श्री रघुनाथको परशुराम्- लाई भयो यो तहाँ ।
तारो आज बताउ हान्छु अहिले ब्राह्मण् म हानूँ कहाँ ॥
चाँडो उत्तर देउ यस् बखतमा यस्लाइ लौ हान् भनी ।
तारो क्यै नदिया त काट्छु अहिले तिम्रा इ गोडा पनि॥१२९॥

हूकुम् येति गरेर तेज् परशुराम्- को खैंचनूभो जसै ।
चिन्ह्या श्रीरघुनाथलाइ अघिको वृत्तान्त सम्झ्या तसै ॥
बिन्ती येति तहाँ गर्‍या पनि हरे चिन्ह्याँ जगन्नाथ् भनी ।
जस्को अंश मिल्यो र केहि भगवान् यस्तो भयाँ मै पनी॥१३०॥

पापी भो अति कीर्तवीर्य अब ता यस्लाइ मार्छू भनी ।
बालक् पो म थियाँ गर्‍याँ हजुरको ठूलो तपस्या पनी ॥
यस्तो वर् खुशि भै मलाइ दिनुभो शक्ती समेतै गरी ।
इच्छा पूर्ण हुन्याछ जाउ अब ता क्यै शक्ति मेरो धरी॥१३१॥

पैल्हे मार र कार्तवीर्यकन फेर् सब् क्षत्रिको नाश् पनी ।
एक्काईस वखत् गर्‍या प्रभुजिको हूकुम् छ यस्तै भनी ॥
क्षत्री शून्य भयाकि पृथ्वि तिमिले कश्यप्जि लाई दिया ।
येती कर्म गरी सकेर अघिको सेखी पुर्‍याई लिया॥१३२॥

हुए । १२८ परशुराम को श्रीरघुनाथ की यह आज्ञा हुई कि हे ब्राह्मण! इसी समय कोई लक्ष्य बताओ जिस पर मैं प्रहार करूँ । शीघ्रता से उत्तर दो कि इस समय इस पर प्रहार करो, अन्यथा मैं तुम्हारे ये पाँव काट डालूँगा । १२९ यह आज्ञा देकर जैसे ही परशुराम की शक्ति भगवान् ने खींच ली, वैसे ही उन्हें (परशुराम को) पूर्वजन्म की बात स्मरण हो आई और उन्होंने श्रीरघुनाथ को पहिचान लिया । उसी समय इस प्रकार विनती की—हे हरि ! मैंने पहिचान लिया कि आप वही जगन्नाथ हैं जिनका कुछ अंश पाकर मेरा भी अवतार हुआ है । १३० कार्तवीर्य अत्यन्त पापी हो गया है । अब मैं इसका वध करूँगा, यह निश्चय करके मैने बालपन में ही आपकी घोर तपस्या की । उससे प्रसन्न होकर आपने मुझे शक्ति सहित ऐसा वर दिया कि अब जाओ, मेरी कुछ शक्ति को धारण करने से तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी । १३१ सर्वप्रथम कार्तवीर्य का वध करो, तत्पश्चात् सब क्षत्रियों का नाश करो । मेरी ऐसी आज्ञा है । तुम क्षत्रियों पर इक्कीस बार (प्रहार) करोगे । क्षत्रियों से रिक्त होते ही पृथ्वी को पुनः कश्यप जी को अर्पित कर दोगे । इतने कर्मों को पूरा कर अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण करोगे । १३२ त्रेतायुग में

त्रेतामा अवतार् लिन्याछु नरमा राम्‌नाम् जगत्‌मा धरी ।
भेट् होला तिमिथ्यै उही वखतमा यो शक्ति ल्यूँला हरी ॥
ताहाँ देखि तपै गरेर रहनू ब्रह्माजिका दिन् भरी ।
येती अर्ति मलाइ दिईकन गया बैकुण्ठ धाम्‌मा हरि॥१३३॥

मैले काम् पनि सो सबै गरिसक्याँ राम्‌लाइ भेटयाँ पनी ।
मेरो शक्ति हजूरले हरि लिंदा चिन्ह्याँ प्रभू हुन् भनी ॥
मेरो जन्म सफल् भयो सहजमा पायाँ परात्मा पनी ।
बुझ्याँ तत्त्व पनी सबै हजुरको पात्रै कृपाको बनी॥१३४॥

जो छन् भक्त हजूरका ति सँगको सत्‌सङ्ग मेरो हवस् ।
यो भक्ति दृढ भै प्रभू ! हजुरका येही चरण्‌मा रहोस् ॥
येती विन्ति तहाँ गरी सकल पाप् पुण्यै समर्पण् गऱ्या ।
इच्छित् वर् प्रभुले दिंदा परशुराम् आनन्दमा ती पऱ्या॥१३५॥

ताहाँ श्रीरघुनाथका वरिपरी घूमी नमस्कार् गरी ।
मर्जीले ति गया महेन्द्र गिरिमा मन् राम्‌चरण्‌मा धरी ॥
देख्या तेज् दशरथ्‌जिले र सुतको हर्षाश्रुधारा धरी ।
प्रेम्‌का सागरमा तहाँ डुबिगया आलिङ्गनादी गरी॥१३६॥

येती काम् गरि राम् गया सहजमा पुग्या अयोध्या महाँ ।
सीतालाइ लियेर राज्य सुख भोग् राम्‌ले गऱ्या क्यै तहाँ ॥

राम के नाम से मनुष्य होकर मैं जन्म लूँगा । उसी समय तुमसे भेंट होगी । यह शक्ति पुनः हरण होने के पश्चात् दिन भर व्रह्मा का ध्यान करते रहना । मुझे इस प्रकार शिक्षा देकर भगवान् हरि बैकुण्ठ लोक को चले गए । १३३ मैंने उन सव कार्यों को पूर्ण किया । राम से भेंट भी हो गई । आपसे मेरी शक्ति हरण किये जाने पर आप को प्रभु जानकर पहिचाना । मेरा जन्म सफल हुआ । सहज ही परमात्मा को भी पा लिया । आपका कृपा-पात्र वन उस सभी तत्व-ज्ञान को भी समझ लिया । १३४ आपके जो भक्त जन है उनसे मेरी संगति रहे । आपके इन्हीं चरणों में यह भक्ति दृढ़ रहे । इतनी विनती करके पाप एवं पुण्य वहीं समर्पित कर दिया, तथा प्रभु से वांछित वर पाकर परशुराम आनन्दमग्न हो गये । १३५ श्रीरघुनाथ जी के चारों ओर परिक्रमा कर परशुराम ने नमस्कार किया । राम के चरणों में अपने मन को अर्पित कर वे प्रसन्नता-पूर्वक महेन्द्र पर्वत पर चले गये । पुत्र राम की दिव्य ज्योति को देखकर नेत्रों में हर्षाश्रु भरकर प्रेम-सागर में मग्न दशरथ

क्यैदिन् भानिज हुन् भरत्कन यहीं ल्याऊँ घरैमा भनी ।
भानिज्लाइ लिना निमित्त खुशिले आया युधाजित्पनि॥ १३७॥
बीदा श्रीदशरथ्जिले पनि दिया बीदा मिलेथ्यो जसै ।
एक् शत्रुघ्न लिई भरत्जि त गया मामा कहाँ पो तसै ॥
आया राम बिहा गरेर पुरिमा जस्सै उठेथ्यो खबर् ।
सारा रैयतको प्रसन्न मन भो हुन्थ्यो खुशी क्या अवर्॥ १३८॥
सीताराम् अघि तप् गरिन् र त यहाँ छोरा बुहारी भया ।
कौशल्याकन ता मिल्यो अदितिको शोभा सबै ताप् गया ॥
सीताराम् पनि लोकमा सकलको आनन्द मङ्गल् गरी ।
चेष्टा मानिसको गरीकन रह्या त्रैलोक्यका नाथ् हरि॥ १३९॥

वालकाण्ड समाप्त

जी ने उन्हें आलिंगन में भर लिया । १३६ इतना कार्य समाप्त कर राम सहज ही अयोध्या पहुँच गये । राम ने सीता को लेकर राजसी सुख भोग करने लगे । भरत जी के मामा के मन में भाञ्जे को अपने घर ले जाने की इच्छा हुई और वे उन्हें लिवाने के लिए आये । १३७ श्री दशरथ जी ने सहर्ष विदा दी और भरत शत्रुघ्न को साथ लेकर मामा के यहाँ चले गये । राम के विवाह करके नगर में आने की सूचना जैसे ही प्राप्त हुई सारी प्रजा आनन्द से विभोर हो उठी । १३८ पूर्वजन्म में किये तप के प्रभाव से राम और सीता का पुत्र तथा वधू के रूप में यहाँ अवतार हुआ । माता कौसल्या को सूर्य के समान शोभा प्राप्त हुई और सभी दुःख व चिंताओं का नाश हुआ । सीता-राम ने भी संसार को आनन्द-मंगल प्रदान किया । त्रिलोकीनाथ मानव-रूप में मानवोचित कार्यों में रत रहे । १३९

अयोध्याकाण्ड

एकान्त स्थलमा सितापति थिया सीता हजुर्मा रही ।
हात्मा चामर ली प्रभूकन तहाँ हाँक्थिन् समीप्मा गई ।।
आकाश् मार्ग गरी बहुत् खुशि हुँदै नारद्जि ताहीं गया ।
नारद्जीकन दण्डवत् गरि तहाँ राम्जी वहुत् खुश् भया ।।१।।

संसारी म थियाँ बडो हुन गयाँ दर्शन् मिलेथ्यो जसैं ।
यो भाग्योदय हो बुझ्याँ पनि यहाँ दर्शन् मिल्याको उसैं ।।
मैले गर्नु छ काम् कउन् हजुरको चांडो उ आज्ञा हवस् ।
त्यो काम् सिद्ध गराउँला हजुरको आनन्द मन्मा रहोस्।।२।।

यस्ता बात् प्रभुका सुनीकन जवाफ् सोही वमोजिम् दिया ।
नारद्ले बहुतैं गऱ्या स्तुति तहाँ राम्लाइ मन्मा लिया ।।
बिन्ती गर्नु कुरो थियो मनविषे विन्ती गऱ्या त्यो पनि ।
ब्रह्माको बिनती लिई हजुरमा आई रह्याँछू भनी ।।३।।

भूको भार म दुष्ट मारि हरुँला जान्छू अयोध्यामहाँ ।
भन्न्या येति वचन् गरीकन हजुर् पाल्नू भयेथ्यो यहाँ ।।

एकान्त स्थान में सीतापति श्रीराम वैठे थे । प्रभु के निकट जा कर सीता जी भी हाथ में चँवर ले कर डुला रही थीं । आकाश-मार्ग से होते हुए नारद जी ने अत्यन्त हर्षित होते हुए उन्हें दण्डवत किया । १ मैं एक तुक्छ सांसारिक प्राणी हूँ । आपके दर्शनों से ही इतना महान् हुआ हूँ । मैं यह समझ गया हूँ कि आपके दर्शनों से ही मुझे ऐसा भाग्योदय प्राप्त हुआ है । शीघ्र आज्ञा करें । श्रीमन् का जो भी कार्य करने को है, मैं शीघ्र ही उन सव को सिद्ध करूँगा; जिससे आपका मन प्रसन्न रहे । २ नारद जी ने भी राम की स्तुति मन में ही की और उनकी ऐसी बातों को सुन कर [राम ने] उत्तर भी उसी प्रकार दिया । सर्वभाँति मन ही मन विनती करते हुए प्रन्होंने कहा कि ब्रह्मा जी की एक प्रार्थना को लेकर आपके पास आया हूँ । ३ आप यह कह कर पधारे थे कि अयोध्या जा कर दुष्टों को मार कर पृथ्वी को भार से मुक्त करूँगा । परन्तु अब तो राजा दशरथ की इच्छा आपको राजगद्दी प्रदान करने की हुई

यस्तो हो तर गादि दीन दशरथ् राजाजिको मन् भयो ।
ख्वामित्ले अब राज्यमा भुलिदिया भार् हर्नु काम्ता रह्यो॥४॥

नारद्का ई वचन् सुनी खुशि भई उत्तर् प्रभूले पनी ।
जल्दी बक्सनुभो म राज्य नगरी भोली म जान्छू भनी ॥
ख्वामित्का इ वचन् सुनेर बहुतै नारद्जि खूशी भया ।
तीन् फेरा प्रभुको प्रदक्षिण गरी आकाश् गतीले गया ॥५॥

सन्तोष्ले दशरथ्जिको मनविषे आनन्द मङ्गल् भयो ।
राम्लाई अब राज्य द्यूँ भनि उसै मन् यस् लहड्मा गयो ॥
यस्तो मन् हुनगो र डाकि गुरुथ्यैं यस्तो हुकूम् भो पनी ।
भोली राज्य म दिन्छु पुत्रकन सब् सामग्रि ल्याऊ भनी ॥६॥

मन्त्री डाकि हुकूम् भयो सँग रह्या जो जो कहन्छन् गुरु ।
सो सो चीज् झटपट् तयार् गर अवर् सब् काम छोड्नू बरु ॥
मन्त्रीले पनि यो हुकूम् सुनि तहाँ साथै गुरूको रह्या ।
चाहिन्छन् जति चीज् ति खोज्न गुरुले खोलेर सब् चीज् कह्या॥७॥

मन्त्रीलाइ अह्राइ राघवजिका साथ्मा वशिष्ठै गया ।
पैले श्री रघुनाथले गुरु भनी सन्मान गर्दा भया ॥

है । हे स्वामी ! यदि आप राज्य-कार्य में भूल गये तो पृथ्वी का भार-हरण करने का कार्य तो ऐसे ही रह जायगा । ४ नारद के इन वचनों को सुन कर प्रभु ने प्रसन्न हो कर उत्तर दिया । राज्य यदि इतनी शीघ्रता से दिया गया तो विना राज्य किये ही चल दूँगा । स्वामी (राम) के इन वचनों को सुन कर नारद जी अत्यन्त प्रसन्न हुये । तीन बार प्रभु की परिक्रमा कर बड़ी तीव्र गति से आकाश की ओर चले गए । ५ सन्तोष से राजा दशरथ का मन परिपूर्ण था । वे आनन्द-मंगल में मग्न थे । इसी बीच उन्हें राम को राजगद्दी देने की उत्कण्ठा हुई । अतः गुरु को बुलाकर कहा कि अब कल मैं अपने पुत्र (राम) को राज्य सौंप दूँगा, अतः सभी आवश्यक सामग्री का संग्रह कीजिए । ६ मंत्री को बुला कर आदेश दिया कि सारे कार्य छोड़ कर गुरु जी जो सामग्री कहें वह शीघ्रता से तैयार करो । मंत्री भी इस आदेशानुसार गुरु के साथ ही रहे । जिन सामग्रियों की आवश्यकता थी, गुरु ने स्पष्ट वर्णन किया । ७ मंत्री को इतना भार दे कर गुरु वशिष्ठ राघव जी के संग गये । पहले श्रीरघुनाथ ने गुरु का सम्मान किया । वशिष्ठ बोले, हे त्रिलोकीपति! वैसे

हे त्रैलोक्यपते ! गुरू हुन त हूँ तिम्रो म क्या हूँ गुरु ।
इन्‌का हुन् इ गुरू भनेर इ सबै भन्छन् भनुन् लौ वरु॥८॥

तिम्रो दर्शन पाउँला भनी यहाँ प्रोहित् भयाकै म हूँ ।
गुह्यै खल्छ भनेर डर् हुन गयो धेरै कुरा क्या कहूँ ॥
खोल्न्या छैन म गुह्य चुप्प रहुँला सब् जान्दछू तापनि ।
जानी जानि म विन्ति गर्न अहिले आयां हजुर्‌मा पनि ॥९॥

भोली हुन्छ तिलक् हजुर्‌कन यहाँ सामग्रि जम्मा भयो ।
पृथ्वीमा सुकला हवस् हजुरको सब् शास्त्रले भन्छ यो ॥
सब् इन्द्रीय जितेर आज उपवास् गर्नू सिताले सँगै ।
आज्ञा पाउँ म जान्छु काम् छ बहुतै सब्‌काम् विचार्‌छू म गै॥१०॥

यस्तो बिन्ति गरी वशिष्ठ गुरु फेर् जस्सै गयाथ्या पनि ।
राम्‌ले लक्ष्मणथ्यै भन्या मतिमिलाइ काम् गर्न थ्यूँला भनी ॥
छैनन् भाइ भरत् पनी त तिनका खातिर् छ मेरी दया ।
कौशल्या सुनि खुश् हुनिन् भनितजो सम्‌चार् बताउँदै गया॥११॥

राजाले त खतम् गर्न्या दिनु भनी क्या गर्दछिन् कैकेयी ।
यस्मा विघ्न कदापि पर्न नदिउन् लक्ष्मी र दुर्गा भई ॥

तो मैं तुम्हारा गुरु हूँ ही, पर मैं भला क्या गुरु हूँ ! हाँ, इनका गुरु अवश्य हूँ जो ये सब [मुझे गुरु] कहते हैं । ८ तुम्हारे दर्शन पाने के लिए मैं यहाँ पुरोहित हुआ हूँ । कहीं रहस्योद्‌घाटन न हो जाये इसका भय हुआ है और अधिक क्या बताऊँ । मैं सब कुछ जानते हुए भी रहस्योद्‌घाटन नहीं करूँगा । चुप ही रहूँगा । सब कुछ जान कर भी मैं अभी आपकी शरण में विनती करने आया हूँ । ९ कल आपका तिलक होगा । सब सामग्री एकत्रित हो गई है । भूमि पर ही सोने की कृपा करें, जैसा कि सभी शास्त्र कहते हैं । सब इंद्रियों को जीत कर आज सीता जी के साथ ही उपवास करने की कृपा करें । आज्ञा दीजिए । अत्यधिक कार्य है, जाकर कार्यों के विषय में विचार करता हूँ । १० ऐसी विनती कर गुरु वशिष्ठ जैसे ही चले गये, राम ने लक्ष्मण से सलाह की और कार्यभार सौंपा । भाई भरत भी जिनके प्रति मेरा अत्यधिक प्रेम है, यहाँ मौजूद नहीं हैं । कौशल्या माता भी सुनकर प्रसन्न होंगी, और उन्हें समाचार सुनाया । ११ राजा ने तो समाचार समाप्त करते हुये कहा, कैकेयी क्या करती है । लक्ष्मी और भगवती दुर्गा इसमें कदापि विघ्न न होने दें ।

कौशल्या पनि-यो विचार् गरि तहाँ गर्थिन् पुजा देविको ।
द्यौताका मनमा भन्या ठहरियो काम् विघ्न गर्नूनिको ॥१२॥
वाणी ग तिमी विघ्न पारिकन आउ ती मन्थरा कैकेयी ।
द्वी स्त्रीका घटमा पसेर तिमिले काम् सिद्ध लाऊ गई ॥
द्यौताका इ वचन् सुनेर झटपट् तेस् मन्थरामा पसिन् ।
कैकेयीकन खुप् भुलाउन भनी फेर् कैकेयीमा पसिन् ॥१३॥
वाणीका वशमा पऱ्याकि छँदि ती जाहाँ थिइन् कैकेयी ।
काम् बित्ला भनि चट्पटाइ तहिंझट् त्यो मन्थरा गैगई ॥
नाना छल् गरि ठिक्क पारिकन सब् वृत्तान्त विस्तार् भनी ।
दुई वर् छन् तिमि मागिल्यौ भनि ठुलो सूचन् गरी यो पनि ॥१४॥
वाणीले ति भुलाइयाकि छँदि लौ भन्दी भइन् कैकयी ।
राम्लाई वनवास् भरत्कन रजाइँ माग्छू म चाँडो गई ॥
दुई वर्ले जब काम सिद्ध गरुँला द्यूँला सये गाउँ भनिन् ।
बीदा दी घर मन्थराकन फिराइ रिस् गर्न लाग्दी भइन् ॥१५॥
सुन्दर् वस्त्र निकालि फालि कपडा मैला शरीर्मा धरिन् ।
आभूषण् कन फ्याँ कि खूप रिसले खाली जमीन्मा परिन् ॥

कौशल्या भी यही विचार कर देवी की पूजा करती थीं। [किन्तु] देवताओं ने मन में कार्य में विघ्न उत्पन्न करने का ही निश्चय किया। १२ वाणी (सरस्वती) को आज्ञा हुई कि तुम जा कर मंथरा और कैकेयी दोनो स्त्रियों के मन में प्रवेश कर विघ्न उत्पन्न करो और कार्य सिद्ध करके आओ। देवताओं के इस वचन को सुनकर वाणी तुरन्त मंथरा में प्रवेश कर गई। कैकेयी को भी भ्रमित करने के लिए (सरस्वती) पुनः कैकेयी में भी प्रवेश कर गई। १३ इस प्रकार वाणी के वशीभूत कैकेयी जहाँ थी, कहीं अवसर न निकल जाये, ऐसा सोच कर मंथरा तुरन्त वहाँ पहुँच गई। अनेक प्रकार के छल से उसे अपने वश करके सब वृत्तान्त सविस्तार कहने लगी। बोली कि दो वर है, जो तुम अभी मांग लो, इसी में भलाई है। १४ वाणी के वशीभूत कैकेयी कहने लगी कि मैं इन दोनों वरों को मांग लूँगी। एक से राम को चौदह वर्ष का वनवास और दूसरे से भरत को राज्य। इन दो वरों से जब कार्य सिद्ध होगा तब मैं तुम्हें सौ गाँव दूँगी। मंथरा को विदा कर घर लौटी। कैकेयी क्रोधित होने लगी। १५ उस सुन्दर वस्त्रों को त्याग कर मैले वस्त्र शरीर में धारण कर लिये। आभूषणों को भी उतार फेंका और भूमि-पर लेट गई। संसार के सज्जनों का कहना

सज्जन् बेस् सुमती पनी कुमतिका सँग्ले त बिग्री गयो ।
भन्छन् जो दुनियाँ उ लक्षण यहाँ ठीक् कैकेयीमा भयो।।१६।।
कैकेयी सित बस्नलाइ खुशिले राजा गयेथ्या जसै ।
देख्यानन् र तहाँ कता गइ भनी चाकर्नि सोध्या तसै ।।
क्रोधागार्-विषे भयाकि त बुझ्याँ कारण् छ कुन् कत्ति यो ।
बूझ्याको पनि छैन गै हजुरले बुझ्नू हवस् क्यान हो।।१७।।
केटीका इ वचन् सुनीकन डराइ राजा नजीक्मा गया ।
कैकेयीकन क्यान यो रित गर्‍यौ बात् खोल भन्दा भया ।।
जो भन्छचौ म पुर्‍याउँला भनि शपथ् खाँदा जसै बात् गरिन् ।
राजा वृक्ष सरी गिर्‍या पृथिविमा यस्मा बहुत् जिद् गरिन्।।१८।।
राम्लाई बनवास भरत्कन रजाइँ देऊ भनी जिद् गरी ।
दुई वर्ले यहि द्यौ दिँदौन त भन्या बाच्नू त मुर्दा सरी ।।
भोली येति कुरा भयेन त भन्या मर्न्याछु विष् खाइ म ता ।
भन्न्या येति कुरा सुनी फिरि गिर्‍या राजा जमीन्मा यता।।१९।।
त्यो रात् वर्ष समान् व्यतित् हुनगयो राजा ति मूर्छा भया ।
सब् सामग्रि तयार् गरीकन बिहान् मन्त्री हजुर्मा गया ।।

है कि उत्तम से उत्तम सुमति भी कुमति की संगति से बिगड़ जाती है। ठीक वही लक्षण कैकेयी में दृष्टिगोचर हुए। १६ राजा प्रसन्न हो कर जैसे ही रानी कैकेयी के पास पहुँचे वैसे ही कैकेयी को न देख कर उनकी उपस्थिति के विषय में सेविकाओं से पूछा। सेविकाओं ने विनती की कि वह कोपभवन में जाकर बैठी है। किन्तु कारण का कुछ ज्ञान नहीं है। आप स्वयं जाकर जानने की कृपा करें। १७ बालिका (सेविका) के इन वचनों को सुनकर राजा भयभीत होते हुए निकट गये। उन्होंने कैकेयी से कहा कि यह सब क्या कर रही हो ? सब बात मुझे स्पष्ट करो। विवश करने पर जब राजा ने शपथ लिया कि जो कुछ कहोगी मैं पूर्ण करूँगा, तब कैकेयी ने सब बात कह दी। उसे सुन कर राजा वृक्ष की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़े। १८ मेरे दो वर हैं दीजिए। एक से राम को वनवास और दूसरे से भरत को राजगद्दी। और यदि नहीं देंगे तो आपका जीवित रहना मृत के समान है। यदि कल तक वह नहीं हुआ तो मैं विषपान कर प्राण त्याग दूँगी। ऐसी बात सुनकर राजा पुनः पृथ्वी पर गिर पड़े। १९ राजा मूर्छित हो गये और वह रात्रि एक वर्ष के समान बीती। सब सामग्री तैयार कर प्रातः मंत्री राजा के यहाँ गए। सब

देख्या चाल् र वहाँ विचार् हुन गयो सोध्या पऱ्यो क्या भनी ।
विस्तार् पाइ सुमन्त्र राम् लिन गया आया तहाँ राम् पनि।।२०।।

राजालाइ त दुःख सुक्ख हुनको कारण् तिमी छौ भनी ।
वन्मा गै तिमि राज्य द्यौ भरतलाइ भन्दी भइन् यो पनि ।।
यस्ता बात् सुनि बात् गऱ्या प्रभुजिले सुन्छचौ कि ए कैकेयी ।
राजा खूशि रहुन् म जान्छु वनमा के काम् छ घर्मा रही।।२१।।

गाह्लो कत्ति नमानि जान्छु वनमा राजा त बोलून् भनी ।
बोल्याको प्रभुको वचन् सुनि तहाँ बोल्छन् ति राजा पनि ।।
हे राम्चन्द्र ! मलाइ आज् तिमीले बाँधेर राज्यै गरी ।
झूठ्ठादेखि बचाउ पाप् तिमिकनै लाग्दैन यस्तो गरी ।।२२।।

राजा येति भन्या र फेर् पनि विलाप् खुप् गर्न लाग्दा भया ।
राजाको बुझियो र आशय तहाँ राम्चन्द्र माइथ्यैं गया ।।
कौशल्या पनि भक्तिले हरिजिको ध्यान्मा रहयाकी थिइन् ।
राम्जीलाइ नदेखि कत्ति नछुटाइ ताना प्रभूमा दिइन्।।२३।।

सुमित्राले भन्दा पछि पलक माइका खुलि गयो ।
प्रभूलाई देख्ता अधिक मन सन्तोष् पनि भयो ।।
खूशीले काख्मा लीकन जब भनिन् खाउ कछु भनी ।
सुनी राम्ज्यू भन्छन् अब त कति खाँला नि म पनि ।।२४।।

स्थिति को देख कर बड़े ही असमंजस में पड़ कर उन्होंने कारण पूछा । पूरी परिस्थिति को भली प्रकार समझकर मंत्री सुमंत्र राम को लेने गये । राम भी आ गए। २० कैकेयी ने कहा, राजा को तुम्हारे यहाँ रहने से दुख हुआ है, तुम भरत को राज्य सौंप कर बन चले जाओ । इस प्रकार की बात को सुनकर प्रभु ने कहा, माता सुनो ! राजा प्रसन्न रहें । घर में रह कर करना ही क्या है । मैं वन को जाता हूँ । २१ बिना संकोच मैं वन चला जाऊँगा, महाराज आदेश दे तो । प्रभु के वचन को सुन कर राजा भी वोले, हे रामचन्द्र! मुझे आज बाँध कर [डाल दो और] राज्य करके इस असत्य से बचाओ । ऐसा करने से तुम्हें किसी प्रकार का पाप न होगा । २२ राजा इतना कहकर फिर अत्यन्त विलाप करने लगे । राजा के इस आशय को समझ कर रामचन्द्र माता के पास गये । कौशल्या भी हरि जी के ध्यान में मग्न थीं । राम को न देख कर प्रभु से अनुयोग भी किया । २३ सुमित्रा के बाद, माता (कौशल्या) के पलक खुलते ही प्रभु

गयो खान्या बेला मकन त मिल्यो राज्य वनको ।
भरत्ले राज् पाया यहि बसि गरुन् राज्य जनको ।।
बिदा वक्स्याजावस् खुशिसित म जान्याछु वनमा ।
म चाँडै फिर्न्याछू विरह नहवस् कत्ति मनमा ।।२५।।

वचन् सुन्दा मूर्च्छा परिकन उठ्याकी छँदि तहाँ ।
भनिन् कौशल्याले अब म तिमिलाइ छोड्दछु कहाँ ।।
भन्या राजाले ता तर म तिमिलाइ रोक्तछु यहाँ ।
कि साथै लैजाऊ मकन तिमि जान्छौ अब जहाँ ।।२६।।

तिमीलाइ बिदा दी म कसरि यहाँ दुःख सहुँला ।
बरू प्राणै त्यागी यमपुरिमहाँ जाइ रहुँला ।।
विलाप् कौशल्याको यति सुनि दयाले भरिगयो ।
तहाँ लक्ष्मण्को मन् तब अरु उपर् रिस् हुन गयो ।।२७।।

नजर् दी राम्ज्यूमा अरुसित उठ्याको रिस बढाइ ।
गर्न्या बिन्ती राम्थ्यैं अब भरतथ्यैं गर्दछु लडाइँ ।।
हजुर्का राज् हर्न्या जति जति त छन् मार्छु सबलाइ ।
पितै बाँध्छू पैले भनिकन भन्या क्या छ अरुलाइ ।।२८।।

को देख कर मन को अत्यधिक सन्तोष हुआ । अति प्रसन्नता से गोद में लेकर जब कुछ खाने को कहा तो राम बोले कि अब मैं कितना खाऊँगा । २४ मेरा खाने का समय निकल गया । मुझे वन का राज्य मिला है । भरत ने राज्य पाया है और वह यही रह कर राज्य करें । मुझे शीघ्र विदा देने की कृपा करें । मैं वन को जाता हूँ । मैं शीघ्र ही लौटूँगा । मन में किंचित मात्र भी चिन्ता न करें । २५ ऐसा वचन सुनकर मूर्छित हुई कौशल्या पुनः सचेत हो बोली कि अब मैं तुम्हें कैसे छोड़ सकती हूँ । राजा ने तो कह दिया परन्तु मैं अब तुम्हें रोकती हूँ । तुम अब जहाँ जाओ मुझे भी अपने साथ ले चलो । २६ तुम्हें विदा कर मैं यहाँ किस प्रकार पीड़ा सहन करूँगी । मैं प्राण तज कर यमलोक में जा कर रहूँगी । कौशल्या का यह विलाप सुनकर राम के हृदय में दया उमड़ आई और लक्ष्मण के मन में अन्य लोगों पर क्रोध आया । २७ श्रीराम की ओर एक नजर देख अन्य लोगों पर उत्पन्न क्रोध से उग्र हो कर राम से लक्ष्मण ने विनती की कि अब मैं भरत के साथ युद्ध करूँगा और श्रीमान् के राज्य को हरण करने वाले जो भी हैं सब का वध करूँगा । पिता का ही सर्वप्रथम वध करूँगा । औरों का तो कहना ही क्या । २८ चाहे

चढ्याजावस् गादी सकल रिपुको नाश् म गरुँला ।
यसै काम्ले माइका सकल मनको शोक हरुँला ॥
सुन्या लक्ष्मण्जीका यि वचन जसै राम् खुशि भया ।
बुझाया विस्तार्ले पनि तहिं ठुलो लीकन दया ॥२९॥

सुन्यौ भाइ ! संसार्मा शरिर अति कच्चा छ जनको ।
शरीर् कच्चा जानी नगर तिमि रिस् कत्ति मनको ॥
सबै भोग् चञ्चल् छन् बिजुलिसरि एक् छिन् नरहन्या ।
विचार् यस्तो राखी सहु तिमि बडो हुन्छ सहन्या ॥३०॥

भ्यागु तोखाँ भनि खोज्छ डाँस्मुखविषे साँप्ले धन्याको पनि ।
तेस्तै भोग् गरुँला भनेर मनले भन्छन् दुनीयाँ पनि ॥
क्याको रस् छ यहाँ विचार मनले काल्सर्पको मुख् परी ।
क्या होला वन जाउँला इ सब्लाइ आनन्द राख्नन् हरि॥३१॥

देश्देश्का बाटुलिन्छन् बुझ तिमि मनले बाटका पाटिमाहाँ ।
बात्चित् गर्दै रहन्छन् खुशिसित मनले बन्धुझैं राति ताहाँ ॥
प्रातःकाल्भो जसै ता उठिकन ति सबै दश्दिशा लागिजान्छन् ।
बन्धूको संग यस्तो बुझिकन गुणिले दुःखसुख् एक मान्छन् ॥३२॥

गद्दी पर बैठ भी जायें, तो भी मैं समस्त शत्रुओं का नाश करूँगा । इन कार्यों से, माता के मन के सम्पूर्ण शोक का हरण करूँगा । लक्ष्मण के इन वचनों को सुनकर रामचन्द्र जी प्रसन्न हुए और महान् कृपा कर उन्हें भली प्रकार समझाया । २९ सुनो भाई ! संसार में मानव-शरीर अत्यन्त क्षणभंगुर है । शरीर को ऐसा समझ कर तुम मन में किंचित्मात्र भी क्रोध न करो । सभी भोग्य वस्तुएँ क्षणभंगुर है । इन वातों का विचार कर तुम कष्ट सहन करो । सहनशील (व्यक्ति) ही महान् होता है । ३० मेढक सर्प के मुँह को विषपान करने हेतु खोजता है । उसी प्रकार संसार में भी भोग करने को मन कहता है । मन से यह विचार करो कि काल रूपी सर्प के मुँह में किस प्रकार का रस है । वन जाने से हमारी क्या हानि हो जायेगी । भगवान् सब को आनन्द-मंगल से रक्खें । ३१ तुम अपने मन से विचार कर देखो कि लोग देश-विदेश घूमते है । वहाँ मार्ग में विश्राम-गृह में मित्रों की भाँति प्रसन्न हो कर परस्पर वार्तालाप करते रहते हैं और प्रातः होते ही सब अपनी-अपनी दिशाओं की ओर चले जाते हैं । ३२ ऐसे मित्रों की संगति के गुणों को समझ कर गुणी

छाया तुल्य छ लक्ष्मि, यौवन भन्या भेलै सरीको भनी ।
भन्छन् स्त्रीसुखलाइ स्वप्न सरिको साँचो कुरा हो भनी ॥
यस्तै जानि पनी मनुष्यहरु सब् संसारमा भुल्दछन् ।
भुल्नैका वशले अनेक् फजितिले संसारि भैं डुल्दछन्॥३३॥

जुन् यस् देह निमित्त यो रिस गर्‌यौ चिन्छौ कि कस्तो छ यो ।
हाड् मासू र रगत् नसा यति कुरा जम्मा भई बन्छ यो ॥
विष्ठा हुन्छ कि भस्म हुन्छ पछितक् बाँच्तैन यो ता कसै ।
यस्का खातिर घात् गर्‌यौ पनि भन्या पाप् मात्र लाग्ला उसै॥३४॥

क्रोधै हो यमराज सर्व जनको वैतर्नि भन्नू पनि ।
तृष्णा हो भनि यो बुझेर तिमिले कैले नबिर्स्या पनि ॥
सन्तोष्लाइ वुझि कामधेनु सरिको सन्तोष मन्ले रहू ।
रिस गर्नू बढिया त छैन मनमा जानू असल् हो सहू॥३५॥

यस्तै हो सुन कर्मका वश हुँदा वस्तैन एक् ठाम् रही ।
कस्तै कोहि हवस् अवश्य करले जानू छ जाहाँ गई ॥
कर्मको फल भोग गर्छ दुनियाँ यै चित्तमा लेउ भाइ ।
आमैले यहि बात् बुझीकन बिदा दीनूहवस् हामिलाइ॥३६॥

जन दुख और सुख को एक समान ही मानते हैं। धन को छाया तुल्य, यौवन को धूल के समान तथा स्त्री-सुख को स्वप्न की भाँति मानते हैं। और इस यथार्थता को मानते हुए, ऐसा जान बूझ कर भी, मनुष्य संसार में भूला रहता है और इसी कारण अनेक आपदाओं सहित संसार में भ्रमण करता रहता है। ३३ जिस शरीर के लिए इतना क्रोध किया उसे पहचानते हो ? हड्डी, रक्त, मांस और नसें यही सब मिलकर यह शरीर बनता है जो एक दिन नष्ट हो कर भस्म हो जाता है। अनन्त काल तक यह किसी प्रकार जीवित नही रह सकता। ऐसे शरीर के लिए किंचित् मात्र भी छल किया तो पाप के भागी होंगे। ३४ क्रोध समस्त मानव-जाति के लिए यमराज सदृश है। तृष्णा वैतरणी है इसे भी न भूलना, और सदा सन्तोषरूपी कामधेनु का सहारा लेकर रहना। क्रोध करना अच्छा नहीं, वरन् बन जाना ही उचित है; इसे सहन करो। ३५ ऐसा ही है, सो सुनो ! कर्मरत प्राणी को एक स्थान पर रहने को नहीं मिलता। किसी न किसी कार्यवश उसे एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना ही पड़ता है जहाँ जाकर वह अपने किये कार्यों के फल का भोग करता है। यही बात चित्त में धारण करके हे भाई तथा

यो बिन्ती गरि पाउमा जब पऱ्या बीदा दिइन् मन् बुझाइ ।
आँसू थाम्न कठिन् भयो र बहुतै रोइन् शरीरै रुझाइ ।।
आशीर्वाद वचन् समेत् मिलि गयो ताहाँ विदा रामलाइ ।
लक्ष्मण्ले पनि साथ जान्छु म भनी बिन्ती गऱ्या जानलाइ।।३७।।

लक्ष्मण्लाइ हिंडलौ भन्या र रघुनाथ् सीता भयामा गया ।
सीतालाइ तिमि ता घरै बस भनी पैले त भन्दा भया ।।
पङ्खा छत्र चमर् रहित् प्रभुकनै देख्ता त शङ्कित् भइन् ।
क्या कारण् हुनगो भनीकन सिता हात्जोरि साम्ने भइन्।।३८।।

शङ्कित् जानकिलाइ देखि प्रभुले तीमी घरैमा यहाँ ।
सासूको टहलै गरीकन रहू वर्षै त चौधैमहाँ ।।
पीताको वचनै लिई शिर-उपर् जान्छू म वन्मा प्रिये ।
चौधै वर्ष बिताइ जल्दि म यहाँ फिर्न्याछु निश्चै श्रिये।।३९।।

यस्ता बात् प्रभुका सुनीकन तहाँ सीताजि मूर्छा परिन् ।
पैले ज्योतिषिको कुरा सब कही छोड्दीनँ सेवा भनिन् ।।
सीताका यति बात् सुन्या र खुशिभै साथै सिताजी लिया ।
ब्राह्मण् खूशि सदा रहून् भनि तहाँ दौलत् बहूतै दिया ।।४०।।

माता, आपलोग मुझे बिदा देने की कृपा करें। ३६ ऐसी विनती करके जब राम चरणों में झुके तो उन्होंने अपने मन को समझा कर बिदा दी और रो-रोकर अपने शरीर को ही भिगो लिया। राम को आशीर्वाद के वचनों के साथ बिदा मिली और लक्ष्मण ने भी साथ जाने की विनती की। ३७ लक्ष्मण को चलने की अनुमति दे कर राम सीता के पास गये। पहुँचते ही सीता जी को घर में रहने की आज्ञा दी। पंखा, छतरी तथा चँवर आदि से सुसज्जित प्रभु को देखकर वे सशंकित हुई। वे करवद्ध होकर, उनकी इस वेशभूषा का कारण जानने के लिए सामने आई। ३८ सशंकित जानकी को देखकर प्रभु ने कहा कि चौदह वर्ष तक तुम घर पर रह कर अपनी सासों की सेवा टहल करती रहना। हे प्रिये! मैं पिता जी की आज्ञा शिरोधार्य करके, वन को जाता हूँ। चौदह वर्ष व्यतीत कर मैं निश्चय ही शीघ्र लौटूँगा। ३९ प्रभु की ये बातें सुनकर सीता जी मूर्छित हो गयीं। पहले ज्योतिषी की सब बातें कहीं, तत्पश्चात् विनती की कि आप की सेवा नहीं छोड़ूँगी। सीता जी की यह बात सुनकर राम ने प्रसन्न हो उन्हें साथ ले लिया। फिर ब्राह्मणों को सदा ख़ुश रखने के लिए धन-सम्पत्ति का वितरण किया। ४० माता

कौसल्याजि जहाँ थिइन् तहिं गई लक्ष्मण्‌जिले बिन्तिलाइ ।
माता मेरि पिछा भइन् भनि तहाँ सुम्प्या सुमित्राजिलाइ ॥
येती काम् गरि रामका हुकुमले लक्ष्मण् तयारी भया ।
सीता लक्ष्मण साथमा लि रघुनाथ् राजा भयामा गया ॥४१॥

बीदा हून पिताजिथ्यैं जब सिता लक्ष्मण् लि राम्‌ज्यू गया ।
यस्तो देखि असह्य भो र दुनियाँ सब शोक गर्दा भया ॥
सीता राम्‌कन दुःख यो हुन गयो कैकेयि दुष्टै भई ।
सीता आज कसोरि दुःख सहनिन् घोर् जङ्गलैमा गई ॥४२॥

यो अन्याय भयो यहाँ त नबसौं जाऔं प्रभूका सँगै ।
राम्‌लाइ छोडि यहाँ कसोगरि बसौं बूझेन मन् ता नगै ॥
यस्ता बात् गरि लोकले त बहुतै शोक् गर्न लाग्या भनी ।
सब् विस्तार् गरि वामदेव ऋषिले सब्‌लाइ बुझाया पनि॥४३॥

हेलोक्हो ! अतिगर्दछौतिमितशोक् यो शोक ता छाडिद्यौ ।
साक्षात् विष्णु इ हुन् भनेर मनले श्रीरामलाइ जानिल्यौ ॥
पृथ्वीको सब भार् हरेर रघुनाथ् फिर्छन् इ जान्छन् कहाँ ।
साँचा हुन् इ कुरा अवश्य तिमिले खेद् कीन मान्यौ यहाँ॥४४॥

को पीछे लगते देख लक्ष्मण ने कौशल्या के पास जाकर विनती की और सुमित्रा माता को उन्हें सौप दिया । इतना कार्य कर राम की अनुमति पाकर लक्ष्मण तैयार हो गये । सीता और लक्ष्मण को साथ लेकर रघुनाथ पिता के पास गये । ४१ राम को सीता और लक्ष्मण सहित विदा लेने के लिए पिता के पास जाते देख असहाय हो समस्त प्रजा शोकाकुल हुई । दुष्ट कैकेयी के कारण सीता तथा राम को कष्ट सहन करना पड़ा है । सीता आज किस प्रकार घोर जंगल में जाकर दुख सहन करेंगी । ४२ यह अन्याय हुआ है । यहाँ न रहें, प्रभु के संग ही चलें । राम को छोड़ कर यहाँ किस प्रकार रहेंगे । विना गये मन नही मानता । ऐसी बातें कर प्रजाजन अत्यन्त शोक करने लगे । तब वामदेव ऋषि ने सविस्तार वर्णन कर सबको समझाया । ४३ हे प्रजाजन ! तुम लोग अपनें इस अत्यधिक शोक का त्याग करो । श्रीराम को मन में साक्षात् विष्णु का अवतार समझो । पृथ्वी के सब भारों का निवारण करने के बाद रघुनाथ लौट आयेगें । ये जायेगे कहाँ ? ये सब बातें सत्य हैं । तुम व्यर्थ ही यहाँ पर क्यों शोक प्रकट करते हो । ४४ इन बातों से ऋषि ने सभी जनों के मन को अत्यन्त सन्तोष प्रदान किया ।

यस् बात्ले ऋषिले मनुष्यहरुको खुप् मन् बुझाई दिया ।
पौंच्या राम् पनि कैकयी र दशरथ् जाहाँ बस्याका थियो ॥
हे मातर् ! वन जानलाइ अब ता आयौं जना तीन् चली ।
बीदा जान मिलोस् मा जान्छु वनमा रस् राग्रतीभर् नली॥४५॥
आज्ञा जानमिलोस् पिताजिकि पनी जान्छू सदा खुश् म छु ।
दुख्पाउनन्किभनी पिताजिकन शोक् मन्मा नला गोस्कछु ॥
कैकेयी यति बात् सुनी खुशि भई बस्तर् पुराना दिइन् ।
लाया श्री रघुनाथले ति कपडा सीताजिले ता दिइन्॥४६॥
यस्ता वस्त्र म लाउँ आज कसरी भन्न्या मनैमा धरी ।
लज्जाले रघुनाथका मुखविषे हेरिन् कटाक्षै गरी ॥
श्रीराम्ले मुटुरा गरी ति कपडा हात्मा जसै ता लिया ।
त्यो देखीकन राजपत्निहरु सब् रोया तहाँ जो थिया॥४७॥
दुष्टे ! आज सिताजिलाइ किन यो बस्तर् पुराना दियौ ।
यस् काम्ले जति छन् यहाँ इ सबको प्राण् खैंचि ऐलै लियौ ॥
कैकेयी सित बात् वशिष्ठ गुरुले येती गऱ्याथ्या जसै ।
बीदा भै रघुनाथ् चढ्या रथविषे सम्पूर्ण रोया तसै ॥४८॥

राम भी, जहाँ कैकेयी और दशरथ थे वहीं पहुँच गये और बोले, हे माता ! वन जाने के लिए हम तीनों जने आ गये है । लेशमात्र भी मन में क्रोध तथा द्वेष न रखकर आप हमें वन जाने के लिए विदा देने की कृपा करें ।४५ पिताजी भी कृपया आज्ञा दें—जिससे मैं वन चला जाऊँ । मैं सदा ही प्रसन्न हूँ । आप मन में किंचित् मात्र भी चिन्ता न करें कि मुझे कष्ट होगा । ये शब्द सुनकर कैकेयी प्रसन्न हुई और उन्हें पुराने वस्त्रादि लाकर दिये । श्रीरघुनाथ ने तो वह वस्त्र ले लिये और सीता जी ने भी ले लिये ।४६ ऐसे वस्त्र आज मैं किस प्रकार धारण करूँ । मन में यह विचार कर सीता जी ने लज्जापूर्वक श्रीरघुनाथ की ओर कटाक्ष-पूर्ण दृष्टि से देखा । श्रीराम ने उन वस्त्रों को अपने हाथ में ले लिया, यह देख सब राज-पत्नियाँ (माताएँ) रोने लगीं ।४७ अरी दुष्टे! तूने आज सीता को ये पुराने वस्त्र क्यों दिये ? तूने इस कार्य से यहाँ जो लोग हैं उन सबके प्राणों को खींच लिया है । गुरु वशिष्ठ ने कैकेयी से जैसे ही यह बात कही श्रीरघुनाथ विदा होकर रथ में चढ़ गये । उस समय सब लोग रोने लगे ।४८ रथ में चढ़कर सीताराम वन को चल पड़े । साथ में लक्ष्मण भी गये । घर छोड़ कर उस रात्रि को रघुपति एक

कर्ता हूँ पनि भन्नु छैन अभिमान् जन्ले न गर्नू कहीं ।
कर्मको फल भोग मिल्छ तिमिले यो बुझ्नु जाहाँ तहीं ॥५७॥
धीरा भै रहनू विपत्ति सहनू कस्तै परून् तापनि ।
कैले मोहविषे नपर्नु जनले माया छ संसार् भनी ॥
यस्तै बात् सुनि रात् बित्यो गुहजिको रामका नजीक्मा रही ।
गङ्गा तर्न हुकुम् भयो प्रभुजिको ताहाँ उज्यालो भई ॥५८॥
गंगे ! आज म जान्छु घोर वनमा केवल् नमस्कार् गरी ।
फिर्दामा म पुजा अवश्य गरुँला सामग्रि ठूलो गरी ॥
यस्तो बिन्ति गरी सिता पतिजिको साथै चलिन् पार् तरी ।
आज्ञाले घरमा फिऱ्यो गुह पनी भक्ती मनैमा धरी ॥५९॥
गंगा पार् तरि मिर्ग मारि पकुवा तारेर खाया तहाँ ।
तेस्रो वास् रघुनाथको तहिं भयो एक् वृक्षका तल्महाँ ॥
चौथो वास् रघुनाथको हुन गयो आश्रम् भरद्वाजको ।
राम्ज्यूको ऋषिले गऱ्या स्तुति तहाँ सुर्‌जानिकाम्‌काजको॥६०॥

तन-मन से उनके वचनों को सुनने लगे । ५६ सुख-दुख का दाता यहाँ कोई नही है ? वास्तव में सुख-दुख के रूप में यह सब कर्मो का फल प्राप्त होता है । कहना मूर्खता है, न कहने से सब धर्म का नाश होता है । मैं कर्ता नहीं हूँ यह कहना ही उचित है । किसी को भी अभिमान नहीं करना चाहिए । तुम यही जान लो कि इस संसार में कर्मो का ही फल-भोग करने को मिलता है । ५७ कैसी भी विपत्ति आ जाय धैर्य-पूर्वक सहन करना चाहिए । संसार को माया रूपी जान कर कभी भी मोह के वश में न पड़ना चाहिए । राम के निकट वैठ ऐसी बातें सुनते हुए गुह की रात बीती । उजाला होने पर गंगा पार करने के लिए प्रभु की आज्ञा हुई । ५८ "लौटते समय पर्याप्त सामग्री लेकर मैं अवश्य पूजा करूँगा । हे गंगे! आज तो मैं केवल नमस्कार कर घनघोर वन को जाती हूँ ।" ऐसी विनती कर सीता अपने पति के साथ गंगा जी को पार कर चली गई । आज्ञा पाकर गुह भी मन में भक्ति-भाव धारण कर घर लौट गये । ५९ गंगा के पार आकर गुह ने मृग का शिकार किया और उसी का भोजन किया । श्रीरघुनाथ का तीसरा पड़ाव वहीं एक वृक्ष के नीचे पड़ा और चौथा पड़ाव भरद्वाज ऋषि के आश्रम में हुआ । कार्यो के विस्तार को समझ कर ऋषि ने रामजी की स्तुति की । ६० पाँचवे दिन मार्ग-प्रदर्शन के लिए ऋषिकुमारों को साथ में

यस् बात्‌ले ऋषिले मनुष्यहरुको खुप् मन् बुझाई दिया ।
पौंच्या राम् पनि कैकयी र दशरथ् जाहाँ बस्याका थियो ॥
हे मातर् ! वन जानलाइ अब ता आयौं जना तीन् चली ।
वीदा जान मिलोस् मा जान्छु वनमा रस् राग्‌रतीभर् नली॥४५॥
आज्ञा जानमिलोस् पिताजिकि पनी जान्छू सदा खुश् म छु ।
दुख्‌पाउनन्‌किभनी पिताजिकन शोक् मन्‌मा नला गोस्‌कछु ॥
कैकेयी यति बात् सुनी खुशि भई बस्तर् पुराना दिइन् ।
लाया श्री रघुनाथले ति कपडा सीताजिले ता दिइन्॥४६॥
यस्ता वस्त्र म लाउँ आज कसरी भन्न्या मनैमा धरी ।
लज्जाले रघुनाथका मुखविषे हेरिन् कटाक्षै गरी ॥
श्रीराम्‌ले मुटुरा गरी ति कपडा हात्‌मा जसै ता लिया ।
त्यो देखीकन राजपत्निहरु सब् रोया तहाँ जो थिया॥४७॥
दुष्टे ! आज सिताजिलाइ किन यो बस्तर् पुराना दियौ ।
यस् काम्‌ले जति छन् यहाँ इ सबको प्राण् खैंचि ऐलै लियौ ॥
कैकेयी सित बात् वशिष्ठ गुरुले येती गऱ्याथ्या जसै ।
वीदा भै रघुनाथ् चढ्या रथविषे सम्पूर्ण रोया तसै ॥४८॥

राम भी, जहाँ कैकेयी और दशरथ थे वहीं पहुँच गये और बोले, हे माता ! वन जाने के लिए हम तीनों जने आ गये हैं। लेशमात्र भी मन में क्रोध तथा द्वेष न रखकर आप हमें वन जाने के लिए विदा देने की कृपा करें।४५ पिताजी भी कृपया आज्ञा दें—जिससे मैं वन चला जाऊँ। मैं सदा ही प्रसन्न हूँ। आप मन में किंचित् मात्र भी चिन्ता न करें कि मुझे कष्ट होगा। ये शब्द सुनकर कैकेयी प्रसन्न हुई और उन्हें पुराने वस्त्रादि लाकर दिये। श्रीरघुनाथ ने तो वह वस्त्र ले लिये और सीता जी ने भी ले लिये।४६ ऐसे वस्त्र आज मैं किस प्रकार धारण करूँ। मन में यह विचार कर सीता जी ने लज्जापूर्वक श्रीरघुनाथ की ओर कटाक्ष-पूर्ण दृष्टि से देखा। श्रीराम ने उन वस्त्रों को अपने हाथ में ले लिया, यह देख सब राज-पत्नियाँ (माताएँ) रोने लगीं।४७ अरी दुष्टे! तूने आज सीता को ये पुराने वस्त्र क्यों दिये ? तूने इस कार्य से यहाँ जो लोग हैं उन सबके प्राणों को खींच लिया है। गुरु वशिष्ठ ने कैकेयी से जैसे ही यह बात कही श्रीरघुनाथ बिदा होकर रथ में चढ़ गये। उस समय सब लोग रोने लगे।४८ रथ में चढ़कर सीताराम वन को चल पड़े। साथ में लक्ष्मण भी गये। घर छोड़ कर उस रात्रि को रघुपति एक

कर्ता हूँ पनि भन्नु छैन अभिमान् जन्ले न गर्नू कहीं ।
कर्मको फल भोग मिल्छ तिमिले यो वुझ्नु जाहाँ तहीं ।।५७।।
धीरा भै रहनू विपत्ति सहनू कस्तै परून् तापनि ।
कैले मोहविषे नपर्नु जनले माया छ संसार् भनी ।।
यस्तै वात् सुनि रात् वित्यो गुहजिको रामका नजीक्मा रही ।
गङ्गा तर्न हुकूम् भयो प्रभुजिको ताहाँ उज्यालो भई ।।५८।।
गंगे ! आज म जान्छु घोर वनमा केवल् नमस्कार् गरी ।
फिर्दामा म पुजा अवश्य गरुँला सामग्रि ठूलो गरी ।।
यस्तो विन्ति गरी सिता पतिजिको साथै चलिन् पार् तरी ।
आज्ञाले घरमा फिर्‍यो गुह पनी भक्ती मनैमा धरी ।।५९।।
गंगा पार् तरि मिर्ग मारि पकुवा तारेर खाया तहाँ ।
तेस्रो वास् रघुनाथको तहिं भयो एक् वृक्षका तल्महाँ ।।
चौथो वास् रघुनाथको हुन गयो आश्रम् भरद्वाजको ।
राम्ज्यूको ऋषिले गर्‍या स्तुति तहाँ सुर्जानिकाम्काजको।।६०।।

तन-मन से उनके वचनों को सुनने लगे। ५६ सुख-दुख का दाता यहाँ कोई नहीं है ? वास्तव में सुख-दुख के रूप में यह सव कर्मो का फल प्राप्त होता है। कहना मूर्खता है, न कहने से सव धर्म का नाश होता है। मैं कर्ता नहीं हूँ यह कहना ही उचित है। किसी को भी अभिमान नहीं करना चाहिए। तुम यही जान लो कि इस संसार में कर्मो का ही फल भोग करने को मिलता है। ५७ कैसी भी विपत्ति आ जाय धैर्य-पूर्वक सहन करना चाहिए। संसार को माया रूपी जान कर कभी भी मोह के वश में न पड़ना चाहिए। राम के निकट वैठ ऐसी वातें सुनते हुए गुह की रात वीती। उजाला होने पर गंगा पार करने के लिए प्रभु की आज्ञा हुई। ५८ "लौटते समय पर्याप्त सामग्री लेकर मैं अवश्य पूजा करूँगा। हे गंगे! आज तो मैं केवल नमस्कार कर घनघोर वन को जाती हूँ।" ऐसी विनती कर सीता अपने पति के साथ गंगा जी को पार कर चली गई। आज्ञा पाकर गुह भी मन में भक्ति-भाव धारण कर घर लौट गये। ५९ गंगा के पार आकर गुह ने मृग का शिकार किया और उसी का भोजन किया। श्रीरघुनाथ का तीसरा पड़ाव वहीं एक वृक्ष के नीचे पड़ा और चौथा पड़ाव भरद्वाज ऋषि के आश्रम में हुआ। कार्यो के विस्तार को समझ कर ऋषि ने रामजी की स्तुति की। ६० पाँचवें दिन मार्ग-प्रदर्शन के लिए ऋषिकुमारों को साथ में

पाँचौंदिन् ऋषिका कुमार् सँगलिया बाटो बताउन् भनी।
राम्ज्यूलाइ यमुनाजितारितिकुमार् साँझमा त फर्क्या पनि॥
सीताराम् पनि चित्रकूट् पुगि गया वाल्मीकि बस्थ्या जहाँ।
वाल्मीकीकन दण्डवत् गरि बहुत् आनन्द मान्या तहाँ॥६१॥

वाल्मीकीकन भन्दछन् रघुपती क्यै दिन् रहन्छू यहाँ।
कुन् जग्गा बढ़िया छ सब् तरहले होला सुविस्ता कहाँ॥
सून्या वाल्मिकिले मनुष्य सरि भैं राम्ले गर्‍याका कुरा।
सोही माफिक विन्ति बात् पनि गर्‍या वाल्मीकि छन् ज्ञन्पुरा॥६२॥

जान्दैनन् महिमा वडा ऋषि पनी जस्का त एक् नामको।
यस्ता हौ रघुनाथ् ! हजुर्कन यहाँ क्या काम् असल् ठामको॥
सज्जन्को हृदयै छ घर् हजुरको अच्छा बहुत् फेर् कहाँ।
विस्तार् एक् सुनिबक्सनू पनि हओस् बिन्ती म गर्छू यहाँ॥६३॥

व्याधा हूँ अधिको म सप्तऋषिको निर्मल् कृपाले गरी।
वाल्मीकी भनि नाम् चल्यो जब जप्याँ राम्नाम उल्टा गरी॥
उल्टै नामकि ता छ यस्ति महिमा विस्तार धेर् क्या कहूँ।
गंगाका र इ चित्रकूट गिरिका बीच्का जगामा रहू॥६४॥

लिया। रामजी को यमुना पार करवा कर वे ऋषिकुमार संध्या तक लौट भी आये। सीता-राम भी चित्रकूट, जहाँ बाल्मीकि रहते थे, पहुँच गए और बाल्मीकि मुनि को दण्डवत कर अत्यन्त आनन्दित हुए। ६१ कुछ दिन वहीं रहने की इच्छा प्रकट करते हुए रघुपति बालमीकि से कहते हैं—कौन-सा स्थान सर्वप्रकार से सुविधापूर्ण एवम् उत्तम होगा। मनुष्य की भाँति राम द्वारा कही गई बात को वाल्मीकि मुनि ने सुना। और उसी प्रकार विनय-पूर्ण वार्ता की। क्योंकि वाल्मीकि तो पूर्ण ज्ञानी थे। ६२ हे रघुनाथ आप तो ऐसे हैं कि जिनके कार्य की महिमा को ऋषि नहीं समझ सकता। आपके लिए उत्तम स्थान की क्या आवश्यकता है? सज्जनों का हृदय ही आपका आगार है, इससे बढ़कर उत्तम स्थान आपको और कहाँ मिलेगा। मैं एक बात विस्तार-पूर्वक कहता हूँ, आप श्रवण करने की कृपा करें। ६३ मैं किसी समय एक बहेलिया था। सप्तर्षियों की असीम कृपा से जब राम-नाम को उलटी ओर से जपना आरम्भ किया तब बाल्मीकि के नाम से प्रख्यात हुआ। उलटे नाम की ऐसी महिमा है कि और अधिक क्या कहूँ। आप गंगा तथा चित्रकूट पर्वत के मध्य के स्थल में निवास करें। ६४ वाल्मीकि ऋषि के वचनों को सुन कर प्रभु

बिन्ती यो गरि दुःखमा परि विलाप् गर्थ्या भरत्जी तहाँ ।
मन्त्रीवर्ग समेत् वशिष्ठ गुरुजी पौंच्या नजीक्मा तहाँ ॥
देख्या शोक भरत्जिको र गुरुले पीता बित्याछन् भनी ।
शोक् गर्नू बढिया त छैन किन शोक् गर्छौं महाराज् ! भनी॥७३॥

नाना तत्त्व कही तहाँ भरतको सब् शोक् गुरूले हऱ्या ।
सब् आज्ञा गुरुको लिई भरतले काम्काज् पिताको गऱ्या ॥
राजाको किरिया जसो गरि सक्या दान्को असङ्ख्यै गरी ।
तेस् बीच्मा मनले विचार् भरतले राख्या बहुत् शोक् गरी॥७४॥

माता मेरि त राक्षसी सरि भइन् इन्का नजीक्मा यहाँ ।
बस्नू योग्य अवश्य छैन अब ता जान्छू प्रभू छन् जहाँ ॥
यस्तो चित्त थियो तहाँ भरतको इन्को छ यो मन् भनी ।
मालूम् ता गुरुमा थियो तरपनी भन्छन् उचित् हो भनी॥७५॥

बाबाको छ हुकुम् यहाँ भरतले राज् गर्नु, राम्ले गई ।
चौधै वर्ष तलक् बसून् वनविषे मानो मुनीश्वर भई ॥
सीता राम् यहि बातले वन गया याहाँ हजूर्ले पनि ।
गादी चढ्नुहवस् हुकूम् दिनुहवस् यो राज्य मेरो भनी॥७६॥

यस्तो बिन्ति गरी वशिष्ठ गुरु चुप् जस्सै रह्याथ्या तहाँ ।
उत्तर् जल्दि दिया तहाँ भरतले क्या गर्छु यो राज् यहाँ ॥

सभी मंत्रिगणों सहित वहाँ पहुँच गए। भरत जी को शोकाकुल देख गुरु ने पिता की मृत्यु की सूचना दी। वे बोले, शोक करना ठीक नहीं, आप व्यर्थ ही शोक क्यों करते है। ७३ अनेक प्रकार के तत्वों का ज्ञान दे कर गुरु ने भरत के शोक को शान्त किया। गुरु की आज्ञा लेकर भरत ने पिता का क्रियाकर्मादि किया। जैसे ही राजा का क्रिया-कर्म समाप्त हुआ वैसे ही असंख्य दान-पुण्य आदि किए। उसी बीच भरत ने शोकाकुल हो कर मन में विचार किया। ७४ मेरी माता तो राक्षसी तुल्य है। इसके समीप रहना अवश्य ही उचित नहीं है, अतः अब जहाँ प्रभु हैं वहीं जाता हूँ। गुरु को विदित था कि भरत के मन में ऐसा ही विचार था जो उचित ही था। ७५ पिता (दशरथ) की आज्ञानुसार भरत को यहाँ राज्य करना है और राम को चौदह वर्ष तक वनों में मुनियों के रूप में रहना है। सीता-राम इसी कारण वन को गए। अतः आप राजगद्दी पर बैठ कर, 'यह मेरा राज्य है' कह कह कर राज्य करें। ७६

पाँचौंदिन् ऋषिका कुमार् सँगलिया बाटो बताउन् भनी ।
राम्ज्यूलाइ यमुनाजितारितिकुमार् साँझमा त फर्क्या पनि ।।
सीताराम् पनि चित्रकूट् पुगि गया वाल्मीकि बस्थ्या जहाँ ।
वाल्मीकीकन दण्डवत् गरि बहुत् आनन्द मान्या तहाँ।।६१।।
वाल्मीकीकन भन्दछन् रघुपती क्यै दिन् रहन्छू यहाँ ।
कुन् जग्गा बढिया छ सब् तरहले होला सुविस्ता कहाँ ।।
सून्या वाल्मिकिले मनुष्य सरि भै राम्ले गर्‍याका कुरा ।
सोही माफिक विन्ति बात् पनि गर्‍या वाल्मीकि छन् ज्ञन्पुरा।।६२।।
जान्दैनन् महिमा वडा ऋषि पनी जस्का त एक् नामको ।
यस्ता हौ रघुनाथ् ! हजुर्कन यहाँ क्या काम् असल् ठामको ।।
सज्जन्को हृदयै छ घर् हजुरको अच्छा बहुत् फेर् कहाँ ।
विस्तार् एक् सुनिबक्सनू पनि हओस् बिन्ती म गर्छू यहाँ।।६३।।
व्याधा हूँ अधिको म सप्तऋषिको निर्मल् कृपाले गरी ।
वाल्मीकी भनि नाम् चल्यो जब जप्याँ राम्नाम उल्टा गरी ।।
उल्टै नामकि ता छ यस्ति महिमा विस्तार धेर् क्या कहूँ ।
गंगाका र इ चित्रकूट गिरिका बीच्का जगामा रहू।।६४।।

लिया । रामजी को यमुना पार करवा कर वे ऋषिकुमार संध्या तक लौट भी आये । सीता-राम भी चित्रकूट, जहाँ वाल्मीकि रहते थे, पहुँच गए और वाल्मीकि मुनि को दण्डवत कर अत्यन्त आनन्दित हुए । ६१ कुछ दिन वहीं रहने की इच्छा प्रकट करते हुए रघुपति वाल्मीकि से कहते हैं—कौन-सा स्थान सर्वप्रकार से सुविधापूर्ण एवम् उत्तम होगा । मनुष्य की भाँति राम द्वारा कही गई बात को वाल्मीकि मुनि ने सुना । और उसी प्रकार विनय-पूर्ण वार्ता की । क्योंकि वाल्मीकि तो पूर्ण ज्ञानी थे । ६२ हे रघुनाथ आप तो ऐसे हैं कि जिनके कार्य की महिमा को ऋषि नहीं समझ सकता । आपके लिए उत्तम स्थान की क्या आवश्यकता है ? सज्जनों का हृदय ही आपका आगार है, इससे बढ़कर उत्तम स्थान आपको और कहाँ मिलेगा । मैं एक बात विस्तार-पूर्वक कहता हूँ, आप श्रवण करने की कृपा करें । ६३ मैं किसी समय एक वहेलिया था । सप्तर्षियों की असीम कृपा से जब राम-नाम को उलटी ओर से जपना आरम्भ किया तब वाल्मीकि के नाम से प्रख्यात हुआ । उलटे नाम की ऐसी महिमा है कि और अधिक क्या कहूँ । आप गंगा तथा चित्रकूट पर्वत के मध्य के स्थल में निवास करें । ६४ वाल्मीकि ऋषि के वचनों को सुन कर प्रभु

बिन्ती यो गरि दुःखमा परि विलाप् गर्थ्या भरत्‌जी तहाँ ।
मन्त्रीवर्ग समेत् बशिष्ठ गुरुजी पौंच्या नजीक्‌मा तहाँ ॥
देख्या शोक भरत्‌जिको र गुरुले पीता बित्याछन् भनी ।
शोक् गर्नू बढिया त छैन किन शोक् गर्छौ महाराज् ! भनी॥७३॥

नाना तत्त्व कही तहाँ भरतको सव् शोक् गुरूले हऱ्या ।
सब् आज्ञा गुरुको लिई भरतले काम्‌काज् पिताको गऱ्या ॥
राजाको किरिया जसो गरि सक्या दान्‌को असङ्ख्यै गरी ।
तेस् बीच्‌मा मनले विचार् भरतले राख्या बहुत् शोक् गरी॥७४॥

माता मेरि त राक्षसी सरि भइन् इन्‌का नजीक्‌मा यहाँ ।
वस्नू योग्य अवश्य छैन अव ता जान्छू प्रभू छन् जहाँ ॥
यस्तो चित्त थियो तहाँ भरतको इन्‌को छ यो मन् भनी ।
मालूम् ता गुरुमा थियो तरपनी भन्छन् उचित् हो भनी॥७५॥

बावाको छ हुकुम् यहाँ भरतले राज् गर्नु, राम्‌ले गई ।
चौधै वर्ष तलक् बसून् वनविषे मानो मुनीश्वर भई ॥
सीता राम् यहि बातले वन गया याहाँ हजूर्‌ले पनि ।
गादी चढ्‌नुहवस् हुकूम् दिनुहवस् यो राज्य मेरो भनी॥७६॥

यस्तो बिन्ति गरी वशिष्ठ गुरु चुप् जस्सै रह्याथ्या तहाँ ।
उत्तर् जल्दि दिया तहाँ भरतले क्या गर्छु यो राज् यहाँ ॥

सभी मंत्रिगणों सहित वहाँ पहुँच गए। भरत जी को शोकाकुल देख गुरु ने पिता की मृत्यु की सूचना दी। वे बोले, शोक करना ठीक नहीं; आप व्यर्थ ही शोक क्यों करते हैं। ७३ अनेक प्रकार के तत्वों का ज्ञान दे कर गुरु ने भरत के शोक को शान्त किया। गुरु की आज्ञा लेकर भरत ने पिता का क्रियाकर्मादि किया। जैसे ही राजा का क्रिया-कर्म समाप्त हुआ वैसे ही असंख्य दान-पुण्य आदि किए। उसी बीच भरत ने शोकाकुल हो कर मन में विचार किया। ७४ मेरी माता तो राक्षसी तुल्य है। इसके समीप रहना अवश्य ही उचित नहीं है, अतः अब जहाँ प्रभु हैं वहीं जाता हूँ। गुरु को विदित था कि भरत के मन में ऐसा ही विचार था जो उचित ही था। ७५ पिता (दशरथ) की आज्ञानुसार भरत को यहाँ राज्य करना है और राम को चौदह वर्ष तक वनों में मुनियों के रूप में रहना है। सीता-राम इसी कारण वन को गए। अतः आप राजगद्दी पर बैठ कर, 'यह मेरा राज्य है' कह कह कर राज्य करें। ७६

कीर्तीमा अपकीर्ति पारि कसरी राज् गर्नु याहाँ बसी ।
दाज्यूको टहलै गरी सँग रह्या लक्ष्मण् रह्याछन् जसी ॥७७॥
गया जाहाँ सीतापति म पनि जान्छू अब तहाँ ।
फगत् एक् कैकेयी यहिं बसिरहून् छोड्दछु यहाँ ॥
फलाहारी हुन्छू शिरभरि जटा धारि वनमा ।
म भोली जान्याछू हिंडिकन विचार् यै छ मनमा ॥७८॥
प्रभूको गादी हो प्रभुकन फिरायेर घरमा ।
म गादी सुम्पन्छू किन म गरुँला राज्य करमा ॥
भरत्का यस्ता बात् सुनिकन सबै खुश् अति भया ।
भरत् भोलीबेरै उठिकन सबेरै हिंडिगया ॥७९॥
सबै माता भ्राता गुरु सहित सब् फौज पनि ली ।
फकत् सीताराम्को चरणतलमा चित्त पनि दी ॥
भरत् गङ्गा पौंच्या गुहजिकन शंका हुन गयो ।
ठुलो लश्कर् देख्या नबुझिकन तार्नैं डर भयो ॥८०॥
लडौंला नाउ खैंची भरत कपटी हुन् यदि भन्या ।
भनी मन् मन् लश्कर्हरुकन तयार् हौ पनि भन्या ॥

ऐसी विनती कर जैसे ही गुरु वशिष्ठ चुप हुए, भरत ने तुरन्त उत्तर दिया कि क्या राज्य करूँगा यहाँ ! कीर्ति में अपकीर्ति ले कर किस प्रकार यहाँ बैठ कर राज्य करूँ। भाई की सेवा कर साथ में रह कर लक्ष्मण यश के पात्र हुए । ७७ सीतापति जहाँ गए हैं मैं भी अब वहीं जाता हूँ, केवल कैकेयी अकेली यहाँ पर रहे। फलाहारी होकर शिर में जटा धारण कर मैं कल पैदल ही वन को चला जाऊँगा, यही मैंने मन में ठाना है । ७८ यह गद्दी प्रभु की है, अतः प्रभु को घर लौटा कर मैं गद्दी उनको सौंप दूँगा। भरत की ये बातें सुन कर सब लोग अति प्रसन्न हुए। भरत ने कहा कि मैं क्यों विवशता-पूर्वक राज्य करूँगा और दूसरे दिन उठकर सबेरे ही चल पड़े । ७९ सब माताओं, तथा गुरु सहित सब सेना को भी साथ लेकर केवल सीता-राम के चरण-तल में एकाग्रचित्त लगाकर भरत गंगा पर पहुँचे । निषादराज को शंका उत्पन्न हुई और भरत की विराट सेना को देखकर वास्तविकता को जाने बिना उन्हें पार उतारते भी डरने लगे । ८० यदि कोई कपट होगा तो नाव को खींचकर लड़ेंगे, यही मन में विचार कर उन्होंने अपनी सेना को सचेत किया । स्थिति की गम्भीरता को समझ कर भरत ने कहा कि मैं सब समझता हूँ ।

ठुलो भित्री मत्लब् गरिकन गयो बुज्दछु भनी ।
तहाँ भेटी राखी नजर तिर हेऱ्या कछु भनी ।।८१।।

जसै देख्या आँसू गहभरि धरी शोक् पनि गरी ।
कहाँ मिल्छन् सीतापति मकन भन्दा घरिघरि ।।
जसै शिर् पाऊमा गरि ति गुहले ढोग् पनि दिया ।
भरत्ले अङ्कैमाल् गरुँ भनि उठाईकन लिया ।।८२।।

भरत्जीले सोध्या गुहसित सितका पति यहाँ ।
सुत्याको स्थल् कुन् हो मकन कहु जान्छू अब तहाँ ।।
गया विस्तार् पाई रघुपति सुत्याका शयनमा ।
भरत्ले खेद् मान्या कुश-शयन देखेर मनमा ।।८३।।

अहो ! मेरो खातिर् वन वन सिताजी पति सँगै ।
कुशासन्मा सुत्छिन् न त यसरि सुत्थिन् अघि कतै ।।
अहो धिक्कार् मेरा जनम जननी कैकयि भइन् ।
इनैले गर्दामा पतिसँग सिताजी वन गइन् ।।८४।।

कहाँ छन् सीतानाथ् कति पर गया भेट्तछु कहाँ ।
छ केही मालूम् ता मकन कहु जान्छू अब तहाँ ।।

वे गुह से भेंट करने गये और कुछ समझने हेतु उसकी ओर देखा । ८१ गुह ने भरत के शोकाकुल अश्रुपूर्ण नेत्रों को देखा । सीतापति कहाँ मिलेंगे, कह कर भरत बार-बार निपादराज से पूछने लगे । जैसे ही गुह ने पाँव में मस्तक रख कर नमस्कार किया, भरत ने उसे आलिंगन करने के लिए उठा लिया । ८२ भरत ने गुह से सीतापति के शयनस्थल का पता पूछा । विस्तारपूर्वक जान कर भरत रघुपति के शयनस्थल की ओर गए और राम की कुशों की शय्या देख कर भरत जी को अत्यन्त खेद हुआ । ८३ ओह! मैं ही निमित्त हूँ कि सीता जी पति के साथ वन-वन में कुशासन पर सोती हैं । इस प्रकार पहले कभी नहीं सोई । ओह! धिक्कार है मेरी जन्मदात्री जननी कैकेयी को जिसके कारण आज सीता जी पति के साथ वन चली आई । ८४ कहाँ हैं सीतानाथ ? कितनी दूर जाने पर उनसे भेंट होगी ? कहाँ हैं ? कुछ मालूम हो तो बताओ मैं अब वहीं जाता हूँ । तब गुह ने भी उन्हें स्थान बता दिया जहाँ राम थे । गुह के दिये हुए समाचार से ही राम-मिलन की आशा से भरत प्रसन्न हुए । ८५ सब कुछ विस्तारपूर्वक बता कर गुह ने भरत को

बताया याहाँ छन् भनि ति गुहले रामकन पनि ।
गुहैका समचार्ले खुशि पनि भया भेट्तछु भनी ॥८५॥

सब् विस्तार् बताइ ताहिं गुहले गङ्गाजि तारीदिया ।
ताहाँ देखि भरत् चली पुगिगया जाहाँ भरद्वाज् थिया ॥
एक् दिन् ताहिं मुकाम् गऱ्या भरतले सन्मान् ऋषीले गऱ्या ।
बिल्कुल् सैन्य जती थिया भरतका मेज्मानिलेछक् पऱ्या॥८६॥

भोली बेर सबेर लश्कर लिई बीदा ऋषीथ्यैं भया ।
कैल्हे पुग्दछु चित्रकूट गिरिमा भन्दै भरत्जी गया ॥
खुश् भै लश्कर चित्रकूट गिरिका पौंच्या नजीक्मा जसै ।
खोज्या ताहिं भरत्जिले अघि गई डेरा प्रभूको तसै ॥८७॥

डेरा देखी भरत्जी तहिं नजिक गया पाउका छाप देख्या ।
श्रीराम्का पाउका छाप् चिन्हकन खुशिले माथले ताहिं टेक्या ॥
भन्छन् धन्न्यै रह्याँछू सहज नमिलन्या पाउका छाप देख्याँ ।
ब्रह्माजीले नपाउनु छ तपनि सहजै माथले आज टेक्याँ ॥८८॥

यस्तो बोल्दै प्रभूको चरणधुलिविषे भक्तिले लट्पटीदै ।
कैल्हे पुग्छू कहाँ छन् भनिकन मनले दस्दिशा दृष्टि दीदै ॥
जाँदा ताहीं भरत्ले प्रभुजिकन जसै नेत्रले देख्न पाया ।
ख्वामित्लाइ आज पायाँ भनिकन खुशिले पाउमा पर्न धाया॥८९॥

गंगा पार करा दिया। वहाँ से चल कर भरत भरद्वाज जी के आश्रम में पहुँच गये। एक दिन वहीं ठहरे। ऋषि ने भरत का सम्मान किया। इस सत्कार को देख कर भरत की सम्पूर्ण सेना चकित रह गई। ८६ दूसरे दिन प्रातः सेना को लेकर भरत ने ऋषि से विदा ली। चित्रकूट पर्वत पर शीघ्रातिशीघ्र पहुँचने की इच्छा से भरत चल पड़े। सेना जैसे ही चित्रकूट पर्वत के पास पहुँची वैसे ही भरत अति प्रसन्न हो आगे बढ़ कर प्रभु के डेरे की खोज करने लगे। ८७ डेरा ज्ञात होने पर भरत जी जब निकट पहुँचे तो उन्हें पाँवों के चिह्न दृष्टिगोचर हुए। श्रीराम के चरण-चिह्न पहचान कर भरत ने अत्यन्त हर्षित होकर वहीं अपना मस्तक रख दिया। मैं धन्य हूँ जो आज अप्राप्य पद-चिह्नों को प्राप्त कर पाया जिन्हें ब्रह्मा भी नहीं पा सकते। ८८ इसी प्रकार भक्ति-भावना में डूबे हुए भरत जी, प्रभु की चरण-धूलि से शरीर को पवित्र करते हुए, 'कब पहुचूँगा, राम कहाँ है' आदि बातें मन में सोचते

देख्या पाऊ पऱ्याका गह्भरि वहँदा अश्रुधारा धऱ्याको ।
सब् राज्यै तृण् बराबर् गरिकन वहुतै आफुमा मन् गऱ्याको ॥
यस्तो देखी कृपाले भरतकन तहाँ काखमा राखिलीया ।
जस्तो मन् हो भरत्को बुझि रघुपतिले खुप् कृपादृष्टि दीया॥९०॥

श्रीसीतापति माइका चरणमा राख्या र शिर् फेर् पिता ।
काहाँ छन् किन आज देख्तिनँ यहाँ क्या गर्दछन् छन् कता ॥
भन्दै खोजि गऱ्या पिताकन तहाँ श्रीरामजीले जसै ।
सब् विस्तार वशिष्ठले भनिलिंदा शोक् गर्न लाग्या तसै॥९१॥

गंगा स्नान गरी तिलाञ्जलि दिया फेर् पिण्डदानै पनि ।
फल् फूल्ले रघुनाथले तहिं दिया पाऊन् पिताले भनी ॥
तेस् दिन्मा उपवास् गऱ्या जब वित्यो रात् फेरि गंगा गया ।
गंगा स्नान् गरि फेर् फिरेर मढिमा आएर वस्ता भया ॥९२॥

तहाँ सीतारामका चरण-तलमा शिर् पनि धरी ।
अयोध्यै लैजान्छू भनिकन ठुलो मन्सुव गरी ॥
भरत् विन्ती गर्छन् किन रघुपते ! आज वनमा ।
हजूर्ले आयाको मकन अति ताप् हुन्छ मनमा ॥९३॥

हुए दशों दिशाओं की ओर दृष्टि डालते चले । जाते-जाते प्रभु के दर्शन पाते ही कहते हैं—आज स्वामी को पाया और अत्यन्त प्रसन्न हो उनके चरणों में आत्म-समर्पण कर दिया । ८९ पाँव पड़ते, नेत्रों से अश्रुधार बहाते, तथा समस्त राज्य-लोभ को तिनका सदृश समझ कर अपने हृदय को राम-चरणों में अर्पित करते हुए भरत को राम ने कृपापूर्वक अपनी गोद में बैठा लिया । भरत की ऐसी मनोभावना देख कर रघुपति ने उन्हें महान् कृपा की दृष्टि से देखा । ९० भरत ने प्रथम श्रीसीतापति के चरणों में मस्तक झुकाया फिर सीता-माता को प्रणाम किया । श्रीराम ने पिता को वहाँ न देख उनके विषय में पूछा कि वे कहाँ हैं, वे क्या कर रहे हैं आदि । गुरु वशिष्ठ द्वारा विस्तृत रूप से सब समाचार ज्ञात होने पर वे अत्यन्त शोकाकुल हुए । ९१ गंगा-स्नान करके तिलांजलि दे श्रीरघुनाथ ने फल-फूलों आदि से पिण्ड-दानादि किया । उस दिन उपवास किया । रात्रि व्यतीत होने पर पुनः गंगा में स्नानादि करके लौटे और अपनी मड़ैया में आकर बैठे । ९२ वहाँ सीता-राम के चरणों पर सिर रख कर भरत ने उनके अयोध्या लौट चलने की उत्कट अभिलाषा प्रकट की । भरत ने विनती की, हे रघुपते, आज आपके इस प्रकार वन चले

स्वामित् ! हजुर्को म त दास पो हूँ ।
यो राज्य गर्नाकिन योग्य को हूँ ।।
यो गादि ता याहिं हजूरको हो ।
मैले त सेवा गरि वस्नु पो हो ।।९४।।

छोरा हुनन् यज्ञ बहुत् गरीनन् ।
सम्पूर्ण लोक्को पनि ताप् हरीनन् ।।
तब् पो ति छोरासित राज्य छाडी ।
जानू असल् हो त छँदै छ झाडी ।।९५।।

बेला त यो होइन जान वन्मा ।
मेरा त यै निश्चय हुन्छ मन्मा ।।
जाऔं घरै फर्कि सधाइ जावस् ।
मेरी इ मातासित रिस् नआवस् ।।९६।।

यस्ता प्रकार्ले गरि बिन्ति गर्दै ।
आँखा भरी आँसु बहूत धर्दै ।।
रोया भरत्ले जब पाउमा गै ।
बोल्या प्रभूले पनि खूशि मन् भै ।।९७।।

हे भाइ ! गर्छौं किन आज जिद्दी ।
फिर्नू असल् छैन नि काम् नसिद्धी ।।
जान्छू म वन्मा तिमि फर्कि जाऊ ।
तेस् राज्यको काम् तिमिले चलाऊ ।।९८।।

आने से मेरे मन में घोर संताप हो रहा है । ९३ हे स्वामी, मैं तो आपका सेवक हूँ । यह राज्य करने योग्य नहीं हूँ । यह गद्दी तो आपकी है, मुझे तो सेवा करके रहना ही उचित है । ९४ जिसके पुत्र नहीं हुए, जिसने यज्ञादि भी नहीं किया, और न जिसने सम्पूर्ण लोकों का निवारण ही किया, ऐसे पुत्र को राज्य त्याग कर वन जाना ही उत्तम होगा । ९५ मैंने तो मन में यही निश्चय किया है कि आपके वन जाने का यह समय नहीं है । चलें, घर लौट चलें जिससे सबका सुधार हो और अपनी माता के प्रति मेरा क्रोध दूर हो जाय । ९६ इस प्रकार विनती करते हुए नेत्रों में अश्रु भर चरणों में गिर कर जब भरत रोए तो प्रभु ने प्रसन्न मन से कहा । ९७ हे भाई! आज तुम इतनी जिद्द क्यों करते हो । विना कार्य-सिद्धि के लौटना उचित नही है । मैं वन जाता हूँ, तुम

राम्ले वनै गै सुनि भेप धर्नू ।
याहीं भरत्ले वसि राज्य गर्नू ॥
भन्न्या पिताको जव सुन्न पायाँ ।
आज्ञा उसैले वन जान आयाँ ॥९९॥

ई वात् भरत्ले जव सुन्न पाया ।
फेरी चरण्मा परि विन्ति लाया ॥
हे नाथ् ! पिता हुन् मतिहीन् भयाका ।
स्त्रीका त साह्रै वशमा पऱ्याका ॥१००॥

उन्ले भन्याथ्या पनि राज्य छाडी ।
जानू असल् होइन आज झाडी ॥
स्वामित् ! वहुत् विन्ति छ फर्कि जाऊँ ।
फर्कन्नँ भन्न्या त जवाफ् नपाऊँ ॥१०१॥

यस्तो भरत्ले जव जिद्दि लीया ।
उत्तर् प्रभूले पनि फेरि दीया ॥
फर्कन्नँ भैया तिमि फर्कि जाऊ ।
पिताजिलाई पनि दोप् नलाऊ ॥१०२॥

खुप् सत्यवादी त पिताजि थीया ।
साँचै हुनाले वरदान दीया ॥
सो पूर्ण गर्नाकिन जान्छु वन्मा ।
साँचो कुरा हो वुझिलेउ मन्मा ॥१०३॥

लौट जाओ और राज-काज का सव कार्य संचालित करो। ९८ जव मैंने पिता की यह आज्ञा सुनी कि राम मुनि-वेष धारण करें और भरत यहाँ रह कर राज्य करें तदनुसार मैं वन जाने के लिए आया हूँ। ९९ जव भरत ने यह वात सुनी तो वे पुनः राम के चरणों में गिर कर विनती करने लगे। हे नाथ! पिता की मति हीन हो गई थी, वे स्त्री के वशीभूत थे। १०० उन्होंने यदि कहा भी तो भी राज्य छोड़कर वन को जाना आज अच्छा नहीं। हे स्वामी! मेरी हार्दिक विनती है कि आप लौट चलें; न लौटने की वात मुझसे न कहें। १०१ भरत ने जव इस प्रकार हठ किया तो भी प्रभु ने पुनः यही उत्तर दिया कि मैं नहीं लौटूँगा। तुम लौट जाओ और पिता पर भी दोषारोपण न करो। १०२ पिता जी अत्यन्त सत्यवादी थे। सत्य के कारण ही उन्होंने वरदान दिये।

उत्तर् प्रभूको सुनि दुःख मान्या ।
फेरी चरण्मा परि बिन्ति लाया ॥
फिर्नू हवस् ख्वामित ! बिन्ति गर्छु ।
यस् दण्डकारण्य विषे म जान्छु ॥१०४॥

यस्ता वचन् सूनि भरत्जिलाई ।
फेरी हुकूम् भा तिमि फर्क भाई ॥
यो राज्य साट्या पनि हुन्छ झूटो ।
हे भाइ ! गर्छौ किन आज भूटो ॥१०५॥

हुकूम् यस्तो सूनी भरत पनि राम्का चरणमा ।
परी बिन्ती गर्छन् म त रघुपते ! छू शरणमा ॥
चरण् बाहिक् एक् छिन् रहन पनि ताप् हुन्छ मनमा ।
नफर्क्या ख्वामित्का पछिपछि म ता जान्छु वनमा ॥१०६॥

न ता फर्की जान्या न त मकन लान्या वन पनि ।
भन्या मर्छू ख्यामित् ! अब अरु कुरा केहि न भनी ॥
भनी आसन् बाँधी जब मरणमा निश्चय धर्‍या ।
खुशी भै श्रीराम्ले पनि अति दयालू मन गर्‍या ॥१०७॥

दिया सूचन् राम्ले गुरुकन बुझाऊ तिमि भनी ।
गुरूले एकान्तै लगिकन भरत्जीकन पनि ॥

वही पूर्ण करने मै वन जा रहा हूँ। बात सत्य है, यह मन में जान लो। १०३ प्रभु के इस उत्तर को सुन कर भरत बहुत ही दुःखित हुए और पुनः चरणों में गिरकर विनती करने लगे। हे स्वामी! मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप लौटने की कृपा करें। दण्ड-स्वरूप इस वन में मैं ही निवास करता हूँ। १०४ ऐसे वचनों को सुनकर उन्होंने भरत को पुनः आज्ञा दी कि हे भाई! तुम लौट जाओ। यह राज्य बदलने से भी पिता जी का वचन झूठा हो जायगा। हे भाई! आज व्यर्थ ही फिर हठ क्यों करते हो। १०५ ऐसी आज्ञा सुन कर भरत फिर राम के चरणों में गिर कर विनती करने लगे, हे रघुपते! मैं आपकी शरण में हूँ और आपके चरणों के विना एक क्षण रहने से भी मेरे मन में ताप होगा। यदि आप नहीं लौटते तो स्वामी के पीछे-पीछे मैं भी वन को जाऊँगा। १०६ न ही लौटेंगे और न ही मुझे वन ले जायेंगे तो मैं अब कुछ न कहूँगा, यूँ ही मर जाऊँगा। ऐसा कह कर जब मरने के लिए आसन बाँध लिया तो श्रीराम ने भी मन ही मन प्रसन्न हो अत्यन्त दया दिखाई। १०७ तब

बुझाया बात् खोलीकन सुन इ जो हुन् रघुपति ।
जगन्नाथ् साक्षात् हुन् त्रिभुवनपतीका अधिपति ॥१०८॥

अघी ब्रह्माजीले सकल भुमिको भार् हर भनी ।
स्तुती गर्दा खुश् भै सुन म हरुँला भार्हरु पनि ॥
भन्याका हूनाले उहि वचन पालन् गरुँ भनी ।
प्रभू जान्छन् वन्मा पछि त सुन फिर्छन् घर पनि ॥१०९॥

प्रभूकै इच्छा हो नतर कसरी कैकयि पनि ।
वनै जाउन् भन्थिन् प्रभुकन रती तुल्य नगनी ॥
कुरो यस्तो जानी नगर तिमि यो आग्रह यहाँ ।
भुमीको भार् टारीकन पछि त जान्छन् प्रभु कहाँ ॥११०॥

रावण् मारि उतारि भारि भुमिको फिर्छन् जगन्नाथ् भनी ।
यस्ता हुन् रघुनाथ् भनेर गुरुले खोलेर गुह्यै पनि ॥
सब् विस्तार गरीदिया र गुरुको वाणी सुनी खुश् भया ।
फर्क्यानन् रघुनाथ् भनी मन बुझ्यो राम्का नजीकमा गया॥१११॥

हे नाथ् तत्त्व सुन्याँ म फिर्छु अब ता जान्छू अयोध्यामहाँ ।
पूजा गर्न दिनू हवस् हजुरका एक् जोर् खराऊ यहाँ ॥

राम ने गुरु से भरत को समझाने की विनती की । गुरु जी ने भरत को एकान्त में ले जाकर बात को स्पष्ट करके समझाया । सुना यह है कि रघुपति साक्षात् जगन्नाथ, तथा त्रिभुवनपति के भी अधिपति हैं । १०८ ब्रह्मा जी के सम्पूर्ण पृथ्वी के भार हरण करने की स्तुति पर प्रसन्न होकर श्रीराम ने भू-भार हरण करने का वचन दिया था । उसी वचन को पालन करने हेतु प्रभु अभी वन जा रहे हैं । इसके बाद वे घर भी लौटेंगे । १०९ यह सब प्रभु की ही इच्छा है । नहीं तो प्रभु को किंचित् मात्र भी न समझ कर कैकेयी किस प्रकार वन जाने को कहती । इन बातों को जान-समझ कर तुम यह आग्रह न करो । भू-भार हरण करने के बाद प्रभु जायेंगे कहाँ (अर्थात् घर ही तो लौटेंगे) । ११० रावण को मार कर भू-भार हरण करके जगन्नाथ लौटेंगे । रघुनाथ की लीला चाहे गोपनीय हो, गुरु ने स्पष्ट रूप से विस्तार-पूर्वक वर्णन कर दी । गुरु की वाणी को सुनकर भरत प्रसन्न हुए और रघुनाथ लौट आयेंगे यह मन में जान कर राम के निकट गए । १११ हे नाथ ! मैंने सब तत्वों को सुन लिया । अब मैं अयोध्या जाता हूँ, पूजा हेतु आप अपनी दोनों खड़ाऊँ देने की कृपा करें । ऐसी विनती करके चारों ओर परिक्रमा करके भरत ने प्रणाम किया ।

यस्तो बिन्ति गरी प्रणाम् वरिपरी घुम्दै भरत्ले गऱ्या ।
आफ्ना साफि खराउ दी प्रभुजिले सब्ताप्भरत्काहऱ्या ॥११२॥

फेरी बिन्ति गऱ्या तहाँ भरतले लौ फिर्दछू फिर्न ता ।
चौधै वर्ष समाप्ति पारि नफिऱ्या मर्न्याछु साँचै म ता ॥
यो बिन्ती सुनि लौ भनी भरतका साम्ने हुकूम् भो तहाँ ।
कैकेयी रघुनाथका चरणमा रूँदै परी खुप् तहाँ ॥११३॥

हे नाथ् दुर्बुद्धि आई अति फजिति दियाँ राज्यको घात् गराई ।
मायाले मोह पार्दा मन पनि भुलिगै मेरि बुद्धी हराई ॥
क्यारूँ नाथ् ! आज रुन्छू विपति गरिगयो आज यो चेत पायाँ ।
कठ्पुत्ली झैं नचाउँ छिन् त्रिभुवन कन सब् धन्य छन् तिम्रिमाया ।११४।

मेरो माया छ छोरा जन धनहरुमा यो सबै खेंचिदेऊ ।
दुर्बुद्धी हो पछीं ता शरण परि भनी खुप् कृपा राखिलेऊ ॥
कैकेयी येहि पाठ्ले स्तुति गरि हरिको पाउमा शीर धारिन् ।
हे नाथ् आई शरण्मा परि भनि करुणा राख यो बिन्ति पारिन् ॥११५॥

हाँसी सीतापतीले पनि अभय दिया जो भन्यायाँ भन्यौ सो ।
दोष् तिम्रो छैन यस्मा बुझ तिमि मनले मेरि इच्छा त हो यो ॥

अपनी पवित्र खड़ाऊँ देकर प्रभु ने भरत के सारे मानसिक ताप का हरण कर लिया। ११२ भरत ने पुनः विनती करते हुए कहा—लौटने के लिए तो मैं लौटता हूँ परन्तु चौदह वर्ष समाप्त कर यदि आप न लौटे तो मैं निश्चय ही मर जाऊँगा। यह विनती सुनकर लौटने का आश्वासन देते हुए राम ने भरत को आज्ञा दी। कैकेयी भी रोती हुई रघुनाथ के चरणों में गिर पड़ी। ११३ हे नाथ ! मैंने दुर्बुद्धि के कारण राजा को आघात पहुँचा कर घोर विपत्ति ढाई। माया के मोह में पड़कर मेरा मन भ्रमित हो गया और मेरी बुद्धि का नाश हो गया। क्या करूँ रघुनाथ ! विपत्ति आने पर आज रोती हूँ। आज यह समझ आयी है। हे त्रिभुवननाथ ! आप सबको कठपुतली के समान नचाते हैं, आपकी माया धन्य है। ११४ मेरा मोह जन-धन में है, यह आप जब चाहें खींच लें और जब आपकी इच्छा हो तब दुर्बुद्धि व्याप्त हो जाय; बाद में शरणागत जान कर मेरे ऊपर कृपा करें। यह स्तुति करके कैकेयी हरि के समाने झुक गयी और उनके चरणों में अपना सिर रख कर कहने लगी—हे नाथ ! मैं आपकी शरण में आयी हूँ, मुझ पर करुणा-दृष्टि रक्खें। ११५ कैकेयी ने जो कुछ भी किया था, हँस कर

मन्‌मा सन्तोष पाऊ मकन दिनदिनै सम्झँदै दिन् बिताऊ।
छुट्‌नन् सब् कर्म तिम्रा रतिभर मनमा शोक् नराखेर जाऊ॥११६॥

कैकेयी करुणा बुझी खुशि भई वीदा प्रभूथ्यैं भइन्।
श्रीराम्‌को चरणारविन्द मनले भज्दै अयोध्या गइन्॥
सब् लश्कर्‌हरु ली भरत् पनि विदा भै फेर् अयोध्या गया।
सब् लश्कर्‌हरुलाइ राखि घरमा आफू फरक्‌भै रह्या॥११७॥

नन्दीग्राम्‌मा सन्याका भुमिशयन गरी रोज् फलाहार् गऱ्याका।
एक् गट्‌ठा सब् जटाको गरिकन ति खराउ गादिमाथी धऱ्याका॥
गर्थ्या सब् राज्यको काम् तपनि सव कुरा गादिमा विन्ति गर्दै।
यस्तै रीत्‌ले बिताया दिन भरतजिले राममा चित्त धर्दै॥११८॥

केही दिन् चित्रकूट्‌मा बसिकन रघुनाथ् वालिमकीथ्यैं विदा भै।
जान्छू वन्‌मा म फिर्छू भनिकन खुशिले अत्रिका आश्रमै गै॥
अत्रीका पाउमा शिर् धरिकन म त हूँ राम् भनी नाम् वताया।
श्रीराम्‌का वाणि सुन्दा मन अति खुशि भै अत्रिले हर्ष पाया॥११९॥

सीतापति ने भी उसके कृत्यों को क्षमा करके उसे अभयदान दिया और कहा कि इसमें तुम्हारा कोई दोप नहीं। यह मेरी ही इच्छा है। यह मन में सोचकर मेरी ओर से सन्तोष धारण करो और मेरा स्मरण करती हुई दिन व्यतीत करो। सव अपराधों से तुम्हारी मुक्ति होगी, तुम मन में किंचित् मात्र भी शोक न करो और जाओ। ११६ कैकेयी भी राम की करुणा को समझ कर प्रसन्न हुई और प्रभु से विदा लेकर अपने मन में राम के चरणारविन्दों का भजन करती हुई अयोध्या चली गयी। भरत भी सम्पूर्ण सेना-सहित विदा लेकर अयोध्या चले गए। सारी सेना को घर में रखकर स्वयं दूसरे स्थान पर निवास करने लगे। ११७ भरत जी नन्दीग्राम में भूमि पर शयन करते। सदैव फलाहार ग्रहण करते। जटा को एक जूट करके बाँधते। खड़ाऊँ को अपनी गोद में रख कर सेवा करते तथा गद्दी पर स्थापित कर सविनय ध्यानपूर्वक राज्य के सभी कार्य करते। इसी प्रकार नियमित रीति से भरत जी ने राम के ध्यान में लीन हो दिन व्यतीत किए। ११८ कुछ दिन चित्रकूट में रहकर रघुनाथ ने वाल्मीकि से वन जाने के लिए विदा ली। उपरांत अत्यन्त हर्ष के साथ अत्रि मुनि के आश्रम में जाकर उनके चरणों में सिर नवा कर अपना परिचय दिया। श्रीराम की वाणी सुन, मुनि को बड़ी प्रसन्नता हुई। ११९ सीतापति की पूजा कर ऋषि ने उनके चरणों

पूजा सीतापतीको गरिकन ऋषिले पाउमा बिन्ति लाया।
बृद्धा छन् पत्नि मेरी सकल विषयमा एक् रती छैन माया ॥
भित्रै छन् आज दर्शन् दिन मढुलिविषे भित्र सीताजि जाउन्।
सीताजीलाइ पाई अब त ति बुढिले जन्मको सार पाऊन् ॥१२०॥

अत्रीको बिन्ति सूनी हुकुम पनि दिया लौ सिता भित्र जाऊ।
अत्रीकी पत्नि भेटीकन अब तिमिले जल्दि फर्केर आऊ ॥
आफ्ना नाथ्को हुकूम् यो सुनिकन खुशि भै भित्र सीताजि जाई।
भेटिन् बृद्धा बहुत् भैकन बसिरहन्या अत्रिकी पत्निलाई ॥१२१॥

सीताले पाउमा शिर् धरिकन बहुतै प्रेम् बुढीमा बढाइन्।
जोर् जोर् कुण्डल् र सारी दिइकन बुढिले अङ्गराग् फेर् चढाइन् ॥
यस्ले शोभा निरन्तर् दृढ पनि रहला यो पनी बिन्ति लाइन्।
सीताजीलाइ आशिष् दिइ ति अनसुयाले बहुत् हर्ष पाइन् ॥१२२॥

सीता र लक्ष्मण सहित् गरि रामलाई।
भोजन् मा दिन्छु भनि खुप्सित चीज् बनाई ॥
भोजन् गराइ रघुनाथकि जानि माया।
ताहाँ सपत्नि भइ रामकि कीर्ति गाया ॥१२३॥

अयोध्याकाण्ड समाप्त

में विनती की कि मेरी पत्नी वृद्धा है और उसके मन में किंचित् मात्र भी भक्ति नहीं है। अतः दर्शन देने के लिए सीताजी अन्दर पधारने की कृपा करें, जिससे सीताजी के दर्शन प्राप्त कर बुढ़िया को जन्म के फल प्राप्त हो जायें। १२० अत्रि की विनती सुन-कर श्रीराम ने सीता को अन्दर जाने की आज्ञा दी। अत्रि की पत्नी से भेंट करके अब तुम शीघ्र ही लौट आओ। अपने नाथ की आज्ञा पाकर प्रसन्न हो सीता अन्दर गई और अत्यन्त वृद्धा अत्रि-पत्नी से भेंट की। १२१ सीता ने पैरों पर सिर रख कर वृद्धा के प्रति अत्यन्त प्रेम प्रदर्शित किया। अत्रि-पत्नी ने सीता जी को जोड़-कुण्डल और साड़ी देकर उबटन का लेप किया और कहा कि इससे तुम्हारे शरीर की शोभा स्थिर रहेगी। इस प्रकार सीता जी को आसीस देकर अनसूया को अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ। १२२ सीता एवं लक्ष्मण-सहित राम को भोजन कराने के लिए विविध प्रकार के भोजन तैयार किये। भोजन करा के रघुनाथ की माया को समझ कर ऋषि तथा उनकी पत्नी दोनों ने राम-कीर्ति के गीत गाये। १२३

अयोध्याकाण्ड समाप्त

अरण्यकाण्ड

अत्रीका आश्रमैमा बसि रघुपतिले प्रेमले दिन् बिताई ।
दोस्रा दिनमा सबेरै उठिकन बनमा जान मन्सुब् चिताई ॥
अत्रीजीका नजीक्मा गइकन अब ता जान्छु बीदा म पाऊँ ।
रस्ता यो जाति होला भनिकन कहन्या एक् अगूवा म पाऊँ ॥ १ ॥

सीतारामको हुकूम् यो सुनिकन ऋषिले भन्दछन् क्या-बताऊँ ।
सब्को रस्ता त देख्न्या यहिं हजुर भन्या कुन् अगूवा खटाऊँ ॥
चिन्छू लीला हजुर्को तरपनि अगुवा याहिं अस्सल् खटाई ।
यै मर्जी पूर्ण गर्नाकन पनि अगुवा आज दिन्छू पठाई ॥ २ ॥

अत्रीले बिन्ति येती गरिकन अगुवा शिष्य धेरै खटाया ।
केही रस्ता त आफै पनि पछि पछि गै रामलाई पठाया ॥
एक् कोश् तक् पौचँदामा बडि नदि बहँदी नाउले तर्नुपर्न्या ।
मिलिथन् त्योतारिफर्क्या मढितिर ऋषिकाशिष्य सब्फिर्नु पर्न्या ॥३॥

सीताराम् बनमा पुग्या बन थियो साह्रै खजित्को तहाँ ।
बाघ् भालू अरु दुष्ट राक्षसहरू डुल्छन् निरन्तर् जहाँ ॥

अत्रि के आश्रम में रघुपति ने प्रेमपूर्वक दिन व्यतीत किया। दूसरे दिन सबेरे उठकर वनगमन का निश्चय कर अत्रि जी के निकट जा कर विदा माँगी और कहा कि उत्तम पथ-प्रदर्शक की भी व्यवस्था कर दें। १ सीताराम का यह आदेश सुन कर ऋषि कहते हैं कि जब श्रीमन् स्वयं ही सब को पथ-प्रदर्शन करनेवाले हैं तो मैं आपके लिए किस पथ-प्रदर्शक को भेजूं। आपकी लीलाओं को मैं भली प्रकार जानता हूँ, फिर भी मैं आपकी इच्छा-पूर्ति के लिए इस समय एक पथ-प्रदर्शक को भेज दूंगा। २ अत्रि यह विनती करके कुछ दूर तक स्वयं ही राम के पीछे-पीछे गये और कई शिष्यों को पथ-प्रदर्शनार्थ नियुक्त कर दिया। एक कोस चलने के पश्चात् एक बड़ी नदी को नाव द्वारा पार करवा कर ऋषि के सब शिष्य आश्रम की ओर लौट पड़े। ३ सीताराम जिस वन में पहुँचे वह अत्यन्त घना था, जहाँ बाघ, भालू तथा दुष्ट राक्षसगण निरन्तर घूमा करते थे। वहाँ पहुंच तत्पर होकर प्रभु जी

ताहाँ पौंचि हुकूम् भयो प्रभुजिको भाई ! तयारी भई ।
सीताका म अगाडि हिंड्छु तिमिले हिंड्नू पछाडी रही ॥ ४ ॥

यस्ता बात् गरि राम लक्ष्मण तहाँ हिंड्थ्या तयारी भई ।
एक् सुन्दर बनमा तलाउ मिलिगो ठूलो छ कोश् वन् गई ॥
ठण्डा जल् तहिं पान् गरेर रघुनाथ् छायाँ बस्याथा जसै ।
आयो ताहिं विराध राक्षस ठुलो डर् दीन लाग्यो तसै ॥ ५ ॥

को हौ स्त्री पनि साथमा छ किन यो आयौ बड़ा वन्महाँ ।
कस्तो सुर् मनमा छ फेर् अब उपर् जानू छ इच्छा कहाँ ॥
मैंले सुन्दर गाँस् बनाउन असल् मान्याँ र सोध्याँ यहाँ ।
सब् नाम् कामस मेत् बताउ तिमिले जुन् काम् छ जान्छौ जहाँ॥६॥

राक्षस्का इ वचन् सुनी प्रभुजिले नाम् काम् बताया सबै ।
बाँच्ने मन् छ भन्या सिता र हतियार् छोडेर जाऊ उसै ॥
यस्तो बोलि सिताजिलाइ लिन सुर् बाँधेर राक्षस् जसै ।
दौडेथ्यो रघुनाथले पनि ति हात् दूवै गिराया तसै ॥ ७ ॥

जस्सै हात गिऱ्या तसै त रिसले खाँ रामलाई भनी ।
दौडन्थ्यो मुख बाइ फेर् प्रभुजिले काटचा ति गोडा पनि ॥

ने आज्ञा दी कि भाई लक्ष्मण ! तुम सीता के पीछे-पीछे हो लो, मैं आगे-आगे चलता हूँ । ४ इस प्रकार बातचीत कर राम-लक्ष्मण तत्परता से चल पड़े । लगभग एक कोस चलने के पश्चात् एक सुन्दर वन में पहुँचे जहाँ एक तालाब मिला । शीतल जल पान कर जैसे ही रघुनाथ एक वृक्ष के नीचे उसकी छाया में बैठे कि एक बड़ा विशालकाय भयंकर राक्षस वहाँ आकर उन्हें भयभीत करने लगा । ५ तुम कौन हो जी जो स्त्री के साथ इस बीहड़ वन में आये हो । तुम्हारे मन में क्या इच्छा है और आगे कहाँ जाना चाहते हो ? सब नाम, काम सहित, किस कार्य वश कहाँ जाओगे इत्यादि बातें सविस्तार बताओ । तुम्हें अपने उदर का आहार बनाने की इच्छा हुई है इसी कारण से पूछ रहा हूँ । ६ राक्षस के इन वचनों को सुन कर राम ने नाम तथा काम सब बता दिया । राक्षस ने कहा, यदि जीवित रहना चाहते हो तो सीता और अस्त्रों को छोड़ कर चले जाओ । इतना कहकर मन में निश्चय कर के राक्षस सीता को पकड़ने के लिए दौड़ा, वैसे ही रघुनाथ ने उसकी दोनों भुजाओं को काट दिया । ७ भुजाएँ कट कर गिरते ही राक्षस क्रोधित होकर जैसेही राम को भक्षण करने के लिए दौड़ा वैसे ही प्रभु ने उसके पावों को भी काट

हात् गोडा नहुँदा त सर्प सरिको पस्र्‍यो भुमीमा जसै ।
हात् गोडा सब कटिया तब पनी घस्रेर आयो तसै ॥ ८ ॥

घस्री घस्रि उ सर्दथ्यो प्रभुजिले काट्या तहाँ शिर् पनि ।
विद्याधर् गण हो छुटोस् अब सराप् जाओस् परम्धाम् भनी ॥
राक्षस् देह मर्‍या सराप् पनि टर्‍यो विद्याधरै फेर् भयो ।
श्रीराम्को स्तुति खुप् गरेर खुशि भै फेर् स्वर्गलोक्मा गयो ॥ ९ ॥

जस्सै स्वर्ग विराध् गयो प्रभुजिले रस्ता वनैको लिया ।
पालन् गर्छुम योगिको अब भनी मन्मा दया खुप् लिया ॥
ध्यान् गर्दै शरभङ्गजी बनमहाँ जाहाँ वस्याका थिया ।
ताहीं श्रीरघुनाथजी खुशि हुँदै पोंचेर दर्शन् दिया ॥१०॥

ताहीं श्रीशरभङ्गले प्रभुजिमा तन् मन् वचन् सब् धरी ।
आफ्नू कर्म जती थियो तहि तती सम्पूर्ण अर्पण् गरी ॥
अस्सल् ताहि चिता बनाइ हरिको दर्शन् नजर्ले गरी ।
ताहाँ देह दहन् गरी चलिगया संसार सागर् तरी ॥११॥

मुक्ति श्रीशरभङ्गको जब भयो तस्सै मुनीश्वर्हरू ।
आया भेट्न भनी बहुत् खुशि भई बन्मा थिया जो अरू ॥

दिया । हाथ-पाँव से रहित होकर वह सर्प के समान पृथ्वी पर लोटने लगा, फिर भी वह खिसक-खिसक कर आगे वढ़ा । ८ इस प्रकार खिसकते हुए आता देख प्रभु ने उसका सिर भी काट दिया । वह पहले विद्याधर था । अब श्राप से मुक्त हो उसका राक्षस शरीर भी मृत्यु को प्राप्त हुआ और उसने पुनः विद्याधर के रूप को धारण किया, तथा अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक श्रीराम की स्तुति कर स्वर्गलोक को चला गया । ९ विद्याधर के स्वर्ग चले जाने के वाद प्रभु जी ने वन का मार्ग लिया । दया से भर कर योगियों के कष्ट-निवारण के लिए श्रीरघुनाथजी श्रीशरभंग का स्मरण कर के उनके आश्रम में जाने के लिए उस वन की ओर चल दिए । १० श्रीशरभंभ जी ने वहाँ प्रभु में ही अपना तन, मन, धन से ध्यान लगाकर कर्म-मुक्त होकर एक उत्तम चिता का निर्माण करके हरि के दर्शन किये । तदुपरान्त शरीर को अग्नि में समर्पित कर संसार-सागर तर कर चले गये । ११ श्रीशरभंग जी की मुक्ति होते ही अन्य मुनीश्वरगण जो वन में थे प्रसन्न चित्त से भगवान् से भेंट करने के लिए आये । उन्हीं को अपना स्वामी जान कर खूब स्तुति की ।

हात्‌जोरी स्तुति खुप् गऱ्या ति ऋषिले ख्वामित् इनै हुन् भनी ।
कोमल् चित्त गरी तहाँ नजरले हेऱ्या प्रभूले पनि ॥ १२ ॥

बिन्ती सब ऋषिले गऱ्या हजुरमा हाम्रो विपत्ती पनि ।
देख्या पूर्ण दया हुन्या थिइ बहुत् आपत् रह्याछन् भनी ॥
जाऔं सब् ऋषिका मढीमढिविषे वाहीं गई यो दया ।
होला चित्तविषे भनी ति ऋषिले भन्दा प्रभूजी गया ॥ १३ ॥

देख्या तेस् वनमा अनेक् पृथिविमा खप्पर र सोध्या तहाँ ।
कस्का खप्पर हुन् अनेक् नजरले देख्छू . मऱ्याका यहाँ ॥
श्री सीतापतिका वचन् सुनि तहाँ बिन्ती ऋषीले गऱ्या ।
ई शिर् हुन् ऋषिका यहाँ छल परी धेरै ऋषीश्वर् मऱ्या ॥१४॥

राक्षस्‌का छलले बहुत् ऋषि मऱ्या भन्न्या कुरा यो सुनी ।
ताहाँ सब् ऋषिलाइ राखि सबका साम्‌ने प्रतिज्ञा पनि ॥
सब् राक्षस्‌हरुको म नष्ट गरुँला भन्न्या प्रभूले गऱ्या ।
खूशी मन् हुनगो र ताहिं ऋषि ता आनन्दमा सब् पऱ्या ॥१५॥

केही वर्ष बिताइ ताहिं हरिले सब् योगिको ताप् हऱ्या ।
माया फेरि सुतीक्ष्णका उपर भै प्रस्थान् प्रभूले गऱ्या ॥
जाहाँ भक्त सुतीक्ष्ण छन् तहिं गई दर्शन् प्रभूले दिया ।
पूजा पूर्ण गरी सुतीक्ष्ण ऋषिले राम्‌लाइ मन्‌मा लिया ॥१६॥

प्रभु ने भी शान्त एवम् कोमल हृदय से उन्हें देखा । १२ सब ऋषियों ने प्रभु के समक्ष विनती की कि हमारी विपत्तियों को देख कर, हे रघुनाथ ! आप अवश्य दया करेंगे । आपत्ति से पीड़ितों के मठों में स्वयं जा कर दया करने की कृपा करेंगे । तदनुसार प्रभु जी सभी ऋषियों के आश्रमों में गये । १३ उस वन में पहुँच कर अनेक मृतकों की खोपड़ियों को बिखरा हुआ देखकर प्रभु को यह जानने की उत्कण्ठा हुई कि ये किसकी खोपड़ियाँ हैं । श्रीसीतापति के वचनों को सुन कर ऋषि ने विनती की कि ये शीश छल द्वारा मारे गये ऋषीश्वरों के हैं । १४ राक्षसों द्वारा छल से मारे गये ऋषियों की मृत्यु का कारण जान कर, सभी उपस्थित ऋषियों को एकत्र करके उनके समक्ष प्रभु ने प्रतिज्ञा की कि मैं सब राक्षसों को नष्ट कर दूंगा; यह सुन कर ऋषिगण अत्यन्त आनन्दित हुए । १५ कुछ वर्षो तक वहीं रह कर हरि ने सब ऋषियों के कष्टों का हरण किया । इसके पश्चात् सुतीक्ष्ण के ऊपर कृपा करने हेतु प्रभु ने वहाँ से प्रस्थान

सयुज्यै मुक्ति मिल्ला तिमिकन सुन यो देह जैले त छुट्ला।
भन्या आज्ञा प्रभूको सुनिकन अब ता कर्मको पाश टुट्ला॥
भन्या यो मन् ऋषीको हुन गइ बहुतै चित्तमा हर्ष पाया।
सीतारामले अगस्ती सित गइ कछु दिन् बस्न मन्ले चिताया॥१७॥

प्रभूका साथैमा पछि पछि सुतीक्ष्णै पनि गया।
अगस्तीका भाई सित पुगि त एक् रात् प्रभु रह्या॥
ति अग्नीजिह्वा खुप् खुशि पनि भया ईश्वर भनी।
चिनी ताहाँ तिन्ले विधिसित गऱ्या पूजन पनि॥१८॥

तहाँ देखी सीतापति उठि सबेरै चलिगया।
अगस्ती काहाँ छन् भनि खबर ली दाखिल भया॥
अगस्तीले खुश् भै स्तुति गरि बहुत् मन् पनि धऱ्या।
विराट् रूप्ले वर्णन् गरिकन त पूजा पनि गऱ्या॥१९॥

सुन्दर धनू र तरवार् सँग बाण् धऱ्याका।
ठोक्रा त जोडि अघि इन्द्रजिले धऱ्याका॥
ताहीं थिया सब दिया रघुनाथलाई।
बिन्ती गऱ्या सकल भार् हर आज जाई॥२०॥

किया। भक्त सुतीक्ष्ण को प्रभु ने दर्शन दिया। पूजा पूर्ण करके ऋषि सुतीक्ष्ण ने मन में राम का ध्यान किया। १६ राम ने विचार प्रगट किया कि इस शरीर से सायुज्य मुक्ति मिलनी चाहिए। देह से छुटकारा पाने की बात प्रभु से सुन कर वह अत्यन्त हर्षित हुए। उन्हें यह सोच कर बड़ा सन्तोष हुआ कि अब मैं कर्म के बन्धन से भी मुक्त हो जाऊँगा। सीताराम ने अगस्त्य मुनि के पास जाकर वहाँ कुछ दिन रहने का विचार किया। १७ सुतीक्ष्ण भी प्रभु के साथ हो लिये। अगस्त्य के भाई के पास जा कर प्रभु एक रात वहाँ रहे। उन्हें ईश्वर जान कर अग्निजिह्वा मुनि भी अत्यन्त प्रमुदित हुए। उन्होंने श्रीराम का पूजन विधिवत किया। १८ वहाँ से उठ कर सीतापति सबेरे ही चले गए। अगस्त्य जी के आश्रम का पता लेकर वहाँ पहुँच गए। अगस्त्य ने भी मन ही मन ध्यान धर के स्तुति की और विराट रूप से पूजा भी की। १९ वहाँ पर अगस्त्य ने इन्द्र का रक्खा हुआ सुन्दर धनुष और बाणों से भरे हुए तरकस की जोड़ी श्रीरघुनाथ को अर्पण की और विनती की कि आज ही जाकर पृथ्वी का सम्पूर्ण भार हरण कीजिये। २०

आठ् कोशम असल पञ्चवटी भन्याको ।
आश्रम् असल् छ रमणीय बहुत् बन्याको ॥
ताहीं बसेर कुछ दिन् तिमिले बिताऊ ।
सब् साधुमाथि करुणा तहिं गै चिताऊ ॥२१॥

यस्तो अगस्ति ऋषिको उपदेश पाई ।
श्रीराम् तयार् पनि भया तहिं जानलाई ॥
मालूम् थियो त पनि जुन् ऋषिले वताया ।
सो मार्ग जानकन पाउ उतै चलाया ॥२२॥

जान्थ्या प्रभू अलिकती पर केहि जाई ।
जंगल्विषे अधिक वृद्ध जटायुलाई ॥
देख्या र राक्षस भनीकन मार्नलाई ।
माग्या धनू प्रभुजिले र लिला जनाई ॥२३॥

मार्न्या कुरा सुनि जटायु बहुत् डराई ।
राजाजिको प्रिय सखा हुँ भनी कराई ॥
गर्न्याछु हित् यहिं वसी म सिताजिलाई ।
कल्याण् मिलोस् हजुरदेखि वहुत् मलाई ॥२४॥

श्रीरामले पनि तहाँ अति खूशि मन्ले ।
आनन्द निर्भय दिया पछि फेरि तिन्ले ॥

यहाँ से आठ कोस की दूरी पर एक अति उत्तम एवं रमणीय आश्रम है जिसे पंचवटी कहते हैं; तुम वहीं रहकर कुछ दिन व्यतीत करो और समस्त साधुवर्ग पर करुणा करके उनके कष्ट-निवारण का उपाय सोचो। २१ अगस्त ऋषि के ऐसे उपदेश पाकर श्रीरामजी भी जाने के लिए तत्क्षण तैयार हो गये। यद्यपि वह सब कुछ स्वयं ही जानते थे, फिर भी ऋषियों के वताये हुए मार्ग से चल पड़े। २२ कुछ दूर चल कर जंगल क मध्य में एक अत्यन्त वृद्ध गिद्ध (जटायु) को देखा। उसे राक्षस समझ कर मारने के लिए प्रभु ने धनुष माँगा। २३ मारे जाने की बात सुनकर जटायु बहुत भयभीत हुआ और चिल्लाकर कहने लगा कि मैं राजा दशरथ का प्रिय सखा हूँ और यहीं रहकर मैं सीता जी का कुछ कल्याण करूँगा; अतः आप मेरे ऊपर कृपा-दृष्टि रखें और मेरा कल्याण करें। २४ श्रीराम ने भी अत्यन्त प्रसन्न मन से उसे अभयदान दिया। तदुपरान्त उसने पुनः विनती की कि हे स्वामी! मैं आपकी शरण

ख्वामित् ! शरण् छु भनि खुप्सित बिन्ति लाया ।
श्रीराम् तहाँपछि त पञ्चवटी त आया ॥२५॥

डेरा पर्‍यो प्रभुजिको तहिँ बीच बन्मा ।
एकान्त देखिकन हर्ष भयो र मन्मा ॥
आनन्द पूर्वक रह्या रघुनाथ ताहीं ।
आर्को त आश्रम नजीक थियेन काहीं ॥२६॥

एकान्त देखिकन लक्ष्मणले चरण्मा ।
बिन्ती गरया रघुपती ! म त छू शरण्मा ॥
ज्ञान् कुन् कहिन्छ भनि कुन् त कहिन्छ विज्ञान् ।
जान्दीनँ केहि म विषे त ठुलो छ अज्ञान् ॥२७॥

आज्ञा हवस् सकल तत्त्व म सुन्न पाउँ ।
जान्नया पुरुष् अरु छ को र करा म जाऊँ ॥
यो बिन्ति लक्ष्मणजिको सुनि हर्ष पाया ।
लक्ष्मण्जिलाइ सब तत्त्व तहाँ वताया ॥२८॥

यै ज्ञान् कहिन्छ सुन येहि कहिन्छ विज्ञान् ।
यो रीत् गरीकन बस्या हुँदि छुट्छ अज्ञान् ॥
खोलेर येहि रितले प्रभुले बताया ।
लक्ष्मण्जिले पनि तहाँ सब तत्त्व पाया ॥२९॥

यै बीचमा नजिक शूर्पणखा त आई ।
देख्या तहीं प्रभुजिले पनि दुष्टलाई ॥

में हूँ । इसके बाद श्री राम पंचवटी चले गये । २५ उसी वन के मध्य में श्रीराम जी का डेरा पड़ा । निकट में और कोई आश्रम नहीं था । एकान्त स्थान देख वे मन में हर्षित हुए और आनन्दपूर्वक वहीं रहने लगे । २६ एकान्त वन को देखकर लक्ष्मण ने श्रीरघुपति से कहा कि मैं आपकी शरण में हूँ । ज्ञान-विज्ञान का मुझे कोई ज्ञान नहीं । यही मुझमें अज्ञानता है । २७ अतः सब तत्त्वों को मुझे सुनाने की कृपा करें, क्योंकि यहाँ और अन्य कौन पुरुष है, जिसके पास मैं जाऊँ । लक्ष्मण की यह विनती सुनकर राम अत्यन्त हर्षित हुए और उन्हें तत्त्वज्ञान का उपदेश दिया । २८ ज्ञान-विज्ञान के विषय में समझा कर तथा किस रीति से अज्ञान का नाश होता है, यह सभी स्पष्ट रूप से प्रभु ने बताया और लक्ष्मण ने भी उन सब तत्त्वों को सीख लिया । २९ इसी बीच शूर्पणखा भी वहाँ आ

कन्दर्पका बश परी प्रभुको नजीक् गै।
सोधी तहाँ प्रभुजिलाइ बहूत खुश् भै ॥३०॥
नाम् सब् कह्या प्रभुजिले जब नाम सूनी।
ऐले म भज्दछु पति भनि येति गूनी ॥
बिन्ती गरी मकन पत्नि बनाइलेऊ।
कन्दर्पको कठिन ताप छुटाइदेऊ ॥३१॥
यस्ता वचन् सुनि सिताकन हाँसि हेरी।
उत्तर् दिया प्रभुजिले सँगमै छ मेरी ॥
सीता बुझीकन नभज् तँ पती मलाई।
भाई छ खालि बरु भज् पति भाइलाई ॥३२॥
साँचो भन्या भनि त लक्ष्मणका नजीक् गै।
आयाँ म पत्नि हुन येति भनेर खुश् भै ॥
सून्या वचन् सकल लक्ष्मणले र ताहाँ।
दास् हूँ म ता मसित कुन् सुख मिल्छ याहाँ ॥३३॥
जा वाहिं मालिक उ हुन् उहिं वस्नु अच्छा।
बुद्धी रहेनछ बहुत् रहिछस् तँ कच्चा ॥
यस्ता वचन् सुनि र शूर्पणखा रिसाई।
सीताजिलाइ अब खाँ भनि फर्कि आई ॥३४॥

गयी। प्रभु ने भी उस दुष्टा को देखा। घमण्ड के वशीभूत हो अत्यन्त हर्ष से भरी वह प्रभु के निकट गयी और उनसे प्रश्न किया। ३० प्रभु ने अपना परिचय दिया। उसने जब प्रभु का नाम सुना तो मन में कुछ सोचकर विनती की कि मुझे भी अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर कामदेव के कठिन ताप से मुक्त करने की कृपा करें। ३१ ऐसे वचन सुनकर सीता की ओर हँसकर देखते हुए प्रभु ने उत्तर दिया कि घर में मेरी पत्नी सीता बैठी है, अतः मुझे तुम पति न कहो। भाई लक्ष्मण अकेला है अतः उसे ही पति कहकर भजो। ३२ इस कथन को सत्य मानकर शूर्पणखा लक्ष्मण के निकट गयी और पत्नी वनने की इच्छा प्रकट करके अत्यन्त हर्षित हुई। लक्ष्मण ने उसकी वाते सुनकर कहा कि मैं तो राम का दास हूँ, मुझसे तुम्हें यहाँ क्या सुख प्राप्त हो सकता है। ३३ जहाँ अपना मालिक है, वहीं रहना उत्तम है। तुम बुद्धिहीन हो और ज्ञान में परिपूर्ण नहीं हो। ऐसे वचन सुनकर शूर्पणखा क्रोधित हुई और सीता जी को भक्षण करने के लिए दौड़ी। ३४ पृथ्वी के भारहरण-हेतु प्रभु ने वीज बोया और लक्ष्मण

भार् हर्न बीज् प्रभुजिले तहिं रोप्न आँटथा ।
लक्ष्मण्जिलाइ भनि नाक र कान काटथा ॥
आज्ञा लि लक्ष्मणजिले पनि काटिदीया ।
भागी डराइकन भाइ जहाँ त थीया ॥३५॥

विस्तार् गरी त्रिशिर दूषण खर् भन्याका ।
राक्षस् पनी सुनि ति अग्नि सरी वन्याका ॥
आया जहाँ प्रभु थिया तहिं तीन भाई ।
लश्कर् समेत् अधिक जल्दि कदम् बढाई ॥३६॥

राक्षस् भनी प्रभुजिले तहिं चाल पाया ।
लक्ष्मण्जिलाइ तहिं काम् प्रभुले अह्राया ॥
हे भाइ ! आज तिमिले इ सिताजिलाई ।
गूफाविषे लागि वसीरहु जल्दि जाई ॥३७॥

एक् बात् नबोलिकन जल्दि उठेर जाऊ ।
संग्रामको बखत भो अब बेर् नलाऊ ॥
मार्छू म दुष्टकन तेज् अधिकै जनाई ।
चौधै हजार्कन सहज् टुकुरा बनाई ॥३८॥

यस्तो हुकूम् हुन गयो र सिताजिलाई ॥
लक्ष्मण्जिले सँग लिईकन जल्दि जाई ।
गूफाविषे बसिरह्या रघुनाथ् तयारी-
चाँडै भया धनु र बाण्हरु ठिक्क पारी ॥३९॥

जी के द्वारा शूर्पणखा की नाक और कान दोनों कटवाये । इससे भयभीत होकर शूर्पणखा अपने भाई के पास भाग खड़ी हुई । ३५ खर, दूषण तथा त्रिशिरा राक्षसों को शूर्पणखा ने विस्तारपूर्वक सारी घटना सुनायी, जिसे सुनते ही अग्नि के समान अपनी सेना को लेकर शीघ्रता से तीनों भाई वहाँ पहुँचे, जहाँ प्रभु विराजमान थे । ३६ प्रभु जी ने राक्षसों को पहचान कर लक्ष्मण को कार्य सौंपते हुए कहा, "हे भाई ! आज तुम सीता को लेकर गुफा के वीच जाकर रहो । ३७ कुछ भी न कहकर शीघ्रता से उठकर चले जाओ । संग्राम का समय आ गया है, अब देर न करो । दुष्टों को मैं तीव्रता से मार डालूँगा और चौदह हज़ार सेनाओं को सहज ही में टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा । ३८ ऐसी आज्ञा पाकर लक्ष्मण जी सीता जी को लेकर तुरन्त चले गये और गुफा के अन्दर बैठे रहे । श्रीरघुनाथ भी धनुष

आया खर त्रिशिर दूषण तीन भाई ।
लश्कर् समेत् सँग लिईकन रिस् बढाई ।।
ठाकुर्जिका उपर बाणकि वृष्टि पाऱ्या ।
ठाकुर्जिले पनि ति बाण् सब काटि टाऱ्या ।।४०।।
तिन्का ति सर्व हतियार्हरु काटि टारी ।
सम्पूर्ण राक्षसहरूकन जल्दि मारी ।।
काट्या खर त्रिशिर दूषणलाइ ताहाँ ।
सम्पूर्ण राक्षस सक्या घरि चारमाहाँ ।।४१।।
माऱ्या खर त्रिशिर दूषणलाइ जस्सै ।
सीता र लक्ष्मण पनी प्रभुसीत तस्सै ।।
आया डराइकन शूर्पणखा त भागी ।
रावण् जहाँ छ उहिं जाँ भनि जान लागी ।।४२।।
रावण् जहाँ छ उहिं पौचि विलाप गर्दै ।
सब् भाइ बन्धुहरुको मनलाइ हर्दै ।।
देख्यो तहाँ बहिनिलाइ त नाक् गयाकी ।
त्यो फेरि बुच्चि पनि कान नभै रह्याकी ।।४३।।
माया भयो बहिनिमाथि र झट्ट ऊठ्यो ।
विस्तार सोध्न नजिकै पनि जल्दि छूट्यो ।।

और बाणों को ठीक करके तत्परता से तैयार हो गये । ३९ खर, त्रिशिरा और दूषण तीनों भाई अत्यन्त कुपित हो सेना-सहित आ गये । उन्होंने राम के ऊपर बाणों की वृष्टि की । श्रीराम ने भी उन सब बाणों को काटकर नष्ट कर दिया । ४० उनके सारे हथियारों को काट कर सब राक्षसों को भी तुरन्त मार डाला । चार घण्टे के अन्दर खर, त्रिशिरा और दूषण-सहित सारी राक्षस-सेना को समाप्त कर दिया । ४१ जैसे ही खर, त्रिशिरा और दूषण का वध हुआ, वैसे ही सीता और लक्ष्मण भी प्रभु के पास आ गये । और शूर्पणखा भयभीत होकर रावण के पास भाग गयी । ४२ रावण के पास पहुँच कर वह विलाप करने लगी । उसके दु:ख से सभी भाई-बन्धु प्रभावित हो गये । उन्होंने बहन की नाक कटी हुई देखी तथा उसको कानों से भी विहीन देखा । ४३ बहन की इस अवस्था को देख वे सब करुणा से परिपूर्ण हो गये और उसके निकट जाकर उसी समय सारा हाल विस्तारपूर्वक जानने की जिज्ञासा प्रकट की । उन्होंने पूछा, हे बहन, तेरी नाक और कान काटनेवाला यह कौन

हे बैनि ! कुन् पुरुष हो भन नाक काट्न्या ।
खूबै रहेछ सहजै पनि मर्न आँट्न्या ॥४४॥

जस्ले त नाक् सित इ कान्कन आज काट्यो ।
हे बैनि ! जान सुन त्यो अग मर्न आँट्यो ॥
यस्ता वचन् सुनि र नाम समेत् वताई ।
सीता र लक्ष्मण सहित् रघुनाथलाई ॥४५॥

ती छन् पराक्रमि त पञ्चवटी वस्याका ।
ठोक्रा भिरीकन धनू पनि खुप् कस्याका ॥
गर्छू विचार मनले त यही म मान्छु ।
सब् भस्म पो गरिदिनन् कि भनेर ठान्छु ॥४६॥

आईरह्याँछु म त खुप्सित मन् डराई ।
फिर्छन् ति सर्व ऋषिलाइ त खुश् गराई ॥
आश्चर्य मानिकन दौडि म याहिं आयाँ ।
विस्तार पनी हजुरमा सब विन्ति लायाँ ॥४७॥

सीताजिलाइ अति सुन्दरि मानि ताहाँ ।
ल्याऊँ टपक्क टिपि सुन्दरिलाइ याहाँ ॥
भन्ना-निमित्त अति चित्त धरी गयाकी ।
पायाँ विपत् नकटि बुच्चि समेत् भयाकी ॥४८॥

ल्याऊ समर्थ छ भन्या तिमि आज जाऊ ।
साम्ने त हर्न छ कठिन् तिमि मन् नलाऊ ॥

पुरुष है, जिसने सहज ही अपनी मृत्यु को आमंत्रित किया है। ४४ जिसने भी यह कुकर्म किया है, हे बहन, तुम यह जान लो कि अब वह मृत्यु को प्राप्त होनेवाला है। यह सुनकर शूर्पणखा ने सीता, लक्ष्मण और राम के नाम बता दिये। ४५ पंचवटी में तीन पराक्रमी हैं, जो तरकस एवम् धनुष-बाण धारण किये हैं, मुझे ऐसा लगता है कि ये सबका नाश कर देंगे। ४६ मैं अत्यन्त भयभीत होकर आ रही हूँ। ऋषियों को प्रसन्न करके वे घूमते रहते हैं। उनके कार्यो से चकित हो कर मैं दौड़ कर यहाँ आयी हूँ और आपके सम्मुख विस्तारपूर्वक विनती की है। ४७ सीता जी अपूर्व सुन्दरी हैं, उसे उठाकर आप यहाँ ले आयें, यही मन में विचार करके आपसे कहने आयी हूँ। नाक-कान से रहित हो कर अत्यन्त कष्ट पा रही हूँ। ४८ यदि आप में सामर्थ्य है तो आज ही जाकर सीता

एक् युक्तिले छल गरीकन हर्नुपर्ला।
साम्ने कदापि नगया तहिं देह मर्ला ॥४९॥
तेस्ले बहूत भयमा परि बात् गऱ्याको।
लश्कर् समेत् त्रिशिर दूषण खर् मऱ्याको॥
सून्यो र बैह्निकन खातिर खूब दीयो।
एकान्तमा गइ लहड् पनि खूब लीयो ॥५०॥
सामान्य मानिस भया कसरी ति माऱ्या।
लश्कर् खर त्रिशिर दूषण छुट्टिं पाऱ्या॥
सामान्य होइन इ ता परमेश्वरै हुन्।
नाहीं त भाइहरुको अघि तिक्तथ्यो कुन् ॥५१॥
ईश्वर् भया हुँदि कसै पनि मार्दछन् ती।
सामान्य हुन् पनि भन्या हरुँला सिताजी॥
ईश्वर् भया हुँदि विरोध् गरि खुश् हुन्याछन्।
रीसै हुन्याछ भजुँला त ममाथि ता झन् ॥५२॥
येती विचार् गरि तऱ्यो र समुद्र पारि।
मारिच् जहाँ छ ऋषिको सरि रूप धारी॥
पूग्यो तहाँ र रथ राखि नजीक् गयाको।
विस्तार् गऱ्यो खरहरू सब नाश् भयाको ॥५३॥

को ले आओ। पहले यह सोच लो कि सीता का सामने से हरण करना कठिन है। एक युक्ति से उसे हरण करना होगा, सामने कदापि न जाना, वर्ना मारे जाओगे। ४९ सेना-सहित खर, त्रिशिरा और दूषण के मारे जाने की खबर सुनकर रावण अत्यन्त भयभीत हुआ, फिर भी उसने अपनी बहन को सान्त्वना दी और एकान्त में जाकर अपने मन को बड़े प्रयत्न से उत्साहित किया। ५० राम द्वारा अपने भाइयों के संहार का समाचार सुनकर रावण बड़ी चिन्ता में पड़ जाता है। वह सोचता है कि यह राम कौन हो सकता है? जो भी हो यह कोई साधारण मनुष्य तो नहीं है, अवश्य ही यह परमेश्वर है; यदि यह साधारण मनुष्य होता तो मेरे भाइयों के सम्मुख कैसे टिक पाता? ५१ यदि राम ईश्वर होंगे तो किसी प्रकार से मार लेंगे और यदि साधारण मनुष्य होंगे तो मैं सीता का हरण कर लूँगा। ईश्वर होंगे तो मेरे विरोध पर वह प्रसन्न होंगे और भजन करने से मुझ पर क्रोधित होंगे। ५२ यह विचार करके ऋषि के समान रूप धारण कर वह समुद्र पार मारीच के पास पहुँचा। रथ को वहीं

यस्तो पऱ्यो मकन आज सहाय देऊ।
सुन्दर् ठुलो मृग स्वरूप् तिमि आज लेऊ ॥
राम्‌चन्द्रलाइ छलि दूर् तिमिले गराया।
सीता जसै म हरुँला तब फर्कि आया ॥५४॥

मारीचले यति हुकूम् जब ताहिं सून्यो।
तेस्तो हुकुम् सुनि तहाँ मनभित्र गून्यो ॥
विन्ती गऱ्यो सकल तेज् प्रभुको जनाई।
स्वामित् भनेर मनले जय खुप् चिताई ॥५५॥

कस्ले गऱ्यो र उपदेश् तिमि आज आई।
सीता म हर्छु मृग हो तँ भन्यो मलाई ॥
त्यै शत्रु हो तिमि त्यसैकन मार ताहाँ।
कूलै समेत् क्षय गराउन खोज्छ याहाँ ॥५६॥

को सक्छ जित्न र ठुलो तिमि सूर गर्छौ।
यो सूर् लिया कुल समेत् तिमि आज मर्छौ ॥
एक् वाणले मकन चार् सय कोश साऱ्या।
वालक् थिया तपनि भस्म सुवाहु पाऱ्या ॥५७॥

खड़ा करके उसके निकट पहुँचा और खर आदि के मारे जाने के विषय में सविस्तार कह सुनाया। ५३ मेरे ऊपर आज ऐसी समस्या आ पड़ी है, तुम मेरी सहायता करो। तुम आज एक अत्यन्त सुन्दर मृग का रूप धारण करो और छल से रामचन्द्र को दूर तक ले जाओ और जैसे ही मैं सीता का हरण कर लूँ, वैसे ही तुम चले आना। ५४ मारीच ने यह आज्ञा सुनकर अपने मन में विचार किया और प्रभु के सम्पूर्ण पराक्रम का वर्णन कर विनती की, और स्वामी कहकर मन में जय-जयकार किया। ५५ उसने कहा कि किसके उपदेश को सुनकर आज तुम आकर सीता-हरण के लिए मुझे मृग बनने को कह रहे हो। यदि वह शत्रु है तो तुम उसे ही मार डालो, नहीं तो वह तुम्हारा सम्पूर्ण कुल ही समाप्त कर देगा। ५६ उन्हें कौन जीत सकेगा, जो तुम ऐसी धारणा बना रहे हो। ऐसा विचार करना उचित तथा कल्याणकारी नहीं, उनसे युद्ध करने पर तुम कुल-सहित नष्ट हो जाओगे। उनके वाण के एक प्रहार से मैं चार सौ कोस दूर जा गिरा। जिस समय वह एक वालक थे, उस कोमल अवस्था में भी उन्होंने सुबाहु को भस्म कर दिया। ५७ आज मैं मृग-रूप धारण करके वन में गया। उनके एक ही वाण ने मुझे पछाड़ दिया।

आज्काल् गयाँ वनविषे मृग-रूप धारी।
एक् वाणले यहिं पनी त दिया पछारी॥
छाद्दै रगत् अति डरायर भागि आयाँ।
जावैन भन्छु अव खुप् सित चेत पायाँ॥५८॥

तस्मात् तिमी पनि विरोध् मति यो नलेऊ।
सीता म हर्छु भनि आग्रह छाड़िदेऊ॥
सब् नष्ट हुन्छ तिमिले मति यस्ति लीया।
देख्यौ खर त्रिशिर दूषण मारिदीया॥५९॥

हीतै कहन्छ भनि यो तिमि जानिलेऊ।
आर्को कहन्छु म गुठिल् तिमि चित्त देऊ।
ई ता अनन्त अधिनाथ् परमेश्वरै हुन्।
ब्रह्माजिले पनि भजिन्छ सदा पुरुष् जुन्॥६०॥

नारद्जिका वचन सूनि म आज भन्छु।
स्वामित् ! म ता हित चिताइ सदा रहन्छु॥
लौ मार रावण भनी वरदान माग्या।
ब्रह्माजिले र उहि सुर् प्रभु गर्न लाग्या॥६१॥

जाऊ घरै बसिरहू मति यो नलेऊ।
ईश्वर् बुझेर उहि माफिक चित्त देऊ॥

रक्त-वमन करते हुए अत्यन्त भयभीत होकर मैं भाग कर आया हूँ। अव मैं चैतन्य हो गया हूँ, अव वहाँ नहीं जाऊँगा। मैं सम्हल गया हूँ और उनके पराक्रम को समझ गया हूँ। ५८ अतः तुम इस विरोध करने की भावना को त्याग दो। सीता-हरण का विचार छोड़ दो। ऐसे विचारों से, तुम्हारा सर्वनाश होगा। उन्होंने खर, त्रिशिरा और दूषण का वध कर दिया सो तुमने देख ही लिया है। ५९ मैं तुम्हारे हित की वात कहता हूँ, इसे समझो। एक और विशेष रहस्य की वात कहता हूँ, उसे ध्यान लगाकर सुनो। ये तो अनन्त अधिनाथ परमेश्वर ही हैं; इनको स्वयं ब्रह्मा जी ही नित्य भजते हैं। ६० आज मैं नारदजी द्वारा वतायी हुई बातें कहता हूँ। स्वामी ! मैं तो सदैव हित का ही चिन्तन करता हूँ। ब्रह्मा से रावण-वध का वरदान माँगा और तदनुसार प्रभु ने उसके लिए तत्परता दिखायी। ६१ अपनी बुद्धि से ऐसी बातों को निकाल दो और घर में जा कर रहो। उन्हें ईश्वर समझकर उनका ध्यान करो। प्रभु जो करते हैं, करें, यह उनकी लीला है। उसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप उचित नहीं।

जो गर्दछन् प्रभु गरुन् छ लिला उनैको ।
चल्दैन जोर् प्रभुविषे अरुका कुनैको ॥६२॥

मारीचले जव त बात् यति सव् वतायो ।
झन् वात् सुनी वुझि त खुप्‌सित चित्त लायो ॥
मारीचलाइ अनि रावण भन्छ हेरी ।
सीता म हर्छु मृग भैकन जाउ फेरि ॥६३॥

ईश्वर् त हुन् यदि भन्या ति अवश्य मार्छन् ।
सामान्य हुन् यदि भन्या ति अवश्य हार्छन् ॥
ईश्वर् भया पनि असल् छ अवश्य तर्छु ।
सामान्य हुन् त म सितासँग भोग गर्छु ॥६४॥

जाऊ अवश्य म सिताजि हरेर लिन्छु ।
वोल्यौ यहाँ कछु भन्या त म काटिदिन्छु ॥
यस्तो हुकूम् गरि तहाँ जव वीच पान्यो ।
मारीचले पनि तसै जिय आश मान्यो ॥६५॥

आखिर् मर्‍याँ म हरिदेखि भन्या त तर्छु ।
यस् दुष्टदेखि मरिया त नरक् म पर्छु ॥
यस्तो विचार् गरि तहाँ मृगरूप धारी ।
हुकूम् शिरोपर धरीकन भो तयारी ॥६६॥

प्रभु के ऊपर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ सकेगा । ६२ मारीच से यह सव वातें ध्यान से सुनकर रावण कहता है कि तुम पुन: मृग वन कर चले जाओ—मैं सीता का हरण करूँगा । ६३ यदि वे ईश्वर होंगे तो अवश्य मुझे मार डालेंगे, अन्यथा स्वयं ही पराजित होंगे । यदि वे ईश्वर होंगे तो उनके हाथ से मारे जाने पर मैं तर जाऊँगा, अन्यथा सीता के संग भोग करूँगा । ६४ तुम अवश्य जाओ—मैं सीता को हर कर ले आऊँगा । अव तुम आगे कुछ मत कहो, अन्यथा मैं तुम्हारा वध कर डालूँगा । रावण की ऐसी आज्ञा को सुनकर मारीच ने भी अपने जीवन की आशा छोड़ दी । ६५ उसने सोचा—यदि मैं प्रभु के हाथों से मरूँगा तो कर जाऊँगा, इस दुष्ट द्वारा मारे जाने से तो मैं नरक को ही प्राप्त होऊँगा, इसलिए ईश्वर के हाथों मारा जाना ही उचित होगा । यह सोच कर मारीच ने मृग-रूप धारण किया और रावण की आज्ञा को स्वीकार करते हुए तैयार हो गया । ६६ वड़े ही विचित्र ढंग से उछलते-कूदते हुए सीताजी

दौडयो लिला पनि चरित्र विचित्र गर्दै ।
सीताजिका नजिक गैकन ताहिं फिर्दै ॥
सीताजिलाइ गरुँ मोह भनेर दाग्यो ।
लीला गरीकन वरीपरि चर्न लाग्यो ॥६७॥

छल् हो भनी प्रभुजिले पनि चाल पाया ।
एकान्तमा गइ सिताकन काम् अह्राया ॥
सीते ! अदृश्य भइ लौ वस अग्निमाहाँ ।
छाया सिता पनि बनायर छोड याहाँ ॥६८॥

एक् भिक्षुको रुप लि रावण आज आई ।
हर्न्याछ दुष्ट तिमिलाइ स्वरूप् छिपाई ॥
चाँडो अवश्य तिमिले पनि रूप् छिपाऊ ।
एक् वर्षसम्म छिपि दिन् तिमिले बिताऊ ॥६९॥

यस्तो हुकूम् सुनि अदृश्य सरूप धारी ।
छाया सिता पनि दुरुस्त गरिन् तयारी ॥
सीता छिपीकन रहिन् जब अग्निमाहाँ ।
छाया सिता-सँग बस्या रघुनाथ ताहाँ ॥७०॥

छाया सिताजि अति चित्र विचित्र मानी ।
खेलाउँ तेस मृगलाइ भनेर ठानी ॥
बिन्ती गरिन् रघुपते ! मृग आज देऊ ।
खेलाउँछू अधिक जाति छ पक्रिलेऊ ॥७१॥

को आकर्षित करने के लिए वह उनके निकट जाकर चरने लगा। ६७ प्रभुजी ने इस छली मृग को पहचान कर सीता से कहा कि हे सीते, तुम अग्नि में अदृश्य होकर रहो और यहाँ अपनी जगह पर छाया-रूपी सीता को रख दो। ६८ एक भिक्षु के रूप में रावण यहाँ आज आयेगा और वह दुष्ट इस छद्म वेष में तुम्हें हरण करेगा। अतः तुम भी तुरन्त अपना रूप छिपा लो और इसी प्रकार तुम एक वर्ष व्यतीत करो। ६९ ऐसी आज्ञा सुनकर सीताजी अदृश्य हो गयी और छाया-रूपी सीता को रखकर स्वयं अग्नि में छिप गयीं। रघुनाथ छाया रूपी सीता के संग वहाँ रहे। ७० छाया-रूपी सीता ने अत्यन्त आश्चर्य-चकित होकर उस मृग से खेलने के विचार से रघुनाथ से विनती की—हे रघुपति ! इस सुन्दर मृग को पकड़ कर आज ही ला दें, मैं उससे खेलूँगी। ७१ सीताजी की विनती सुनकर

इच्छा थियो प्रभुजिको पनि विन्ति सूनी ।
जानू असल् छ भनि यो मनभित्र गूनी ॥
हात्मा धनू लि मृगका पछि आफु धाया ।
लक्ष्मण्जिलाइ बस तीमि भनी अह्राया ॥७२॥

लक्ष्मण् रह्या तहिँ सिता-सित चौकिदारी ।
मारीचलाइ प्रभुले पनि खुप् लघारी ॥
मान्या तहाँ जब त दिक् वहुतै गरायो ।
हे भाइ लक्ष्मण ! मन्याँ भनि छल् करायो ॥७३॥

छल्का वचन् सुनि सिताजि वहुत् डराइन् ।
लक्ष्मण्जिलाइ तिमि जाउ भनी अह्राइन् ॥
लक्ष्मण्जिले हुकुम यो सुनि विन्ति पान्या ।
हे माइ ! जो मृग थियो प्रभुले त मान्या ॥७४॥

तेस्तो कहाँ मृग थियो मृगरूप-धारी ।
मारीच राक्षस थियो र त आज मारी ॥
ठाकूर्जिले तहिँ गिराइदिंदा करायो ।
हे भाइ लक्ष्मण ! मन्याँ भनि छल् गरायो ॥७५॥

ज्योतिस्वरूप् तहिँ भयो र मिल्यो हरीमा ।
आश्चर्य भो सकललाइ तसै घरीमा ॥
यस् दुष्टले पनि त यो गति आज पायो ।
भन्न्या वुझेर सव जन्कन हर्ष आयो ॥७६॥

प्रभुजी की आन्तरिक इच्छा हुई कि मुझे जाना ही उत्तम है। वे धनुप हाथ में लेकर मृग के पीछे दौड़ पड़े। लक्ष्मणजी को वहीं रहने की आज्ञा दी। ७२ लक्ष्मण सीता के संरक्षक वनकर वहीं रहे। प्रभु ने भी मारीच को वड़ी दूर तक दौड़ने के वाद मारा। मारीच (प्रभु को) दुविधा में डालने के लिए छलपूर्ण स्वर में चिल्लाया—'मर गया'। ७३ इस छलनामय पुकार को सुनकर सीता अत्यन्त भयभीत हुई। लक्ष्मण को तुरन्त आज्ञा दी कि वे राम की सहायता के लिए दौड़ें। लक्ष्मण ने उनकी यह आज्ञा सुनकर विनती की कि हे माता, जो मृग था, उसे प्रभु ने मार डाला है। ७४ वह मृग नहीं था, वह तो मृग-रूपी मारीच था, जो प्रभु द्वारा मारे जाते ही "हे भाई लक्ष्मण मरा" कहकर चिल्लाया। ७५ वह ज्योति-स्वरूप धारणकर हरि में विलीन हो गया। उस समय सबको आश्चर्य

लक्ष्मण्जिको वचन् सूनि सिता रिसाइन् ।
आँसू बहुत् नजरदेखि पनी खसाइन् ॥
बोलिन् अवाच्य पनि लक्ष्मणलाइ ताहाँ ।
भज्ली मलाइ भनि मन् छ कि आज याहाँ ॥७७॥

राम्देखि वाहिक अवर् त भजैनँ मैले ।
तिम्रै अगाडि यहिं छोड्दछु देह ऐले ॥
तिम्रो त चित्त अति दुष्ट रहेछ जान्याँ ।
काम् देखि आज तिमिलाइ त शत्रु मान्याँ ॥७८॥

यस्तो वचन् सुनि ति लक्ष्मणजी रिसाया ।
बोलिन् अवाच्य भनि भिन्न मनै चिताया ॥
धिक् चण्डि ! येति भनि खुप् सित चट्पटाया ।
वन्-देविलाइ रखवारि तहाँ खटाया ॥७९॥

सीताजिलाइ तहिं छोडि उठी गयाका ।
दूरै हुँदा नजरदेखि फरक् भयाका ॥
देख्यो र रावण सितातिर जल्दि आयो ।
सन्न्यासिको स्वरुप लीकन रूप् छिपायो ॥८०॥

सन्न्यासि हुन् भनि बहुत् गरि भक्ति लाइन् ।
पूजा प्रणाम् पनि गरीकन हर्ष पाइन् ॥

हुआ कि दुष्ट को भी यह मोक्षगति प्राप्त हुई है और साथ ही यह जान कर सबको हर्ष भी हुआ। ७६ लक्ष्मणजी के वचन सुनकर सीताजी क्रोधित हुई। उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होने लगे। उन्होने लक्ष्मण को अपशब्द भी कहे और कहा कि कदाचित् तुम यह समझते हो कि राम को कुछ हो जायगा तो उनकी अनुपस्थिति में मैं तुम्हारी सेवा करने लगूँगी। ७७ राम के अतिरिक्त मैं किसी की सेवा नहीं करूँगी। यहाँ तुम्हारे सामने मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगी। तुम्हारे इस पापी मन को मैं आज ही पहचान सकी हूँ। आज से मैं तुम्हें अपने शत्रु के समान मानती हूँ। ७८ सीता के इस प्रकार के वचनों को सुनकर लक्ष्मण को क्रोध आया। उनके अपशब्दों को सुनकर निवेदन किया—'धिक्कार चण्डी!' कहकर खूब बड़बड़ाये। वन-देवी को (उनकी) रक्षा-हेतु नियुक्त किया। ७९ सीताजी को अकेली छोड़कर लक्ष्मण के आँखों से ओट होते ही रावण सीता के पास आया। उसने अपने वास्तविक रूप को छिपाकर एक संन्यासी का रूप धारण करके सीता को छलने की युक्ति की। ८०

बिन्ती गरिन् बस गुरो ! प्रभु फर्कि आई ।
गर्नन् बहुत् प्रिय हजूर्कन चित्त लाई ॥८१॥
यस्ता वचन् सुनि सितातिर दृष्टि दींदो ।
को हो पती वुझुँ भनीकन गुह्य लींदो ॥
सोध्यो सितासित पती पनि जो छ को हो ।
नाम् काम् समेत् तिमि बताउ न आज जो हो ॥८२॥
सीताजिले पनि भनिन् सब जो छ नाम् काम् ।
सन्यासि जानिकन कत्ति नपारि छल्छाम् ॥
सोधिन् तहाँ म पनि नाम्हरु सुन्न पाऊँ ।
कुन् हो बताउ तिमिले पनि नाम ठाऊँ ॥८३॥
यस्ता वचन् सुनि सिताकन हर्न आँटी ।
नाम् काम् तहाँ सब कह्यो रतिभर् नढाँटी ॥
बोल्यो अवाच्य पति मानि मलाई लेऊ ।
राम्चन्द्रलाइ तिमिले अब छाडिदेऊ ॥८४॥
यस्तो वचन् सुनि अलिक् यनले डराइन् ।
वात्ले त दुष्टकन तृण् सरिको गराइन् ॥
हे दुष्ट रावण ! अवश्य त आज मर्लास् ।
ऐले जसै प्रभुजिका अगि याहिं पर्लास् ॥८५॥

संन्यासी समझकर सीताजी उसके प्रति भक्ति-भावना से परिपूर्ण होकर विनती करने लगीं। उन्होंने कहा कि आप विराजें। प्रभु अभी लौटकर आते होंगे और तब वह आपका उचित स्वागत-सत्कार करेंगे और भक्ति-वार्ता करेंगे। ८१ यह सुनकर संन्यासीरूपी रावण ने सीताजी की ओर प्रश्नपूर्ण दृष्टि से देखा और कहा कि तुम्हारे पति कौन हैं, नाम और काम-सहित बताओ। ८२ सीताजी ने भी उसे वास्तव में संन्यासी ही समझकर सविस्तार सब कुछ कह सुनाया। तत्पश्चात् संन्यासी का परिचय तथा निवास-स्थान जानने की जिज्ञासा प्रकट की। ८३ यह सुनकर रावण ने सीताजी को हरण करने का निश्चय करके अपना पूर्ण परिचय देते हुए कहा कि अब तुम मुझे ही अपना पति मान लो और रामचन्द्र को हृदय से त्याग दो। ८४ उसके ऐसे वचनों को सुनकर सीताजी लेश-मात्र भी भयभीत नहीं हुई और उस दुष्ट को एक तिनके के समान समझकर कहा, हे दुष्ट रावण ! आज तू प्रभु के लौटने पर अवश्य ही उनके हाथों से मारा जायेगा। ८५ ऐसी वाणी सुनकर रावण अत्यन्त

यस्ता वचन् सुनि रिसायर जल्दि ऊठ्यो ।
धाऱ्यो सरूप् र अब हर्छु भनेर छूट्यो ।।
बीस् बाहु दश् मुख शरीर् पनि शुद्ध कालो ।
देखाइ सब्कन तरास् मन-भित्र हाल्यो ।।८६।।

सीताजीलाइ मन्ले चिन्हिकन मनसा मातृवत् बुद्धि गर्दो ।
हात्ले मैले छुँदामा अनुचित छ भनी स्पर्श केही नगर्दो ।।
आफ्ना नङ् सब् जमीन्मा धसिकनजमिनैजल्दि हात्ले उठायो ।
सीताजीलाइ रथ्मा धरिकन दगुऱ्यो रामदेखी छुटायो ।।८७।।

हा राम् ! लक्ष्मण! येति मात्र मुखले बोलेर सार्है रुँदी ।
तन् मन् रामविषे धरेर बहुतै विह्वल् निरन्तर् रुँदी ।।
देख्या ताहिं जटायुले र उड़ि गै रथ् चूर्ण पारीदिया ।
घोडा चूर्ण गराइ फेर् धनु समेत् टुक्टुक् गराईदिया ।।८८।।

रावण् झन् वीर थीयो झटपट करमा क्रोधले खड्ग लीयो ।
काट्यो दूवै पखेटा रिससित र तहाँ भूमिमा पारिदीयो ।।
बाधा पाई जटायू पृथिवितल गिऱ्या फेरि रथ्को तयारी ।
जल्दी पाऱ्यो र सीता लिइकन पुगिगो दुष्ट त्यो सिन्धु पारि ।।८९।।

क्रोधित हुआ और तत्क्षण उठकर खड़ा हो गया और अपना वास्तविक रूप धारण किया । तब सीताजी को हरण करने के लिए वीस भुजाओं तथा दस शीशोंवाले अपने रूप को प्रदर्शित कर अपने मन में आवेग उत्पन्न किया । ८६ सीताजी को हृदय से पहचान कर माता-तुल्य समझकर अपने हाथों से स्पर्श करना अनुचित समझा, अतः उसने अपने नाखूनों को भूमि में धँसाकर सीताजी को जमीन-सहित उठाकर रथ में रख लिया और राम से विलग कर ले गया । ८७ हा राम ! हा लक्ष्मण ! केवल इतना ही सीताजी के मुख से निकल पाया और वह अत्यन्त व्याकुल होकर विलाप करने लगीं । केवल राम को ही अपने ध्यान में बसाये हुए मन ही मन अपना तन-मन राम को अर्पण करती हुई वह वार-बार विलाप करती रहीं । मार्ग में उनकी ऐसी दशा देख जटायु उनकी सहायता को दौड़ा और उसने रावण के रथ को चूर-चूर कर दिया । घोड़ों को भी मार डाला और रावण के धनुष के टुकड़े-टुकड़े कर दिये । ८८ रावण तो वीर था ही । उसने तुरन्त तलवार खीचकर क्रोधित जटायु के दोनों परों को काटकर उसे धराशायी कर दिया । पंखों से विहीन जटायु भूमि पर गिर पड़ा । शीघ्र ही रावण ने रथ तैयार किया और सीताजी को

आकाश्मा जब ऋष्यमूक गिरिका ऊपर् पुगीथिन् जसै ।
आफ्ना सब् गहना फुकालि वलियो पोको वनाइन् तसै ॥
राम् लक्ष्मण्कन यो दिउन् भनि तहाँ पोकै खसालिन् पनि ।
सुग्रीव्ले त गुफाविषे धरिलिया कस्ले खसाल्यो भनी ॥९०॥

सीताजीलाइ लङ्का लगिकन मनमा मातृवत् बुद्धि गर्दो ।
भित्री जुन् हो बगैंचा तहिं असल अशोक् वृक्षका नीच धर्दो ॥
सेवा खुप् गर्न लाग्यो तर पनि मनमा माइले दुःख पाइन् ।
हाराम्! हाराम्! जगन्नाथ्! यहि वचन गरी राममा चित्त लाइन् ॥९१॥

मारीच् मारेर फिर्थ्या प्रभु पनि वनमा देखिया ताहिं भाई ।
राम्ले ताहीं विचार्‍या मन मन इ कुरा भाइ पुग्नै नपाई ॥
माया सीता बन्याकी अलिकति पनि याद् छैन ई भाइलाई ।
साँचै सीता इनै हुन् भनिकन मलले भन्दछन् चाल् नपाई ॥९२॥

यो बात् बोल्दिनँ गुह्य राख्छु म पनी मानून् सिता हुन् भनी ।
सीता निश्चय हुन् भन्या त रिसले लड्नन् रिपूथ्यैं पनी ॥
यस्तो निश्चय मन् भयो प्रभुजिको लक्ष्मण् पुग्या झट् तहाँ ।
सोध्या श्री रघुनाथले किन सिता छोडेर आयौ यहाँ ॥९३॥

साथ लेकर वह दुष्ट समुद्र को पार कर गया। ८९ आकाश मार्ग से जैसे ही सीताजी ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँचीं, उन्होंने अपने समस्त आभूषण उतार कर एक गठरी में बाँध लिये और नीचे गिरा दिये, जिससे वे किसी के द्वारा राम-लक्ष्मण के पास पहुँचा दिये जायें। सुग्रीव ने उन्हें उठाकर तुरन्त अपनी गुफा में रख लिया। ९० रावण ने सीताजी को लंका ले जाकर अपने हृदय से उन्हें माता-तुल्य जानकर अपने अंतःपुर की वाटिका में अशोक वृक्ष के नीचे बैठा दिया और खूब सेवा की। तथापि सीता माता के मन में महान् दुख रहा और वह मन ही मन हा राम! हा राम! हा जगन्नाथ! जपकर राम की स्मृति को अपने मन में बसाती रहीं। ९१ मारीच का वधकर लौटते समय राम ने वन-बीच भाई लक्ष्मण को देखा और भाई के पहुँचने के पूर्व ही मन ही मन विचार किया कि सीता माया-रूपी बनी हुई हैं, यह भाई को किंचित-मात्र भी स्मरण नहीं है। सत्य ही सीता यही होगी, ऐसा सोचकर मन में कहते है। ९२ यह बात मैं गुप्त रक्खूँगा, किसी से न कहूँगा। इसे ही सीता मान लें। निश्चय ही सीता होने पर शत्रु के साथ लड़ने का विचार प्रभु के मन में हुआ। तुरन्त ही रघुनाथ ने प्रश्न किया कि सीता को छोड़कर क्यों आये हो? ९३

लक्ष्मण्ले पनि यो हुकुम् सुनि तहाँ बिन्ति गन्या क्या करूँ ।
जो दुर्वाच्य गरिन् सबै भनुँ भन्या सक्तीनँ मेलै बरु ॥
मारीच्का छलका वचन् सुनि वहुत् दुर्वाच्य बोलिन् जसै ।
सम्झायाँ भरसक् अपेक् तरहले लागेन बिन्ती कसै ॥९४॥

फेर् उत्तर् प्रभुले दिया अनुचितै हो यो गन्या तापनि ।
छोड्नू कत्ति थियेन दुर्वचनले स्त्री हुन् ति सीता भनी ॥
येती बात् गरि राम आश्रमविषे जल्दी कदम् ली गया ।
देख्यानन् र सिताजिलाइ वहुतै शोक् गर्न लाग्दा भया ॥९५॥

की राक्षस्हरुले हन्या कि वनमा की दुष्टले पेट् भन्या ।
एक् थोक् क्या त भयो अवश्य म गयाँ कुन् दुष्टका खेल् पऱ्या ॥
वन्देवीहरुलाइ मालुम भया विस्तार् बताऊ यहाँ ।
सीता मेरि पियारि देख्तिनँ म ता जान्छू सिता छन्जहाँ ॥९६॥

यस्ता रीत्सित सोधि सोधि रघुनाथ् ज्ञानै स्वरूपी पनि ।
जस्तो मानिस गर्छ सोहि रितले हा मेरि सीता ! भनी ॥
फिर्थ्या तेस् वनमा बडा विरहले सोध्या नपाई उसै ।
यै बीचमा वनमा त रथ् र धनुको देख्या अनेक् टुक् तसै ॥९७॥

यह आज्ञा सुनकर लक्ष्मण ने भी विनती की कि मैं क्या करूँ, मारीच की छलपूर्ण चीख को सुनकर सीताजी ने अनेक दुर्वचनों का प्रहार किया और मैंने अनेक प्रकार से समझाने की चेष्टा की, परन्तु सब व्यर्थ हुआ। ९४ प्रभु ने फिर उत्तर दिया कि यह तो अनुचित ही हुआ है। स्त्री के दुर्वचनों को सुनकर भी उसे स्त्री समझकर अकेला नहीं छोड़ना चाहिए। इतना कहकर राम ने शीघ्रता से आश्रम में देखा। सीता को न देख कर अत्यन्त शोकाकुल हुए। ९५ किन्हीं राक्षसों ने हरण किया होगा या वन में किसी दुष्ट ने अपने पेट का आहार बनाया होगा—कुछ तो अवश्य ही हुआ है। मेरे चले जाने पर किस दुष्ट ने यह खेल किया? वनदेवियो! यदि तुम्हें विदित हो तो मुझे विस्तारपूर्वक बता दो। मेरी प्यारी सीता कहीं दृष्टिगोचर नही होती। मैं तो सीता जहाँ होंगी, वही जा रहा हूँ। ९६ ज्ञान-स्वरूपी होने पर भी सीता को न देखकर रघुनाथ अत्यन्त व्याकुल हो उसी प्रकार हा मेरी सीते! कहकर पुकारते हुए उस वन में भटकने लगे, जिस प्रकार मनुष्य किया करता है। उसी बीच वन में रथ एवम् धनुष के टुकड़े देखे। ९७ लक्ष्मण से कहते हैं, भाई! तुम यहाँ देख रहे हो—क्या हुआ है, कोई और ही आकर विजय प्राप्त कर ले गया

आकाश्मा जब ऋष्यमूक गिरिका ऊपर् पुगीथिन् जसै ।
आफ्ना सब् गहना फुकालि वलियो पोको वनाइन् तसै ॥
राम् लक्ष्मण्कन यो दिउन् भनि तहाँ पोकै खसालिन् पनि ।
सुग्रीव्ले त गुफाविषे धरिलिया कस्ले खसाल्यो भनी ॥९०॥

सीताजीलाइ लङ्का लगिकन मनमा मातृवत् वुद्धि गर्दो ।
भित्री जुन् हो बगैचा तहिं असल अशोक् वृक्षका नीच धर्दो ॥
सेवा खुप् गर्न लाग्यो तर पनि मनमा माइले दुःख पाइन् ।
हाराम्! हाराम्! जगन्नाथ्! यहि वचन गरी राममा चित्त लाइन् ॥९१॥

मारीच् मारेर फिर्थ्या प्रभु पनि वनमा देखिया ताहिं भाई ।
राम्ले ताहीं विचारर्‍या मन मन इ कुरा भाइ पुग्नै नपाई ॥
माया सीता बन्याकी अलिकति पनि याद् छैन ई भाइलाई ।
साँचै सीता इनै हुन् भनिकन मलले भन्दछन् चाल् नपाई ॥९२॥

यो बात् वोल्दिनँ गुह्य राख्छु म पनी मानून् सिता हुन् भनी ।
सीता निश्चय हुन् भन्या त रिसले लड्नन् रिपूथ्यैं पनी ॥
यस्तो निश्वय मन् भयो प्रभुजिको लक्ष्मण् पुग्या झट् तहाँ ।
सोध्या श्री रघुनाथले किन सिता छोडेर आयौ यहाँ ॥९३॥

साथ लेकर वह दुष्ट समुद्र को पार कर गया। ८९ आकाश मार्ग से जैसे ही सीताजी ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँची, उन्होंने अपने समस्त आभूषण उतार कर एक गठरी में बाँध लिये और नीचे गिरा दिये, जिससे वे किसी के द्वारा राम-लक्ष्मण के पास पहुँचा दिये जाये। सुग्रीव ने उन्हें उठाकर तुरन्त अपनी गुफा में रख लिया। ९० रावण ने सीताजी को लंका ले जाकर अपने हृदय से उन्हें माता-तुल्य जानकर अपने अंतःपुर की वाटिका में अशोक वृक्ष के नीचे बैठा दिया और खूब सेवा की। तथापि सीता माता के मन में महान् दुख रहा और वह मन ही मन हा राम! हा राम! हा जगन्नाथ! जपकर राम की स्मृति को अपने मन में वसाती रहीं। ९१ मारीच का वधकर लौटते समय राम ने वन-बीच भाई लक्ष्मण को देखा और भाई के पहुँचने के पूर्व ही मन ही मन विचार किया कि सीता माया-रूपी वनी हुई हैं, यह भाई को किंचित-मात्र भी स्मरण नहीं है। सत्य ही सीता यही होगी, ऐसा सोचकर मन में कहते है। ९२ यह बात मैं गुप्त रक्खूँगा, किसी से न कहूँगा। इसे ही सीता मान लें। निश्चय ही सीता होने पर शत्रु के साथ लड़ने का विचार प्रभु के मन में हुआ। तुरन्त ही रघुनाथ ने प्रश्न किया कि सीता को छोड़कर क्यों आये हो? ९३

लक्ष्मण्ले पनि यो हुकूम् सुनि तहाँ बिन्ति गर्‍या क्या करूँ।
जो दुर्वाच्य गरिन् सबै भनुँ भन्या सक्तीनँ मेलै बरु ॥
मारीच्का छलका वचन् सुनि बहुत् दुर्वाच्य बोलिन् जसै।
सम्झायाँ भरसक् अपेक् तरहले लागेन बिन्ती कसै ॥९४॥

फेर् उत्तर् प्रभुले दिया अनुचितै हो यो गर्‍या तापनि।
छोड्नू कत्ति थियेन दुर्वचनले स्त्री हुन् ति सीता भनी ॥
येती बात् गरि राम आश्रमविषे जल्दी कदम् ली गया।
देख्यानन् र सिताजिलाइ बहुतै शोक् गर्न लाग्दा भया ॥९५॥

की राक्षस्हरुले हर्‍या कि वनमा की दुष्टले पेट् भर्‍या।
एक् थोक् क्या त भयो अवश्य म गयाँ कुन् दुष्टका खेल् परच्या ॥
वन्देवीहरुलाइ मालुम भया विस्तार् बताऊ यहाँ।
सीता मेरि पियारि देख्तिनँ म ता जान्छू सिता छन्जहाँ ॥९६॥

यस्ता रीत्सित सोधि सोधि रघुनाथ् ज्ञानै स्वरूपी पनि।
जस्तो मानिस गर्छ सोहि रितले हा मेरि सीता ! भनी ॥
फिर्थ्या तेस् वनमा बडा विरहले सोध्या नपाई उसै।
यै बीचमा वनमा त रथ् र धनुको देख्या अनेक् टुक् तसै ॥९७॥

यह आज्ञा सुनकर लक्ष्मण ने भी विनती की कि मैं क्या करूँ, मारीच की छलपूर्ण चीख को सुनकर सीताजी ने अनेक दुर्वचनों का प्रहार किया और मैंने अनेक प्रकार से समझाने की चेष्टा की, परन्तु सब व्यर्थ हुआ। ९४ प्रभु ने फिर उत्तर दिया कि यह तो अनुचित ही हुआ है। स्त्री के दुर्वचनों को सुनकर भी उसे स्त्री समझकर अकेला नहीं छोड़ना चाहिए। इतना कहकर राम ने शीघ्रता से आश्रम में देखा। सीता को न देख कर अत्यन्त शोकाकुल हुए। ९५ किन्हीं राक्षसों ने हरण किया होगा या वन में किसी दुष्ट ने अपने पेट का आहार बनाया होगा—कुछ तो अवश्य ही हुआ है। मेरे चले जाने पर किस दुष्ट ने यह खेल किया ? वनदेवियो ! यदि तुम्हें विदित हो तो मुझे विस्तारपूर्वक बता दो। मेरी प्यारी सीता कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती। मैं तो सीता जहाँ होंगी, वहीं जा रहा हूँ। ९६ ज्ञान-स्वरूपी होने पर भी सीता को न देखकर रघुनाथ अत्यन्त व्याकुल हो उसी प्रकार हा मेरी सीते ! कहकर पुकारते हुए उस वन में भटकने लगे, जिस प्रकार मनुष्य किया करता है। उसी बीच वन में रथ एवम् धनुष के टुकड़े देखे। ९७ लक्ष्मण से कहते हैं, भाई ! तुम यहाँ देख रहे हो—क्या हुआ है, कोई और ही आकर विजय प्राप्त कर ले गया

भन्छन् लक्ष्मणलाइ भाइ ! तिमिले देख्यौ यहाँको कुचाल् ।
अर्को आइ जिती लियेछ बिचमा मैले त देख्याँ कुचाल् ।।
येती बात् गरि राम् अलिक् पर गया देखछन् त पल्टी रही ।
चिन्नैलाइ कठिन् जटायुकन ता दूवै पखेटा गई ।।९८।।

अज्ञान् कत्ति थियेन तापनि तहाँ लीला नरैको गरी ।
चीन्याको नचिन्ह्यौ गरेर भगवान् भन्छन् अगाडी सरी ।।
हे भाई ! धनु देउ दुष्ट मिलिगो मार्छू म वाणै धरी ।
खान्या येहि रहेछ हेरि बुझियो पल्टेछ खुब् पेट् भरी ।।९९।।

सून्या बात् र जटायुले पनि हवाल् वृत्तान्त विन्ती गर्‍या ।
सूनी पूर्ण दया भयो नजिक गै छाम्यार सब् ताप् हर्‍या ।।
सीताको समचार् खबर् कहि तहाँ साम्ने जटायू मर्‍या ।
स्नान् दाहा गरि मांसपिण्डह रुदी क्रीया प्रभूले गर्‍या ।।१००।।

सायुज्यै मुक्ति पाई स्तुति पनि वहुतै भक्ति राखेर लाई ।
पौंच्या धाम्मा जटायू प्रभु पनि नरको ठिक्क लीला जनाई ।।
वन्वन्मा फिर्न लाग्या विरह गरि गरी सोद्धछन् जाहिं ताहिं ।
दोस्रादेख्न्यामिल्यानन्सकलवढुडचाएक् पनी काहिं नाहीं ।।१०१।।

है। मैं तो कुछ अनर्थ के लक्षण ही देखता हूँ। इतना कहकर राम ने कुछ दूर जाने पर पख कटे हुए जटायु को अचेत अवस्था में पड़ा देखा, जिसे पहचानना भी कठिन था। ९८ प्रभु अज्ञानी नहीं थे, तथापि मनुष्य की ही लीला करके अपरिचित की भाँति आगे वढ़कर भगवान कहते हैं, हे भाई ! दुष्ट मिल गया। धनुष दे दो, मैं वाण से इसका वध करता हूँ। इसी ने सीता को खाया है और पेटभर खाकर लेटा हुआ है। ९९ इन वातों को सुनकर जटायु ने भी विनती-स्वरूप सारा वृत्तान्त कह सुनाया। वृत्तान्त सुनकर दया से पूर्ण हो राम ने उसके निकट जाकर उसका स्पर्श किया और उसके दुख-ताप का हरण किया। सीता के विषय में सारा समाचार ज्ञात करने के पश्चात् जटायु का प्राणान्त हो गया। स्नानोपरान्त दाहसंस्कार कर मांस-पिण्डादि देकर प्रभु ने उसका क्रिया-कर्म किया। १०० अत्यन्त भक्तिपूर्वक स्तुति करने के वाद, मुक्ति पाकर जटायु स्वर्ग-धाम को पहुँचे। प्रभु भी मनुष्य के समान लीला करते हुए, विरह व्यक्त करते तथा सीता के विषय में पूछ-ताछ करते हुए, वन-वन भटकने लगे, परन्तु दूसरा और कोई ऐसा नहीं मिला, जिसने सीताजी को देखा हो। १०१ राम की भेंट एक कवंध नामक राक्षस से हुई,

छातीमा मुख् भयाको शिर पनि नहुँदा नाम् कबन्धै रह्याको ।
चार्चार्कोश् सम्म पुग्न्या दुइ अति बलिया दीर्घ बाहु भयाको ॥
राक्षस् थीयो तहाँ एक् बसि बसिकन सब् हातले खैंचि खान्या ।
तेसैका बाहु बीच्मा रघुपति पुग्दा रोकियो मार्ग जान्या ॥१०२॥

राक्षस्ले घोरियाको बुझिकन रघुनाथ् भन्दछन् भाइलाई ।
हे लक्ष्मण् ! आज देख्यौ अब बिच परियो निल्छ की हामिलाई ॥
ठाकुर्जीका वचन् ई सुनिकन विनती ताहिं लक्ष्मण्जि गर्छन् ।
हे नाथ्! क्या डर् छ यस्को दुइ भइ दुइ हात् काटिद्यूँ याहिं झर्छन् ॥३॥

येती बात् गरि हात् दुवै सहजमा काटी खसाल्या जसै ।
राक्षस्ले पनि हात् गिर्‍या जब तहाँ आश्चर्य मान्यो तसै ॥
सोध्यो आज म वीरका पनि सहज् हातै खसाल्यौ यहाँ ।
को हौ क्या मनमा लियेर वनमा डुल्छौ छ जानू कहाँ॥१०४॥

उत्तर् श्री रघुनाथले पनि दिया हाँसेर विस्तार गरी ।
सून्यो राम भनी तहाँ र मनले चीन्ह्यो इनै हुन् हरि ॥
ठाकुर्जीकन चीन्हि खुश् अधिक भै विस्तार आफ्नू गर्‍यो ।
हे नाथ्! आज चिन्ह्याँ हजूर्कन यहाँ पायाँ र सब् ताप् टर्‍यो ॥१०५॥

जिसका मुख उसकी छाती में था और सिर था ही नहीं। उसकी भुजाएँ चार-चार कोस की लम्बाई में थीं और बहुत ही बलिष्ठ थीं। वह अपनी उन्हीं बलिष्ठ भुजाओं से अपना आहार खींच कर खाता था। उसकी दोनों भुजाओं के बीच में रघुपति आ गये, जिसके कारण उनका आगे जाने का मार्ग रुक गया।१०२ राक्षस से घिरा हुआ समझकर राम भाई से कहते हैं, हे लक्ष्मण! आज देखो, कदाचित् यह राक्षस हमें निगल न ले। ठाकुर के इन वचनों को सुनकर लक्ष्मणजी विनती करते है, हे नाथ, इसका क्या भय है, दोनों मिलकर दोनों भुजाओं को काट डालें, बस यह यहीं गिर जायेगा। १०३ ऐसा कहकर जैसे ही दोनों भुजाओं को सहज ही काटकर गिरा दिया। यह देखकर राक्षस को भी अपनी भुजाओं के कटकर गिरने से आश्चर्य हुआ। अतः उसने पूछा, आज मुझ-जैसे वीर की भुजाओं को सहज ही में गिराने-वाले तुम कौन हो, किस उद्देश्य से वन में घूम रहे हो और कहाँ जाना है ? १०४ रघुनाथ ने भी हँसकर धीरे से उत्तर दिया, राम कहकर पुकारे जाते हैं, और मन में हरि समझकर पहचाने जाते है। ठाकुरजी को पहचानकर, अत्यन्त हर्षित हो उसने विनती की—हे नाथ! आज आपको यहाँ पहचानकर मेरे सब पापों का नाश हुआ। १०५ गन्धर्व होने पर

ब्रह्मादेखि अवश्य पाइ वरदान् गन्धर्व हूँ तापनि ।
राम्रो छू भनि गर्व भो र ऋषि ता साह्नै नराम्रा भनी ॥
हाँस्याँ कोहि र अष्टवक्र ऋषिले राक्षस् भयास् लौ भनी ।
पैले श्राप गरी दिया पछि त फेर् मुक्ती बताया पनि ॥१०६॥

राक्षस् भैकन फिर्दथ्याँ म रिसले शिर् इन्द्रजीले हर्‍या ।
ब्रह्माको वरदान् थियो र म जियाँ इन्द्रादि सब् छक् पर्‍या ॥
शीरै गै पनि यो जियो अब कसो गर्ला भनी खुप् दया ।
आयो इन्द्रजिका र खानकन मुख् छाती विषे दी गया॥१०७॥

चार्‌चार् कोश तलक् समाउन भनी लामा त हातै दिया ।
सो हात् आज गिराइबक्सनुभयो याहीं तलक् ई थिया ॥
जस्तो मुक्ति ति अष्टवक्र ऋषिले पैले बताया यहाँ ।
तस्तो ठिक्क भयो इ हात् गिरिगया मुक्ती त पायाँ यहाँ ॥१०८॥

क्याबात् धन्य रहेंछु आज म प्रभू ! आस्रा गर्‍याँथ्याँ जति ।
रातोदिन् रटना थियो चरणको भैगो शरण्को गति ॥
खाडल् खुप् गहिरो खनेर उसमा यो देह मेरो धरी ।
पोली भस्म गराइबक्सनु हवस् जान्छू म संसार तरी॥१०९॥

भी ब्रह्माजी से वरदान पाकर, अपनी सुन्दरता पर गर्व करने पर, ऋषियों को कुरूप कहकर उनकी हँसी उड़ाने पर, अष्टावक्र ऋषि ने मुझे राक्षस होने का शाप दिया, साथ ही इस शाप से मुक्ति पाने का भी मार्ग बताया। १०६ मैं राक्षस बनकर घूमने लगा था। क्रोधित होकर इन्द्र ने मेरे सिर का हरण कर लिया। ब्रह्मा के वरदान से मैं जीवित रहा और इन्द्रादि सभी आश्चर्य-चकित हुए। सिर कट जाने पर भी यह जीवित रहा, अब क्या करेगा, यह सोचकर इन्द्रजी को अत्यन्त दया उत्पन्न हुई और भोजन करने के लिए उन्होंने मेरे वक्षस्थल में मुँह बना दिया। १०७ चार कोस लम्बी भुजाएँ शिकार को पकड़ने के लिए दीं। वे हाथ भी अब गिरा दिये गये। शाप का प्रभाव भी यही तक के लिए था। जिस प्रकार अष्टावक्र ऋषि ने पहले ही बता दिया था, ठीक वैसा ही हुआ। हाथों के गिरने पर उन्होंने मुक्ति पाने को बताया था। १०८ क्या बात है ! मैं धन्य हूँ कि जो कुछ आशा करता था और रात-दिन इन्हीं चरणों की रट लगाये था और प्रभु की शरण में मुझे गति प्राप्त हो गयी। मेरे शरीर को भस्म करके एक गहरा गड्ढा खोदकर भूमि को अर्पित करने की कृपा करें, जिससे मैं संसार से मुक्ति पा जाऊँ। १०९ सीता को प्राप्त करने का भी उचित

सीता पाउनको उपाय् विनती गर्न्याछु साँचो गरी ।
भन्न्या या बिनती सुन्या र हरिले पोलीदिया खाक् गरी ।।
सुन्दर् शुद्ध स्वरूप् धन्यो प्रभुजिले खुश् भै दिया वर् पनि ।
भक्तीले बहुतै गर्न्यो स्तुति र त्यो पौंच्यो परम् धाम् पनि।।११०।।

हे नाथ्! सीताजि मिल्निन् अब तिमि शबरी छन् जहाँ ताहिं जाऊ ।
साह्लै भक्ती छ तिम्रा चरणकमलको ताप तिन्का छुटाऊ ।।
येती बिन्ति जगन्नाथ् सित गरि जब धाम् त्यो गयो राम फेरि ।
आश्रम्मा पौंचि दर्शन् शबरिकन दिया खुप् कृपा राखिहेरी ।।१११।।

आसन्देखि उठेर जल्दि शबरी राम्का चरण्मा परिन् ।
सक्भर्को बहुतै पुजा गरि तहाँ हात् जोरि बिन्ती गरिन् ।।
हेनाथ्! हीन् कुलकी स्त्री जाति म गरीब् जान्दीनँ तिम्रो स्तुति ।
आधार् मात्र फगत् छ यै चरणमा यस्तै छ मेरो गति ।।११२।।

विस्तार् सब् गुरुदेखि सूनि गुरुको आज्ञा मनैमा लिई ।
कैले देख्छु हजूरलाइ भनि खुप् तन् मन् हजुर्मा दिई ।।
पूजा नित्य हजूरको गरि यहाँ स्वामित्! बस्याकीथियाँ ।
हे नाथ् आज दया भयो हजुरको प्रत्यक्ष देखीलियाँ ।।११३।।

उपाय मैं आपको बताऊँगा । कबंध की ऐसी विनती सुनकर हरि ने उसके शरीर को भस्म कर दिया । तदुपरान्त एक सुन्दर शरीर प्रकट हुआ और प्रभुजी ने भी हर्षित होकर उसे आशीर्वाद दिया । भक्तिपूर्वक स्तुति कर वह परमधाम को पहुँच गया । ११० कबंध प्रभुजी से कहता है, हे नाथ! जहाँ शबरी रहती है, आप वहीं चले जायें, अब आपको सीताजी मिल जायेंगी । उसकी आपके चरणों में अगाध भक्ति है; आप जाकर उसके तापों का अन्त करें । जगन्नाथ से इतनी विनती कर जब वह परम-धाम पहुँच गया, तब राम ने भी आश्रम में पहुँच कर शबरी को कृपापूर्वक दर्शन दिये । १११ शबरी राम को देखकर तुरन्त आसन से उठ बैठी, और राम के चरणों पर गिर पड़ी । अपनी शक्ति के अनुसार पूजाकर हाथ जोड़कर विनती की—हे नाथ ! मैं एक नीच कुल की दीन स्त्री हूँ । आपकी स्तुति किस प्रकार करूँ, यह ज्ञान नहीं है, हमें केवल आपके चरणों का ही सहारा है, चाहे मेरी जैसी गति हो । ११२ गुरु की बतायी हुई विधि को सुनकर और उनकी आज्ञा मन में धारणकर कभी आपको देखती हूँ, तन-मन लगाकर नित्य आपकी पूजा करके मैं यहाँ रह रही हूँ । हे नाथ! आज आपकी इतनी कृपा हुई कि मैं साक्षात् आपके दर्शन पा रही

क्याले आज वहुत् प्रसन्न हुनुभो कुन् कर्म मैले गर्‍याँ ।
योगीको मनले नभेटि सकिन्या मैले त दर्शन् गर्‍याँ ॥
यस्तो बिन्ति सुनी दया बहुत भो हेतू प्रभूले कह्या ।
उच् नीच् स्त्री र पुरुष् विचार्‌ दिनँ म ता खुश् हुन्छु भक्तीभया॥११४॥

नौ साधन् कि त भक्ति छन् ति नवमा पैलो त सत्संग हो ।
पैलो साधन् पो भयो पनि भन्या वाँकी रह्याका ति जो ॥
आठ् साधन्‌हरू हुन् ति ता क्रमसितै मिल्छन् असल् सङ्गले ।
सत्‌को संग भया सबै वनिगया क्या हुन्छ कुन् सङ्गले॥११५॥

सत्‌को सङ्ग भै रह्याकी दिनदिन न उपर् भक्ति ठूलो भयाकी ।
सज्जन्‌को सङ्ग पाईकन सग गुणमा पार पौंची गयाकी ॥
देख्याँ मैले र दर्शन् दिन भनि खुशिले आज आफैं म आई ।
दीयाँ दर्शन् र पायौ तिमि अधम भया पाउँथ्यौ क्या मलाई॥११६॥

मुक्ती भो आज तिम्रो अव फजिति छुट्या खुशि भै आज जाऊ ।
मेरी सीता कहाँ छन् कछु खवर भया त्यो पनी सब् वताऊ ॥
हुकूम् जस्सै सुनिथिन् तव तहिं विनती गर्दछिन् क्या वताऊँ ।
सर्वव्यापी हजूर्‌ले वुझि त नसकिन्या एक् रती छैन ठाउँ ॥११७॥

हूँ । ११३ पता नहीं, कैसे आज आप इतने प्रसन्न हो गये । आज मैंने कौन-सा ऐसा सुकर्म किया । आज मैंने आपका दर्शन पा लिया, जिसे वड़े-वड़े योगी नही पा सकते है । शवरी की ऐसी विनती सुनकर, प्रभु का हृदय दया से भर उठा । उन्होंने कहा—मैं ऊँच-नीच तथा स्त्री-पुरुष का विचार नहीं रखता, मै तो प्राणिमात्र की भक्ति से प्रसन्न होता हूँ । ११४ भक्ति के नौ साधन है, जिनमें प्रथम तो सत्संग है । प्रथम साधन हो जाने पर जो भी शेप आठ है, अच्छी संगत से भी कठिनता से प्राप्त होते हैं । सत् के संग होने पर सव वनता है, जो कुसंग से नहीं वनता । ११५ सत्संग में रहकर प्रतिदिन मेरी भक्ति में तल्लीन, सज्जनों के सम्पर्क से सभी गुणों से परिपूर्ण देखकर, प्रसन्न होकर मैं आज स्वयं दर्शन देने के लिए आया हूँ । तुम्हें दर्शन मिल गया, अन्यथा तुम अधम होतीं तो क्या मुझे पा सकती थीं । ११६ आज तुम्हारी मुक्ति हुई । आज तुम्हारे संकट दूर हो गये हैं । मेरी सीता कहाँ है, यदि तुम्हें कोई सूचना हो तो वह भी मुझे वताओ । राम की यह आज्ञा सुनते ही, शवरी विनती करने लगी, मैं क्या वताऊँ, आप तो स्वयं सर्वव्यापी हैं, आपसे छिपा हुआ कोई स्थान नहीं । ११७ यह मैं सत्य ही कह रही हूँ, परन्तु आज मनुष्य-रूप

साँचो बिन्ती गऱ्याँ यो तर पनि नरको आज यो रूप धारी ।
आज्ञा भो ता म बिन्ती पनि हजुरविषे गर्दछू काल् विचारी ।।
सीता लङ्काविषे छन् अब त हजुरले भेट सुग्रीवलाई ।
बक्स्याजावस् ति गर्नन् जतिजति अरु काम् बिल्कुलै पार लाई।।११८।।

पम्पा भन्न्या तलाऊ पनि नजिक हुन्या ऋष्यमूक् पर्वतैका ।
टाकूरैमा ति बस्छन् अति फजिति सही दिन् बिताई सधैंका ।।
बालीको डर् हुनाले तहिं बहुत बस्या बालि जाँ दैन ताहाँ ।
बालीलाई नजानू भनिकन छ सराप् सब् गऱ्याँ बिन्ति याहाँ।।११९।।

सुग्रीव् सीत मित्यारि गर्न सब काम् हून्याछ सीता पनि ।
मिल्निन् आज म देह खाग् गरि यहीं पोल्छू नजीक् भै भनी ।।
बिन्ती पारि चिताविषे पसि शरीर् त्यो जो छ सब् खाग् गरिन्
ठाकुर्को अति भक्तिले ति शबरी संसार सागर् तरिन्।।१२०।।

क्या दुर्लभ् रघुनाथ् खुशी हुन गया जात्की अधम् भै पनि ।
श्रीराम्का अगि देह छाडिकन पार् पौंचिन् सहज्मै तिनी ।।
ब्राह्मण् भैकन भक्ति गर्दछ भन्या उस्का त झन् क्या कुरा ।
जो कोही पनि भक्ति भो भनि भन्या योगी ति हुन्छन् पुरा।।१२१।।

धारण कर यह आज्ञा की है, तो मैं अवसर को विचार करके आपसे विनती करती हूँ—सीताजी लंका में हैं। जब आप सुग्रीव से भेंट करेंगे तो जो काम होगें, सब अवश्यमेव पूर्ण होंगे। ११८ वह सुग्रीव पंपा नामक तालाव के निकट ऋष्यमूक पर्वत के शिखर पर अत्यन्त संकटयम तथा दुखी जीवन व्यतीत कर रहा है। बालि के भय से वह वही रहता है। बालि को शाप है, इसलिए वह वहाँ नहीं पहुँच सकता। ११९ सुग्रीव से मित्रता होने पर पर जब सब कार्य पूर्ण होंगे, तब सीता भी मिल जायेंगी। आज मैं आप के निकट इस देह को भस्म करती हूँ। ऐसी विनती करके शबरी ने चिता में प्रवेश किया और अपने शरीर को अग्नि को अर्पित कर दिया। इस प्रकार की भक्ति से शबरी ने संसार-सागर पार कर लिया। १२० नीच जाति की होकर भी शबरी का साहस देखकर, रघुनाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए। जब ऐसे लोग श्रीराम के ही समक्ष देह त्याग कर परम-धाम को प्राप्त कर सकते हैं, तो फिर ब्राह्मण होकर भक्ति करने पर तो उसका कहना ही क्या ! जो कोई भी हो, उनका भक्त होने पर मनुष्य पूर्ण योग्य होता है। १२१ हे मनुष्यो ! रघुनाथ के चरणों की भक्ति मोक्ष दिलानेवाली है, यह जानकर कामधेनु के समान राम का मन

हे लोक् हो ! रघुनाथका चरणको भक्ती छ मुक्ती दिन्या ।
यो जानीकन कामधेनु सरिका राम् नाम् मनैमा लिन्या ॥
क्या गर्छौं अरु मंत्र-तंत्रहरुले छोडेर सब् राममा ।
तन्मन्लाइ् अवश्य जान मनले सार् मिल्छ यै काममा॥१२२॥

अरण्यकाण्ड समाप्त

में ध्यान करने से अन्य मंत्र तथा यंत्रों का प्रयोग करके क्या करेगा ? मन से निश्चित ही जानो कि तन-मन से एकान्त में ध्यान धरकर चिन्तन करने से ही सार प्राप्त होता है । १२२

किष्किन्धा काण्ड

जस्सैमुक्त भइ् गइन् ति शवरी सब् वात् सुनी राम् पनि ।
जान्छू आज म ऋष्यमूक गिरिमा सुग्रीव भेट्छू भनी ॥
जान्थ्याकोश् भरिको तलाउ मिलिगो पम्पा भन्याको पनि ।
चीन्ह्या श्रीरघुनाथले शवरिले यै हो भन्याको भनी ॥१॥

माछा कच्छप चल्दछन् कमलको सब् गिर्छ केसर् तहाँ ।
केसर्ले जव छोपियो पनि भन्या देखिन्छ जल् पो कहाँ ॥
नीला लाल सफेद् कमल् पनि अनेक् रङ्गा भयाका तहाँ ।
वोल्छन् हाँस चकोर सारसहरू लाटाकुस्यारा जहाँ ॥२॥

जैसे ही शवरी चुप हुई, राम ने सारी वातें सुनने के पश्चात् ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव से भेंट करने के लिए तत्काल ही जाने की इच्छा प्रकट की । लगभग एक कोस दूर जाने के वाद पम्पा नामक एक ताल उन्हें मिला, जिसे शवरी के कथनानुसार श्रीरघुनाथ ने पहचाना । १
उस ताल में मछली और कछुए रहते थे और कमल के केसर गिरकर जल को पूर्णरूप से ढके हुए थे, जिससे जल कहीं भी दिखायी नहीं देता था । उस ताल के कमल लाल, नीले तथा सफेद अनेक रंगों में खिले हुए थे, जहाँ हंस, चकोर तथा सारस समूह वोलते रहते थे । २

जस्तो निर्मल हुन्छ सन्तहरुको मन् सोहिमाफीक जल् ।
निर्मल् देखि बहुत् प्रसन्न हुनुभो लाग्यो र साह्रै असल् ।।
थोडाजल् पनि पान् गरी सकल वन् हेर्थ्या जगन्नाथ् तहाँ ।
देख्या सुग्रिवले डरायर नजर् लाया प्रभू छन् जहाँ ।।३।।
बालीको छल हो भन्या बुझि तहाँ हात्ले इशारा दिया ।
औरै कोहि रहेछ सज्जन भन्या हेरेर हाँसी लिया ।।
ब्राह्मण्को लडिका बनेर हनुमान् जाऊ ति को हुन् कहाँ ।
जान्छन् क्या मनमा छ सब् वरिपरी हेरेर डुल्छन् तहाँ ।।४।।
सुग्रीवले हनुमानलाइ जब यो हूकूम् दिया जौ भनी ।
ब्राह्मण्को लडिका बनेर हनुमान् राम्का हजुर्मा पनि ।।
पौंची पाठ्सित बिन्ति पारि सब काम् सोध्या प्रभूको जसै ।
विस्तार् नाम र कामको प्रभुजिले खुश् भै बताया तसै ।।५।।
सुग्रीव्को हनुमानले पनि तहाँ विस्तार बिन्ती गऱ्या ।
बोकूँ श्रीरघुनाथलाइ भनि फेर् आफ्नू स्वरूप् झट् धऱ्या ।।
राम् लक्ष्मण्कन बोकि जल्दि हनुमान् सुग्रीवका पासमा ।
पौंचाऊँ रघुनाथलाइ भनि खुप् कूद्याति आकाशमा ।।६।।
जल्दी पर्वतका उपर् पुगिगया छायाविषे राम् रह्या ।
सुग्रीव्लाइ खबर् दिनाकन तहाँ जल्दी हनूमान् गया ।।

जैसे सन्तों के हृदय जल के समान निर्मल होते हैं, उसी प्रकार उस ताल में निर्मल जल को देख अत्यन्त प्रसन्न हुए और आकर्षित हुए। कुछ जलपान करके श्रीजगन्नाथ ने सारे वन को देखा। प्रभु जहाँ थे, वहाँ सुग्रीव ने भयभीत होकर देखा। ३ बालि का छल तो नहीं है, यह जानने के लिए हाथ से इशारा करना और सज्जन हो तो देखकर हँस देना, यह कहकर सुग्रीव ने ब्राह्मण-पुत्र के रूप में हनुमान को उनके विषय में यह पता लगाने के लिए कि उनके मन में क्या है, और इस प्रकार चारों ओर देखकर क्यों घूम रहे हैं ? यह जानकारी करने को कहा। ४ सुग्रीव ने जब हनुमान को यह आज्ञा दी तो हनुमान भी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में श्रीराम के समक्ष पहुँचे और नियमित रूप से प्रभुजी से समस्त कार्यों के विषय में ज्ञान देने की विनती की। प्रभुजी ने भी प्रसन्न होकर नाम तथा कार्य के विषय में पूर्ण-रूप से बताया। ५ हनुमान ने भी सुग्रीव के विषय में विस्तारपूर्वक विनती की। श्रीरघुनाथजी को ढोने के लिए अपने वास्तविक रूप को धारण किया। राम-लक्ष्मण दोनों को

विस्तार् पायर आइ सुग्रिवजिले दर्शन् प्रभूको गऱ्या ।
हाँगा कोमल भाँचि आसन दिया आनन्दसागर् पऱ्या ॥७॥

आसन् सुग्रिवलाइ लक्ष्मणजिले द्रीया, हनूमानले—
लक्ष्मण्जीकन बस्न आसन दिया ताहीं ठुला मानले ॥
सब् वृत्तान्त बताइ लक्ष्मणजिले विस्तार् सुनाया जसै ।
सीता जुन् गहना खसालि गइथिन् हाजिर् गराया तसै ॥८॥

हा राम्! लक्ष्मण! येति मात्र मुखले बोलेर आकाशमा ।
जान्थिन् सब गहना फुकालिकन ता हाम्रा यसै वासमा ॥
गिर्न्या पाठ् सित पो खसालि ति गइन् चिन्हींनँ याहीं थियाँ ।
कस्का हुन् यहिं चीन्हि बक्सनुहवस् यै हो हजूर्मा दियाँ ॥९॥

येती विन्ति गरी दिया ति गहना देख्या प्रभूले पनि ।
चीन्ह्या सब् गहना र शोक् बहुत भो हा ! मेरि सीता भनी ॥
रोया छातिविषे धऱ्या र गहना नाना विलाप्ले जसै ।
लक्ष्मण् सुग्रिवले तहाँ प्रभुजिको दिल् खुश् गराया तसै॥१०॥

हे राम् ! रावणलाइ मारि सहजै सीताजिलाई यहाँ ।
हाजिर् हामि गराउँला हजुर्मा त्यो दुष्ट जाला कहाँ ॥

ढोकर सुग्रीव के पास पहुँचने के लिए आकाश की ओर अत्यन्त तीव्र गति से कूदे । शीघ्रता से पर्वत के शिखर पर पहुँच कर राम को छाया में रखकर हनुमान तुरन्त सुग्रीव को सूचना देने के लिए गये । विस्तारपूर्वक समाचार पाते ही सुग्रीव तुरन्त ही राम के दर्शनों के लिए आये और वृक्ष की शाखा को तोड़कर आसन देते हुए आनन्द के सागर में डूब गये । ६-७ सुग्रीव को लक्ष्मणजी ने आसन दिया और लक्ष्मणजी को बैठने के लिए हनुमानजी ने आसन दिया । लक्ष्मणजी ने जैसे ही विस्तारपूर्वक सारा हाल वताया, वैसे ही सीताजी द्वारा गिराये गये आभूषणों को सुग्रीव ने प्रस्तुत किया । ८ आकाश-मार्ग से जाते समय केवल हे राम ! हे लक्ष्मण! मुँह से चीत्कार करती हुई, सीताजी ने अपने आभूषणों को उतार-उतार कर हमारे इसी निवास-स्थान पर गिरा दिया था, ये वही चिन्ह हैं, यह कृपया पहचानने का कष्ट करें । ९ इतना कहकर उन्होंने गहने दे दिये । प्रभुजी ने भी उन गहनों को भली प्रकार पहचान लिया और अत्यन्त शोकाकुल होकर वोले ! हाय सीते, और गहनों को वक्ष से लगाकर अनेक प्रकार से विलाप करते हुए रोने लगे । यह देखकर लक्ष्मण और सुग्रीव ने प्रभुजी को ढाढ़स बँधाकर उनके हृदय को शान्त किया । १० हे राम !

येती बिन्ति तहाँ ति सुग्रिवजिले रामका हजुरमा गन्या ।
बोल्या श्री हनुमानले पनि तहाँ अग्नी त साक्षीधन्या ॥११॥
अग्नी साक्षि धरेर सुग्रिवजिले राम्थ्यैं मित्यारी गरी ।
बाहाँ जोरि सखा भई नजिकमा सुग्रीव् बस्या तेस् घरी ॥
सुग्रीवले तहिं बिन्ति बात् पनि गन्या हे नाथ्! फजीती सही ।
बालीका डरले बहुत् दिन बित्या येसै जगामा रही ॥१२॥
याहाँ बालि त आउँदैन छ सराप् मातङ्गजीको र पो ।
पायाँ बस्न नहीं भन्या मकन ता कस्ले बचाऊँदथ्यो ॥
बालीको बल बिन्ति गर्छु अहिले जस्देखि सब् डर्दछन् ।
क्रस्तै वीर हउन् लड्या पनि भन्या लड्न्या सबै मर्दछन् ॥१३॥
ठूलो वीर् मयपुत्र दानव थियो मायावि नाऊँ थियो ।
बालीसीत लडाइँ गर्न भनि त्यो आयो र हाँक् खुप् दियो॥
बालीले पनि दौडि गैकन तहाँ हान्यो मुठीले जसै ।
वाधा पाइ डराइ भागि उ गयो लाग्यो पछाडी तसै॥१४॥
बालीका पछि लागि मै पनि गयाँ राक्षस् गुफामा गयो ।
ढोकामा त मलाइ राखि रिसले फेर् भित्र जाँदो भयो ॥

हम रावण को सहज ही मारकर सीताजी को आपके समक्ष प्रस्तुत करेंगे, वह दुष्ट कहाँ जायेगा । इतनी विनती करके सुग्रीव राम के चरणों पर गिर पड़े और श्रीहनुमान ने भी उसी समय अग्नि को साक्षी रखा । ११ अग्नि को साक्षी रख के सुग्रीव ने राम के साथ मित्रता की शपथ ली । अपने हाथों को जोड़कर मित्र के निकट जाकर सुग्रीव बैठ गया । सुग्रीव ने पुनः प्रभु से विनती की, हे नाथ! बालि के भय से अनेक कष्टों को सहन कर इसी स्थान पर रह रहा हूँ । १२ मातंगजी के शाप के कारण बालि यहाँ नहीं आ सकता । यदि मुझे यहाँ रहने को न मिलता तो कौन बचा सकता था; क्योंकि बालि की शक्ति को देखकर सभी भयभीत होते है । और कैसा भी वीर क्यों न हो, यदि बालि से लड़ाई ठान ली तो यह निश्चित है कि लड़ने वाला मर जायेगा । १३ मय-पुत्र मायावी नामक एक वीर रासक्ष बालि से युद्ध करने हेतु आया और बालि को ललकारा । बालि ने भी दौड़कर उसे घूँसा मारा । अपने सम्मुख वाधा आयी देख, वह भयभीत होकर भाग निकला और वालि उसके पीछे दौड़ा । १४ मैं भी वालि के पीछे-पीछे गया और वह राक्षस गुफा के अन्दर चला गया । द्वार पर मुझे रखकर क्रोधित होकर बालि अन्दर चला गया । एक मास व्यतीत होने

मैह्ला दिन् बिति गैगयो त पनि त्यो फर्कैन वाली जसै ।
साह्लै दिक् म थियाँ कसो गरुँभनी आयो रगत् पो तसै ॥१५॥
लौ वाली त मरेछ हेरि रगतै आयो गुफादेखि ता ।
मैलाई पनि फर्कि मार्छ रिसले गूफा थुनी जाँ म ता ॥
यस्तो बुद्धि भयो र पत्थर ठुलो ल्यायाँ र गूफा थुन्याँ ।
फर्की आउन मन् गऱ्या पनि सहज् निस्की नसक्नू हुन्या॥१६॥
यस्ता पाठ् सित खुप् थुन्याँ र म फिऱ्याँ वाली मऱ्या लौ भनी ।
विस्तार् सब् ति सुनाउँदा मकन ता राजा बनाया पनि ॥
राजा भैकन राज्य भोग् पनि गऱ्याँ क्यै दिन् पछि बालि ता ।
राक्षस् मारि फिरेर दाखिल भयो रीसाइ मैमाथि ता ॥१७॥
उस् दिन्देखि डराइ याहिं म रह्याँ मेरी त पत्नी पनि ।
बल्जफ्ती सित भोग गर्छ गरुँ क्या पुग्दैन जोर् तैपनि ॥
याहाँ आउन सक् भये यहिं पनी आएर मार्न्या थियो ।
पाप्को क्या डर मान्छ त्यो र बलले जस्ले बुहारी लियो ॥१८॥
साह्लै दुःखि भयेर सुग्रिवजिले बिन्ती गऱ्याको सुनी ।
सुग्रीव्को अब दुःख हर्दछु भनी अन्तस्करण्ले गुनी ॥

पर भी वालि लौटकर नहीं आया। मैं किंकर्तव्य-विमूढ़-सा होकर अत्यन्त चिंतित था कि देखा, द्वार से रक्त की नदी बाहर की ओर बह रही है। १५ मैने सोचा, कदाचित वालि का बध कर दिया गया है, इसीलिए गुफा से रक्त बह निकल रहा है। कहीं वह क्रोधित होकर मुझे भी न मार दे, इसलिए गुफा को बन्द करके मैंने चले जाने की सोची। यह सोचकर एक बड़ा-सा पत्थर लगाकर गुफा को बन्दकर दिया, जिससे वह लौटकर आने पर भी निकल न सके। १६ इस प्रकार गुफा को बन्द करके बालि को मरा समझकर मैं लौट पड़ा और यह सब वृत्तान्त सुनने के बाद मुझे यहाँ का राजा बना दिया गया। राज-भोग करने के एक ही दिन पश्चात बालि राक्षस को मारकर आ पहुँचा, और मुझ पर अत्यन्त क्रोधित हुआ ।१७ उस दिन से भयभीत होकर मैं यहाँ पर रह रहा हूँ, बालि मेरी पत्नी को भी बलपूर्वक छीन ले गया। क्या करूँ, मुझमें कोई जोर नहीं। यदि वह यहाँ आ सकता तो यहीं आकर मुझे मार डालता। जिसने बलपूर्वक अपनी बहू तक को छीन लिया, उसे पाप का क्या डर है? १८ सुग्रीव की ऐसी दुख-भरी विनती सुनकर अपने अन्तःकरण में सुग्रीव के दुख को हरण करने का विचार करके प्रभुजी ने कहा, सुनो सखे! उस बालि का

खातिर् श्रीप्रभुले गन्या सुन सखे! त्यो बालि मारी यहाँ ।
तिम्रो राज्य गराउँला अब उपर् जोर् चल्छ तेस्को कहाँ॥१९॥

यस्तो सत्य वचन् सुन्या प्रभुजिको शंका पऱ्यो तैपनि ।
शक्छन् क्या तब वालि मार्नकन ता ठूलो छ बाली भनी ॥
बालीलाइ बहूत वीर् बुझि तहाँ राम्का अगाडी सरी ।
बालीको अधिको पराक्रम कह्या बिल्कूल विस्तार् गरी॥२०॥

एक् दिन् दुन्दुभि नाम रासस् ठुलो आयो र हाँक् खुप् दियो ।
बालीले सहजै निमोठिकन शिर् छुट्ट्याइ हात्मा लियो ॥
सोही फ्याँकिदिदा यहाँ गिरिगयो चार् कोश् जगामा जसै ।
छीटा पर्न गयो बहुत् रगतका ऋषी रिसाया तसै ।।२१॥

बालीलाइ सराप् दिया अब यहाँ आइस् भन्या तैं पनि ।
शिर् जुद्दा भइ पृथ्विमा गिरिगयास् जस्तै गिऱ्यो यो भनी ॥
यो मालुम् त मलाइ सब् अघि थियो सो जानि याहीं रह्याँ ।
उस्लाई पनि यो छ याद् तब म तेस् वीर् देखि बाँच्तो भयाँ॥२२॥

सोही शिर् अझतक् छ पर्वत सरी यो फ्याँक्न सक्नू भया ।
बाली मार्न समर्थ ताहिं चिन्हुँला मेरा त सेखी गया ॥

वध करके मैं तुम्हें राजा बनाऊँगा, क्योंकि अब यहाँ पर उसकी कोई शक्ति काम नहीं आयेगी । १९ प्रभुजी के ऐसे सत्य वचनों को सुनकर भी सुग्रीव के मन में शंका उत्पन्न हुई कि वालि तो भयंकर है, क्या प्रभुजी उसका बध कर सकेंगे ? वालि को अत्यन्त वीर समझकर राम के सम्मुख खड़े होकर बालि के पराक्रमों का सविस्तार वर्णन किया । २० एक दिन दुंदुभी नामक भयंकर राक्षस ने आकर जोरों से ललकारा । वालि ने सहज ही उसे हाथ में लेकर शरीर से सिर अलग करते हुए मरोड़ दिया और फेंक दिया । उसको फेंकने पर चार कोस भूमि उसके शरीर ने घेर ली, जिससे भूमि कम हो जाने पर ऋषि आदि क्रोधित हुए । २१ ऋषियों ने क्रोधित होकर बालि को शाप दिया कि यदि तुम यहाँ आओगे, तो तुम्हारे शरीर से तुम्हारा सिर अलग हो जायेगा, और उसी राक्षस की भाँति गिर जाओगे । यह सब बातें मुझे पहले से ही ज्ञात थीं, इसीलिए यहाँ आकर रहने लगा हूँ, और उसे भी यह स्मरण है कि वह यहाँ जीवित नहीं रहेगा, इसीलिए तो मैं उस वीर से बचा हुआ हूँ । २३ वही सिर अभी तक पर्वत के समान यहाँ पड़ा हुआ है, और यदि इसे फेंक सकते हो तो वालि का वध करने की सामर्थ्य को पहचानूँगा । मै तो हार खा चुका ।

यी बात् सुग्रिवका सुनी झलक द्यूँ यिन्लाइ भन्न्या भयो ।
फ्याँक्या शिर् तहिं पाउका अँगुलिले चालीस कोश् तक् गयो॥२३॥

देख्या सुग्रिवले तथापि मनमा शंका त फेरी रह्यो ।
सक्छन् क्या तब वालि मार्नकन ता ठूलो छ भन्न्या भयो ॥
सात् ताल् वृक्ष इ छन् इ एक शरले छेड्छन् त मार्छन् भनी ।
सुग्रीव्का मनमा भयो र इ कुरा सब् थोक् सुनाया पनि॥२४॥

हे नाथ् ! बिन्ति म गर्दछू अरु पनी यस्तो छ वाली भनी ।
येही शिर्कन फ्याँ कि मात्र मनले मानने विश्वास् पनि ॥
वालीले यहि ताल बृक्षकन ता बूटै बराबर् गनी ।
हल्लाएर खसालिदिन्छ जति छन् सम्पूर्ण पत्ता पनि ॥२५॥

ई ताल् वृक्ष पनी यहाँ हजुरले एक् बाण ऐले धरी ।
सब्मा छिद्र गराइबक्सनु हवस् बुझ्न्या छ मन् खुप् गरी ॥
येती बिन्ति तहाँ ति सुग्रिवजिले राम्थ्यैं जसै ता गर्न्या ।
राम्जीले पनि लौ भनेर खुशिले हात्माधनुष्वाण्धर्न्या ॥२६॥

बाण् फ्याँक्या प्रभुले र वेग् सित गयो सात् ताल भेदन् गरी ।
पर्वत् भूमि समेत् विदारि पर गो साम्ने त सब् साफ् गरी ॥

यह सुन प्रभु ने उसे अपने पराक्रम का परिचय देने की सोची और अपने पाँव की उँगली से उसके सिर को धकेल दिया, जो चालिस कोस दूर जा पहुँचा । २३ सुग्रीव ने यह सब कुछ देखा तथापि उसके मन में पुनः शंका उत्पन्न हुई; क्योंकि वालि महाबली है, उसे मारना फिर भी सम्भव नहीं । सात तालवृक्ष जो यहाँ हैं इन्हें एक सर से गिरा देता है । ऐसे वीर को मारने की बात ने सुग्रीव के मन को चिन्तित किया और उन्होंने सब कुछ राम से कह सुनाया । २४ हे नाथ ! वालि के इसी प्रकार के और भी वहुत से पराक्रम हैं जो मैं आपको सुनाता हूँ । यह सिर फेंक देने मात्र से मेरे मन में विश्वास नहीं हुआ, क्योंकि वालि इन ताल वृक्षों को छोटे पेड़ के समान समझकर हिलाते हैं और सम्पूर्ण पत्ते गिरा देते है । २५ अतः इन तालवृक्षों को आप भी एक वाण द्वारा छेदने की कृपा करें, तब मैं अपने को सन्तुष्ट कर लूँगा । सुग्रीव ने जैसे ही राम से यह विनती की राम ने भी तुरन्त प्रसन्न होकर हाथ में धनुष-वाण ले लिया । २६ प्रभु द्वारा छोड़े गये वाण अत्यन्त तीव्र गति से सातों तालवृक्षों को छेदते हुए पर्वत-भूमि सहित काटकर सामने की सब भूमि साफ करने के पश्चात् पुनः तरकश में लौट आये । यह देखकर सुग्रीव को वड़ा आश्चर्य हुआ ।

ठोक्कैमा फिरि आइ बाण् जब पऱ्यो सुग्रीवजी छक् पऱ्या ।
साक्षात् श्रीपति हुन् भनी चिन्हि तहाँ राम् को स्तुती खुप्गऱ्या ॥
हे नाथ्! बल्ल चिन्ह्याँ अहो सकलका आत्मा जगन्नाथ् भनी ।
मायादेखि फरक् भयो अब त मन् लाग्दैन माया पनि ॥
क्या गर्छू अब पुत्र दार धनले सम्पूर्ण ई दूर् हउन् ।
मेरा सब् दश इन्द्रियै हजुरका सेवा टहल्मा रहून् ॥२८॥
यै पाठ्ले जब ता गऱ्या स्तुति तहाँ सुग्रीवको सो सुनी ।
यो ज्ञान् आज नद्यूँ भनी प्रभुजिले अन्तस्करण्ले गुनी ॥
मायाले अनि मोह पारि रघुनाथ् हाँस्या र बोल्या जसै ।
सुग्रीव् मोह भया वचन् सुनि तहाँ ऊ ज्ञान बिर्स्या तसै ॥२९॥
हे सुग्रीव सखे ! मलाइ दुनियाँ भन्नन् मित्यारी गरी ।
कुन् चीज् सुग्रिवलाइ दीकन गया आपत्ति तिन्का हरी ॥
यो लोक्को अपवाद् म मेट्छु अब ता वाली छ ऐले जहाँ ।
ताहाँ गैकन हाँक देउ तिमिले त्यो बालि मार्छू यहाँ॥३०॥
ऐले राज्य गराउँछू भनि तहाँ राम्को हुकुम् भो जसै ।
सुग्रिव् खूशि भयेर वालिकन खुप् हांक्या वचन्ले तसै ॥
किष्किन्धा पुरिका नजीक वनमा आयेर हांक् खुप् गरी ।
सुग्रीव्जी जब ता चल्या बुझि खबर् वाली छुट्या तेस् घरी॥३१॥

साक्षात् श्रीपति राम को पहचान कर उनकी नियमपूर्वक स्तुति की । २७ हे नाथ ! सकल संसार की आत्मा श्रीजगन्नाथ ! अब मैंने आपको पहचाना । माया के कारण विचलित मेरा मन भी अब नहीं स्थिर है । माया-मोह लेकर अब मै क्या करुँगा । पुत्र एवं स्त्री-धन से मुझे दूर ही रक्खें । मेरी दसों इन्द्रियाँ आपकी ही सेवा-टहल में समर्पित रहें । २८ जब इस प्रकार की विनती राम ने सुनी तो इस विचार से कि अभी आज यह ज्ञान न देना ही उत्तम होगा, माया-मोहपूर्वक हंसकर बोले और सुग्रीव उनके मोहपूर्ण वचनों को सुनकर अपना सारा ज्ञान भूल गया । २९ हे सखे सुग्रीव ! संसार कदाचित् यह कहे कि मित्रता करके आपत्तियों का हरण कर सुग्रीव को कौन सी चीज सौंप गए हैं । इस लोक-अपवाद को मैं मिटाता हूँ । अब तो जहाँ वालि है वहाँ जाकर तुम ललकारो, मैं उसका वध-करूँगा । ३० जैसे ही राम ने यह कहा कि तुम्हें राज्य दिलवाऊँगा वैसे ही सुग्रीव ने प्रसन्न होकर बालि के पास जाकर उसे जोरों से ललकारा । किष्किन्धापुरी के निकट वन में आए सुग्रीव की ललकार को सुनकर और सुग्रीव को पहचानकर वालि भी वहाँ आ गया । ३१

वाली सुग्रिवको लडाइँ पनि भो सुग्रीव एक् क्षण् लड्या ।
सक्थ्या सुग्रिवले कहाँ सहजमा वाली क विरलै धऱ्या ॥
बाण् छोडीकन वालिलाइ अव ता मार्नन् प्रभूले भनी ।
एक् क्षण् ता यहि आशले टिकिगया घुस्सा दिंदामा पनि ॥३२॥
वाली सुग्रिवको दुरुस्त अनुहार् एक् देखि राम्ले जसै ।
वाण् थाम्या टिकिसक्नु मुश्किल भई सुग्रीव भाग्या तसै ॥
पौंच्या श्रीरघुनाथका हजुरमा काम्दै र छाद्दै रगत् ।
बल् तोडीकन् वालिले हरिलियो एक् देह पौंच्यो फगत् ॥३३॥
सुग्रीव्ले तहिं बिन्ति खुप्‌सित गऱ्या हे नाथ् ! मलाई यहाँ ।
मार्नको यदि मन् छ पो पनि भन्या जोर् चल्छ मेरो कहाँ ॥
आफैंले यहिं मारिवक्सनु हवस् स्वामित् ! हजूर्ले पनि ।
शत्रुलाइ लगाइ मार्न त उचित् हो क्या सखा हो भनी॥३४॥
सुग्रीव्का इ वचन् सुनी गहभरी आँसू प्रभूले धऱ्या ।
सुग्रीव्जीकन अङ्कमाल गरि खुप् खातिर् प्रभूले गऱ्या ॥
हे सुग्रीव सखे ! दुरुस्त अनुहार् एक् देखि शंका भयो ।
मर्नन् मित्र भनेर पो डर हुँदा बाँचेर वाली गयो ॥३५॥

वालि तथा सुग्रीव का युद्ध कुछ क्षणों तक हुआ । वालि के सामने सुग्रीव क्या कर सकता था । वीर वालि ने बड़ी सरलता से उसे पकड़ लिया । इस आशा पर कि अभी प्रभु बालि को वाण-प्रहारकर मार डालेंगे, सुग्रीव कुछ क्षणों तक घूँसा मारने पर भी सहन कर टिका रहा । ३२ वालि और सुग्रीव दोनों का ही एक ही रूप देख प्रभु ने अपने वाण को रोक लिया । परन्तु सुग्रीव के लिए अब अधिक टिकना अत्यन्त कठिन हो गया, अतः वह वहाँ से भाग निकला और काँपते हुए वमन करता हुआ श्रीरघुनाथ जी के पास पहुँचा । वालि ने सुग्रीव की शक्ति का हरणकर लिया और केवल उसका शक्तिहीन शरीर ही वहाँ तक पहुँचा । ३३ सुग्रीव ने अत्यन्त व्यग्र होकर प्रभु से विनती की, हे नाथ ! यदि मुझे मार डालना चाहते हैं तो आप स्वय मार डालें । मेरा अपने पर कोई वश नहीं । स्वामी ! क्या अपने मित्र को इस तरह शत्रु के हाथ से मरवा डालना उचित होगा । अच्छा हो यदि उस शत्रु के हाथ से न मारा जाकर मै आपके हाथों मारा जाऊँ । ३४ सुग्रीव के इन बचनों को सुनकर प्रभु द्रवीभूत होकर वड़े दुःख से आँसू वहाने लगे । अत्यधिक स्नेह से भरकर उन्होंने सुग्रीव को अपने आलिंगन में भर लिया और बड़े आदर से कहा, हे सखे सुग्रीव ! तुम दोनों का एक-सा रूप देखकर मैं शंका से भर गया,

चिह्नो देह विषे धरेर अहिले जाऊ र हाँक् देउ फेर् ।
वालीलाइ म मारिदिन्छु सहजै लाग्वैन ऐले त बेर् ॥
यस्ता बात् गरिखुप् शपथपनि गर्न्या सुग्रीवको मन् भरी ।
आज्ञा लक्ष्मणलाइ बक्सनुभयो फूल् ल्याउ मालाधरी ॥३६॥
सो माला पहिराइ भाइ तिमिले जल्दी पठाऊ तहाँ ।
हाँक् दीउन् अब वालिलाइ अहिले मार्छू म छोड्छू कहाँ ॥
लक्ष्मण्ले पनि यो हुकूम् सुनि तहाँ माला लगाईदिया ।
त्यो माला पहिरेर सुग्रिव गया वाली जहाँ वीर् थिया॥३७॥
वालीलाइ सुनाइ हाँक् बहुत दी सुग्रीव् बस्याथ्या जसै ।
वालीले पनि शब्द सुग्रिवजिको सून्या र ऊठ्या तसै ॥
आश्चर्यै मनमा भयो अघि भन्या ऊठ्यो पछी रिस् अनि ।
मुक्का खाइ लगारियो तपनि फेर् फर्क्यो भगूवा पनि ॥३८॥
वालीले पनि फेर् कछाड् कसि तयार् भै जान लाग्या जसै ।
ताराले त नजाउ यस् बखतमा भन्दै समातिन् तसै ॥
कोही वीर् बलवान् सहाय मिलि पो सुग्रीव आया यहाँ ।
साहायै नभया त येहि घडिमा सुग्रीव फिर्थ्याकहां ॥३९॥

और शत्रु की जगह कहीं मित्र का ही बध न हो जाय इसी डर से मैंने प्रहार करना रोक दिया और बालि बच गया । ३५ अपने शरीर पर कोई चिह्न धारण करके जाओ और फिर से बालि को ललकारो । मैं बालि को सहज ही में मार डालूँगा । आज इस कार्य में कोई विलम्ब नहीं होगा । ऐसा कहकर सुग्रीव को आश्वासन दिया और उसके सामने इस कार्य की शपथ ली । फिर लक्ष्मण से बोले कि एक फूलों की माला बना लो । ३६ यह माला पहनाकर सुग्रीव को वहाँ भेजो । अब बालि को जाकर वह ललकारे । मैं इस बार उसे नहीं छोड़ूँगा, अभी मार डालूँगा । राम की यह आज्ञा सुनकर लक्ष्मण ने सुग्रीव को माला पहना दी और सुग्रीव वह माला धारण किये हुए बालि के पास गया । ३७ बालि को ललकार कर जैसे सुग्रीव बैठा ही था कि बालि भी सुग्रीव के शब्दों को सुनकर उठ बैठा । पहले तो बालि आश्चर्य में डूब गया, लेकिन फिर तुरन्त ही क्रोधित होकर बोला कि मुक्का खाकर और इस प्रकार खदेड़े जाने पर भी वह फिर कैसे लौटकर आया है । ३८ बालि भी कमर कसकर लड़ने के लिए तैयार होने लगा । पर तारा ने उसे 'इस समय न जाओ' ऐसा कहकर रोक लिया । निश्चय ही किसी वीर का सहयोग पाकर ही सुग्रीव यहाँ आया है । यदि कोई सहारा न होता तो सुग्रीव इसी समय

ताराका इ वचन् सुनेर बलवान् वीर् वालि बोल्छन् तहां ।
हे प्यारी ! नडराउ को छ म सरी वीर् आज दोस्रो यहां ॥
सुग्रीव्लाइ सहज् सहाय सहितै मारेर फिर्न्या म छु ।
वीर हूँ हांक दिंदा कसो गरि वसूँ शङ्का नमान्या कछु ॥४०॥

वालीका इ वचन् सुनीकन तहां ताराजिले फेर् पनि ।
भन्छिन् नाथ्! कछु सूनि बक्सनुहवस् क्या भन्दछे यो भनी ॥
बिन्ती गर्छु म हित् कुरा हजुरमा साक्षात् अयोध्यापति ।
श्रीरामचन्द्र सहाय छन् अब तहां चल्दैन जोर् एक् रती॥४१॥

सुग्रीव्सीत मित्यारि लाइ रघुनाथ् ज्यूले पिछामा लिया ।
वाली मारि म राज्य आज दिउँला भन्न्या वचन् यो दिया ॥
भन्न्या बात् अरुमा हुँदा बनमहाँ सूनेर अङ्गद् यहाँ ।
आई सब् इ कुरा मलाइ अघि नै भन्थ्यो न जाऊ तहाँ॥४२॥

सुग्रीव्सीत विरोध् नराख तिमिले जाऊ र ल्याऊ यहाँ ।
यो राज् सुग्रीव्लाइ देउ अब ता जित् छैन तिम्रो तहाँ ॥
श्रीराम्का दुइ पाउमा पर तिमी गर्नन् प्रभूले दया ।
साँचा हुन् इ कुरा बुझी लिनु हवस् भोग् गर्न इच्छा भया॥४३॥

कैसे लौटता । ३९ तारा के ऐसे वचनों को सुनकर बलवान वीर वालि बोला, हे प्यारी, डरो मत । मेरे समान वीर आज यहाँ और कौन है ? सुग्रीव को उसके सहयोगी-सहित आज मार कर ही मैं आऊँगा । मैं वीर हूँ । शत्रु के ललकारने पर मैं किस प्रकार बैठा रहूँ ? अतः तुम शंका मत करो । ४० बालि के इन वचनों को सुनकर तारा पुनः कहती है— हे नाथ ! यह (दासी) क्या कहती है, कुछ तो सुनने की कृपा करें । मैं (आपके और) अपने हित की बात कहती हूँ— अयोध्यापति साक्षात् श्री रामचन्द्रजी सुग्रीव के सहायक हैं, अतः अब तो कुछ भी वश नहीं चलेगा ! ४१ सुग्रीव के संग मित्रता करके रघुनाथ जी ने बालि का वध कर राज्य दिलाने का वचन दिया है और यह बात वन में औरों के मुँह से सुनकर अंगद ने पहले ही आकर मुझे सूचित किया है, और इसीलिए पहले भी मैंने आपको वहाँ जाने से रोका था । ४२ आप सुग्रीव के साथ शत्रुता न करें । जाइए और उन्हें यहाँ ले आइए आप उनसे जीत नहीं सकते । अब यह राज्य सुग्रीव को सौंप दीजिए । जाकर श्रीराम जी के चरणों में पड़ें, वे प्रभु निश्चय ही दया करेंगे । यदि जीवन की इच्छा हो तो इन बातों को सत्य समझने की कृपा करें । ४३ यह विनंती

येती बिन्ति गरेर पाउ दुइमा पक्रेर रोइन् जसै ।
तारालाइ बुझाउनाकन तहाँ फेर् वालि बोल्या तसै ॥
हे प्यारी ! नडराउ कत्ति रघुनाथ् साक्षात् रमाका पति ।
नारायण् भनि चिन्दछू म पनि सो नाथ् हुन् जगत्का गति॥४४॥
ताहाँ छन् रघुनाथ् भन्या चरणमा पर्न्याछु चाँडै वहाँ ।
सुग्रीवै छ फगत् भन्या सहजमा मार्न्याछु छाड्छू कहाँ ॥
सुग्रीव् कुन् बलियो छ पाजि भगुवा त्यो लड्न मन्सुव् लिन्या ।
तेस् पाजीकन डाकि आज कसरी यो राज्य मैले दिन्या॥४५॥
तस्मात् शोक् नगरी बसीरहु तिमी जान्छू म ताहाँ भनी ।
लड्नैलाइ कछाड् कसीकन तयार् भै बालि दौड्या पनि ॥
बाली सुग्रिव दूइ भाइ रिसले फेर् लड्न लाग्या जसै ।
रूख्को आड गरी तहाँ प्रभुजिले एक्बाण छोड्या तसै ॥४६॥
वाण् बज्न्यो जब बालिका हृदयमा सर्वाङ्ग बाधा गरी ।
पृथ्वी कम्प गराइ झट् तहिं गिऱ्या वीर् वालि मूर्छा परी ॥
मूर्छा दूइ घडी पऱ्या पछि अलिक् चैतन्य आयो जसै ।
देख्या श्रीरघुनाथलाइ खुशि भै साम्ने बस्याका तसै॥४७॥
भन्छन् श्रीरघुनाथलाइ रघुनाथ् ! तिम्रो बिराम् क्या गऱ्याँ ।
धर्मै छाडि लुकेर आज तिमिले माऱ्यौ म ऐले मऱ्याँ ॥

कर, दोनों पाँव पकड़कर रोती हुई तारा को समझाने के लिए बालि पुनः बोला,— हे प्यारी ! तुम किंचित्मात्र भी भयभीत न हो । साक्षात् रमा के पति जगत्-पति नारायण रघुनाथ को मैं भली प्रकार पहचानता हूँ । ४४ यदि रघुनाथ वहाँ होंगे तो मैं तुरन्त उनके चरणों में पड़ जाऊँगा और यदि केवल सुग्रीव ही अकेला होगा तो उसे नहीं छोडूँगा, सहज ही मार डालूँगा ! सुग्रीव कौन ऐसा बलवान है, भगोड़ा कहीं का ! मुझसे युद्ध करने की इच्छा करता है ! उस दुष्ट को बुलाकर मैं किस प्रकार यह राज्य सौंपूँ ? ४५ इसलिए शोक न करो ! तुम यहीं बैठी रहो, मैं वहाँ जाता हूँ । यह कहकर लड़ने के लिए लँगोट कसकर तैयार हो बालि दौड़ पड़ा । वालि-सुग्रीव दोनों भाई क्रोधित हो पुनः युद्ध करने लगे । वैसे ही पेड़ की आड़ से प्रभु ने एक बाण छोड़ा । ४६ जैसे ही राम का बाण, वालि के हृदय में, सर्वांग को छेदता हुआ टकराया, पृथ्वी में कम्पन हुआ और वालि मूर्च्छित होकर तुरन्त वहीं गिर पड़ा । दो घड़ी मूर्छित रहने के पश्चात् वालि को जैसे ही थोड़ी चेतना आई, वैसे ही श्रीरघुनाथ को प्रसन्नचित्त सामने बैठा पाया । ४७ वालि ने श्रीरघुनाथ जी से कहा—

यो क्या क्षत्रिय धर्म हो लुकिलुकी वीर् वाँण छोड्छन् कहीं ।
क्षत्री भैकन धर्म छोडि लडन्या एक् आज देख्याँ यहीं ॥४८॥

साम्ने भैकन बाण छोडि तिमिले माथ्यौ त खुप् यश थियो ।
सुग्रीव्हो कति साख् म हूँ कति कुसाख् हादैव ! क्या मन् दियो ॥
सीता रावणले हऱ्यो भनि बहुत् सन्ताप मन्ले गरी ।
सुग्रीव्लाइ सहाय ली मकन ता लूकेर चोर् झैं गरी ॥४९॥

मान्यौ यो अति चुक् भयो गरूँकसो बाँच्थ्याँ त याहीं बसी ।
रावण्लाइ कुलै समेत् सहजमा झिक्थ्याँ म पाता कसी ॥
लङ्का पूरी समेत् पनी म बलले झिक्थ्याँ सहज्मा यहीं ।
पाजी रावणलाइ मार्न तिमिले क्या जानुपर्थ्यो उहीं ॥५०॥

चोरी मारि लिंदा न यश् हुन गयो मासू न खानू भयो ।
धर्मात्मा तिमि पापि झैं हुन गयौ ज्यान् व्यर्थ मेरो गयो ॥
वालीका इ वचन् सुनेर रघुनाथ् भन्छन् तँ वोल्छस् कति ।
वाली हूँ भनि गर्व गर् त पनि हेर् साँचै तँ होस् दुर्मति ॥५१॥

हे रघुनाथ ! मैंने आपका क्या बिगाड़ा था । धर्म को त्याग कर आज आपने मुझे छिपकर मारा और मैं अब मरा । क्या वीर के लिए, छिप-छिपकर बाण प्रहार करना कोई क्षत्रिय-धर्म है । क्षत्रिय होते हुए भी धर्म को त्यागकर लड़नेवाले को आज ही मैंने देखा । ४८ सामने आकर बाण छोड़कर यदि तुम मुझे मारते तो यश की बात थी । सुग्रीव कितने सज्जन हैं और मैं कितना बुरा हूँ । हा दैव ! यह कैसा हृदय है । सीता को रावण-द्वारा हरण करने पर अत्यन्त सन्तापग्रस्त होकर सुग्रीव से तो यह सहायता ली और मुझे छिपकर चोरों की भाँति मारा । ४९ भयंकर भूल हो गई । क्या करूँ ! यदि बच जाता तो यहीं रहकर रावण को उसके सम्पूर्ण कुल-सहित, सहज ही में बँधवाकर यहाँ प्रस्तुत करता । मैं अपनी शक्ति से सरलतापूर्वक लंकापुरी सहित उसे यहाँ उठा लाता । दुष्ट रावण को मारने के लिए तुम्हें वहाँ जाने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती । ५० मरते समय बालि कहता है कि चोरी से यों मारने से कोई लाभ नहीं हुआ । न तो तुम्हें ही यश प्राप्त हुआ न मेरा मांस ही किसी काम आया । तुमने छिपकर मुझे मारा इसलिए मुझे मारकर भी तुम धर्मात्मा नहीं, पापी के समान हो । वालि के इन वचनों को सुनकर रघुनाथ कहते है—"चाहे भले ही तुम बलिष्ठ होने का गर्व करते हो फिर भी तुम दुर्मति से युक्त हो । ५१ तुमने किंचित्मात्र भी पाप का भय नहीं

पाप्को डर् रतिभर् नराखि तइँले खुश् भै बुहारी हरिस् ।
सोही पाप् अहिले प्रकट् हुन गयो तेस् पापले पो मरिस् ॥
धर्म स्थापन गर्नलाइ त यहाँ औतार मैले लियाँ ।
धर्मैं जानि अधर्म ठानि अहिले तँलाइ मारीदियाँ ॥५२॥

श्रीराम्का इ वचन् सुनी प्रभु भनी जानी चरण्मा पऱ्या ।
बानर् हूँ रघुनाथ् ! क्षमा गर भनी हात् जोरि बिन्ती गऱ्या ॥
नामोच्चारणले फगत् सहजमा संसार सागर् तरी ।
स्वामित् ! जान्छ हजूरमा, अब भन्या मैले त दर्शन् गरी ॥५३॥

पायाँ मर्न म भाग्यको कति बखान् मेरो म ऐले गरूँ ।
को पाऊँछ हजूरलाइ भगवान् ! मर्न्या वखत्मा अरू ॥
मेरो ता गति यै थियो मिलिगयो जान्छू परम्धाम् म ता ।
अङ्गद्माथि दया रहोस् हजुरको हाजिर् छ सेवक् उता॥५४॥

मेरा छातिमहाँ छ बाण् हजुरको यो खैंचि छोईदिया ।
शीतल् देह हुने थियो सहजमा प्राण आज जान्या थिया ॥
बालीका इ वचन् सुनी प्रभुजिले वाण् झीकि छूँदा भया ।
ठाकुर्का अगि देह छाडि खुशि भै बाली परम्धाम् गया॥५५॥

किया और प्रसन्नतापूर्वक अपनी बहू का हरण किया। तेरा वही पाप अब प्रगट हुआ है और इस प्रकार मृत्यु को प्राप्त हो रहा है। धर्म-स्थापना के लिए ही मैंने यहाँ अवतार लिया है और धर्म-अधर्म दोनों का विचार करके ही मैंने तुम्हारा इस समय वध किया है। ५२ श्रीराम के इन वचनों को सुनकर, उन्हें प्रभु जानकर बालि तुरन्त ही उनके चरणों में गिर पड़ा और बोला, 'हे रघुनाथ ! मैं वानर हूँ' यह कहते हुए हाथ जोड़कर क्षमा-याचना करने लगा। प्राणी केवल आपके नामोच्चारण से सहज ही में संसार-सागर तर जाता है। फिर मैंने तो अन्त समय में आपके दर्शन कर लिए है, अतः हे स्वामी अब मैं बैकुण्ठलोक को जाता हूँ। ५३ हे भगवन् ! मैं कहाँ तक आपकी सराहना करूँ। मुझे आपके हाथों मरने का अवसर प्राप्त हुआ। मृत्यु के समय आपको कौन पा सकता है। मेरी तो गति यही थी कि मैं आपको न पाता। लेकिन मैंने तो आपको पा लिया। अब मैं परमधाम को जाता हूँ। अंगद के ऊपर आपकी कृपा दृष्टि बनी रहे, वह आपके सेवक के रूप में तत्पर है। ५४ मेरे वक्ष पर आपके बाण हैं, आपके करकमलों से इन्हें बाहर खींचकर स्पर्श कर देने से मेरी देह शीतल हो जायगी और प्राण सहज में निकल जायेंगे।

वालीका सँगमा थिया जति तहाँ बानर् ति भागी गया।
ताराजी सित गै वहाँ सब हवाल् विस्तार गर्दा भया॥
राम्‌जीले लुकि बाण छोडि सहजै वाली त मारीदिया।
सुग्रीव् मंत्रि समेत् बहुत् खुशि भई राम्‌का हजूर्‌मा थिया॥५६॥
यो राज् अङ्गदलाइ बक्सनुहवस् ढोका शहर्‌को थुनी।
बस्छौं जल्दि हुकूम् हवस् हजुरको क्या हुन्छ धेरै गुनी॥
येती बिन्ति गऱ्या र वानरहरू जल्दी तयारी भया।
हूकूम् माफिक काम गर्न भनि सब् वानर् खडा भै रह्या॥५७॥
वालीको परलोक् भयो भनि खबर् सूनिन् र तारा रुँदै।
हा नाथ्! आज कता गयौ भनि बहुत् विह्वल् निरन्तर् हुँदै॥
क्या गर्छू अब पुत्र राज्य धनले भन्दै ति तारा जहाँ।
वालीको परलोक् भयो उहि जगा सोधेर पौंचिन् तहाँ॥५८॥
वालीको दुइ पाउ पक्रि बहुतै रूँदी विलाप् खुप् गरी।
भन्छिन् श्रीरघुनाथलाइ रघुनाथ् फेर् वाण ऐले धरी॥
मारीदेउ मलाइ जान्छु म पनी मेरा पतीका सँगै।
खोज्छन् स्वर्गविषे मलाइ पतिले काहाँ म वस्छू नगै॥५९॥

बालि के इन वचनों को सुनकर प्रभु प्रसन्न होकर वाण निकालकर वालि का शरीर छू देते हैं, जिससे वालि प्रभु के समक्ष प्रसन्नतापूर्वक देह त्याग कर परम-धाम चला गया। ५५ वालि के मरने के वाद वहाँ (वालि के पक्ष के) जितने वानर थे सब भाग गए और तारा के पास जाकर सारा हाल कह सुनाया कि राम ने (किस प्रकार) छिपकर वाण-प्रहार करके वालि को मार डाला। सुग्रीव अपने मंत्री-सहित अत्यन्त हर्षित हो वहीं श्रीराम के पास वैठे हैं। ५६ हम लोग शहर के द्वार को बन्द कर देंगे। आप यह राज्य अंगद को सौंपने की कृपा करें। शीघ्र ही आदेश देने की कृपा करें, अब अधिक विचार करने से क्या होगा। इस प्रकार विनती करके सब वानर तत्पर हो गए; आदेशानुसार सब वानर कार्य करने को खड़े हो गए। ५७ वालि के देहावसान होने की सूचना सुनकर तारा रोती हुई अत्यन्त विह्वल हो विलाप करती है—"हे नाथ! आज आप कहाँ चले गये? मैं अब पुत्र-धनादि लेकर क्या करूँगी।" यह कहती हुई तारा उसी स्थान पर पहुँची जहाँ वालि का देहावसान हुआ था। ५८ वालि के दोनों चरणों को पकड़ कर रोती और अत्यन्त विलाप करती हुई तारा कहती है—"हे रघुनाथ, मुझे भी बाण-प्रहार कर मार डालें। मैं भी अपने पति के साथ जाऊँगी। मेरे पति मुझे स्वर्ग में ढूँढेंगे, अतः मैं

पत्नी सीत वियोग् हुँदा यति विलाप् हुँदा रह्याछन् भनी।
मालुम् सब् त तहीं छ फेर् म भनुँक्या पर्दैन भन्नू पनि॥
पत्नीदान् गरि पुण्य हुन्छ जति सो मिल्न्याछ पुण्यै पनि।
तस्मात् आज अवश्य हान शरले जावस् पतीथ्यैं भनी॥
येती बात् अघि रामसीत गरि फेर् सुग्रीव् जिलाई पनि।
भन्छिन् लौ गर राज्य आज खुशिले मित्ले दियाको भनी॥
ताराका इ वचन् सुनीकन बहुत् आयो प्रभूमा दया।
तारालाइ बुझाउनाकन तहाँ एक तत्त्व भन्दा भया॥६१॥

हे ताराजि विचार् नराखि तिमिले शोकै कती गर्दछ्यौ।
यो मेरो पति हो भनेर नबुझी व्यर्थै शरीर् हर्दछ्यौ॥
जीवै हो पति भन्दछ्यौ पति भन्या मर्दैन जीव् ता कहीं।
देहै हो पति भन्दछ्यौ त किन शोक् गछ्र्यौ छ ऊ ता यहीं॥६२॥

श्रीरामका इ वचन् सुनीकन तहाँ ताराजि चुप् भै रहिन्।
जुन् सन्देह पर्‍यो वहाँ मनमहाँ सो मात्र सोद्धी भइन्॥
हेनाथ् ! मर्जि भयो सुन्याँ सब कुरा बुझ्दैनि मन् तैपनि।
सन्देहै मनमा रह्यो मकन ता कोगर्छ यो भोग् भनी॥६३॥

कैसे यहाँ रह सकती हूँ ? ५९ पत्नी-वियोग में कितनी पीड़ा होती है, यह सब आपको ज्ञात है। अतः इस विषय में और मैं आपको क्या कहूँ। पत्नीदान करने पर जो कुछ पुण्य प्राप्त होता है वही सब पुण्य आपको प्राप्त होगा। इसीलिए आप अब अवश्य ही बाण-प्रहार करें, जिससे मैं पति के पास शीघ्र पहुँच जाऊँ।" ६० राम से इतनी बात कहने के बाद तारा पुनः सुग्रीव से बोली—"आज प्रसन्न होकर अपने मित्र के दिए हुए राज्य का भोग कर लो।" तारा के इन वचनों को सुनकर प्रभु को अत्यन्त दया आयी अतः तारा को समझाने के लिए एक तत्त्व कह सुनाया। ६१ "तारा ! तुम विना विचारे ही शोक करती हो। इसे अपना पति कहकर व्यर्थ ही अपने शरीर को कष्ट देती हो। यदि आत्मा को ही पति कहती हो तो आत्मा कभी नहीं मरती और यदि शरीर ही को पति कहती हो तो व्यर्थ शोक क्यों करती हो, वह तो यहीं पड़ा है।" ६२ श्रीरामजी के इन वचनों को सुनकर तारा चुप हो गई। जिस बात का संदेह हुआ केवल वही बात पूछी—"हे नाथ! आपने सब कुछ सुनाया फिर भी मन नहीं मानता है। यदि मेरे मन में संदेह बना रहा तो यह भोग कौन करेगा। ६३ यदि मैं यह कहूँ कि शरीर ही

लेखै हवैन अब कर्म पनी गरीन्या ।
रस्ता कह्याँ भवसमुद्र सहज् तरीन्या ॥
मेरो स्वरूप् र इ वचन् जति सम्झि लिन्छन् ।
सब् कर्मपाश् ति सहजैसित काटिदिन्छन् ॥७३॥
यस्ता वचन् प्रभुजिको सुनि खूशि मन्ले ।
छोडिन् जति छ अभिमान् पनि ताहिं तिन्ले ॥
सुग्रीवको पनि गयो अभिमान ताहाँ ।
राम्को कृपा हुन गयापछि टिक्छ काहाँ ॥७४॥
हूकूम् भयो प्रभुजिको तहिं मित्रलाई ।
हे मित्र सुग्रिव ! जलाउ इ वालिलाई ॥
क्रीया गरीकन शरीर् गर शुद्ध ऐले ।
सब् काम छोडिकन यै गर आज पैले ॥७५॥
हूकूम् भयो र तव बालि लगी जलाया ।
क्रीया गरीसकि ति सुग्रिव ताहिं आया ॥
अर्पण् गरी सकल राज् प्रभुका चरण्मा ।
सेवक् बनीकन म बस्छु भन्या शरण्मा ॥७६॥

सुग्रीव्लाइ हुकूम् भयो प्रभुजिको जो हौ तिमि सो म हुँ ।
जाऊ आज र गादिमा बस म ता याहीं बनैमा रहुँ ॥

समझोगी तो जो कष्ट तुम्हें अव तक हुआ है वह नष्ट हो जायेगा। ७२ (पिछले कर्मो की) रेखा भी कदाचित् अब मिट जाय और कर्मादि भी नहीं किया जायेगा। सहज ही भव-सागर तरने का मार्ग ही कहाँ है? मेरे स्वरूप तथा वचनों को जितना ही समझ लोगी उतने ही सहज भाव से कर्मपाश कट जायेगा। ७३ प्रभु जी के ऐसे वचनों को सुनकर तारा ने प्रसन्न मन से जो भी अभिमान था सब वहीं त्याग दिया। सुग्रीव का भी अभिमान समाप्त हो गया। राम की कृपा होने पर अभिमान कहाँ टिकता है? ७४ वही पर मित्र के लिए प्रभु की आज्ञा हुई—हे मित्र सुग्रीव! बालि का दाह और क्रिया-कर्म आदि कर शरीर को अभी शुद्ध करो। सब काम छोड़कर आज सर्वप्रथम यही कार्य करो। ७५ ऐसी आज्ञा होते ही सुग्रीव ने बालि को ले जाकर दाह दिया और क्रिया आदि करने के बाद सुग्रीव ने लौटकर सकल राज्य, प्रभु के चरणों में अर्पित करके सेवक बनकर रहने की इच्छा प्रकट की। ७६ सुग्रीव को प्रभु की आज्ञा हुई कि जो तुम हो वही मैं हूँ। तुम आज जाकर गद्दी पर बैठो,

गाऊँमा घरमा बसोइनँ भनी मेरो प्रतिज्ञा छ यो।
जानन् लक्ष्मण ता सँगै घर पनी भाई गया भैगयो ॥७७॥
वर्षा काल् बितिसक्छ यो जब तसै सीताजिको खोज् गर्‍या।
येती मर्जि दिया र सुग्रिव बहुत् आनन्द-सागर् पर्‍या ॥
लक्ष्मण्जी पनि रामका हुकुमले सुग्रीवका साथ् गया।
सुग्रिव् गादिविषे बस्या पछि फिरी दाखिल् प्रभूथ्यैं भया॥७८॥
राम्ले ताहिं थियो प्रवर्षणगिरी तेस्का शिखर्मा चढी।
देख्या सुन्दर एक् गुफा स्फटिकको ताहीं गराया मढी ॥
फल् फूल् ताहिं खचित् थियो नंजिकमै थीयो तलाऊ पनि।
देख्या मन् खुशि भो तहाँ प्रभुजिको बस्न्यै जगा हो भनी॥७९॥
वर्षा काल तलक् रह्या प्रभु तहाँ पर्थ्यो बखत्मा झरी।
जन्तू पुष्ट थिया सबै ति वनका खायेर घाँस् पेट् भरी ॥
बस्थ्या श्रीरघुनाथका वरिपरी खुप् ध्यान् प्रभूमा धरी।
ध्यान् जन्तूहरुको विचार् गरि तहाँ खूशी रहन्थ्या हरि॥८०॥
लक्ष्मण्ले तहिं बिन्ति एक् दिनगर्‍या हेनाथ् ! पुजाको विधान्।
पाऊँ सुन्न हुकूम् हवस् खुशि भई कुन् हो करूणा-निधान् ॥
ब्रह्मा व्यास् अरु नारदादिहरु सब् भन्छन् पुजाले सरी।
आर्को तर्न उपाय छैन जनको खुश् छन् पुजैमा हरि ॥८१॥

मैं यहीं वन में रहूँगा। गाँव में, घर में न रहने की मेरी प्रतिज्ञा है, अतः लक्ष्मण के संग में तुम्हें घर जाना उचित होगा। ७७ जब वर्षाकाल व्यतीत हो जायगा तब सीता की खोज की जायेगी। ऐसी आज्ञा सुनकर सुग्रीव आनन्दसागर में डूब गया। लक्ष्मण जी भी श्रीराम की आज्ञा पाकर सुग्रीव के साथ (नगर में) गए और सुग्रीव का राज्याभिषेक करने के बाद पुनः प्रभु के पास उपस्थित हुए। ७८ राम ने प्रवर्षण गिरि के शिखर पर चढ़कर एक स्फटिक की बनी हुई सुन्दर गुफा देखी जो चारों ओर से फल-फूलों से घिरी हुई थी। उसके निकट ही एक तालाब भी था। ठहरने योग्य ऐसा देखकर प्रभु जी के मन में प्रसन्नता हुई। ७९ प्रभु वहाँ वर्षाकाल तक रहे। समय-समय पर वर्षा होती थी। पेट भर घास खाकर उस वन के सभी जन्तु हृष्ट-पुष्ट थे और श्रीरघुनाथ के ध्यान में उन्हीं के चारों ओर वे घूमा करते थे। जन्तुओं की इस ध्यान-मग्न दशा पर प्रभु जी मुग्ध रहते थे। ८० एक दिन लक्ष्मण ने विनती की-- हे नाथ ! हे करुणानिधान, पूजा के विधान क्या है, मैं सुनना चाहता हूँ, प्रसन्न होकर बतलाने की कृपा करें। ब्रह्मा, व्यास और नारद आदि

यस्तो सूनि गर्‍याँ र मन् चरणमा सोध्याँ पुजाको विधान् ।
साँचो तत्त्व बताउन्या हजुर झैं को छन् दयाका निधान् ॥
यस्ता लक्ष्मणका वचन् सुनि तहाँ पूजा विधी हो जति ।
सब् संक्षेप् रितले कह्या प्रभुजिले लक्ष्मण् भया खुश् अति ॥
वर्षाकाल् यहि रीतले तहिं बित्यो वार्ता कथाको गरी ।
सम्झ्याझट्ट सिताजिलाइ र विलाप् फेर् गर्न लाग्या हरि ॥
किष्किन्धा पुरिमा यसै-बिचमहाँ मन्त्री हनूमानले ।
सुग्रीव् सीत सिताजि खोज् गर भनी विन्ती गर्‍या ज्ञानले ॥
हे राजन् रघुनाथले त उपकार् ठूलो हजूर्को गरी ।
यो राज् बक्सनुभो हजूर्कन ठुलो वीर् बालिलाई हरी ॥
सो विर्स्या झइँ मान्दछू हजुरले सीताजिको खोज् खबर् ।
गर्न्या हो अब ता बखत् पनि भयो सब् काम छोडी अबर् ॥८४॥
यादै छैन हजूरलाइ त सिता खोज् गर्नुपर्ला भनी ।
वालीको गति जुन् भयो उहि गती होला हजुर्को पनि ॥
यो बिन्ती हनुमानको सुनि तहाँ साँचो भन्या यो भनी ।
सुग्रिव्ले तहिं झट् हुकूम् पनि दिया लश्कर् पठाऊ भनी ॥८५॥

सबका यही कथन है कि पूजा के समान तरने का अन्य कोई उपाय नहीं है। (भगवान्) पूजा (भक्ति) से ही प्रसन्न होते है। ८१ लक्ष्मण का मन पूजा का विधान जानने के लिए राम के चरणों में केन्द्रित हो गया। वे बोले, हे दयानिधान ! सत्य-तत्वों को जानने और बतानेवाला आपके समान और कौन है ? लक्ष्मण के ऐसे वचनों को सुनकर जितनी भी पूजा की विधियाँ हैं, प्रभु जी ने प्रसन्न होकर लक्ष्मण को संक्षेप में बतायीं। ८२ इसी प्रकार कथा-वार्ता करते हुए वर्षा-काल व्यतीत किया। एक दिन अकस्मात् सीता जी का स्मरण हो आया और श्रीराम पुनः विलाप करने लगे। इसी बीच मंत्री हनुमान ने किष्किन्धापुरी में सुग्रीव से सीता जी की खोज करने के लिए विनती की। ८३ हे राजन् ! रघुनाथ ने वीर वालि को मारकर यह राज्य आपको देकर महान् कृपा की है। परन्तु मुझे लगता है कि वह सब आप भूल गए है; अब तो सब काम छोड़कर सीता जी की खोज कराइए। ८४ लगता है, आपको याद ही नहीं हैं कि सीता जी की खोज करना है। वालि की जो गति हुई है आपकी भी वही गति होगी। हनुमान की यह विनती सुनकर 'यह सत्य ही कह रहा है', ऐसा जानकर सुग्रीव ने तुरन्त सीता जी को खोजने के लिए वानरों की सेना भेजने की आज्ञा दी। ८५ दस हजार वानर जाकर, ईशान दिशा में

दस् हज्जार् विर जाइ सात द्विपमा बानर् जती छन् सबै ।
खोजी आज खबर् दिउन् र सब वीर् जम्मा हउन् झट् अबै ।।
जो आवैन हुकूम् बदर् गरि यहाँ ई पन्ध्र दिन् भित्रमा ।
तेस्को प्राण् म लिन्याछु निश्चय बुझून् मानून् सबै चित्तमा।।८६।।
यस्तो सुग्रीवको हुकूम हुन गयो सोही बमोजिम् गरी ।
दश् हज्जार् विरको खटन् पनि गर्‍या लागेन बेर् एक् घरी ।।
दश् हज्जार् विर दश् दिशातिर छिटी खुश् भै हनूमान् रह्या ।
ती वीर् दश् तिर गै खबर् दिइ अनेक् सेना बटुल्दा भया ।।८७।।
लाग्या गर्न विलाप् अनेक् तरहले लीला, गरी राम् उसै ।
भन्छन् छन् ति सिता कहाँ अझ पनी लागेन पत्ता कसै ।।
याहाँ छन् ति सिता भनीकन खबर् पाऊँ त जाऊँ तहाँ ।
ल्याऊँ अमृत झैं सिताकन यहाँ पाऊँखबर्‌पो कहाँ ।।८८।।
हे भाई ! सुन जो छ आज इ सिता हर्न्या म तेस्को सबै ।
कूलै भस्म गराउन्याछु करुणा राख्वैन उस्मा कबै ।।
येती बात् तहिं भाइ सीत गरि फेर् सीताजिको शोक् गरी ।
लाग्या गर्न विलाप् अनेक् तरहले त्रैलोक्यका नाथ् हरि।।८९।।
हे सीते ! कसरी म देखि पर भै बस्छ्यौ तिमी छौ कहाँ ।
प्राणै थाम्न कठिन् भयो म बिनु ता आपत् भया हुन् तहाँ ।।

जो भी वानर हैं उन्हें खोजकर यह सूचना दे दे कि सब वीर तुरन्त एकत्रित हो जाएँ। जो भी इस आज्ञा का पालन कर पन्द्रह दिन के अन्दर नहीं आता है उसके प्राण मैं ले लूँगा, इसे निश्चय जान लें और स्मरण रक्खें।८६ सुग्रीव की ऐसी आज्ञा के अनुसार दस हज़ार वीरों को एकत्र कर नियुक्त करने में कुछ भी देर नहीं हुई। दस हज़ार वीरों को दसों दिशाओं में भेजकर हनुमान प्रसन्नतापूर्वक रहे। उन वीरों ने दसों दिशाओं में जाकर सूचना देते हुए विपुल सेनाएँ एकत्रित कीं। ८७ श्रीराम अनेक प्रकार की लीलाएँ कर, विलाप करने लगे। "सीता कहाँ है? क्या अब तक भी कहीं पता नहीं लगा? सीता के अमुक स्थान पर होने की सूचना मुझे दो ताकि मैं वहाँ जा सकूँ। अमृत-तुल्य सीता को यहाँ ले आओ। कहाँ हैं, इसकी सूचना कहाँ मिलेगी! ८८ हे भाई! सुनो, आज सीता का हरण करनेवाला जो भी हो, मैं उसके कुल को भस्म कर दूँगा। उस पर कभी दया नहीं करूँगा।" इतनी बात भाई से कहकर पुनः सीता के शोक में त्रैलोक्य के नाथ हरि अनेक प्रकार से विलाप करने लगे। ८९ "हे सीते! मुझसे अलग किस प्रकार रहती हो। कहां हो! तुम्हारे

तिम्रो भेट नपाउँदा मकन ता ई चन्द्र सूर्यैं बन्या।
तिम्रोतागरुँ क्यावखान्तिमित झन् छचौदुष्टकापास्भन्या॥९०
सुग्रीव् आज कृतघ्न झैं हुन गया आयो शरद्काल् पनि।
सुर्तैं छैन सिताजिलाइ अझतक् खोज् गर्नु पर्ला भनी॥
मार्छू सुग्रिव दुष्टलाइ पनि फेर् वाली सरीको गरी।
लक्ष्मण्ले प्रभुका वचन् सुनि गऱ्या बिन्ती अगाड़ी सरी॥९१॥
हे नाथ्! आज मलाइ बक्सनु हवस् हूकूम् म मार्छू गई।
लक्ष्मण्का इ वचन् सुनेर रघुनाथ् अत्यन्त खूशी भई॥
भन्छन् भाइ! नमार आज बहुतैं हप्काउ जाऊ तहाँ।
मारी हाल्न त योग्य छैन तर खुप् चेताइ आऊ यहाँ॥९२॥
हूकूम् यो प्रभुको सुनीकन तहाँ लक्ष्मण्जि जल्दी गया।
सीतानाथ् नर्को लिला गरि विलाप् खुप् गर्न लाग्दा भया॥
किष्किन्धापुरि पौंचि लक्ष्मणजिले टङ्कार् धनूको गऱ्या।
पत्थर् वृक्ष उठाइ वानरहरू कोही अगाडी सऱ्या॥
सब् वानर्कन नष्ट गर्दछु भनी लक्ष्मण्जिले वाण् धऱ्या।
अङ्गद् आइ हटाइ बानरहरू जल्दी चरण्मा पऱ्या॥

विना प्राण वचाना भी कठिन हो गया है। तुम्हारे वियोग में तुम्हारे गुरु-स्वरूप चन्द्र और सूर्य मुझसे कहते है कि तुम दुष्ट के और निकट हो। ९० आज सुग्रीव अकृतज्ञ सा हुआ है। शरदकाल भी आ गया। किन्तु उसे कोई चिन्ता नहीं है कि अभी सीता की खोज करनी है। वालि की तरह दुष्ट सुग्रीव को भी मैं मार डालूँगा।" प्रभु के इन वचनों को सुनकर लक्ष्मण आगे बढ़कर विनती करने लगे— ९१ "हे नाथ। मुझे आज्ञा करें, मैं अभी जाकर सुग्रीव को मार डालूँगा।" लक्ष्मण की ऐसी विनती सुनकर श्रीरघुनाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए और वोले हे भ्राता! आज उसे न मारो। किन्तु जाकर उसे डाँटो-फटकारो। अनावश्यक लड़ना और मारना उचित नही है; अत: उठो, केवल चेतावनी देकर आओ। ९२ प्रभु के इस आदेश को सुनकर लक्ष्मण शीघ्रता से चले गये। सीतानाथ मानव-लीला कर अत्यन्त दु:ख से विलाप करने लगे। किष्किन्धापुर पहुँचकर लक्ष्मण ने अपने धनुष को टंकारा। टंकार सुनकर पत्थर तथा वृक्षों को उठाकर कुछ वानर आगे वढ़ आए। ९३ सव वानरों का नाश करता हूँ, कहकर लक्ष्मण ने वाण चढ़ाया। अंगद ने शीघ्रता से आकर वानरों को हटाया और लक्ष्मण के चरणो में गिर पड़े। लक्ष्मण ने प्रसन्न होकर

अङ्गद् सीत बहुत् प्रसन्न भइ झट् ताहाँ अह्लाया पनि ।
जाऊ देउ खबर् अगाडि तिमिले लक्ष्मण्जि आया भनि ॥९४॥
अङ्गद् गैकन त्यो खबर् जब दिया सुग्रीवलाई तहाँ ।
जल्दी सुग्रिवले हुकूम् पनि दिया लौ जाउ ल्याऊ यहाँ ॥
अङ्गद्लाइ सँगै लियेर हनुमान् चाँडै चरण्मा परी ।
लक्ष्मण्लाइ बुझाइ ल्याउ तिमिले सब् रीस शान्ती गरी ॥९५॥
यस्तो सुग्रिवको वचन् सुनि तहाँ सोही बमोजिम् गरी ।
पाऊमा परि बाहुमा धरिलिया ल्याया बहुत् खुश् गरी ॥
हूकूम सुग्रिवको सुनीकन तहाँ ताराजि चाँड़ै गइन् ।
लक्ष्मण् लाइ बुझाइ खुश् गरुँ भनी खुप् बिन्ति गर्दी भइन् ॥९६॥
लक्ष्मण सुग्रिवको भयो जब त भेट् सुग्रीव् चरणमा पऱ्या ।
लक्ष्मणले पनि ताहिं सुग्रिवजिको सातो कुराले हऱ्या ॥
वाली झैं हुन मन् छ की भनि जसै लक्ष्मण्जिले बात् गऱ्या ।
लक्ष्मण्लाइ बुझाउनाकन तहाँ जल्दी हनूमान् सऱ्या ॥९७॥
लक्ष्मण्जी पनि कामले बुझि गया बात्चित् खुशीका गरी ।
फिर्नाको मतलब् गऱ्या प्रभु थिया जाहाँ जगन्नाथ् हरि ॥
लक्ष्मण्का सँग लागि सैन्य पनि ली सुग्रीव खुश् भै गया ।
जाहाँ श्रीरघुनाथ् थिया तहिं सबै दाखिल् क्षणैमा भया ॥९८॥

अंगद को आज्ञा दी कि जाओ और सुग्रीव को मेरे आने की सूचना दे दो । ९४ अंगद ने जाकर जब सुग्रीव को यह सूचना दी तो सुग्रीव ने भी तुरन्त जाकर उन्हें लिवा लाने की आज्ञा दी । सुग्रीव ने अंगद से कहा कि हनुमान को संग लेकर जाओ और लक्ष्मण के चरणों में पड़कर समझा-बुझाकर तथा उनके क्रोध को शान्त करके उन्हें ले आओ । ९५ सुग्रीव के आदेशानुसार अंगद जाकर लक्ष्मण के चरणों में गिरा और उन्हें अपनी बाहों में समेटकर प्रसन्न करके ले आया । सुग्रीव का आदेश सुनकर तारा भी वहाँ आ गई । लक्ष्मण जी को समझाकर प्रसन्न करने के उद्देश्य से वह विनती करने लगी । ९६ जब लक्ष्मण और सुग्रीव की भेंट हुई तब सुग्रीव तुरन्त उनके चरणों में गिर पड़े । लक्ष्मण ने भी अपनी बातों से सुग्रीव के होश ठिकाने कर दिये । जैसे ही लक्ष्मण ने कहा कि कदाचित् तुम्हें भी बालि की तरह मरने की इच्छा है तो उन्हें मनाने के लिए हनुमान आगे बढ़े । ९७ लक्ष्मण जी भी इन सब कार्यो से सन्तुष्ट हो गए और प्रसन्नतापूर्वक वातचीतकर प्रभु के पास लौटने की उन्होने इच्छा की । साथ ही सुग्रीव भी अपनी सेना सहित अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक,

देख्या श्री रघुनाथलाइ र परै रथ् देखि उत्रेर फेर् ।
लक्ष्मण् सुग्रिव पाउमा परि गया लागेन एक् छीन वेर् ॥
राम्ले सुग्रिवलाइ मित्र! भनि खुप् आलिङ्गनादी गरी ।
सोधपुछ् गर्नुभयो वहुत् खुशि हुँदै आफैं अगाडी सरी ॥९९॥
लाग्या सुग्रिव बिन्ति गर्न रघुनाथ् ! मैले त सेना पनि ।
ल्यायाँ वीर्हरू छन् अनेक् तरहका छन् इन्द्र तुल्यै पनि ॥
ई सब् स्वामितका निमित्त खुशि भै प्राणै दिन्याछन् जसो ।
हूकूम् हुन्छ हवस् यहाँ हजुरको गर्छन् ति ऐले तसो॥१००॥
खूशी भै रघुनाथको हुकुम भो हर्षाश्रुधारा गरी ।
हे सुग्रीव सखे ! इ वानरहरू जाऊन् दिशा दश् भरी ॥
जाहाँ छन् ति सिता तहीं पुगि खबर् ल्याऊन् भनी रामको ।
हूकूम् पाइ पठाइ वानरहरू उर्दी दिया कामको॥१०१॥
जाऊ वीर्हरु सब् दिशा दशविषे सीताजि मिल्छिन् जहाँ ।
पत्ता लाइ सिताजिको खवर ली सब् वीर आऊ यहाँ ॥
मैन्हा दीन विताइ एक् रति खवर् केही नपाई त जो ।
ढील् गर्न्या तसलाइ ता म सहजै मान्र्याछु मन्र्याछ त्यो ॥०२॥

जहाँ श्रीरघुनाथ थे, वहाँ तत्क्षण पहुँच गए। ९८ श्रीरघुनाथ को देखते ही, दूर ही से रथ पर से उतरकर लक्ष्मण और सुग्रीव को राम के चरणों में पहुँचने में किंचित्मात्र भी विलम्ब नहीं हुआ। राम ने सुग्रीव को मित्रकहकर आलिंगन किया और अत्यन्त प्रसन्न होकर स्वयं आगे बढ़कर वे पूछ-ताछ करने लगे। ९९ सुग्रीव विनती करने लगे, हे रघुनाथ! मैं तो अपनी सेना भी साथ लेकर आया हूँ जिसमें इन्द्र के समान अनेक वीर हैं। ये सभी अपने स्वामी के निमित्त अपने प्राण न्यौछावर करने को तत्पर हैं। जैसी आपकी आज्ञा होगी वैसा ही किया जायगा। १०० प्रसन्नता से हर्षाश्रु की धारा प्रवाहित करते हुए श्रीरघुनाथ ने आज्ञा दी, हे सुग्रीव सखे ! ये वानर चारों दिशाओं की ओर चले जायें और जहाँ सीता हों वहाँ पहुँचकर उनका समाचार ले आवें। राम का यह आदेश पाकर (सुग्रीव ने) सब वानरों को कार्य-विवरण समझाकर उन्हें चारों दिशाओं की ओर भेज दिया। १०१ जाते समय सुग्रीव ने सब वानरों को आज्ञा दी कि हे वीरो ! सब दिशाओं की ओर जाओ— जहाँ भी सीता जी हों, पता लगा कर उनकी खबर लेकर पुनः लौट आओ। महीना भर के अन्दर पता लगाने में जो ढिलाई करेगा उसे मैं तुरन्त मार डालूँगा वह बच नहीं पायेगा। १०२ इस प्रकार शीघ्रता से आदेश देकर अन्य

यस्तो जल्दि हुकूम् गरी अरु दिशा बानर् पठाया अवर् ।
दक्षिण् तीर त खुप् बड़ा बिरहरू छानी पठाया जबर् ।।
अङ्गद्लाइ र जाम्बवान् र हनुमान् वीर् नल् सुषेण् फेर् शरभ् ।
मैंद द्वीविद आठ् पठाइ प्रभुका पास्मारह्याएक्फगत्।।१०३।।

हूकूम् पाइ इ आठ वीर्हरु पनी झट् जान लाग्या जसै ।
हात्मा औंठि लियेर एक् हुकुम भो राम्चन्द्रजी को तसै ।।
जाऊ काम् पनि साधि आउ हनुमान् ली जाउ औंठी पनि ।
मेरो नाम् यहि औंठिमा छर दियाँ सीताजि चिन्लिन् भनी।।४।।
यो काम् सिद्ध गराउन्या त तिमिछौ तिम्रो छ यो बल् भनी ।
चीन्याको छु तबै त भन्छु म शुभै हून्याछ रस्ता पनि ।।
येती श्रीरघुनाथको पनि हुकूम् पाया र औंठी लिया ।
खूशी भै हनुमानले प्रभुजिमा सम्पूर्ण तन्मन् दिया।।१०५।
अंगद् वीर् हनुमान्हरू हुकुमले दक्षिण् दिशामा गया ।
सर्वत्रै पृथिवी ढुँडी ढुंडि सबै घुम्दै ति जाँदा भया ।।
एक् दिन् विन्ध्य गिरीविषे वनमहाँ देख्या र राक्षस् जसै ।
रावण् हो कि भनी मुठी कसि कसी मार्‍या कसैले तसै।।१०६।।

दिशाओं की ओर वानरों को भेज दिया, किन्तु दक्षिण दिशा की ओर महाबली और चुने हुए अत्यन्त पराक्रमी वानरों को भेजा। अंगद, जाम्बवन्त, हनुमान, नल, सुषेण, शरभ, मैन्द और द्विविद नामक आठों वानरों को भेजकर केवल सुग्रीव अकेला ही प्रभु के पास रहा। १०३ सुग्रीव की आज्ञा लेकर जैसे ही ये आठों वीर जाने लगे, श्रीरामचन्द्रजी हाथ में एक अँगूठी लेकर कहने लगे— जाओ, काम में सफल होकर आओ। हनुमान ! यह अँगूठी लो। इसमें मेरा नाम अंकित है, इसे सीताजी सहज ही पहचान लेंगी इसीलिए दे रहा हूँ। १०४ यह मैं भली प्रकार जानता हूँ कि इस कार्य में सफलता प्राप्त करनेवाले तुम ही हो, क्योंकि तुममें वह शक्ति निहित है। इसीलिए मैं कहता हूँ कि मार्ग में भी सब प्रकार से शुभ ही होगा। श्रीरघुनाथ की यह आज्ञा पाकर हनुमान ने प्रसन्न होकर प्रभु से वह अँगूठी ले ली और सम्पूर्ण तन-मन से स्वयं को प्रभु की सेवा में अर्पित कर दिया। १०५ अंगद और वीर हनुमान प्रभु की आज्ञानुसार दक्षिण दिशा की ओर चले गए। पृथ्वी पर चारों ओर ढूँढ़ते हुए जा रहे थे, तभी एक दिन विन्ध्यपर्वत के बीचोबीच वन में एक राक्षस को देखा और उसे रावण समझकर सब ने उस पर मुष्टिका (घूँसे) से प्रहार किया। १०६ परन्तु वह रावण नहीं था यह जानकर

रावण् होइन यो त जाउँ भनी फेर् अर्का वनैमा गई ।
ढुँढथ्या प्यास वढ्यो र जल् पनिढुँडी हिंड्थ्या ति आकुल् भई ।।
गूफा देखि त प्वाँख् चिसा गरिगरी हाँस् निस्किँदादेखि तेस् ।
गूफा भित्र पस्या सबै विरहरू देख्या बहुत् बस्ति बेस्।।७।।
ठण्डा जल् सितका तलाउ पनि धेर् सब् बृक्ष फल्फूल् भरी ।
धेर् छन् घर् घरमा छ चीज् पनि अनेक हीरा ज्वाहर् धरी ।।
गुल्जार् देख्नु भन्या मनुष्यहरु ता एक् देख्नु नाहीं कहीं ।
एक् योगीनि स्वयंप्रभाकन जहाँ ध्यान् गर्दि देख्यातहीं।।८।।
सोधिन् योगिनिले प्रणाम् तब गऱ्या कुन् काम आयौ यहाँ ।
क्या मन्सुब् छ बताउ फेर् अब उपर् जानू छ इच्छा जहाँ ।।
यस्ता योगिनिका वचन् सुनि तहाँ बोल्या हनूमानले ।
आयौं आज यहाँ सबै यति जना केवल् जलै खानले ।।९।।
काम् यै हो यहि काम गर्नुछ भनी विस्तार् सुनाया जसै ।
साह्रै खुश् हनुमानका वचनले हूँदी भइन् ती तसै ।।
बोलिन् फल्फुल खाउ जल् पनि पिई फर्केर आऊ यहाँ ।
मेरो नाम बताइ आज त म ता जान्छू प्रभू छन् जहाँ।।१०।।

अन्य वन में जाकर खोज करने लगे । खोज करते-करते जब वे प्यासे हुए तो अत्यन्त आकुल होकर जल की खोज करने लगे । इतने में अचानक एक गुफा से हंसों को अपने पर भिगो-भिगोकर बाहर निकलते देखा । अतः उसी गुफा में समस्त वीरों सहित प्रवेश किया तो वहाँ एक अत्यन्त उत्तम बस्ती देखी । १०७ उन्होंने देखा कि वहाँ पर शीतल जल वाले तालाव के चारों ओर वृक्ष हैं, जो फल-फूलों से लदे हुए हैं । अनेकों घर भी हैं जिनमें तमाम वस्तुएँ और हीरे-जवाहरात भरे पड़े हैं । परन्तु वहाँ न तो कोई चहल-पहल थी न कोई मनुष्य था; केवल एक योगिनी, जिसका नाम स्वयंप्रभा था, ध्यानमग्न बैठी थी । १०८ योगिनी ने जब उन वानरों से यह प्रश्न किया कि आप लोग किस काम से आए हैं, क्या इच्छा है और अब आगे कहाँ जाना है तब सब वानरों ने योगिनी को प्रणाम किया और योगिनी के ऐसे वचनों को सुनकर हनुमान ने कहा कि इस समय हम सब लोग केवल जल पीने के लिए आए हैं । १०९ जब हनुमान ने अपने आने का कारण तथा कार्य के विषय में सविस्तार कह सुनाया तो योगिनी अत्यन्त हर्षित हुई और उन्हें फलादि खाने को देकर बोली कि खा-पीकर जाओ और मेरा नाम बताकर लौट आओ । मैं भी जहाँ प्रभु है वहाँ जाऊँगी । ११० योगिनी के आदेशानुसार वे जलपान करके गए

यस्ता योगिनिका वचन् सुनि गगा जल्पान् गरी फेर् पनि ।
आया योगिनिले गरिन् सब कुरा रामका इ दूत् हुन् भनी ॥
हेमाकी सखि हूँ सखी गइगइन् उन्का वचन्ले यहाँ ।
धेरै वर्ष बसी प्रभू भजि लिंदा ऐले कृतार्थै-भयाँ ॥१११॥

भन्थिन् राम् अवतार् हुन्याछ हरिको हन्र्याछ रावण् सिता ।
खोज्न्या वानर आउनन् तहिं तलक् याहीं रहू तीमि ता ॥
वानर्को रघुनाथको गरि पुजा यै ब्रह्मलोक् पाउली ।
जान्छू आज म ता तिमी बसिरहू क्यैकाल् पछी आउली॥१२॥

यस्तो अर्ति दिई गइन् सङ्गिनिज्यू जुन् ब्रह्मलोक् हो वहाँ ।
नाच्तैमा शिव खुश्हुँदा अघि दिया यो स्थान बस्ती यहाँ ॥
पुत्री हुन् उ त बिश्वकर्मकि म हूँ गन्धर्व कन्या सबै ।
विस्तार् आज कह्याँ म जान्छु खुशि भै जाहाँ प्रभू छन् अबै॥११३॥

आँखा चिम्ल पुऱ्याइदिन्छु सहजै रस्ता विषे क्षण्महाँ ।
जाऊ तीमिहरू पनी भनि सहज् पौंचाइ रास्तामहाँ ॥
श्रीराम्चन्द्रजिथ्यैं ति योगिनि गइन् वानर् पुग्या रस्तिमा ।
पौंचिन् योगिनि रामको कुटि जहाँ थीयो उसै बस्तिमा ॥१४॥

और लौटकर आ गए। उन्हें राम के दूत जानकर योगिनी ने भी उनसे अच्छी तरह बात-चीत की और बताया कि मैं हेमा की सहेली स्वयंप्रभा हूँ। सहेली तो चली गई पर मैं उसी के वचन के प्रभाव से यहीं बैठी हूँ। यहीं रहकर कितने ही वर्षों से मैं प्रभु को भजते-भजते आज कृतार्थ हुई हूँ। १११ उसका कथन था कि श्रीराम का अवतार होगा, तब उनकी पत्नी सीता का रावण द्वारा हरण होगा, उस समय उन्हें ढूँढ़ता हुआ वानर यहाँ आएगा; तब तक तुम यहीं रहो। उस समय वानर तथा रघुनाथ की पूजा करके ब्रह्मलोक आओगी मैं जाती हूँ। तुम बैठी रहो कुछ समय के बाद आओगी। ११२ ऐसे उपदेश देकर मेरी सहेली उसी समय ब्रह्मलोक को चली गई। वहाँ उसके नृत्य से प्रसन्न होकर शिवजी ने उसे यह बस्ती दी थी। वह विश्वकर्मा की पुत्री है और मैं गन्धर्व-कन्या हूँ। इस प्रकार विस्तृत वर्णन कर स्वयंप्रभा ने प्रसन्नचित्त होकर जहाँ प्रभु हैं वहीं जाने की इच्छा प्रकट की। ११३ (फिर उसने कहा कि) आँखें बन्द करो; मैं सहज ही में तुम्हें रास्ते तक पहुचा दूँगी, यह कहकर उसने उन लोगों को रास्ते पर पहुँचा दिया। वह योगिनी श्रीरामचन्द्र के पास गई। वानर भी रास्ते पर पहुँच गए। राम की कुटी जिस बस्ती में थी योगिनी वहाँ पहुँच गई। ११४ उसने राम की स्तुति की और राम

राम्को स्तुति गरिन् र वर् दिनुभयो जाऊ र बद्रीमहाँ।
मेरो ध्यान् गरि यो बिताउ र शरीर् पाउली परम्धाम् तहाँ॥
जो तिम्रा मनमा छ त्यो सब पुगोस् यस्तो त वर् ली गइन्।
बद्रीमा गइ रामका वचनले संसार तर्दी भइन्॥११५॥

सीता खोज्न भनेर वानरहरू फिर्थ्या सबै वन्महाँ।
सीतालाइ नपाउँदै बितिगयो धेर्काल एकदिन् तहाँ॥
अंगद्ले अति शोक् गऱ्या अब सहज् मार्छन्, सबैको गयो—
प्यारो प्राण गरौं कसो अब मऱ्यौं बाँच्नू यहीं तक् भयो॥१६॥

सुग्रीव्ले त मलाइ मार्नु छ सहज् पाया निहूँ यो पनि।
मार्छन् निश्चय शत्रु जानि अहिले यो शत्रुको बीज् भनी॥
केवल् राम-कृपा हुँदा अघि बच्याँ ऐले त राम्ले पनि।
'दिन्छन् निश्चय मार्नलाइ मतलब् खोजेन सीता भनी॥१७॥

अंगद्का इ वचन् सुनीकन तहाँ क्वै बिन्ति यो पार्दछन्।
हे साहेब! यहीं बसौं यहिं बस्या कुन् पाठले मार्दछन्॥
अंगद्का अरु वानरादिहरुका सून्या र कूरा तहाँ।
बोल्या श्रीहनुमानले किन बहुत् छोटो गऱ्यौ बात् यहाँ॥१८॥

ने (प्रसन्न होकर) उसे वर दिया। उसे आज्ञा मिली कि बदरीनारायण धाम में जाकर मेरा ध्यान करो, तभी तुम्हें परमधाम प्राप्त होगा। "जो तुम्हारे मन में है वह सब तुम्हें प्राप्त हो", ऐसा वर प्राप्त कर बदरी-नारायण धाम में जाकर श्रीराम के ध्यान में मग्न हो स्वयंप्रभा संसार से तर गई। ११५ सीता की खोज करते हुए वन में घूमते-घूमते बानरों को बहुत समय बीता, पर सीता नहीं मिली तो एक दिन वहाँ अंगद ने अत्यन्त खेद प्रकट किया। अब तो हम सभी मारे जायेंगे, सबके प्रिय प्राणों की रक्षा किस प्रकार की जाये। अब तो लगता है कि बचने का समय यहीं तक है। ११६ सुग्रीव तो बहाना पाकर मुझे मार ही डालेगा, मुझे शत्रु का बीज समझकर सहज ही में समाप्त कर देगा, यह निश्चय जानो। पहले तो राम की कृपा से बचा था। अब तो राम भी सीता की खोज न करने का कारण बताकर निश्चय ही मुझे मार डालने का प्रोत्साहन देंगे। ११७ अंगद के इन बचनों को सुनकर वहाँ कुछ लोग यह विनय करते हैं, "हे श्रीमन्! यहीं रह जायँ। यहाँ रहने पर किस प्रकार मारेंगे। अंगद एवं अन्य वानरों की ऐसी बातें सुनकर हनुमान कहते हैं कि तुम लोग ऐसी तुच्छ कल्पना क्यों कर रहे हो? ११८ सुग्रीव के

सुग्रीव्का प्रिय छौ अवश्य भगवान् रामचन्द्रजीका पनि ।
साँचो भन्छु म बेस् कुरा हजुरमा यस्तो छ कारण् भनी ।।
भूभार् हर्न भनेर राम-अवतार् आदी पुरुष्को भयो ।
क़स्को सक् छ सिताजि हर्न नहिंता इच्छा प्रभूकैछयो ।।११९।।

मानिस् को अवतार् भयो प्रभुजिको सेवक् त वानर् भई ।
गर्छौं सेवन भक्तिले प्रभुजिको केवल् हुकूम्मा रही ।।
जान्याछौ पछि धाममा पनि सँगै यो जान मन्ले यहाँ ।
क्या गर्छौं मनमा कुतर्क हरिको रिस्छैन कस्सै महाँ।।१२०।।

यस्ता बात् हनुमानका सुनि बुझ्या अंगद् र खूशी भई ।
बिन्ध्याचल् गिरिका कुनाकुनिसमेत् सम्पूर्ण खोज्दै गई ।।
पौंच्या क्षीरसमुद्रका तिरमहाँ पर्वत् थियो एक् तहाँ ।
तेस्को नाम महेन्द्र हो नजिकमा देखिन्छ सागर् जहाँ।।२१।।

पृथ्वीमा न मिलिन् सितान जलमा जान्याछ बाटो कतै ।
खोजौं जाउँ भन्या सक्यौं पृथिवि सब् पायौंन सीता कसै ।।
फ़र्की जाउँ भन्या पनी अब सहज् मार्छन् त चाहीं यहीं ।
मर्नू आज निको भनेर तिरमा बंदर् बस्या सब् तहीं।।२२।।

तो तुम प्रिय हो ही, श्रीराम के भी अवश्य प्रिय हो । सत्य कहता हूँ, यह वड़ी उत्तम वात है । श्रीराम ने भूभार-हरण करने के लिए पुरुष के रूप में अवतार लिया है । किसकी शक्ति है जो सीता का हरण करे ? यह स्वयं प्रभु की ही इच्छा है । ११९ प्रभुजी ने मनुष्य के रूप में अवतार लिया है और वानर उनके सेवक वने हैं । उनकी आज्ञा का पालन करते हुए हम लोग प्रभु जी की सेवा भक्तिपूर्वक करेंगे । जिससे अन्त में परम-धाम को प्राप्त होंगे, यह भी मन में जान लो । मन में कुतर्क उत्पन्न करके क्या करोगे ? हरि का किसी के ऊपर क्रोध नहीं है । १२० हनुमान जी की वातों को सुन और समझकर अंगद प्रसन्न हुए और विन्ध्याचल पर्वत के कोने-कोने में सीताजी की खोज करने लगे । वे क्षीर-सागर के किनारे पहुँचे । वहाँ एक पर्वत था जिसका नाम महेन्द्र था । वहाँ से समुद्र अत्यन्त निकट दिखाई देता था । १२१ पृथ्वी पर सीता जी कहीं भी नहीं मिलीं तो सोचने लगे कि जल में ही जाने का मार्ग ढूँढ़ा जाये, क्योंकि सम्पूर्ण पृथ्वी पर न मिलने से लौट भी जायेंगे तो मारे ही जायेंगे । अतः मरना ही उत्तम है यह समझकर सव वानर किनारे पर वैठ गए । १२२ उस वन का निवासी एक वृद्ध गिद्ध जैसे ही वाहर निकला

सम्पाती अति युद्ध गृद्ध वनमा थीया ति निस्क्या जसै ।
हेऱ्या दृष्टि फिराइ तेस् तिरमहाँ देख्या ति वानर् तसै ॥
बोल्या वाक्य पनी म भर्छु अव पेट् पायाँ अहारा भनी ।
अंगद् वीर्हरुले सुन्या र इ वचन् साह्रै डराया पनि॥१२३॥
लाग्या भन्न सबै ति वानरहरू आयेछ हाम्रो त काल् ।
मर्छौं आज अवश्य मार्छ यसले यो गृद्धको हेर चाल् ॥
क्याबात् भाग्य जटायुको प्रभुजिको प्यारो हुन्या काम् गरी ।
ठाकुर्लाई रिझाइ पार् पनि गया संसार सागर तरी॥१२४॥
व्यर्थ हामि त गृद्धका मुखविषे सब् पर्न आयौं यहाँ ।
येती वानरका वचन् सुनि तसै सम्पाति बोल्या तहाँ ॥
हे वीर् हो नडराउ आज तिमिले प्यारो सुनायौ कुरा ।
मेरै भाइ जटायु हो कहु खवर् तेस्का त सप्पै कुरा॥२५॥
अङ्गद् वीर्हरुलाइ निर्भय दिई येती भन्याथ्या जसै ।
सब् वृत्तान्त बताइ अङ्गदजिले विस्तार् सुनाया तसै ॥
सम्पाती तहिं भन्दछन् मकन लौ लैजाउ सागर् महाँ ।
दिन्छू आज जटायुलाइ जलदान् चाँडो म ऐले तहाँ ॥१२६॥
सीताको म बताउँला सब खबर् स्नान् अञ्जलीदान् गरी ।
ई बात् सूनि उचालि झट् लगिदिया सम्पातिले स्नान् गरी ॥

और उसने तट की ओर दृष्टि डाली तो उसे वानर दृष्टि में आए । उन्हे देखते ही वह बोला, मुझे आहार मिला है; अब पेट भर लूँगा । अंगद आदि वीर उसके इन वचनों को सुनकर अत्यन्त भयभीत हुए । १२३ वे सब बोले कि अब तो काल निकट ही आ पहुँचा है । आज तो अवश्य ही मरेंगे । इस गिद्ध की चाल देखो ! यह आज अवश्य ही हम लोगों को खा डालेगा । जटायु भी कैसा भाग्यशाली था जो प्रभु का प्रिय कर्म करके उन्हें सतुष्ट करके ससार-सागर को पार कर गया । १२४ वानर परस्पर कहने लगे कि हम व्यर्थ ही गिद्ध के मुँह के समक्ष आए है । वानरों के इन वचनों को सुनकर सम्पाति ने कहा— हे वीरो ! तुम वीर हो, भय न करो । आज तुम लोगों ने बड़ी अच्छी बात सुनाई है; जटायु मेरा ही भाई है । उसके बारे में सविस्तार सब समाचार बताओ । १२५ तब अंगद ने उसे सब वृत्तांत सविस्तार कह सुनाया । उसी समय सम्पाति बोला, मुझे शीघ्र सागर में ले चलो, आज मैं अपने भाई जटायु को जलदान दूँगा । १२६ स्नान एवं अंजलि-दान कर मैं सीताजी के बारे में सब समाचार बताऊँगा । इस बात को सुनकर वानर तुरन्त

दीया अञ्जलिदान् जसै फिरि उहीं ल्यायेर राखीदिया।
सम्पाती खुशि भै सबै कहिदिया आपत्तिदेख्तै थिया॥१२७॥
हें वीर् हो! म त गृद्ध हूँ र म सिता देख्छू नजर्ले पनि।
याहीं छन् यहि भेष् छ येति सँग छन् यस्तो छ चाला भनी॥
भन्छू सब् तिमिलाइ चार सय कोश् जो कुद्न सक्छौ यहाँ।
सो लङ्का पनि पुग्दछौ उति कुद्या पौंचिन्छ लङ्कामहाँ॥१२८॥
लङ्कामा ति सिताजि छन् तहिं गया मिल्छिन् सिताजी वहाँ।
गाह्रो चार् सय कोश कद्न छ तहीं जाऊ न जाऊ तहाँ॥
रावण्ले लगि भित्र गुप्ति वनमा राख्याकि छन् बेश् गरी।
पौंची भेट् गर जान सक्छ तिमिमा को यो समुद्रै तरी॥१२९॥
अश्शोक्को वनभित्र वृक्ष छ असल एक् शिशपाको तहीं।
सीता छन् तहिं भेट् हुन्याछतहिंलौ जायो गऊ काल् यहीं॥
क्यारूँ रावणलाइ मार्न म सहज् मार्न्या थियाँ हो र को।
साक्षात् सूर्यजिका कठोर् किरणले प्वांखै डढ्यासब् र पो॥१३०॥
जाऊ चार् सय कोश कुद्न सकन्या कुन् वीर् छ सागर् महाँ।
सीताको समचार् खबर् बुझि सहज् फर्केर आऊ यहाँ॥

सम्पाति को उठाकर ले गये और जैसे ही वह अंजलि-दान कर चुका, वैसे ही उसको पुनः वही लाकर रख दिया। सम्पाति ने प्रसन्न होकर सब कुछ कह सुनाया। १२७ हे वीरो! मैं तो गिद्ध हूँ अतः मै अपनी आंखों से यहीं से सीताजी को देख रहा हूँ कि वह किस स्थान पर हैं, किस रूप में हैं किनके संग में हैं और कैसी युक्ति में (फसी) हैं। मैं तुम्हें सब बतलाता हूँ। यहाँ से जो चार सौ कोस छलांग भर सकेगा, वह लंका पहुँच जायेगा। १२८ सीता जी लंका में ही हैं। वही जाने पर मिल जायेंगी। चार सौ कोस कूदना कठिन है। तब भी किसी प्रकार वहाँ अवश्य जाओ। सीताजी को रावण ने ले जाकर लंका के अन्दर एक गुप्त वन में रखा है। समुद्र पार कर तुममें से जो वहाँ जा सकता हो जाये, और भेंट करे। १२९ अशोक वन के अन्दर एक अत्यन्त उत्तम शिशपा का वृक्ष है। सीता जी वहीं हैं, वहीं भेंट होगी अतः चले जाओ। क्या बतायें समय निकल गया। मैं रावण को सहज ही मार सकता था, परन्तु साक्षात् सूर्य की तीव्र किरणों से (मेरे पंख) जल गये हैं और इस कारण लाचार होना पड़ा। १३० चार सौ कोस कूद सकनेवाला वीर कौन है? वह चला जाये और सीता का समाचार आदि पता लगाकर लौट आये। यह समाचार बताकर, पुनः

यो सम्चार बताइ फेंर् खुशि भई आफ्नू हवाल् सब् कह्या।
जुन् रीत्ले अघिप्वाँख्डढ्यार विपती पाई अनेक्ताप् सह्या॥३१॥
सम्पाती र जटायु भाइ दुइ हूँ हाम्रो कती बल् भनी।
बल् जान्नाकन दूइ भाइ उडि गैं श्रीसूर्यबिम्बै मनि॥
पुग्दामा ति जटायुले त अति ताप् मान्या र छोप्याँ जसै।
बाँच्या भाइ जटायु क्यारुँ म गिन्याँ मेरा डढ्या प्वाँख् तसै॥३२॥
उच्चादेखि गिन्याँ म विन्ध्यगिरिमा तीन् दिन् त मूर्छा भयाँ।
ब्यूत्याँथ्याँ जब चन्द्रमा मुनि मिल्या तिन्का नजीक्मा गयाँ॥
सोध्या ती ऋषिले र सब् जब भन्याँ आफ्ना विपत्का गति।
मेरो चित्त बुझाउनाकन भन्या सब् दुःख हुन्छन् जति॥३३॥
यस्तो हुन्छ विपत्ति गर्भ रहँदा यो हुन्छ यौवन्महाँ।
यस्तो हुन्छ बुढो हुँदा त भनुँ क्या थाहै छ सब् मन्महाँ॥
जाहाँ देह बन्यो र दुःख छ भनी पर्दैन भन्नू पनि।
जाहाँ देह छ ताहिं दुःख छ चिन्ह्या साँचो कुरा हो भनी॥३४॥
तस्मात् दुःख नमान देह छ त रोग् दुःखादि सारा सही।
श्रीराम्को अवतार् हुन्या बखततक् यस्सै जगामा रही॥

प्रसन्न होते हुए अपना भी सब हाल वताया कि किस प्रकार उसके पंख जल गये और उसने विपत्ति में पड़कर अनेकों कष्ट सहे। १३१ सम्पाति और जटायु हम दो भाई हैं। हममें कितना वल है यह जानने के लिए हम दोनों भाई सूर्यमण्डल के समीप पहुँचे थे। वहाँ पहुँचने पर जटायु को जैसे ही अत्यन्त ताप का अनुभव हुआ उसने उड़ना छोड़ दिया। जटायु तो वच गया परन्तु मैं (उड़ता ही गया।) क्या करूँ मेरे पंख जल गये और मैं गिर गया। १३२ मैं इतने ऊँचे से विन्ध्यगिरि में गिरा कि तीन दिन तक मूर्छित पड़ा रहा। जैसे ही मुझे चेतना आयी मुझे चन्द्रमा मुनि मिले और मैं उनके निकट गया। उन ऋषि के पूछने पर मैंने अपनी सारी विपत्ति कह सुनाई। मेरे चित्त को सान्त्वना देने के लिए उन्होंने सभी दुखों के विषय में वताया। १३३ (उन्होंने कहा) गर्व करने से ऐसी ही विपत्ति प्राप्त होती है और यौवन के बाद वृद्ध होने पर तो कैसा दुख होता है क्या कहूँ; सब मन में ज्ञात ही है। जहाँ देह का सृजन हुआ वहाँ दुःख की प्राप्ति होती ही है; जहाँ देह है वहीं दुःख है, इसे ही सत्य जानो। १३४ इसीलिए दुःख न मानो, देह है तो रोग है और दुःख भी है। श्रीराम के अवतार होने के समय तक तुम इसी स्थान पर रहो और कुछ काल व्यतीत करो। राम का अवतार होगा

केही काल बिताउ राम अवतार् होला र सीता पनि ।
हर्ला रावणले र तेस् बखतमा सीताजि खोज्नै भनी ।।३५।।
वीर् बानर्हरु आउनन् ति सँग भेट् होला उ वेला महाँ ।
सीताको समचार् जसै त कहुला प्वाँख् उम्रनन् फेर् तहाँ ।।
भन्थ्या सोहि कुरा सबै पुगि गयो हेर् प्वाँख उम्न्या भनी ।
प्वाँख् देखाइ बिदा भई उडिगया जाऊ तिमी लौ भनी।।१३६।।

अङ्गद् वीर्हरु खुश् भया अब मिलिन् सीता भनी सब् जसै ।
लाग्या गम्न समुद्रलाइ र गमन् गर्नै नसक्नू कसै ।।
फेरी ताप् मनमा पऱ्यो र अति शोक् अङ्गद्जि गर्दा भया ।
अंगद्लाइ बुझाउनाकन अघी श्रीजाम्बवान्जी गया।।३७।।

साहेव् ! शोक् रतिभर् कदापि नहवस् जाउन् हनूमान् भनी ।
अङ्गद्लाइ बुझाइ झट्ट हनुमान्- जीका नजीक्मा पनि ।।
पौंची बेस् स्तुति गर्दछन् किन यहाँ चूप्चाप् भई दूर् रह्यौ ।
राम्का काम निमित्त मात्र हनुमान्! योजन्म लींदा भयौ ।।३८।।

क्या वर्णन् बलको गरूँ जब तिमी जन्म्यौ उसै फल् भनी ।
पाक्याको फल ठानि सूर्यकन ता हात्ले म टिप्छू भनी ।।

और सीता का भी रावण द्वारा हरण होगा। उसी समय सीता जी को खोजते हुए वीर वानर आदि आयेंगे। १३५ उन लोगों से तुम्हारी भेंट होगी और उसी समय जब तुम सीता जी के समाचार सुनाओगे, तुम्हारे पंख फिर से उग आयेंगे। उनकी कही गयी वही सब बातें अब पूर्ण हो रही हैं। अपने उगे हुए पंखों को दिखाकर संपाति ने विदाई ली और सबसे जाने की इच्छा प्रकट करके उड़ गया। १३६ अंगद आदि वीरों को जैसे ही यह मालूम हुआ कि अब सीता मिल गयीं, उन्हें हार्दिक प्रसन्नता हुई। वे समुद्रों को गिनने लगे और पार जा सकने का कोई मार्ग सोचने लगे; किन्तु उन्हें कोई मार्ग नहीं सूझा और वे मन में चिन्तित होने लगे। अंगद गहरे शोक में डूब गये। अंगद को सान्त्वना देने के लिए श्रीजाम्ववन्त आगे बढ़े। १३७ श्रीमान्! आप किंचित्मात्र भी शोक न करें, हनुमान चला जायेगा। अंगद को समझाकर हनुमान के निकट पहुँचे और उनकी उत्तम प्रशंसा करने लगे। तुमने ये जन्म राम के लिए ही लिया है और तुम ही यहाँ चुपचाप दूर बैठे हो। १३८ तुम्हारे बल के बारे में मैं क्या वर्णन करूँ। जब तुम जन्मे थे, सूर्य को पका हुआ फल समझकर उसे हाथ से पकड़ने के लिए तुमने आकाश की ओर छलाँग

आकाश्मा जब ता कुद्यौ दुइ हजार् कोश्तक् पुगी फेर् झर्‍यौ ।
यस्ता बालकमै थियौ किन यहाँ कोश्चार् सयैमा डर्‍यौ॥३९॥

सून्या सब् हनुमानले स्तुति तहाँ जो जाम्बवान्ले गर्‍या ।
साह्रै खुश् हनुमान् भया र खुशिले खुप् गर्जना पो गर्‍या ॥
पर्वत् तुल्य बडो स्वरूप् धरि वचन् बोल्या म सागर् तरी ।
लङ्का भस्म गराइ रावण समेत् सब् सैन्य चूर्णै गरी ॥४०॥

सीता लीकन आउँछू कि रिसले झुन्ड्याइ रावण् पनि ।
ज्यूंदै दाखिल गर्छु राम्चरणमा खूनी हजूर्को भनी ॥
की ता छन् ति सिता यहाँ भनि खवर् मात्रै सिताको लिई ।
फिर्छू श्रीरघुनाथका चरणमा तन् मन् वचन् सब्दिई॥४१॥

श्रीराम्का चरणारविन्द मनमा धर्दा र उठ्ता जसै ।
बोल्या श्रीहनुमानले यति कुरा श्री जाम्बवान्ले तसै ॥
भन्छन् श्रीहनुमानलाइ तिमिले भेट् मात्र ऐले गरी ।
फर्की आउ सिताजिको खबर ली एक्लै नलड्न्या गरी॥४२॥

स्वामित्का सँग लागि गैकन पछी सक्भर् लडौंला भनी ।
भन्दा खूशि भई बिदा भइलिया झट् कुद्न मन् सुब् पनि ॥

मारी थी । उस समय तुम दो हजार कोस पहुँचकर पुनः लौटे थे । जब तुम बाल्यावस्था में ही ऐसे थे तो यहाँ केवल चार सौ कोस के लिए क्यों डर कर बैठे हो । १३९ जाम्बवन्त की इन सब बातों को हनुमान ने सुना और अत्यन्त प्रसन्न हुए। प्रसन्नता के मारे वे जोर-शोर से गर्जन करने लगे । इसके बाद वे पर्वत तुल्य विराट रूप धारण करके बोले कि मैं सागर पार कर लंका को भस्म करने के बाद रावण सहित उनकी सेनाओं को समाप्त कर दूँगा । १४० सीताजी को ले आऊँगा और रावण को लटकाकर जीवित हत्यारे के रूप में श्रीराम के चरणों में उपस्थित करूँगा ! नहीं तो सीताजी के बारे में सूचना मिलते ही श्रीरघुनाथ के चरणों में लौट आऊँगा और अपना तन-मन-बचन सब (उनके लिए) अर्पण करूँगा । १४१ श्रीराम के चरणारविन्दु मन में धारण कर हनुमान ने जैसे ही यह इच्छा प्रगट की वैसे ही जाम्बवन्त ने श्रीहनुमान से कहा कि हनुमान, अभी केवल भेंट करके सीताजी की सूचना लेकर लौट आओ; अकेले लड़ने का झंझट मत मोल लो । १४२ स्वामी के संग जाकर बाद में हम लोग यथासाध्य लड़ेंगे । ऐसी बात सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हो हनुमान ने विदाई ली और तुरन्त कूदने की मन में ठानी । लाल मुख पीला शरीर धारण किये हुए

लाल्मुख् पीत शरीर् गरी गिरि उपर् जल्दी हनूमान् गया।
सब् प्राणीहरुले तहाँ ति हनुमान्- जीलाइ हेर्दा भया ॥१४३॥

॥ किष्किन्धाकाण्ड समाप्त ॥

हनुमान शीघ्र ही पर्वत के ऊपर चले गये और सब प्राणी हनुमान को देखने लगे। १४३

किष्किन्धाकाण्ड समाप्त

सुन्दर काण्ड

तर्छू क्षार समुद्र आज सहजै भन्न्या इरादा धरी।
श्रीराम्का चरणारविन्द मनले अत्यन्त चिन्तन् गरी॥
भन्छन् वीर्हरुलाइ ताहिं हनुमान् हे वीर हो ! पार् तरी।
सीताजीकन भेट्तछू म अहिले जान्छू बडो वेग् धरी ॥१॥
पापी जन् पनि रामका स्मरणले संसार पार् तर्छन् ता।
राम्कै काम निमित्त औंठि सँग ली जान्छू दुतै हूँ म ता॥
क्या डर् क्षार समुद्र तर्न सहजै पौंचन्छु लंका भनी।
चारै पाउ जमिन् विषे धसि कुद्या हेर्दै तमसा पनि ॥२॥

दक्षिण् तरफ् मुख गरीकन कुद्न बस्ता।
ऊपर् नजर् दि अघिका दुइ पाउ धस्ता॥
सोझो गराइकन घाँटि कुद्या जसै ता।
वायू सरी हुन गया हनुमान् तसै ता ॥३॥

उसी दिन क्षीरसागर पार कर लेने की कामना से उन्होंने मन ही मन श्रीराम के चरणारविन्दों का ध्यान कर अपने वीरों से कहा—हे वीरो ! मैं सागर के पार पहुँच कर बड़ी तेज़ी से जाकर सीताजी से भेट करूँगा। १ पापी जन भी केवल राम का स्मरण करके ही संसार-सागर पार कर लेते हैं। राम के ही कार्य से यह अँगूठी लेकर जाऊँगा। मैं तो उनका ही दूत हूँ, डर किस बात का है ? क्षीरसागर पार कर शीघ्र ही लंका पहुँचूँगा। ऐसा कह कर चारों पाँव-हाथ धरती पर जमा कर कौतुक के साथ कूदे। २ हनुमान ने दक्षिण की ओर मुँह करके कूदने के लिए ऊपर दृष्टि उठायी और आगे के दोनों हाथों को जमा कर जैसे ही गर्दन उठायी

आकाश् मार्ग गरी कुद्या र हनुमान् उड्थ्या ति आकाशमा ।
सीताजीकन भेटि फर्किकन फेर् रामचन्द्रका पासमा ।।
पुग्न्या अक्कल वल् छ छैन इनको बूझौं सबै वल् भनी ।
इन्द्रादीहरुले खटाइ सुरसा जल्दी पठाया पनि ।।४।।

जल्दी गै सुरसा अघिल्तिर वसिन् साम्ने हनूमानका ।
क्या भन्छन् हनुमान् भनेर खुशि भै कूरा गरिन् खानका ।।
भोकी धेर् दिनकी म खोजिहिँडथ्याँ क्या खाँ अहारा भनी ।
पायाँ वल्ल यहाँ मिल्यौ तिमि त एक् साह्रै भयाँ खुश् पनि ।।५।।

आऊ लौ पस मूखमा जव भनिन् बोल्या हनूमान् तसै ।
भन्छन् आज सिता नभेटिकन ता पस्तीनँ मुखमा कसै ।।
सीता भेटि म फर्कुला र रघुनाथ् ज्यूका हजुर्‌ता गई ।
विस्तार् विन्ति गरेर आइ पसुँला तिम्रो अहारा भई ।।६।।

यस्ता बात् सुनि भन्दछिन् ति सुरसा मेरा मुखैमा पसी ।
निस्की जाउ नहीं भन्या म वलले पक्रेर दाह्रा धसी ।।
मार्छू येति भनिन् र लौ तव यहाँ मुख् वाउ चाँडो भनी ।
चार् कोशको त शरीर् गरीकन वस्या आफू हनूमान् पनि ।।७।।

और छलाँग मारी, वैसे ही वायु के समान उड़ चले । ३ जब हनुमान आकाश की ओर कूदकर वायु-मण्डल में उड़े तो इन्द्रादि ने यह जानना चाहा कि हनुमान में सीता से भेंट करके लौट कर श्रीरामचन्द्रजी के पास पुनः पहुँचने का बुद्धि-वल है अथवा नहीं; और यही जानने के उद्देश्य से उन्होंने सुरसा को तुरन्त वहाँ भेजा । ४ सुरसा शीघ्रता से जाकर हनुमान के समक्ष बैठ गयी और यह जानने के लिए कि हनुमान क्या कहता है, इस प्रकार वोली कि मैं तुम्हें खाने आयी हूँ । कई दिनों की भूखी हूँ । क्या आहार करूँ, इसी खोज में भटक रही थी । आज तुम्हें पाकर मैं अत्यधिक प्रसन्न हूँ । ५ सुरसा ने कहा, "तुम आओ और मेरे मुँह में प्रवेश करो" । उसके इन वचनों को सुनकर हनुमान ने कहा कि आज मैं सीताजी की खोज में हूँ, उनसे भेंट किये विना मैं कदापि तुम्हारे मुँह में प्रवेश नहीं करूँगा । सीताजी से मिलकर मैं लौटूंगा और श्रीरामजी से सविस्तार विनती करके पुनः लौटकर तुम्हारा आहार वनकर प्रवेश करूँगा । ६ हनुमान की बात सुनकर सुरसा कहती है कि मेरे मुँह में प्रवेश करके निकल जाओ, नहीं तो मैं वलपूर्वक पकड़कर दाढ में फाँसकर मार डालूँगी । इतना कहने पर हनुमान ने उसे मुँह खोलने को कहा और तुरन्त अपना शरीर चार कोस का वनाकर

चार् कोशका हनुमान देखि सुरसा बिस् कोशको मुख् गरिन् ।
चालीस्कोश्हनुमान्भयारअसिकोश मुख् फेरि जल्दी धरिन् ।।
जल्दी फेर् हनुमानले छ बिस कोश- को रूप गराई बस्या ।
फेर् दूई सय कोश मुख् जब गरिन् अंगुष्ठ झैं भै पस्या ।।८।।

निस्क्या जल्दि र भन्दछन् ति हनुमान हे देवि ! मुखमा पसी ।
निस्क्याँ जान्छु म ता अवश्य अब ता बन्दैन् काम् ता बसी ।।
अक्कल् बल्सितका वचन् जब सुनिन् यस्ता हनूमानका ।
आफ्नू सत्य कुरा तसै सब कहिन् छाडिन् कुरा खानका ।।९।।

सक्छौ काम् तिमि साधि आउ अनुमान् यो बल् छ तिम्रो भनी ।
चीन्ह्याँ भन्छु म इन्द्रका हजुरमा तिम्रो पराक्रम् पनि ।।
बल् बुझ्नै भनि इन्द्रका हुकुमले आयाकि ता हूँ भनी ।
खुश् भै स्वर्गविषे गइन् ति सुरसा कूद्या हनूमान् पनि ।।१०।।

जस्ले सागर नाम् धन्या मकन सो राजा सगर् जो गया ।
तिन्का वंशमहाँ विभूषण सरी श्रीराम राजा भया ।।
तिन्का काम निमित्त आज हनुमान् जान्छन् इ लङ्कामहाँ ।
मैनाक् पर्वत! निस्कि जाउ तिमि गै विश्राम् गराऊ तहाँ ।।११।।

बैठे । ७ चार कोस का हनुमान देखकर सुरसा ने अपने मुँह को बीस कोस का बनाया और तब हनुमान चालिस कोस का हुआ । सुरसा ने तत्क्षण ही अपना मुँह अस्सी कोस का बनाया हनुमान ने शीघ्रता से अपने को एक सौ बीस कोस का बना डाला और जब सुरसा ने दो सौ कोस का मुँह बनाया, वैसे ही अंगूठा-सदृश सूक्ष्म रूप धारणकर हनुमान ने उसके मुँह में प्रवेश किया । ८ सुरसा के मुँह में प्रवेश कर हनुमान कहते हैं कि हे देवी मैं मुँह में प्रवेश कर निकल आया हूँ । अब मैं जाता हूँ । अब जाता हूँ, यहाँ रहकर अवश्य ही कार्य में विलम्ब होगा । सुरसा ने जब हनुमान की ऐसी शक्ति तथा बुद्धिमत्ता देखी तो आहार करने की बात छोड़कर सब सत्य कह सुनाया । ९ हनुमान ! तुम अपने कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त कर आओगे । तुममें अपार शक्ति है, यह मैंने जान लिया । अब मैं इन्द्र को भी तुम्हारे पराक्रम के विषय में कह सुनाऊँगी । इन्द्र के आदेशानुसार मैं तुम्हारी परीक्षा लेने ही आयी थी । इसके बाद सुरसा प्रसन्न होकर स्वर्ग को चली गयी और हनुमान भी कूद पड़े । १० सागर ने कहा कि जिसने मुझे सागर के नाम से विभूषित किया है, उन राजा सगर के वंश में श्रीराम राजा हुए हैं और उन्ही के कार्य से आज हनुमान लंका जा रहे हैं, अतः हे मैनाक

थाक्या हुन् हनुमान् बिसाइ फलफूल् खाऊन् र जाउन् भनी ।
भन्दा सागरका वचन् सुनि तहाँ निस्क्या ति मैनाक् पनि ॥
अर्को एक मनुष्यको स्वरुप ली हात् जोरि विन्ती गर्‍या ।
आई फल्फुल् खाइ जाउ हनुमान् भन्दै अगाडी सर्‍या ॥१२॥

आज्ञा सागरको हुँदा चरणमा आयाँ म ऐले भनी ।
मैनाक्ले यति बिन्ति बात् जब गर्‍या वोल्या हनूमान् पनि ।
राम्को काम् नगरी बसेर कसरी खान्छू म जान्छू यसै ।
हात्ले छुन्छु म लौ भनेर खुशि भै छोयेर कूद्या तसै ॥१३॥

केही दुर् हनुमान् पुग्या पछि तहाँ एक् सिंहिका राक्षसी ।
छाया पक्रि उ जन्तु खैंचि बलले खान्थी जलैमा वसी ॥
छाया पक्रि उ तान्न लागि हनुमान् ज्यूको गती वन्द भो ।
कस्ले बन्द गर्‍यो गती भनि दिशा दश्मा तसै दृष्टिगो ॥१४॥

देख्या तल्तिर दृष्टि दीकन तहाँ जस्सै नजर्मा परी ।
एकै चोट् दुइ लात् दिया र सहजै घुस्नुक्क ताहीं मरी ॥
ताहाँ देखि कुदी गया र हनुमान् पौंच्या जसै तीरमा ।
लङ्कापूरि तहाँ त्रिकूट गिरिका देख्या उपर् शीरमा ॥१५॥

पर्वत ! प्रकट हो जाओ और जाकर विश्राम कराओ। ११ हनुमान थके होंगे, विश्राम कर लें। उन्हें फल-फूलादि दो, खाकर जायँ। इस प्रकार सागर के वचनों को सुनकर मैनाक भी प्रकट हो गये। वे एक अन्य मनुष्य के रूप में प्रकट होकर आगे बढ़े और इस प्रकार विनती की—"हे हनुमान, आओ, फल-फूल खाकर जाना। १२ सागर की आज्ञा पाकर मैं आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ"। यह कहकर मैनाक ने जब विनती की तो हनुमान ने भी कहा कि राम का कार्य सिद्ध किये विना मैं कैसे जलपान करूँ? मैं ऐसे ही जाता हूँ। केवल हाथ से स्पर्श करके ही चलता हूँ। इतना कहकर प्रसन्न होकर स्पर्श किया और कूद वे पड़े। १३ कुछ दूर चलकर हनुमान को सिंहिका नामक राक्षसी मिली, जो जल में ही रहकर अपनी शक्ति द्वारा जीव-जन्तुओं को खींच लेती थी और उसी से अपना आहार चलाती थी। उसने छाया देखकर ज्योंही हनुमान को खींचना चाहा त्योंही हनुमान की गति लुप्त हो गयी। किसने गति लुप्त कर दी ? —कहते हुए हनुमान ने दसों दिशाओं की ओर दृष्टिपात किया। १४ हनुमान ने जैसे ही नीचे की ओर देखा तो राक्षसी दृष्टिगत हुई; और उन्होंने दोनों लातों से एक साथ प्रहार किया। राक्षसी सहज ही में मृत्यु को प्राप्त हो गयी।

वरिपरि तहिं तीर्मा छन् भरी वृक्ष फल्फूल्।
जउन बनमहाँ धेर् गर्दछन् पक्षिले गुल्॥
भ्रमरहरु लताक फूलमा हल्लि हल्ली।
घुनुनु घुनुनु गर्दै हिंड्दछन् बल्लि बल्ली॥१६॥

नजर वरिपरीको जो छ शोभा नजर् भो।
त्रिकुट गिरि उपर्का पूरिमा फेर् नजर् गो॥
वरिपरि परखाल् छन् बीच-बीच्मा छ खावा।
सहजसँग अरूले गर्न को सक्छ दावा॥१७॥

अति तखत पऱ्याको खुप् अगम् देखि लंका।
यहि घडि पसि जाँ की राति जाँ येति शंका॥
गरिकन ठहराया याहिं बस्छू र राती।
सहज सित म जाँलाँ जान ता राति जाती॥१८॥

तहिं बसि यति गर्ले बाँकि दिन् सब् विताया।
दिन बिति जब रात् भो जान पाऊ चलाया॥
स्वरुप पनि त सानू ली पस्याथ्या जसै ता।
दगुरि नजिक आइन् लंकिनी पो तसै ता॥१९॥

वहाँ से कूदकर हनुमान किनारे पहुँच गये और वहाँ से त्रिकूटगिरि के ऊपरी शिखर से लंकापुरी देखी। १५ उन्होंने देखा, किनारे चारों ओर फलों से लदे वृक्ष हैं। उस वन के पक्षीगण अपनी मधुर ध्वनि से वातावरण को गुंजित कर रहे हैं और भँवरे लताओं में लगे फूलों के साथ झूम-झूमकर गुनगुनाते हुए उड़ रहे हैं। १६ हनुमान ने वहाँ की ऐसी छटा देखी, फिर त्रिकूटगिरि के ऊपर से दूर तक दृष्टिपात किया—चारों ओर दीवार खड़ी है और बीचोबीच में पहरा लगा है। ऐसी जगह में, भला कौन सहज ही में आक्रमण कर सकता है? १७ अति अगम और कठोर व्यवस्थापूर्ण लंका को देखकर हनुमान सोचने लगे—इसी समय प्रवेश करें अथवा रात्रि में? सोचते-सोचते, निश्चय किया कि अभी यहीं ठहरता हूँ; रात्रि में ही सरलता होगी, वही समय इस कार्य के लिए उत्तम है। १८ ऐसा सोचकर शेष दिन वहीं ठहर कर बिताया। दिन व्यतीत हो गया। रात आयी तो जाने के लिए पाँव उठाया। सूक्ष्म रूप धारणकर उन्होंने जैसे ही प्रवेश किया, वैसे ही लंकिनी दौड़कर निकट आयी। १९ कौन है यह! आज मुझे कुछ भी न समझकर अन्दर प्रवेश करनेवाला! चोर ही है—ऐसा सोचकर क्रोध

को हो आज मलाइ केहि नगनी यो भित्र जान्या भनी।
चोरै हो भनि लात् उठाइ रिसले एक् चोट् त हानिन् पनि ॥
जल्दी वाम मुठी उठाइ सहजै ठोक्ता जमिन्‌मा परिन्।
छाद्‌दै ताहिं रगत् गिराइ झटपट् ऊठेर विन्ती गरिन् ॥२०॥
लंकापूरि त हुन् ति राक्षसि भई वस्थिन् सदा द्वारमा।
जानिन् श्रीहनुमान् भनेर जब चोट् पाइन् चलिन् सारमा ॥
लंकीनी हुँ मलाइ त जितिगयौ यस्ले सक्यो राज् गरी।
रावण्‌को त मरण् हुन्या बखत भो आयो मरण्‌को घरि ॥२१॥
ब्रह्माजी अघि भन्दथ्या प्रभुजिको हून्याछ रामावतार्।
हर्ला रावणले सिता र रघुनाथ् सुग्रीवथ्यैं मित्र चार् ॥
गर्नन् सुग्रिवले पनी दश दिशा सीताजिको खोज् खवर्।
गर्नालाइ पठाउनन् विरहरू छाने र खुप् खुप् जबर् ॥२२॥
तिन्मा एक् विर आउला र तिमिले लात् मारिद्यौली जसै।
हान्ला वाम मुठी उठाइ र रगत् छाद्‌दै गिरौली तसै ॥
रावण्‌को तहिंसम्म आयु छ भनी भन्थ्या र सो बात सुनी।
ब्रह्माको त वचन् प्रमाण् गरि भन्याँ त्यो मर्छ रावण् पनि ॥२३॥

से उसने (हनुमान पर) लात से प्रहार किया। तत्क्षण (प्रत्युत्तर में हनुमान के) मुट्ठी कसकर घूँसे से प्रहार करते ही वह पृथ्वी पर गिर गयी और रक्त-वमन करते हुए तुरन्त उठकर विनती करने लगी। २० वह लंकापुरी (की रक्षिका) है, जो सदैव राक्षसी वनकर द्वार पर रहती थी। चोट खाने के बाद उसने हनुमान को पहचान लिया तथा उनकी शक्ति का परिचय पाया। मन ही मन कहने लगी—मैं लंकिनी हूँ। मुझे तो इसने पराजित कर दिया है और अब राज्य भी हड़प कर लेगा। ऐसा लगता है कि रावण का तो अव अन्तिम समय आ गया है। २१ ब्रह्माजी कहते थे कि प्रभुजी का राम अवतार होगा; रावण सीता का हरण करेगा; रघुनाथजी सुग्रीव के साथ मित्रता करेंगे तथा सुग्रीव भी अपने वलिष्ठ वीरों को सीता की खोज में भेजेंगे। २२ उनमें से एक वीर आयेगा और जैसे ही तुम लात से प्रहार करोगी, वैसे ही वह वाई मुट्ठी से प्रहार करेगा और तुम रक्त-वमनकर गिर पड़ोगी। कहा जाता है कि रावण की आयु उसी समय तक के लिए है। अतः हनुमान की बातें सुनकर उन्हें प्रणाम किया और कहा कि यह ब्रह्मा का वचन है कि रावण मरेगा। २३ जाओ सीताजी से भेंट करो। वहाँ अन्दर उद्यान में अशोकवन के एक उत्तम

जाऊ भेट सिताजिलाइ ति अगम् भित्री बघैंचामहाँ ।
अशोक्का वनमा छ वृक्ष बढिया एक् शिशपाको तहाँ ।।
ताहीं छन् प्रभुकी प्रिया वरिपरी छन् राक्षसीगण् पनि ।
भेटी गै रघुनाथथ्यैं भन तिली यस्ता विपत् छन् भनी।।२४।।

धन्यै भयाँ म अहिले प्रभुको स्मरण् भो ।
संसारको भय छ जो उ त आज दूर् भो ।।
जस्तो मिल्यो सकन संग र भक्ति ऐल्हे ।
यस्तै रहोस् यहि म पाउँ न बिर्सुँ कैल्हे ।।२५।।

जस्सै श्री हनुमान् पुग्या सहजमा लंका समुद्रै तरी ।
तस्सै जानकिको फुऱ्यो नजर वाम् हातै समेत् खुप् गरी ।।
रावण्को पनि वाम हात्, नजर वाम् फूऱ्यो, रघूनाथको ।
दक्षिण् अंग फुऱ्यो तसै बखतमा खुश् मन् भयो नाथको।।२६।।

सानू रूप लिई पसी सब शहर् हेर्दै विचार् खुप् गरी ।
रावण्को दरबार् विशेष् गरि ढुंड्या चोटा र कोठा गरी ।।
पायानन् र कता म जाँ भनि तहाँ मन्मा विचार् भो जसै ।
सम्झ्या लंकिनिका वचन् र ति गया अशोक वन्मा तसै ।।२७।।

शिशपा के वृक्ष के नीचे प्रभु की प्रिया विराजमान है। उनके चारो ओर राज्य का पहरा है। सीता से भेंट करके शीघ्र ही रघुनाथजी से उनकी विपत्तियों का हाल कहो। २४ मैं घायल हो गयी हूँ। अभी प्रभु का स्मरण हो आया। संसार के सारे भय मेरे हृदय से दूर हो गये। मेरी यही कामना है कि अभी जैसी भक्ति भावना प्रभु के लिए मेरे हृदय में है, वैसी ही सदा वनी रहे। २५ इधर हनुमान सहज ही समुद्र पार करके लंका पहुँचे और उधर उसी समय जानकी के बाम अंग (बायाँ नेत्र तथा बायाँ हाथ) अत्यधिक फड़कने लगे। तभी रावण का भी बायाँ हाथ तथा नेत्र फड़क उठा और उसी समय रघुनाथ के भी दक्षिण अंग फड़क उठे। ऐसा शुभ लक्षण देख राम के मन में प्रसन्नता छा गयी। २६ हनुमान ने सूक्ष्म शरीर धारणकर नगर में प्रवेश किया। चारों ओर भलीभाँति देखते हुए और सोचते-विचारते हुए कमरे-कमरे की छान-बीन की और रावण के दरबार-विशेष को खोजने लगे। जब कुछ पता नहीं चला तो सोचने लगे अब कहाँ जाऊँ? तत्क्षण ही लंकिनी की बात याद आयी और वे अशोक-वन में चले गये। २७ उन्होंने देखा—इन्द्र की नगरी के समस्त वृक्ष वहाँ

जो जो वृक्षका त इन्द्रका नगरिमा सो सो त सब् छन् तहीं ।
रत्नैका सिंढि साफ् असल् जल पनी यस्ता तलाऊ कहीं ॥
फलफूल्ले अति भार् भयेर रुखका सबका ति हाँगा पनि ।
लच्क्याका भ्रमरा र पन्छि वहुतै रूखमा बस्या का पनि॥२८॥

बिच्बीच्मा सुनका हवेलि पनि छन् उच्चा मणीको छ थाम् ।
जस्मा छन् कति गर्नु वर्णन जहाँ हेर्‍यो तहाँ पक्कि काम् ॥
यस्तो सुन्दर वन् नजर् गरि सबै डुल्दै हनूमान् गया ।
देख्या सुन्दर शिंशपा र खुशि भै ताहीं ति दाखिल् भया॥२९॥

अधिक गंभिर छाया सूर्यको ताप् नपस्न्या ।
उपर अति पहेंला वेस् चरा मात्र वस्न्या ॥
वरिपरि पनि नाना राक्षसीको छ घेरा ।
रुखमनि तहिं सीता देखिइन् फेद-नेरा ॥३०॥

भोकी मैलि निनाउरी न त कपाल् कोर्‍याकि सब् केश उसै ।
लट्टा मात्र गर्‍याकि खालि भुमिमा रूँदै वस्याकी यसै ॥
राम् राम् राम् यति मात्र बोलि रहँदी देख्या र साना भई ।
पात्का अन्तरमा लुक्या ति हनुमान् रूखका उपर्मा गई ॥३१॥

भन्छन् श्रीहनुमान् तहाँ मनमनै ऐले कृतार्थै भयाँ ।
जो सीताकन देखि आज खुशिले सीता-समीप्मा रह्याँ ॥

हैं । निर्मल एवं स्वच्छ जल के तालाव, रत्नों से जड़ी सीढ़ियाँ, फल-फूलों से लदी झुकी हुई टहनियाँ और उन पर भँवरे तथा पक्षी बैठे हुए है । २८ बीच-बीच में स्वर्ण-हवेलियाँ भी है । मणि-जटित ऊँचे-ऊँचे मंदिर है, जो वर्णन-शक्ति से परे है । जिधर देखो, उधर ही पक्के काम है । ऐसे सुन्दर वन में घूमते हुए और चारों ओर निरीक्षण करते हुए हनुमान गये । सुन्दर शिंशपा को (अशोक-वृक्ष) देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और वहीं प्रवेश किया । २९ अत्यन्त घना छायादार वन, जहाँ सूर्य की गर्मी भी प्रवेश नहीं कर सकती, जहाँ अत्यन्त उत्तम पीले रंग के पक्षी ही केवल रहते थे, वहाँ एक वृक्ष के नीचे राक्षसियों से घिरी हुई सीताजी दिखायी दीं । ३० भूखी-प्यासी, हताश, अस्त-व्यस्त केश-राशि खुली हुई, लटें बिखराये सीता भूमि पर बैठी रोती और केवल राम-राम की रट लगा रही हैं । हनुमान ने अपने सूक्ष्म रूप में ही उस पेड़ पर चढ़कर पत्तों में छिपे हुए ही सब हाल देखा । ३१ श्रीहनुमानजी मन ही मन कहते हैं—अब मैं सीताजी के पावन दर्शन पाकर कृतार्थ हुआ । आज मैं प्रसन्नतापूर्वक यहीं सीताजी के समीप रहूँ । अब

साध्याँ काम् पनि रामको भनि तहाँ खूशी भयाथ्या जसै ।
फेर् अन्तःपुरमा भयो र खलबल् त्यो शब्द सून्या तसै ॥३२॥
क्याको शब्द भयो भनेर हनुमान् लूक्या ति झन् पातमा ।
आयो रावण जल्दि ताहिं नजिकै सब् स्त्री लिई साथमा ॥
कैले मर्छु म रामदेखि अझतक् सीता हर्‍याँ तापनि ।
आयानन् रघुनाथ भनेर रहँदा देखेछ स्वप्ना पनि ॥३३॥
रामको दूत् अति वीर वानर अशोक् वन्-भित्र आई पसी ।
सीताजीकन देखिन्या गरि तहाँ वन्-भित्र लूकी बसी ॥
हेर्दो सुर् सब कामको खुशि भई स्वप्ना मिलेथ्यो जसै ।
साँच्चै हो कि भनेर दौडिकन झट् आयो नजीकमा तसै ॥३४॥
साँच्चै पो यदि हो भन्या असल भो दुर्वाच्य बोल्छू जसै ।
सीतालाइ यसो सुनेर रिसले जाला त भन्ला तसै ॥
मेरा दुष्ट वचन् सुनेर रघुनाथ् आएर मार्नन् भनी ।
यस्तो निश्चय मन् गरी नजिक गै दुर्वाच्य बोल्यो पनि ॥३५॥
सीताजी पनि दुष्टलाइ नजिकै देखी अधोमुख् गरिन् ।
श्रीराम्का चरणारविन्द मनले अन्तःकरण्मा धरिन् ॥

राम का कार्य भी पूरा हुआ । ऐसा सोचा ही था कि अन्तःपुर में खलबली-सी मच गई और बड़ा बमचक सुनायी दिया । ३२ कैसी हलचल मची है—(मन ही मन) यह कहते हुए हनुमान और भी पत्तों के बीच छुप गये । रावण शीघ्र ही तमाम स्त्रियों को लेकर वहाँ आ गया । निकट आकर बोला—सीता का हरण करने पर भी रघुनाथ अभी तक नहीं आये । आखिर कब तक मैं राम के हाथों मारा जाऊँगा । कहने लगा कि एक स्वप्न भी देखा है । ३३ स्वप्न में देखा कि राम के दूत अत्यन्त बली वानर अशोक वन में प्रवेश कर सीता को देखने-भर की व्यवस्था करके पत्ते के अन्दर वहीं पर छिपकर निडरतापूर्वक देख-देख प्रसन्न हो रहा है । ऐसा स्वप्न देखकर सोचा कि कदाचित् यह सच ही तो नहीं है । यह जानने के लिए तुरन्त दौड़कर निकट आया । ३४ यदि सत्य ही होगा तो अति उत्तम है । सीता को दुर्वाक्य कहूँगा, जिसे सुनते ही वह क्रोधित होकर चला जायगा और सब यथार्थ (वृत्तान्त) कह डालेगा । मेरे दुष्ट वचनों को सुनकर रघुनाथ आकर मुझे मारेंगे । ऐसा सोचकर वह निकट गया और (उसने) सीताजी को दुर्वचन कहे । ३५ सीताजी ने भी उस दुष्ट को देखकर अपना मुँह नीचे किया और अपने अन्तःकरण में राम के

चूप् लागि जननी रहिन् जब तहाँ सो देखि रावण् पनि ।
लाग्यो भन्न मलाइ देखि किन है लायौ अधोमुख् भनी ।।३६।।
राम् मेरा पति हुन् भनेर तिमि पो भन्छ्यौ उ भन्छन् कहाँ ।
मेरी हो यदि भन्दथ्या पनि भन्या आऊनु पर्थ्यो यहाँ ।।
माया छैन तिमी उपर् नवुझि क्या शोक् मात्र गर्छ्यौ उसै ।
यौवन् व्यर्थ गयो विचार किन यो यौवन् अफाल्छ्यौ यसै।।३७।।
यौवन् व्यर्थ नफाल व्यर्थ मनमा शोक् गर्दछ्यौ यो कति ।
मैलाई पति मान आज तिमिले हुन्छू म तिम्रो पति ।।
मेरी पत्नि भयौ भन्या त सबकी मालिक् हुन्याछौ म ता ।
साह्रै प्रेम् गरि राखुला बुझ अधिक् बैगूनि छन् राम ता ।।३८।।
मानी मूर्ख कृतघ्न मानुषमहाँ साह्रै अधम् जो त छन् ।
शक्तीका पनि कम् उ राम् पनि यहाँ आऊन क्या सक्तछन् ।।
तस्मात् छोड नराख रामतिर मन् यस्तो भनेथ्यो जसै ।
लाल् लाल् नेत्र गराइ पूर्ण रिसले बोलिन् सिताजी तसै ।।३९।।
पाजी रावण! बोल्दछस् कति बहुत् दुर्वाच्य बक्-बक् गरी ।
राघव्देखि डराइ छल्न भनि एक् सन्यासिको रूप् धरी ।।

श्रीचरणारविन्दों का ध्यान किया । सीता को मौन खड़ी देख रावण कहने लगा—मुझे देखकर मुँह क्यों नीचे कर लिया । ३६ तुम कहती हो, राम मेरा पति है । यदि ऐसा समझता तो उसे यहाँ आना चाहिए था । तुम्हारे ऊपर उसका कोई प्रेम नहीं है । केवल तुम्हीं व्यर्थ में शोकग्रस्त हो रही हो । विचार करके देखो यौवनावस्था व्यर्थ ही जा रही है । ३७ यौवन व्यर्थ न गँवाओ । कहाँ तक शोक में डूबी रहोगी ? आज ही तुम मुझे अपना पति स्वीकार करो । तुम मेरी पत्नी हो जाओगी तो सबकी स्वामिनी बन जाओगी और मै स्वयं तुम्हें अत्यन्त प्रेमपूर्वक रक्खूँगा । समझो और जानो कि राम तो बहुत ही अवगुणी है । ३८ जिस मनुष्य में अधर्म, मूर्खता एवं अभिमान व्याप्त है और जिसकी शक्ति भी थोड़ी है, वह (राम) यहाँ किस प्रकार आ सकता है । अतः राम को मन से त्याग दो । रावण ने जैसे ही ये वचन कहे, सीताजी के नेत्र क्रोध से लाल हो गये और वे बोली— ३९ पाखण्डी रावण ! दुर्वचन कहाँ तक बोलते हो । रघुनाथ से भयभीत होकर छल करके संन्यासी का रूप धारण किया । जिस प्रकार कुत्स यज्ञ में हवन अर्पित पदार्थों को चुरा ले जाता था, उसी प्रकार राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में तुमने मेरा हरण किया । समझ लो,

जस्तै यज्ञविषे हविस् कुकुरले हर्छन् उसै चालले।
राम् लक्ष्मण् नहुँदा हरिस् तँ बुझिले मर्लास् यसै काललें ॥४०॥
सागर् शोषि कि साथुँलाइ रघुनाथ आयेर घेरा दिई।
तेरो वंश विनाश् गरेर पछि फेर् प्राण् खैंचि तेरो लिई॥
लैजानन् रघुनाथ् मलाइ भनि झट् दीइन् जवाफ् यो जसै।
लाल् लाल् नेत्र गराइ खड्ग पनि ली काट्नै तयार् भो तसै ॥४१॥

मन्दोदरी विनति गर्न अगाडि सर्दी।
यो खड्ग टारुँ कसरी भनि चित्त धर्दी॥
पाऊ परीकन बहुत् गरि बिन्ति लाइन्।
सब् रिस् शमन् पनि गरायर खड्ग टारिन् ॥४२॥

हूकुम् रावणले तहाँ यति दिया हे राक्षसी ! ई सिता।
मैह्ना दूइ यसै बसून् तब उपर् मेरा शयन्मा कि ता॥
बस्निन् बस्तिन पो पनी भनि भन्या काटेर टुक् टुक् गरी।
तर्कारी भुटुवा बनाउनु असल् मीठा मसाला धरी ॥४३॥
मासू खाइ म छाड्डुँला अझ पनी चेताउ येती भनी।
रावण् फर्कि गयो ति राक्षसिहरू एक् मुख् भया फेर् अनि॥

तुम इसी काल-से मरोगे। ४० सागर का शोषण कर सेना-सहित रघुनाथ आकर यहाँ घेरा डालेंगे और तेरे वंश का विनाशकर तेरे प्राण खींच लेंगे तथा उसके वाद रघुनाथ मुझे लिवा ले जायेगें। सीता ने जैसे ही ऐसे उत्तर दिये, वैसे ही रावण ने क्रोध से लाल आँखें करके देखा और खड्ग लेकर काट डालने के लिए तत्पर हो गया। ४१ मन्दोदरी ने किसी प्रकार खड्ग को रोका और चित्त में विचार करती हुई रावण के चरणों पर गिर पड़ी और विनती करने लगी। अब शीघ्र ही शान्त हो जायें और खड्क रोक लें। मन्दोदरी की विनती सुनकर रावण ने अपने समस्त क्रोध को शान्त कर खड्ग रोक लिया। ४२ उस समय रावण ने इस प्रकार आज्ञा दी—हे राक्षसी ! यह सीता दो महीने तक इसी प्रकार रहे, तदुपरान्त मेरे शयन में रहेगी। यदि रहने के लिए अस्वीकार करे तो इसके टुकड़े-टुकड़े कर देना और उत्तम मीठा मसाला डालकर भूनना। ४३ मैं इसका मांस भक्षण करके ही छोड़ूँगा। अभी भी इसे सावधान कर दो। इतना कहकर रावण लौट गया। वहाँ की राक्षसियाँ सब एक-मुँह होकर कहने लगीं, क्यों यौवन को नष्ट करती हो ? रावण को पति स्वीकार कर लो। जिसे सुनकर एक राक्षसी कहती है कि बार-बार इसे समझाकर तुम थक

एक् भन्छे किन व्यर्थ यौवन सक्यौ रावण् गराऊ पति ।
दोस्री क्या भनि उठ्तछे कि कति वार् भन्छेस्तँथाक्छेस्कति ।।४४।।
काट्नैपर्छ नकाटि हुन्न भनि बात् गर्दै थिई अर्कि ता ।
हात्मा ली तरवार दौडि पनि गै भन्दै म काट्छू सिता ।।
आर्की घोर् मुख वाइ डर् दिन नजीक् धाई सिताथ्यैं जसै ।
बूढी राक्षसि एक् थिई र त्रिजटा तेस्ले हटाई तसै ।।४५।।
लागी भन्न अभागि दुष्टहरु हो! क्या दुष्टको झैं मति ।
गर्छौं छोड विरोध् नराख गर खुप् सीताजिको ता स्तुति ।।
पाऊमा परि दण्डवत् गर सबै मालिक् इनै हुन् भनी ।
मेरा आज वचन् लियौ भनि भन्या खुप् हीत होला पनि ।।४६।।
स्वप्नाको सुन भन्छु लक्षण यहाँ श्रीराम् सिताका पति ।
ऐरावत् उपरी चढेर सँगमा भाई लिई वीर् अति ।।
याहाँ आइ रिसाइ भस्म सब यो लंकै गराईदिया ।
रावण् मारि सिता लियेर सँगमा पर्वत् उपर् पो थिया ।।४७।।
रावण् गोमय कुण्डमा कुल समेत् खुप् तेल मर्दन् गरी ।
बुड्थ्यो सब् मुड आफना उनि उसै मुड्को त माला धरी ।।

जाओगी । ४४ एक अन्य राक्षसी तो कह रही है कि इसे काटना ही पड़ेगा; विना काटे काम नहीं चलेगा । हाथ में तलवार लेकर सीता को काट डालूंगी—यह कहती हुई सीता की ओर दौड़ी । दूसरी मुँह फैलाकर सीता को भयभीत करती हुई, उनकी ओर लपकी, जिसे एक त्रिजटा नामक राक्षसी ने पकड़कर हटा लिया । ४५ कहने लगी—अभागिन ! दुष्टाओं ! क्यों दुष्टों की भाँति अपनी बुद्धि करती हो ? विरोधी विचारों को हटाकर, सीताजी की ख़ूब स्तुति करो । इन्हीं को सर्वस्वामिनी मानो । इनके पाँव पड़ो और दण्डवत करो । मेरे इन वचनों को मानोगी तो तुम्हारा वड़ा हित होगा । ४६ सुनो, अपने स्वप्न के लक्षण मैं यहाँ बताती हूँ । श्रीराम, सीता के पति हाथी पर सवार होकर और साथ में अपने अत्यन्त वीर भाई (लक्ष्मण) को लेकर यहाँ आये और क्रोधित हो सम्पूर्ण लंका को भस्म कर दिया और रावण को मारकर सीता को लेकर पर्वत के ऊपर चले गये । ४७ रावण के कुल वाले (अन्य राक्षस) ख़ूब तेल मालिश कर अपने-अपने सर गोवर के कुण्ड में डुवाते थे । उन्हीं सरों की माला धारण कर विभीषण श्रीराम के निकट प्रभु की भक्ति करते थे और अत्यन्त प्रसन्न होकर तन-मन-वचन से सेवा करते थे । ४८ राग आज रावण को समस्त

श्रीरामका नजिकै विभीषण थिया भक्ती प्रभूको गरी ।
गर्थ्या खूब टहल् बहुत खुशि हुँदै तन्मन् वचन्ले गरी ।।४८।।
राम्ले रावणलाइ आज सहजै मार्छन् कुलै साफ् गरी ।
रावण्को अब वृद्धि छैन यसको आयो मरण्को घरि ।।
राम्को भक्त विभीषणै अब उपर् बस्नन् यहाँ राज् गरी ।
जस्तो हुन्छ हुकूम् सितापतिजिको सोही शिरोपर् धरी ।।४९।।
जस्तो स्वप्न भयो उ सब् भनिसक्याँ येती भनी चुप् जसै ।
लागीर्थी त्रिजटा ति बात् सुनि डऱ्या सब् राक्षसीगण् तसै ।।
निद्रामा वशमा सबै परिगया सीता बहूतै रुँदी ।
आधार् कोहि नपाउँरी अधिक ताप् मानेर विह्वल् हुँदी ।।५०।।
भोकी शोक् गरि भन्दछिन् अब यहाँ ऐले कसोरी मरूँ ।
इन्का हात परेर मर्नु ननिको आफैं म मर्छू बरु ।।
ताप्ले पूर्ण हुँदी उपाय अरु थोक् केही नजान्दी कबै ।
मन्मा स्वस्थ नपाउँदा विरहले देख्ती अँध्यारो सबै ।।५१।।
राम्मा चित्त दियेर मर्नु बढिया मानेर सीता तहाँ ।
झुन्डीन्या मतलब् लिई खडि भइन् पक्रेर हाँगामहाँ ।।

कुल-सहित सफ़ाया कर मारेंगे। रावण की बुद्धि अब क्षीण हो गयी है। अब उसकी विपत्ति की घड़ी आ गयी है। राम के भक्त विभीषण ही अब यहाँ, सीतापति की जैसी आज्ञा होगी, उसे शिरोधार्य कर राजा बनकर रहेंगे। ४९ जैसा स्वप्न हुआ, वह सब मैं बता चुकी हूँ, इतना कहकर जैसे ही त्रिजटा चुप हुई सब राक्षसियाँ उसकी बातों से प्रभावित होकर भयभीत हुईं और उसी समय निन्द्रा के वशीभूत हो गयीं। सीता कोई सहारा न देख असहाय बनकर अत्यधिक रोयी। ५० भूखी-प्यासी सीता अत्यन्त शोक में डूबी हुई कहती हैं कि मैं यहाँ मरूँ भी किस प्रकार ? इन लोगों के हाथों से तो मरना भी उचित नहीं। इससे तो अच्छा होगा कि मैं स्वयं ही अपना प्राण त्याग दूँ। सन्तापग्रस्त मस्तिष्क में कोई उपाय भी नहीं सूझ रहा था। विरह से मन में चिन्ता छायी थी। सब ओर अन्धकार ही अन्धकार दृष्टिगोचर होता था। ५१ उन्होंने सोचा कि राम के ध्यान में लीन होकर ही मृत्यु को प्राप्त होना अति उत्तम होगा। यह निश्चयकर सीताजी ने राम का ध्यान किया और वहाँ एक डाल पकड़कर खड़ी हो गयीं। राक्षसों के बीच रहकर जीवित रहना धिक्कार है, इससे तो मर जाना ही अच्छा है। अतः अब मैं मर ही जाऊँ। लटें लम्बी हैं, इसलिए गले में फन्दा डालकर लटकने के लिए, रस्सी बनाने के

राक्षस्का बिचमा वसी जिउनु धिक् मर्नू निको मर्दछु।
चुल्ठो लामु छ झुन्डिनाकन यहाँ डोरी त यै गर्दछु ॥५२॥
यस्तो निश्चय सुर् गरीकन सिता झुन्डीन आँटिन् जसै।
काम् बिग्ला भनि सानु बोलि झटपट् बोल्या हनूमान् तसै ॥
भारतवर्ष विषे मणी मुकुट झैं नाम् ता अयोध्या भनी।
ठूलो एक शहर् थियो मणिमयी सुन्दर् बन्याको पनि ॥५३॥
इक्ष्वाकूका कुलैमा अति बलि दशरथ् वीर् महाराज् रह्याछन्।
तिन्का तीन् रानिमध्ये गुणिगुणि अति वीर् चार छोरा भयाछन् ॥
जेठा राम्जी ति चार्मा उहि पछि त भरत्जी र लक्ष्मण् इ तीनै।
भन्दा शत्रुघ्न कान्छा सकल गुणमहाँ कम्ति छैनन् ति कूनै ॥५४॥
जेठा राम पिताजिका हुकुमले सब् राज्य छोडीदिई।
वन्मा बस्न चल्या बहुत् खुशि हुँदै सीता र लक्ष्मण् लिई ॥
एक् दिन् पञ्चवटी गया प्रभु तहीं डेरा प्रभूको पऱ्यो।
रावण्ले अति छल् गरीकन तहाँ सीताजिलाई हऱ्यो ॥५५॥
राम् लक्ष्मण् नहुँदा सीता पनि तहाँ चोरी जसै ता हऱ्यो।
चोरी आज सिता हऱ्यो भनि बहुत् खेद् रामलाई पऱ्यो ॥
जान्थ्या खोजि सिताजिलाइ वनमा फेला जटायु पऱ्या।
तिन्माथी करुणा भयो प्रभुजिको ताहीं जटायु तऱ्या ॥५६॥

लिए यही ठीक है। ५२ इस प्रकार निश्चयकर साहस बटोरकर सीता जैसे ही लटकनेवाली थीं, वैसे ही कही काम न विगड़ जाय—यह सोचकर हनुमान तुरन्त ही धीरे से बोले, "भारतवर्ष में सरताज के समान एक सुन्दर सुसज्जित अयोध्या नामक नगर है जो बड़ा ही विशाल है। ५३ इक्ष्वाकु के वंश में अत्यन्त बली वीर दशरथ नामक महाराजा रहते है। उनकी तीन रानियों से बढ़े ही उत्तम गुणवान् एवं वीर चार पुत्र हुए। ज्येष्ठ रामजी, उनके बाद भरत, फिर लक्ष्मण और उनसे भी कनिष्ठ पुत्र शत्रुघ्न, जो सकल गुणों से सम्पन्न है। ५४ ज्येष्ठ पुत्र राम पिता की आज्ञा से सकल राज्य का त्यागकर वन में रहने के लिए सीता और लक्ष्मण को लेकर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक एक दिन पंचवटी गये, जहाँ प्रभु का पड़ाव पड़ा। रावण ने अति छल करके सीता का हरण किया। ५५ राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में (रावण ने) जैसे ही सीता की चोरी की, वैसे ही इस सत्य को जानकर राम के मन में घोर चिन्ता और विरह उत्पन्न हो आया। सीताजी की खोज में जाते हुए वन में (राम से) जटायु से भेंट हुई। उन पर प्रभु की कृपा हुई और वे वहीं तर गये। ५६

भेट् सुग्रीव्सित भो पछी प्रभुजिको लाया मित्यारी पनि ।
बाली मारि रजाइँ बक्सनुभयो मित् हुन् इ मेरा भनी ।।
वीर् वीर् वानर छानि सुग्रिवजिले सीताजि खोज्नै भनी ।
हूकुम् बक्सनुभो र वीर्हरु गया सीताजि खोज्नै पनि ।५७।
तिन्मा एक् विर ता म हूँ म त यहाँ आयाँ समुद्रै तरी ।
सम्पाती-सित भेट् हुँदा खबर भै उन्का वचन्ले गरी ।।
लंका दाखिल भै गयाँ छिनमहाँ राम्का प्रताप्ले गरी ।
फुत्क्याँ लंकिनि देखि निर्भय भई अशशोक वन्मा परी ।५८।
देख्याँ सुन्दर वाटिका वरिपरी रूख् बेस् लताले गरी ।
बेह्र्याका चहुँओर रत्न सरिका फल् फूल् फल्याका भरी ।।
देख्याँ आज सिताजिलाइ र यहाँ आनन्द पायाँ भनी ।
येती बिन्ति गरेर चुप् भइ रह्या ताहाँ हनूमान् पनि ।।५९।।

सीताजिले जब इ बात् क्रमले सुनीथिन् ।
आश्चर्य भैकन वरीपरि हेरि एक्छिन् ।।
कोही नदेखि ति सिता अरुलाइ ताहाँ ।
भन्छिन् कुरा इ कहन्या जन को छ याहाँ ।।६०।।

भ्रम् हो भनूँ पनि भन्या सब चेत् छ मेरा ।
स्वप्ना कसोगरि भनूँ निद छैन मेरा ।।

बाद में प्रभुजी की भेंट सुग्रीव से हुई और उनसे मित्रता हुई। उन्होंने बालि को मारकर और उन्हें (सुग्रीव को) अपना मित्र कह कर राज्य सौंपने की कृपा की। एक से एक वीर वानरों को चुनकर सुग्रीव जी ने सीता जी की खोज में भेजा। समस्त वीर सीता की खोज में चल पड़े। ५७ उनमें से एक वीर तो मैं स्वयं हूँ। संपाती से भेंट होने पर (यह) समाचार मिला और उन्हीं के कथनानुसार, राम की कृपा से मैं क्षण-भर में ही लंका में प्रविष्ट हो गया। लंकिनी से भी निर्भयतापूर्वक बच निकला और अब अशोक वन में आया हूँ। ५८ चारों ओर वृक्ष और सुन्दर लताएँ देखीं, रत्नों के समान फल-फूलों से भरी हुई एक सुन्दर बाटिका देखी। आज सीता माता के दर्शन पाकर वड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। इतनी विनती कर हनुमान जी मौन हो गये। ५९ सीता ने जब इन वातों को क्रम से सुना तो आश्चर्य-चकित हो चारों ओर देखने लगीं और किसी को वहाँ न देख कहने लगीं—यह सब बातें कहनेवाला यहाँ कौन जीव है? ६० यदि मैं इसे भ्रम कहूँ, तो किस प्रकार? मैं

जो हो इ वात कहन्या उ अगाडि आई।
अमृत् वचन् इ अति आज भनोस् मलाई ॥६१॥
सीताजिको यति वचन् जब सुन्न पाया।
सानू स्वरूप् लि हनुमान्जि अगाडि आया॥
दर्शन् प्रणाम् पनि गन्या र सिताजिलाई।
ताहीं खडा भइ रह्या अति हर्ष पाई॥६२॥

लाल् मुख् पीत शरीर् शरीर् पनि अधिक् सानू भङ्केरा सरी।
धान्याका हनुमान देखि मनले आर्फ ति शंका परी॥
रावण्को छल हो कि यो भनि तहाँ लाइन् अधोमुख् जसै।
शंका भो अब माइलाइ भनि झट् बोल्या हनूमान् तसै।६३

हे माता! म त दास हूँ हजुरको रामका हुकूमले गरी।
आयाको छु हजूरको खबरमा गम्भीर् समुद्रै तरी॥
राजा सुग्रिवको म मन्त्रि पनि हूँ वायु पिता हुन् पनि।
येती विन्ति गरेर चुप् भइ रह्या क्या हुन्छ मर्जी भनी।६४

सीताजी पनि भन्दछिन् कसरि यो जानूँ म मानिस् पनि।
वानर् मीत मित्यारि लाउँछ कतै क्या हुन् कुराको जनी॥

तो सचेत हूँ। यदि स्वप्न कहूँ तो मैं सो नहीं रही हूँ। जो भी हो वह मेरे सम्मुख आकर इन अमृत-तुल्य वचनों को कहे। ६१ सीता जी के ये वचन सुनते ही हनुमान अपना छोटा-सा रूप धारण किये हुए उनके सामने आये। उन्होंने सीता जी का दर्शन कर प्रणाम किया और अत्यन्त हर्षोन्मुख होकर उनके आगे खड़े रहे। ६२ हनुमान का लाल मुँह तथा पीला शरीर और गौरैया के समान अत्यन्त छोटा आकार देख कर सीता जी के मन में शंका उत्पन्न हुई, उन्होंने सोचा कि कहीं रावण ही तो नहीं उनके साथ पुनः छल कर रहा है। इन्हीं विचारों में डूबी सीता को मुँह नीचा किये देख कर हनुमान समझ गये कि उन्हें शंका हो रही है, अतः वे तुरन्त बोल पड़े—६३ हे माता! मैं तो आपका सेवक हूँ। राम की आज्ञा से कठिन समुद्र को पार कर यहाँ आपकी सूचना लेने आया हूँ। राजा सुग्रीव का मैं मंत्री हूँ और वायु मेरा पिता है। इतना कहकर वे मौन होकर सीता की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। ६४ सीता जी कहती है कि मैं यह कैसे मान लूँ कि वानर और मनुष्य के बीच भी मित्रता होती है? कहाँ क्या बात है, मैं वास्तविक सत्य को कैसे जानूँ? अविश्वास प्रगट कर सीता जी जैसे ही चुप हुई, वैसे ही

येती बोलि सिताजि चुप् भइरहिन् साँचो नमानी जसै ।
फेर् वृत्तान्त गरी सुनाइ सब बात् औंठी दिया पो तसै।६५।
औंठी दीकन फेर् प्रणाम् पनि गरी जस्सै हनूमान् बस्या ।
देखिन् औंठि जसै तसै वखतमा हर्षाश्रुधारा खस्या ।।
बर्बर् आँसु खसाउँदै प्रभुजिको औंठी शिरोपर् धरिन् ।
साह्रै खुश हनुमान उपर् भइ तहाँ प्राण् झैं पियारो गरिन्६६

हित गरि हनुमान्जीलाइ भन्छिन् ति माता ।
मकन तिमि भयौ खुप् प्राणका आज दाता ।।
तिमिसित रघुनाथ्ले खूब विश्वास मान्या ।
तब मसित पठाया येहि काम्ले त जान्याँ ।।६७।।

अव त तिमि हनूमान् जल्दि गै रामलाई ।
भन विपति पऱ्याकी देखिहाल्यौ मलाई ।।
जति गरि म उपर् श्रीरामको हुन्छ माया ।
तति गरि तिमिले खुप् युक्तिले बिन्ति लाया ।।६८।।

जिन्तिन् शरीर महिना दुई ता म धर्छु ।
ताहाँपछी त तिमि निश्चय जान मर्छु ।।
खान्या छ दुष्ट तरकारि वनाइ येही ।
छैनन् यहाँ अरु सहाय मलाइ कोही ।।६९।।

हनुमान ने पुनः विस्तारपूर्वक सारा वृतान्त सुनाकर उन्हें श्रीरामचन्द्र जी की अंगूठी दी। ६५ अंगूठी देकर हनुमान ने पुनः प्रणाम किया और वहीं बैठ गये। सीता जी अंगूठी देखते ही हर्ष से विभोर हो उठीं और उनके नेत्रों से प्रेमाश्रु प्रवाहित हो चले। अश्रु बहाते हुए उन्होंने प्रभु की अंगूठी अपने मस्तक से लगा ली। हनुमान के ऊपर अत्यधिक प्रसन्न होकर उन्हें प्राणों से बढ़ कर प्यार किया। ६६ हनुमान के प्रति कृतज्ञ होकर सीता माता कहती हैं—आज तुमने मुझको जीवन दिया है, अतः तुम मेरे प्राण-दाता हुए हो। अब मैं मान गयी कि प्रभु ने तुम्हारे ऊपर विश्वास कर इसी काम से मेरे पास भेजा है। ६७ हनुमान ! अब तो शीघ्र ही तुम राम के पास जाकर मेरी विपत्तियों का हाल कह दो। जैसा तुम देख रहे हो, श्रीराम से उसी प्रकार युक्तिपूर्ण विनती करना, जिससे उनकी महान् कृपा शीघ्रातिशीघ्र हो। ६८ एक-दो माह तक तो मैं किसी प्रकार अपने शरीर को धारण किये रहूँगी, तत्पश्चात् तुम निश्चित जानो कि मैं जीवित रहने में असमर्थ हो जाऊँगी। ये दुष्ट

तस्मात् अवश्य इ दुई महिना नजाई ।
सुग्रीव् समेत् सकल सैन्य लियेर आई ।।
यस् दुष्टलाइ सव वंश समेत मारून् ।
यो दुःख-सागर पऱ्याकि मलाइ तारून् ।।७०।।
सिप सित गरि विन्ती खुप् दयालू बनाया ।
जति छ फजिति मेरा यो सबै थोक् जनाया ।।
यति विनति गऱ्या लौ पाउला धर्म धेरै ।
सकल भनि सक्याँ बात् क्या भनूँ बेरबेरै ।।७१।।

बिन्ती श्री हनुमानले पनि गऱ्या माता म सेवक् त हूँ ।
स्वामित्का इ विपत् सबै म कहुँला धेर् बात् यहाँ क्या कहूँ ।।
राम् लक्ष्मण् दुइ भाइ सुग्रिव समेत् बानर् कि सेना लिई ।
वंशै रावणको विनाश् गरिदिनन् घेरा शहर्मा दिई ।।७२।।

स्वामित्लाइ लियेर फेरि रघुनाथ् जानन अयोध्यामहाँ ।
आवैनन् रघुनाथ्, भनेर मनमा शङ्का नलागोस् यहाँ ।।
यो विन्ती सुनि भन्दछिन् तहिं सिता राम्चन्द्रजी क्या गरी ।
सेना लीकन आउनन् अति गभीर् यस्तो समुद्रै तरी ।।७३।।

मुझे तरकारी बनाकर खा डालेंगे । यहाँ मेरा सहायक, मेरी रक्षा करनेवाला कोई नहीं है । ६९ उनसे कहना कि ये दो महीने व्यतीत होने के पूर्व ही निश्चित रूप से सुग्रीव-सहित समस्त सेना लेकर आयें और इस दुष्ट को सपरिवार नष्ट करके इस दासी को दुःखसागर से उबार लें । ७० अत्यन्त चातुर्यपूर्वक विनती करके प्रभु का हृदय दया और करुणा से द्रवित कर देना । जो भी मेरी कष्टमय दशा है, विस्तारपूर्वक कह देना । केवल इतना ही कर देने से तुम्हें एक महान् धर्म करने का पुण्य प्राप्त होगा । अपना सब हाल तुमसे कह डाला, अब और क्या कहूँ ? ७१ श्रीहनुमान ने भी विनती की, हे माता ! मैं तो सेवक हूँ । स्वामिनी की समस्त विपत्तिजनक कथा कह सुनाऊँगा । मुँह से अधिक क्या कहूँ ! राम-लक्ष्मण दोनों भाई एवं सुग्रीव समस्त वानर-सेना सहित यहाँ आयेंगे और सारे नगर में घेरा डाल कर रावण का उसके वंश-सहित नाश कर डालेंगे । ७२ स्वामिनी को लेकर रघुनाथ पुनः अयोध्या जायेंगे । आप मन में तनिक भी चिन्ता न करें । आप ऐसी शंका न करें कि रघुनाथ कदाचित् न आयें, वे अवश्य आयेंगे । यह विनती सुनकर सीताजी कहती हैं कि लंका आने के मार्ग में पड़नेवाले ऐसे गम्भीर-गहन सागर को श्रीरामजी सेना-सहित किस प्रकार पार

जननिकन बुझाया यो हुकूम् सूनि ताहाँ ।
मइ छु प्रभुजिको दास् बोकुंला पीठमाहाँ ।।
रघुपति दुइ भाईलाइ क्या दुःख पर्छन् ।
सकल अरु र सुग्रीव कूदि आफै ति तर्छन् ।।७४।।

जननि ! म त बिदा झट् पाउँ मर्जीत सून्याँ ।
अब त उहिं गया पो हुन्छ काम् जल्दि हून्या ।।
जउन चिज दिदामा राम विश्वास मान्छन् ।
उहि चिज पनि पाऊँ जान्छु दिन् मात्र जान्छन् ।।७५।।

यति सुनि अघिदेखिन् केशपाश्मा धर्याको ।
मणि झिकि दिइहालिन् रामको मन् पर्याको ।।
मणि दिइ फिरि भन्छिन् चित्रकूट्मा भयाको ।
शरण परि नजर् दीं काग बाँची गयाको ।।७६।।

एक् दिन् हे हनुमान् ! म चित्रकुटमा राम्का नजीक्मा थियाँ ।
मेरा काखमहाँ सुत्या र रघुनाथ् हात्को तकीया दियाँ ।।
मेरा लाल् दुइ पाउ देखिकन काग् आयो र ठूँग्यो जसै ।
मेरा ई दुइ पाउदेखि बहुतै आयो रगत् पो तसै ।७७।

कर पायेंगे ? ७३ सीता जी की यह शंका-युक्त बात सुनकर हनुमान ने समझाया—मैं तो प्रभुजी का दास हूँ। उन्हें पीठ पर उठा लूँगा। राम-लक्ष्मण दोनों भाइयों को कैसे कष्ट उठाना पड़ेगा। समस्त वानर-सेना तथा सुग्रीव (आदि) छलाँग मार कर स्वयं ही पार हो लेंगे। ७४ हे जननी ! अब मुझे शीघ्र ही जाने की आज्ञा दें। आपकी आज्ञा का प्रत्येक शब्द मैंने ध्यानपूर्वक सुन लिया है। अब यहाँ अधिक रुकने से काम नहीं बनेगा, शीघ्रातिशीघ्र जाने से ही होगा। मुझे कोई ऐसा चिह्न दें, जिसे देखकर राम को विश्वास हो जाये; मैं वही लेकर चला जाऊँ। समय व्यर्थ ही व्यतीत न हो जाय। ७५ ऐसा सुनकर (सीता ने) पहले से ही केश-पाश में धारण किये हुए मणि को निकाला, जो राम के मन को अधिक भाता था, वही हनुमान को दिया। मणि देकर चित्रकूट में घटित एक घटना सुनाने लगीं। यह घटना एक शरण में आये हुए कौए की, उनकी कृपा-दृष्टि द्वारा बच जाने के विषय में थी। वे पुनः कहती हैं—७६ हे हनुमान ! एक दिन मैं चित्रकूट में रामजी के निकट थी। वे मेरी गोद में हाथ का तकिया लगा कर लेटे हुए थे। मेरे दोनों लाल पाँवों को देख कर एकाएक, एक कौए को भ्रम हुआ और उसने आकर जैसे ही मेरे पाँवों में चोंच मारी कि दोनों पावों से रक्त

ऊठी श्रीरघुनाथको नजर भो वाहीं थियो काग् पनि ।
फ्याँक्या एक् तृण ली तहाँ प्रभुजिले यो काग मार्छू भनी ॥
त्यो काग् चौधभुवन् डुल्यो त पनि एक् पायेन आधार् जसै ।
फेरी आइ शरण् परी नजर दी बाँची गयो काग् तसै ।७८।

मेरो आज शरण् पऱ्यो भनि दया आयो उ काग्मा पनि ।
मै माथी त दया कसो हुन गयो भन्थिन् भन्या यो पनि ॥
हात् जोरीकन विन्ति फेरि हनुमान् वीर् गर्न लाग्या तहाँ ।
याहाँ छन् भनि यो खबर् नभइ पो आऊन ढील् भो यहाँ॥७९॥

रावण्ले हरि ली गयो भनि खवर् हुन्थ्यो त वाँच्थ्यो कहाँ ।
आज् तक् रावणको कुलै प्रभुजिले सब् भस्म गर्थ्या यहाँ ॥
देख्छू रूप त सानु मानु भङ्गिरा जस्तो कसोरी लडी ।
राक्षस् नाश् तिमि गर्दछौ तिमि ठुला हुन्छौ स्वरूपकी वढी ।८०।

तिम्रो रूप् अति सानु देख्छु अरु ता कस्ता हुनन् झन् भनी ।
संझन्छू मनले र गम्छु मनमा आश्चर्य मान्छू पनि ॥
यस्तो मर्जि सिताजिको सुनि तहाँ पर्वत् सरीका भया ।
मेरू तुल्य स्वरूप् गरेर हनुमान् साम्ने खडा भै रह्या ।८१।

वह निकला । ७७ श्रीरघुनाथ ने उठ कर देखा । कौआ भी वहीं था। इस कौए को मारने के लिए रघुनान ने कंकड़ उठाकर प्रहार किया। कौआ चौदहो भुवन में घूमा, परन्तु कहीं उसे कोई सहारा न मिला और पुनः उन्हीं की शरण में आ गिरा । राम की ही कृपादृष्टि पाकर उस कौए के प्राण बच गये । ७८ श्रीराम ने देखा कि अन्त में कौआ उन्हीं की शरण में आया । यही देखकर उनका हृदय पक्षी के प्रति करुण हो उठा और उन्होंने उसकी रक्षा की । अतः वे मेरे ऊपर भी अवश्य दया करेंगे और इन दुष्टों से मेरी रक्षा करेगे । हनुमान पुनः हाथ जोड़कर विनती करने लगे—हे माता ! आप यहाँ हैं, यह पता लगाने में ही विलम्ब हुआ है । ७९ यदि यही निश्चय होता कि रावण द्वारा आपका हरण हुआ है तो वह बच कर कहाँ जाता ? प्रभु ने अब तक रावण को उसके वंश-सहित नष्ट कर डाला होता । हनुमान की विनती सुनकर सीता कहती है कि तुम्हरा रूप तो मैं अत्यन्त सूक्ष्म देख रही हूँ। गौरैया चिड़िया के समान हो । किस प्रकार लड़कर तुम रावण के वंश का नाश करोगे ? तुम वड़े होगे या तुम्हारा स्वरूप वड़ा होगा । ८० तुम्हारा रूप तो मैं अत्यन्त छोटा देखती हूँ । मैं विचार करती हूँ तो सोचती हूँ, तुम्हारे अन्य साथी कैसे होंगे । यह सव सोच कर आश्चर्य

जव त ति हनुमान्को रूप् ठुलो देखिलीइन् ।
खुशि भइ तहिं बीदा माइले जल्दि दीइन् ॥
अब त तिमि हनूमान् धृष्ट चाला छिपाऊ ।
इनिहरु सब देख्छन् कूदि फेर् जाइ जाऊ ॥८२॥

यति सुनि हनुमान्ले फेरि बिन्ती लगाया ।
सहज सित म जान्थ्याँ केहि फल् खान पाया ॥
वरिपरि फल फूल् छन् मर्जि मात्रै म पाऊँ ।
हुकुम बिनु कसोरी आज आफै म खाऊँ ॥८३॥

यति विनति गऱ्याथ्या खानको मर्जि पाई ।
खुशि भइ फल खाई माइथ्यै जल्दि आई ॥
चरण परि बिदा भै क्यै गया दूर् जसै ता ।
अलिकति कछु काम् फेर् गर्न आँट्या तसै ता ॥८४॥

आफ्नै मन्मन भन्दछन् ति हनुमान् जुन् वीर दूत् भै गई ।
जत्ती ख्वामितको हुकूम् छ उतिमा मात्रै चनाखो भई ॥
उत्ती काम् गरि फिर्छ पो पनि भन्या त्यो दूत् अधम् हो भनी ।
भन्छन् सब् दुनियाँ त भेंटिकन जाँ कस्तो छ रावण् पनि।८५।

यति गमि ति बघैचा फैक्न मनसुब चलाई ।
खुशि भइ ति महावीर् जल्दि फर्कि आई ॥

भी होता है। सीता की यह आश्चर्यपूर्ण वाणी सुनकर मेरु पर्वत के समान विराट् रूप धारण करके हनुमान सीता के सम्मुख खड़े हो गये। ८१ सीता माता ने जब हनुमान का ऐसा विराट् रूप देखा तो अत्यन्त प्रसन्न होकर उन्हें तुरन्त विदा किया। उन्होंने कहा—हनुमान अव अधिक न दिखाओ, अपने कौशल को छुपा कर रक्खो, अन्यथा यहाँ के लोगों के सम्मुख प्रगट हो जायगा। अतः तुरन्त कूद कर चले जाओ। ८२ यह सुनकर हनुमान ने पुनः विनती की कि हे माता। यहाँ चारों ओर फल-फूलादि भरे पड़े हैं। यदि इतनी आज्ञा हो तो मैं कुछ खा लूँ तब जाऊँ। बिना आपकी आज्ञा, मैं स्वयं कैसे खा लूँ? ८३ उनकी इतनी विनती सुनकर सीता ने आज्ञा दे दी। उन्होंने प्रसन्न होकर फल-फूल खाये और तुरन्त माता के निकट आकर विदा ली। जैसे ही कुछ दूर गये थे कि कुछ और काम करना चाहा। ८४ वे मन-ही-मन वोले—हनुमान एक वीरदूत होकर गया, जितनी स्वामी की आज्ञा हुई, उतना ही करके वापस लौटने पर सारी दुनिया कहेगी कि वह दूत अधम है। अतः

सकल वन उखेल्दै चौकि सम्पूर्ण मान्या ।
फकत जननि बस्न्या एक् सिसौ शेष पान्या ॥८६॥
जब त वन बिनास्या राक्षसी जल्दि आई ।
पुगि नजिक सिताका सोधि सीताजिलाई ॥
भन न तिमि सिताजी वीर् को हो क्यान आयो ।
अति असल बघैंचा मासि मैदान् बनायो ॥८७॥
यति सुनि तहिं सीता भन्दछिन् क्या म जानूँ ।
विपत परि रह्याकी छू म ता चानुमानूँ ॥
तिमि बुझ न सबै बात् कौन हो क्या न आयो ।
अति असल बघैंचा क्यान मैदान् बनायो ॥८८॥
सकल छल त हो यो राक्षसै गर्छ माया ।
जब त यति भनीथिन् राक्षसी सब् डराया ॥
कहन भनि गया सब् रावणैका हजूर्मा ।
पुगि कहन ति लाग्या वन् गयो जो बिसुर्मा ॥८९॥

ऐले हे महाराज् ! अधीक बलियो आयो र वानर् यहाँ ।
सीताजीसँग केहि बात्चित गरी कूद्यो बघैंचामहाँ ॥

रावण से भेंट करके भी देखना चाहिए, वह कैसा है। ८५ ऐसा विचार कर अशोकवाटिका उजाड़ने की आकांक्षा से प्रसन्न होकर वह महावीर पुनः लौट आया। सारे वृक्षों को नष्ट करते हुए समस्त वाटिका को उजाड़ डाला। केवल वही शिंशपा का वृक्ष, जहाँ सीता माता बैठती थीं, शेष रह गया। ८६ जब सारी वाटिका उजड़ गयी, तब वहाँ एक राक्षसी तुरन्त आ पहुँची और सीता के निकट आकर बोली—सीता तुम बताओ, यह वीर कौन है ? क्यों आया है ? ऐसी उत्तम वाटिका को नष्ट करके मैदान क्यों बनाया ? ८७ सीता जी ने कहा—मैं क्या जानूं ? मैं तो स्वयं ही विपत्ति में पड़ी हूँ। स्वयं ही समझो, कौन है, क्यों आया है और इन उत्तम बगीचों को मैदान क्यों बनाया ? ८८ सर्वत्र छल है। सीता की यह बात सुनकर राक्षसी डर गयी और सब कुछ कहने के लिए रावण के पास गयी। उसने रावण के पास जाकर कहा कि वन में एक वीर सूरमा आया है। ८९ हे महाराज ! अभी आज यहाँ एक बलिष्ठ वानर आया। उसने सीताजी से कुछ बातचीत की और बगीचे की ओर कूदा और सारे वृक्षों को बड़ी सरलता से उखाड़ कर सारा बगीचा मैदान बना दिया। चौकी को चूर्ण कर हवेली को नष्ट कर के बैठा है। ९० मैं तो यही विनती करने के लिए आयी हूँ।

सब् तो रूख् सहजै उखेलिकन साफ् मैदान् बनाईदियो ।
चौकी चूर्ण गरी हवेलि पनि सब् नासी बस्याको थियो।९०।
आयौं हामि त बिन्ति गर्न भनि यो बिन्ती गऱ्याथ्या जसै ।
सून्यो ज़ल्दि उठेर पक्रन भनी लश्कर् पठायो तसै ।।
हुकूम् पायर लाख लश्कर गयो पक्रेर ल्याऊँ भनी ।
एक् लाख् लश्करलाइ देखि हुनुमान् अत्यन्त गर्ज्या पनि ।९१।
त्यो शब्दै सुनि मोह लश्कर भयो छोड्यो हतीयार् पनि ।
सब् माऱ्या हनुमानले क्षणमहाँ ई हुन् भुसूना भनी ।।
लोहस्तम्भ उठाइ साफ् सब गऱ्या समूचार् पुगेथ्यो जसै ।
रावण् खूब रिसाइ फेर् पनि ठुलो सेना पठायो तसै । ९२ ।
सेनाका पति पाँच् गया हुकुमले ठूलै थियो तापनि ।
त्यो सेना पनि साफ् तहाँ गरिदिया उस्तै भुसूना गनी ।।
फेर् मन्त्री सुत सात् गया हुकुमले खुप् भारि लश्कर् लिई ।
लोहस्तम्भ उठाइ साफ् फिरि गऱ्या सब्लाइ ठक्कर् दिई ।९३।
सात् मन्त्री सुतलाइ सैन्य सहितै मारी सक्याथ्या जसै ।
कान्छो रावणपुत्र अक्षयकुमार् पो लड्न आयो तसै ।।

रावण ने जैसे ही यह विनती सुनी, उसने उठकर सेना को आज्ञा दी कि उसे (हनुमान को) पकड़ लिया जाये। आज्ञा पाकर लाखों सैनिक दौड़ पड़े। एक लाख सैनिकों को देख कर हनुमान ने तीव्र गर्जना की। ९१ उस गर्जना को सुनकर समस्त सैन्य-दल आकृष्ट हो उठा और अपने-अपने हथियार डाल दिये। हनुमान ने भी सबको भुनगे की तरह क्षण-भर में ही नष्ट कर डाला। गदा उठाकर सबका सफ़ाया कर डाला। जब यह समाचार (रावण के पास) पहुँचा तो रावण ने पुनः एक विराट् सेना भेजी। ९२ आज्ञानुसार सेना बड़ी होते हुए भी साथ में केवल पाँच सेनापति ही गये; हनुमान ने उस विराट् सेना का भी उसी प्रकार सफ़ाया कर डाला। इस बार तो गिन-गिन कर एक-एक को समाप्त किया। उसके बाद रावण ने फिर एक भारी सेना भेजी जिसके साथ में सात मंत्री गये। (हनुमान ने) गदा उठाकर इन सबको भी धकेलते हुए समाप्त कर दिया। ९३ जैसे ही सेना-सहित सातों मंत्रियों को समाप्त किया, वैसे ही रावण का कनिष्ठ पुत्र अक्षयकुमार लड़ने के लिए आया। तितली की तरह जैसे ही वह भारी सेना लेकर पहुँचा, वैसे ही हनुमान आकाश की ओर उछले और गदा से सरलतापूर्वक उसके सिर पर प्रहार

भारी फौज लियेर त्यो पुतलि झैं आई जसै ता पऱ्यो ।
आकाश्‌मा कुदि लोहदण्ड शिरमा ठोक्या सहज्मा मऱ्यो।९४।
पैले अक्षकुमार मारि अरु सब् सेना समेत् नाश् गऱ्या ।
आउँ दैमा तहिं बत्तिका पुतलि झैं हूँदै अनेक् वीर् मऱ्या ।।
सब् राक्षस्‌हरुलाइ मारिसकि फेर् आऊँछ कुन् वीर् भनी ।
लोहस्तम्भ लिई खडा भइ रह्या ताहाँ हनूमान् पनि ।९५।

जब त अति पियारो पुत्र कान्छो मऱ्याको ।
खबर कहन आयो फौज् समेत् नाश् गऱ्याको ।
तब त अधिक ताप् भै भन्छ रावण् रिसाई ।
अब त गइ म आफै मार्दछू तेसलाई ।।९६।।

की मार्छू कि त बाँधि ल्याउँछु यहाँ तेरा नजीक्‌मा भनी ।
रावण्‌ले यति इन्द्रजित् सित भन्यो तेस् इन्द्रजित्‌ले पनि ।।
हात् जोरीकन बिन्ति गर्छु म छँदै आफै हजूर्‌ले तहाँ ।
जानूपर्छ कतै म गै सहजमा ल्याऊँछु बाँधी यहाँ ।९७।
येती बिन्ति गरी चढ्यो रथमहाँ क्यै फौज् पनी साथ् लिई ।
आयो श्री हनुमान् भयातिर गयो साम्ने मुहूडा दिई ।।
देख्या श्रीहनुमानले पनि र खुप् गर्ज्या ति साम्ने भई ।
लोहस्तम्भ लिई कुदीकन उपर् आकाश बीच्मा गई ।९८।

किया और मार डाला । ९४ इस प्रकार (हनुमान ने) अक्षयकुमार को मार कर (उसकी) शेष सेना को भी नष्ट किया । आते ही दीपक के उपर नष्ट होनेवाले पतिंगों के समान सारे वीर समाप्त हो गये । सब राक्षसों को मारकर हनुमान यह सोच कर कि अब कौन सामने आता है, वहीं गदा लेकर खड़े रहे । ९५ जब अपने अति प्रिय कनिष्ठ पुत्र के सेना-सहित मारे जाने की सूचना रावण को मिली तो वह अधिक चिन्तित हो क्रोध से कहता है—अब तो मैं स्वयं जाकर उसे मार डालूँगा । ९६ अब या तो उसे मार ही डालूँगा या बन्दी बनाकर तेरे निकट ले आऊँगा । इन्द्रजीत से रावण ने इतना कहा, तो वह हाथ जोड़कर विनती करने लगा—मेरे होते हुए श्रीमान् को वहाँ जाने की आवश्यकता नहीं । मैं स्वयं ही जाकर वहाँ से उसे बाँध कर यहाँ लाऊँगा । ९७ इतनी विनती करके वह रथ पर आ-चढ़ा और कुछ सेना भी साथ में ले ली । जहाँ हनुमान थे वहीं जाकर सामने घेरा डाला । श्रीहनुमान ने देखा और तीन बार गरज कर आकाश की ओर उछले और

लोहस्तम्भ उचालि घुम्न बिचमा लाग्या गरुड् झैं जसै ।
पाँच् वाण् छोडि लगाइ आठ् अनि थपी फेरी लगायो तसै ॥
बाण् लाग्या भनि इन्द्रजित् खुशि भई गर्ज्यो जसै ता तहाँ ।
घोडा सूत् रथ चूर्ण पारि हनुमान् कूद्या ति आकाश महाँ ।९९।
फेर् अर्का रथमा चढेर अब ता बाँध्छू म ऐले भनी ।
फाँक्यो जल्दि र ब्रह्मपाश् ति हनुमान् जीलाइ बाँध्यो पनि ॥
बाँधी श्रीहनुमानलाइ सँग ली फर्क्यो र दर्बार् गयो ।
बाँध्याका हनुमान देखि शहरै सम्पूर्ण खूशी भयो ।१००।
जुन् राम्का चरणै स्मरण् गरि सहज् अज्ञान पाश् नाश् गरी ।
वैकुण्ठै सब पुग्दछन् भनि भन्या तेस् ब्रह्मपाश्मा परी ॥
बाँधिन्थ्या हनुमान् कहाँ तर पनी बन्धन् पर्‍या झैं भया ।
रावण् भेटि त जाँ भनेर हनुमान् चुप्चाप लागी गया ।१०१।
जस्सै इन्द्रजितै गयो र हनुमान्- जीलाइ बाँधी तहाँ ।
फर्केथ्यो घर जाँ भनी तब तहीं आयेर रस्तामहाँ ॥
रिस् फेर्‍या पुरवासिले पनि मुठी ऊठाइ हान्दा भया ।
रिस् फेर्छन् भुसुना भनेर हनुमान् चुप्चाप लागी गया ।१०२।

गदा लिये हुए आकाश के बीच में पहुंचे । ९८ वे गदा घुमाते हुए गरुड़ की तरह मध्य आकाश में ही मँडराने लगे । इसी समय (इन्द्रजीत ने उन पर) पाँच बाण छोड़े—आठ बाण और लगाये और उसके ऊपर और चलाये । बाण लगा, समझ कर इन्द्रजीत ने प्रसन्न होकर जैसे ही गर्जना की, वैसे ही घोड़ा-सहित रथ को चूरकर हनुमान आकाश में कूदे । ९९ फिर वह दूसरे रथ में चढ़ा और 'अब तो इसे बाँध लूँगा', यह सोचकर शीघ्रता से ब्रह्मपाश फेंक कर हनुमान जी को बाँध लिया । हनुमान को बँधे देखकर सारा नगर प्रसन्नता में डूब गया । हनुमान को दरबार में ले जाया गया । १०० जिस राम का स्मरण करने-मात्र से ही मनुष्य अज्ञान-पाश से मुक्त हो जाता है और बैकुण्ठ पहुँच जाता है, तो भला (उस राम के कृपापात्र भक्त एवं दूत) हनुमान (जिससे इन्द्रजीत ने उन्हें बाँधा था) उस ब्रह्मपाश से कहाँ बँध सकते थे ? वे तो केवल बँध जाना दिखा रहे थे (वह बँधना तो) बहाना-मात्र था, जिससे वे सरलता-पूर्वक रावण से मिल सकें । १०१ जैसे ही इन्द्रजीत हनुमान को वहाँ बाँधकर घर जाने के लिए लौटा, उसी समय मार्ग में नगरवासियों ने बदला चुकाने के लिए मुट्ठी (मुक्का) उठाकर (हनुमान पर) प्रहार किया । यह सोच-कर कि भुनगे बदला ले रहे हैं, हनुमान चुप-चाप (उनकी) मार खाते

पैले ता ब्रह्मपास्मा परिकन क्षणभर् बाँधिनू काभ थीयो ।
ब्रह्माको वाक्य साँचो गरिकन पछि ता पाशले छोडिदीयो ॥
बन्धन्‌देखी त खुस्क्या तरपनि हनुमान् भेट्न मन्सुब् धऱ्याका ।
पौंच्या रावण् छ जहाँ खुशिभइ अरुतामान्दछन् कर्‌पऱ्याका ।१०३।

रावण् वीर् पनि मन्त्रिवर्ग सँग ली भारी सभामा थियो ।
पौंच्यो ताहिँर इन्द्रजित्‌ति हनुमान्-जीलाइ सुम्पीदियो ॥
हात् जोरी विन्ती गऱ्यो अति हरीप् वानर् छ सेना पनि ।
धेरै नाश गरेछ आज मइ गै ल्यायाँ खुनी हो भनी१०४।

जो गर्नू अब पर्छ मन्त्रि सँगको सल्लाह बात्‌चित् गरी ।
यस्को आज ठिकान् लगाउनु हवस् मन्मा विचार् खुप् गरी ॥
येती बिन्ति सुन्यो र इन्द्रजितको हेऱ्यो नजर्‌ले पनि ।
लायो सोधन प्रहस्तलाइ किन यो आयेछ लौ सोध् भनी१०५।

अस्सलमा पनि क्या भनूँ अति असल् मेरो बघैंचा पनि ।
नास्यो वीर् पनि नाश् गऱ्यो मकन ता मानू भुसूना गनी ॥
हूकूम् यो मुनि त्यो प्रहस्त हनुमान् जीका अगाडी गई ।
लाग्यो सोध्न सबै कुरा पनि बहुत् आधार दीन्या भई ।१०६।

हुए बैठे रहे । १०२ पहले तो ब्रह्मपाश में बंध जाने और कुछ देर इसी प्रकार बने रहने का काम था । ब्रह्मा के वचन को सत्य करने के वाद उन्हें पाश से मुक्त कर दिया गया । वन्धन से मुक्त होने पर भी हनुमान को तो रावण से भेंट करना ही था । अतः वे जहाँ रावण था, वहीं गये; और लोगों ने यही समझा कि वे विवश करके लाये गये हैं, परन्तु हनुमान स्वेच्छापूर्वक (वहाँ) गये थे । १०३ रावण उस समय अपने वीर मन्त्रियों के साथ अपनी विराट सभा का संचालन कर रहा था । वहाँ पहुँचकर इन्द्रजीत ने हनुमान को रावण के हाथों में सौंप दिया । उसने रावण के सम्मुख हाथ जोड़कर विनती की कि यह बड़ा ही नटखट वानर है, इसने बड़ी-बड़ी सेनाओं का नाश किया है, अतः आज मैं स्वयं ही इस हत्यारे को पकड़कर लाया हूँ । १०४ (इन्द्रजीत ने आगे कहा—) जो कुछ भी करना उचित हो, अब सब मन्त्रियों से विचार-विमर्श करके, आज ही इसको ठिकाने लगाने की कृपा करें । इन्द्रजीत की विनती सुनकर रावण ने मन में एक पल विचार किया, फिर एक दृष्टि इन्द्रजीत पर डाली और कहा—पूछो, इसी से कि यह क्यों आया है ? १०५ क्या कहूँ ! इसने मेरे अति उत्तम बगीचे को भी नष्ट कर दिया और सारे

यै बीच्मा नडराइ रावण उपर् साम्ने नजर् दी तहाँ ।
बोल्या श्री हनुमानले तँ बुझिले काम्ले त आयाँ यहाँ ।।
भार्या जस्कि हरिस् उनै जगतनाथ् राम्को म दास् हूँ, मति ।
तेरो नष्ट भयो र अति दिन यो आयाँ नले यो मति।१०७।
आया राम मतङ्ग पर्वतविषे लक्ष्मण् सहित् भै जसै ।
लाया सुग्रिवले मित्यारि खुशि भै राम्चन्द्रजी थ्यैं तसै ।।
बाली मारि रजाइँ बक्सनुभयो सुग्रीव राजा भया ।
सीता खोज्न हुकूम् हुँदा विरहरू फेर् दस् दिशामा गया१०८।
एक् वीर् ता मइ हूँ हुकूम् शिर उपर लीयेर आयाँ यहाँ ।
पायाँ देख्न सिताजिलाइ दुत हूँ राम्को मजान्थ्याँ कहाँ ।।
वानर् हूँ र उखेलि साफ् गरिदियाँ तेरो बघैंचा पनि ।
आया मार्न मलाइ जो अगि सरी उन्लाइ मार्‍याँ पनि।१०९।

यो इन्द्राजित् गइ यसै बिचमा मलाई ।
बाँधेर ल्याइकन आज दियो तँलाई ।।
बन्धन् परचो भनि नठान् त दियाँ जनाई ।
खूला छु अति पनि दिन्छु म सुन् तँलाई ।।११०।।

वीरों को तो भुनगा समझकर सरलता से मार डाला । ऐसी आज्ञा पाकर एक प्रहरी हनुमान जी के सम्मुख आया और आश्वासन देते हुए सभी बातें पूछने लगा । १०६ इसी समय निडरतापूर्वक रावण की ओर दृष्टि डाल कर श्रीहनुमान जी बोले—समझ ले कि मैं यहाँ किसी कार्यवश ही आया हूँ । जिसकी पत्नी का तुमने हरण किया है, उन्हीं जगन्नाथ राम का मैं दास हूँ । तेरी मति भ्रष्ट हो गयी है और अब तेरे दिन भी निकट आ गये हैं, अतः (यदि कल्याण चाहता है तो) अपनी विचारधारा बदल दे । १०७ जैसे ही लक्ष्मण-सहित श्रीराम मतंगपर्वत पर आये, सुग्रीवजी ने अति प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी से मित्रता कर ली । (श्रीरामचन्द्रजी ने) बालि को मारकर सुग्रीव को राज्य सौंप कर राजा बनाया और अब उनकी आज्ञा से ही सीता को ढूँढने के लिए बहुत से वीर दसों दिशाओं में गये है । १०८ (हनुमान ने आगे कहा—) उन्हीं में से एक वीर मैं (भी) हूँ । श्रीराम की आज्ञा शिरोधार्य कर (यहाँ) आया हूँ और सीताजी को देख चुका हूँ । राम का दूत हूँ । इसी लिए तेरा बगीचा उजाड़ कर साफ़ कर दिया है और जो कोई भी मुझे मारने के लिए आया, उसे ही मैंने मार डाला । १०९ उसी समय यह इन्द्रजीत मुझे बाँधकर ले आया और तुझे सौंप दिया है । यह न समझ कि मैं

लोक्को गती सब विचार् गरि आज तैंले ।
यो राक्षसी मति नले हित भन्छु मैले ।।
ब्राह्मण् तँ होस् ऋषि पुलस्त्यजिको त नाती ।
राक्षस् कसोगरि तँ होस् बुझिले न भाँती ।।१११।।

आत्मा स्वरूप उ त ज्ञन् छ स्वरूप काहाँ ।
जाती र वर्ण लिइ भन्न सकिन्छ याहाँ ।।
सो आत्मरूप भनि नित्य विचार गर्नू ।
आनन्दमा रहुँ भन्या मति येहि धर्नं ।।११२।।

जो यो लोकविषे प्रपंच छ सबै जान् स्वप्प जस्तो भनी ।
सूतुन्ज्याल् सपना छ सत्य उठिता लाग्दैन साँचो पनि ।
तस्तैं ज्ञान् त भयो भन्या त्रिभुवनै एक् देखछ आत्मा फकत् ।
अज्ञान्रूप्निदमा पऱ्यो पनि भन्या देखिन्छ नाना जगत् ।११३।

आत्मा सत्य म हूँ भनेर बुझिले यस् देहलाई पनि ।
झूटो जान् पृथिवी र जल्हरु मिली झूटै बन्याको भनी ।।
तर्लास् यो मनमा लिइस् पनि भन्या तार्न्या उनै विष्णु छन् ।
जो हुन् विष्णु उ राम हुन् शरण पर् रिस् उठ्छ तेरा तज्ञन्।११४।

बन्धन में हूँ। मैं स्पष्ट कर देता हूँ कि मैं मुक्त हूँ, तुझे उपदेश भी देता हूँ, सो सुन! ११० जगत् की गति को विचार करो और इस राक्षसी मति का त्याग करो। मैं तेरे हित की बात कहता हूँ। तुम ब्राह्मण हो। श्रीपुलस्त्यजी के पौत्र (हो)। फिर तुम किस प्रकार राक्षस हो। भलीभाँति विचार करो। १११। वह आत्मास्वरूप तो कहता है कि स्वरूप कहाँ है। जाति एवं वर्ण को लेकर जो कुछ भी यहाँ कहा जा सकता है, उसी को आत्मस्वरूप समझकर विचार करो। यदि आनन्द-पूर्वक जीवन व्यतीत करना है तो ऐसी ही (मेरे उपदेश के अनुसार) मति को धारण करो। ११२ इस जगत् के जितने प्रपंच हैं, उन सब को स्वप्न-सदृश समझो। जैसे सपना सोते समय तक ही रहता है, जागने पर सब कुछ मिथ्या साबित हो जाता है, उसी प्रकार जब मनुष्य को ज्ञान प्राप्त हो जाता है, तब उसे तीनों भुवन एक ही आत्मा के समान दिखायी देते हैं। ११३ यह समझकर कि सत्य आत्मा मैं हूँ, इस शरीर को जो पृथ्वी-जल (आदि तत्वों) के मिश्रण से बना है, झूठ ही समझो। इस विचार को यदि मन में रखोगे तो तर जाओगे। तारनेवाला वही विष्णु है, वही राम है; उसी की शरण में जाओ। क्रोध, जो (तुम्हारे मन में) उत्पन्न होता है, उसे त्याग दो। ११४ ऐसी मूर्खता को मन से

यस्तो मूर्खपना नली अब सिता सुम्पी शरण्मा तँ पर् ।
खुश् हूनन् रघुनाथ् शरण् परि गया यो दुष्ट चाला नगर् ।।
राम्को भक्ति गरैन ता कसरि यो संसार तर्ला उसै ।
पर्ला जन्मनु मर्न यै फजितिमा छुट्तैन यो ताप् कसै।११५।

यो जानीकन भक्ति गर् शरण पर् राम्का हजूर्मा गई ।
आफ्नू आत्म नरक् विषे नलइजा यस्तो तँ जान्न्या भई ।
सीताराम् सितको विरोध् गरि तँहेर् गिर्लास् नरक्मा पनि ।
फेर् उत्तीर्ण हुनू कठिन् छ बुझिले अर्ती दियाँ यो पनि ।११६।

यस्ता बात् हनुमानका जब सुन्यो रावण् रिसायो तहाँ ।
लाल् लाल् नेत्र गराइ भन्छ रिसले सूनाइ संसद्महाँ ।।
मेरो डर् रतिभर् नराखि बहुतै क्या बोल्दछस् रे यहाँ ।
राम् लक्ष्मण् दुइ भाइलाइ सहजै मार्छू म छोड्छू कहाँ।११७।

सुग्रीव्लाइ तँलाइ मार्छु पछि फेर मार्छू सिताजी पनि ।
राम् लक्ष्मण् सित क्या डराउँछुर की मार्नन् मलाई भनी ।।
तिन्का वानर सैन्यको पनि विनाश् गर्न्याछु येती जसै ।
बोल्यो रावणले इ बात् सुनि तहाँ बोल्या हनूमान् तसै।११८।

निकाल दो और सीता को लेकर प्रभु की शरण में जाओ। शरण में आया हुआ देखकर प्रभु प्रसन्न होंगे अतः यह दुष्टतापूर्ण व्यवहार न करो। राम की भक्ति बिना किस प्रकार भव-सागर तरोगे ? इन्हीं कष्टों में जन्म लेना पड़ेगा और अन्त में मरना पड़ेगा। यह (जन्म-मरण का) ताप (कभी नहीं छूटेगा)। ११५ यह सब जानकर अब राम की सेवा में जाकर उनकी भक्ति करो। अपनी आत्मा को नर्क की ओर मत लगाओ। बुद्धि धारण करो और सीता-राम का विरोध कर तुम नर्क में ही गिरोगे, फिर उबरना कठिन हो जायगा। अतः मैं तुम्हें केवल ऐसा उपदेश दे रहा हूँ, ऐसा समझ लो। ११६ हनुमान की यह उपदेश-पूर्ण बातें सुनकर रावण को क्रोध आया। उसने लाल-लाल नेत्र कर कहा—मेरा किंचित् मात्र भी ध्यान न रखकर, निडरतापूर्वक यहाँ अधिक क्या बकता है रे ! राम-लक्ष्मण दोनों भाइयों को मैं सहज ही मार डालूँगा। मैं भला उन्हें कहाँ छोड़ सकता हूँ। ११७ फिर सुग्रीव, और तुझे मारने के पश्चात् सीता को मार डालूँगा। मैं क्यों डरूँ कि राम-लक्ष्मण कहीं मुझे न मार डालें। उसकी वानरसेना का मैं विनाश कर डालूँगा। रावण ने जैसे ही इतना कहा कि हनुमान बोले—११८ इस प्रकार व्यर्थ ही क्यों अहंकार करते हो। प्रभु को तो अलग रक्खो, तुम मेरे ही बराबर नहीं

यसरि किन बहुतै गर्दछस् सेखि धेरै ।
प्रभुकन त परै राख् जोरि छैनस् तँ मेरै ॥
अघि सरुँ ततँ जस्ता कोटि रावण् म मारूँ ।
हुकुम त नभयाको मार्न पो आज क्यारूँ ॥११९॥

यस्ता बात् हनुमानका सुनि तहाँ रावण् रिसायो अति ।
साँचा हुन् इ कुरा हुनाकन त हो लिन्थ्यो कहाँ दुर्मति ॥
यो वानर्कन काटि टुक् गर भनी यस्तो हुकूम् पोदियो ।
हात्मा बेस् हतियार् लिई अगि सऱ्यो जुन् वीर् नजीक्माथियो२०

यस् बीच्मा त विभीषणै अगिसरी हात् जोरि बिन्ती गऱ्या ।
दूत् हो यो महाराज् ! कुरा पनि वहाँ लैजान्छ को यो मऱ्या ॥
चिन्हूँ केहि लगाइ छोड् दिनुहवस् जावस् र विस्तार् गरोस् ।
येसै वानरका कुरा सुनि यहाँ आउन् ति संग्राम् परोस्२१

साँचो भन्या भनि बुझी कपडा मगायो ।
तेल् घीउले मुछि पुछर् भरि बेर्न लायो ॥
हुकूम् दियो अब जलायर बाँधिलेऊ ।
सारा शहर पनि घुमायर छाडिदेऊ ॥१२२॥

जावस् ठुटो पुछर लीकन फर्कि वाहीं ।
पुच्छर् डढी नसकि छोड्नु छैन काहीं ॥

हो। आगे बढ़कर तुम-जैसे कोटि रावणों को मैं मार डालूँगा। मारने की आज्ञा मुझे अभी नहीं मिली, क्या करूँ। ११९ हनुमान की ऐसी ओजपूर्ण बातें सुनकर रावण को और भी क्रोध आया। हनुमान की कही हुई बातें यद्यपि सत्य थीं, किन्तु रावण अपनी कुमति के कारण (भला उन्हें) क्यों मानने लगा। उसने आज्ञा दी कि इस वानर के टुकड़े कर दिये जायँ। उसकी आज्ञा पाकर, जो वीर निकट था, हाथ में अति उत्तम हथियार लेकर आगे बढ़ा। १२० इसी बीच विभीषण ने आगे बढ़कर करबद्ध विनती की—महाराज, यह तो दूत है, यदि यह मर जायगा तो वहाँ संदेश लेकर कौन जायगा ? कोई निशान लगाकर इसे छोड़ दें, जिससे कि यह वहाँ जाकर सब विस्तारपूर्वक कह सके। इसी वानर की बात सुनकर वे (राम-लक्ष्मण आदि) संग्राम के लिए (सामने) आयें। १२१ विभीषण की बात सत्य मानकर उसने (रावण ने) एक वस्त्र मँगाया और उसे तेल-घी में भिगोकर हनुमान की पूँछ में लपेट दिया और आज्ञा दे दी कि इसकी पूँछ में आग लगाकर सारे नगर में घुमाओ और छोड़ दो। १२२ (रावण ने आगे कहा—) अपनी जलती हुई पूँछ लेकर कहीं चलाजाय। जब तक

यस्तो हुकूम् जब दियो तब बाँधिलीया ।
आगो पनी पुछरतीर लगाइदीया ॥१२३॥
बाँध्याका हनुमान् लिएर खुशि भै भेरी अगाडी फुकी ।
लाग्या घुम्न शहर् ति राक्षसहरू चोर् हो भनी खुप् भुकी ॥
चुप् लागी हनुमान् पनी खुरुखुरू गम् हेरि हिंड्दै गया ।
ढोका पश्चिममा पुगी शहरको ताहीं ति साना भया ॥१२४॥
बन्धन् देखि त खुश्कि सूक्ष्म रुपले पर्वत् सरीका भया ।
ठूलो स्तम्भ उठाइ राक्षस अनेक् माऱ्या र कुद्दै गया ॥
बल्दो लामु पुछर् लियेर घर-घर् कुद्दै शहर्मा डुली ।
पोल्या सब् शहरै छुटेन कहिं घर् बाँकी कतै एक् भुली ॥१२५॥
लाग्यो बल्न शहर् जल्या र सब घर् बन्द रस्ता भई ।
भागी जान नपाउँदा हुँदि अनेक् राक्षस् अटाली गई ॥
फाल् हालीकन अग्निमा परि मऱ्या यो चाल् शहर्मा भयो ।
पोल्यानन् घर एक् विभीषणजिको त्यो मात्र बाँकी रह्यो ॥१२६॥
येती काम गरी सकी पुछरको आगो निभाऊँ भनी ।
कूदी जल्दि समुद्रमा पुगि पुछर् चोभी निभाया पनि ॥

पूँछ जलकर समाप्त न हो जाय, इसे छोड़ना नहीं । ऐसी आज्ञा होने पर हनुमान की पूँछ में आग लगा दी गयी । १२३ बँधे हुए हनुमान को लेकर नगाड़े बजाते हुए और चोर कहते हुए राक्षसगण सारे नगर में घूमने लगे । इस प्रकार खूब प्रसन्नतापूर्वक चिल्लाते हुए सब आनन्दपूर्वक घूमने लगे । हनुमान भी प्रसन्नतापूर्वक सीधे-सीधे चलते रहे । अचानक पश्चिम द्वार की ओर जाते समय वे छोटे हो गये । १२४ हनुमान के कसे हुए वन्धन, सूक्ष्म रूप धारण करते ही, सब ढीले पड़ गये । अपना सूक्ष्म शरीर लेकर वे बन्धनों से (मुक्त होकर) बाहर निकले और तुरन्त ही एक पर्वत के समान (विशालकाय) हो गये । अब हनुमान एक बड़ा स्तम्भ उठा कर अनेक राक्षसों का संहार करते हुए उछलते गये । वे जलती हुई पूँछ लिये घर-घर में कूदते हुए नगर में घूमने लगे । इस प्रकार उन्होंने सारे नगर को जला कर भस्म कर दिया, एक भी घर शेष न बचा । १२५ सम्पूर्ण नगर के सभी घर जल गये । सारे मार्ग अवरुद्ध हो गये । भागने के लिए मार्ग न पाकर अनेक राक्षस घबरा कर आग में कूद पड़े । इस प्रकार बहुत से राक्षस जल कर मर गये । नगर में ऐसी (प्रलयकारी) स्थिति उत्पन्न हो गयी । केवल विभीषण का ही घर शेष रहा, जो अग्नि से सुरक्षित बचा । १२६ इतना कार्य करके पूँछ की आग बुझाने के लिए

अग्नीले पनि मित्र-पुत्र भनि ताप् केही गर्‍यानन् तहाँ।
सीताको पनि प्रार्थना हुन गयो डढ्थ्या हनूमान् कहाँ।१२७।

रामका फकत् स्मरणले पनि दुःख छुट्छन्।
अध्यात्मिकादिहरु ताप् पनि जल्दि छुट्छन्॥
साक्षात् उनै प्रभुजिका दुत भै गयाका।
डढ्थ्या कहाँ ति हनुमान् अति हित् भयाका॥१२८॥

फिर्न्या मन् सब ली विदा हुन सिता जीथ्यैं हनूमान् गया।
वीदा खूशि भयेर बक्सनुहवस् जान्छू म भन्दा भया॥
आऊँछन् रघुनाथ् अवश्य भनि यो विन्ती गरच्याथ्या जसै।
साह्रै शोक् मनमा धरीकन सिता क्यै भन्न लागिन् तसै।१२९।

तिमिकन नजिकैमा देखि खुप् खूशि हुन्थ्याँ।
घडि घडि रघुनाथ्का मिष्ट वार्ता म सुन्थ्याँ॥
अब कसरि म यस्तो दुःखले प्राण धर्छु।
तिमी पनि फिरि जान्या फेरि तापमा म पर्छु।१३०।

सीताका इ वचन् सुनेर झटपट् हात् जोरि विन्ती गरचा।
यस्तो शोक् अब छाडि बक्सनुहवस् आपत्ति साह्रै भया॥

(हनुमान) तुरन्त कूद कर समुद्र में पहुँचे और अपनी पूँछ पानी में डुबो कर अग्नि बुझा दी। अग्नि ने भी मित्र (पवन) का पुत्र जानकर उनकी पूँछ में प्रभाव न डाला। उनकी रक्षा के लिए सीता ने भी विनती की, अतः हनुमान भला कहाँ जलते! १२७ केवल राम के स्मरण से ही दुःखों का नाश होता है, आध्यात्मिक तापों से भी शीघ्र ही छुटकारा मिलता है, फिर साक्षात् प्रभु के ही दूत बन कर (वहाँ) गये हुए हनुमान किस प्रकार जल जाते (जब) प्रभु ही उनके पक्ष में थे। १२८ लौटने की इच्छा से हनुमान विदा लेने सीता के पास गये। कहने लगे—प्रसन्न होकर आप मुझे विदा देने की कृपा करें। मैं जाता हूँ, रघुनाथ अवश्य आयेंगे। हनुमान की विनती सुनकर सीता जी अत्यन्त शोकाकुल मन से कहने लगीं— १२९ तुम्हें अपने निकट पाकर मैं अत्यन्त प्रसन्न होती थी और बार-बार रघुनाथ की मधुर चर्चा करती थी। अब कैसे इन दुःखों के मध्य रहकर प्राणों को रख पाऊँगी। तुम भी लौट जाओगे तो मैं पुनः संकट में पड़ जाऊँगी। १३० सीता के वचन सुनकर हनुमान ने हाथ जोड़ कर विनती की कि आप इस शोक को त्यागने की कृपा करें। यदि आपको यहाँ रहने में अधिक कठिनाई है तो आज्ञा दें, मैं अभी आपको लेकर

ऐले दाखिल गर्छु रामचरणमा वोकी हुकूम् लौ हवस् ।
धेरै शोक् किन गर्नुहुन्छ मनमा यो शोक् दुरैमा रहोस् १३१

सीताजी पनि भन्दछिन् म त नजाँ जाऊ तिमी मात्र गै ।
विस्तार् बिन्ति गरेर जल्दि रघुनाथ् लीयेर आऊ सँगै ।।
राम् आईकन दुष्टलाइ सहजै मारी मलाई सँगै ।।
लैजानन् रघुनाथ् त कीर्ति रहला क्या हुन्छ येसै म गै।१३२।

सीताको जब यो हुकूम् हुन गयो बीदा हनुमान् भया ।
तीन् बेर् जल्दि परिक्रमा गरि प्रणाम् गर्दा छँदा ती गया ।।
पर्वत् माथि चढ़ेर रूप् पनि ठुलो पर्वत् सरीको धन्या ।
आकाश् मार्ग लिई कुदेर खुशिले खुप् शब्द ठूलो गऱ्या१३३

सून्या शब्द ति अङ्गदादिहरुले बोल्या परस्पर् पनि ।
शब्दैले बुझियो अवश्य सहजै भेटेर आया भनी ।।
यस्ता बात् तिरमा बसेर सब वीर् गर्दै थिया खुश् भई ।
पौंच्या श्रीहनुमान् तहाँ तिरमहाँ आनन्द खूशी रही ।१३४।

भेट् भो अङ्गद वीर्हरूसित तहाँ विस्तार् कुरा सब् गऱ्या ।
अङ्गद् वीर्हरु खुश् भई पुछरमा पक्रेर चुम्बन् गऱ्या ।।

रघुनाथ के चरणों में प्रस्तुत करूँगा । मन में अधिक शोक क्यों करती हैं ? इस शोक को दूर करने की कृपा करें । १३१ सीताजी कहती हैं—मैं तो नहीं जाऊँगी, केवल तुम ही जाकर विस्तारपूर्वक विनती करना और शीघ्र ही रघुनाथ को लेकर यहाँ आना । वे आकर शीघ्र ही दुष्टों को मारकर मुझे साथ ले जायें, तभी उनकी कीर्ति रहेगी, अन्यथा केवल मेरे इस प्रकार जाने से क्या होगा ? १३२ सीताजी की ऐसी आज्ञा पाकर हनुमान विदा हो गये । तीन वार (उनकी) शीघ्र परिक्रमा कर प्रणाम करते हुए वे चले गये । पर्वत के ऊपर चढ़ कर उन्होंने विशाल शरीर धारण किया । आकाशमार्ग ग्रहण कर कूद पड़े और अत्यन्त प्रसन्न होकर गगनभेदी नाद किया । १३३ उस गर्जना को सुनकर अंगदादि परस्पर कहने लगे कि अवश्य ही हनुमान सरलता से भेंट कर आया है । समस्त वीर प्रसन्नचित्त हो किनारे वैठ कर इसी प्रकार की वातें कर रहे थे, उसी समय रघुनाथ भी निकट पहुंच गये, जिससे वहाँ पूर्णतया प्रसन्नता छा गयी । १३४ अंगदादि वीरों से वहाँ भेंट हुई और विस्तृत वातचीत हुई । अंगद तथा अन्य वीर प्रसन्न होकर (अपनी-अपनी) पूँछ पकड़ कर घूमने लगे । कोई प्रसन्न होकर नाचने लगा । इसी प्रकार सव लोग मिलकर

नाच्या कोहि खुशी भयेर यहि रीत् गर्दै ति रामथ्यैं गया ।
सुग्रीव्को मधुवन् मिल्यो नजिकमा साह्रै खुशी ती भया१३५।
बिन्ती अङ्गदथ्यैं गऱ्या पनि तहाँ खाऊँ इ फल् फूल् भनी ।
अङ्गद्ले पनि खाउ जाइ हनुमान् जीका प्रसाद्ले भनी ।।
दीया मर्जिर खाउँ फल फुल् भनी वानर् गयाथ्या जसै ।
चौकी बानर जो थिया सब तहाँ आया र रोक्या तसै।१३६।
रोक्न्या बानरलाइ लात् दिइ पिया मीठो मधुर् रस् तहाँ ।
यो चुक्ली दधिवक्त्रले लिइ गया सुग्रीवजी छन् जहाँ ।।
सब् विस्तार् दधिमूखले जव गऱ्या लूटचा मधूवन् भनी ।
लूटपीट्को समचार् सुन्या र पनि रिस् ऊठेन कत्ती पनि ।।१३७।।
भेटचाछन् बुझियो सिताकन न ता लुट्थ्या मधूवन् कहाँ ।
ई बात् सुग्रिव गर्दथ्या प्रभुजिले सून्या र सोध्या तहाँ ।।
सीताको पनि नाम् लिएर तिमिले क्या बोल्दछौ बात् भनी ।
सोधी बक्सनुभो र सुग्रिवजिले बिन्ती गऱ्या बात् पनि१३८
हे नाथ् श्रीमधुवन् थियो अति असल् मेरो बघैंचा तहाँ ।
ऐले ता हनुमान्हरू बलजफत् आएर एक् क्षण्महाँ ।।

एक साथ राम के पास गये । सुग्रीव को मधुवन के निकट मिले और सभी लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए । १३५ (सभी ने) अंगद से विनती भी की कि (वे) फल-फूल आदि खा लें । अंगद ने भी (उनसे) कहा 'लो खा लो'—यही हनुमान जी का प्रसाद है । जैसे ही फल-फूल खाने की सहमति देकर (अंगद के) वानर साथी (वहाँ से) चले गये, वैसे ही (सुग्रीव के मधुवन के) चौकीदार वानरों ने वहाँ आकर (उन्हें) खाने से रोक दिया । १३६ रोकनेवाले वानर (चौकीदारों) को (हनुमान के संगी वानरों ने) लात मार कर मीठा मधुरस पान किया । यह शिकायत लेकर दधिवक्त्र सुग्रीव के पास गया और दधिमुख ने सविस्तार सब कुछ कह सुनाया । उसने कहा कि मधुवन लुट गया । लूट का समाचार सुनकर भी (सुग्रीव को) किंचित-मात्र क्रोध नहीं आया । १३७ उन्होंने (सुग्रीव ने) समझा कि (हनुमान की) सीताजी से भेंट हो गयी होगी, नहीं तो मधुवन में क्यों लूट-मार करता ! जब सुग्रीव को इस प्रकार बात करते प्रभुजी ने सुना तो वे (सुग्रीव से) प्रश्न करने लगे—सीता का नाम लेकर तुम क्या कह रहे थे ? सुग्रीव ने विनती की—१३८ हे नाथ ! मधुवन मेरा एक अति उत्तम बगीचा था । अभी-अभी हनुमान के लोगों ने बल-

लूटयाछन् मधुरस् अनेक् तरहका चौकी कुटयाछन् पनि।
आया आज फिराद गर्ग मधुवन् लूटया र कूटया भनी१३९

सोही बात म गर्दछू रघुपते ! इन्ले सिताजी पनि।
भेटयाछन् तब पो लुटयार मधुवन् रोक्ता चुटयाको भनी॥
यो बिन्ती गरि जल्दि सुग्रिवजिले ती चौकिलाई तहाँ।
दीया हूकुम जल्दि फर्किकन गै चाँडै पठाऊ यहाँ॥१४०॥

आऊन् श्रीहनुमान्हरू अब यहीं चांडो भनी यो जसै।
दीया निर्भय दी हुकूम् उहि बखत् फर्क्या र दौडया तसै॥
मामा सुग्रिवका गया र दधिमुख् हूकुम् सुनाईदिया।
खूशी भै हनुमान्हरू पनि गया जाहां रघूनाथ् थिया१४१

राम् सुग्रीव्कन दण्डवत् गरिलिया साम्ने जमीन्मा परी।
सव् विस्तार् हनुमानले तहिं गऱ्या वृत्तान्त एक् एक् गरी॥
भेटयां आज सिताजिलाइ रघुनाथ् लंका पुरीमा गई।
जस्सै देखिलियां सिताकन तसै सानू स्वरूप्को भई।१४२।

पात्का अन्तरमा लुकी जननिका साम्ने नजीक्मा रह्यां।
जो वृत्तान्त थियो सबै हजुरको त्यै सूक्ष्म रूप्ले कह्यां॥

पूर्वक एक ही क्षण में अनेक प्रकार के मधुरस की लूट मचायी है और वहाँ के (प्रहरी) मधुरस लुटने और मार-पीट की शिकायत लेकर आये हैं। १३९ हे रघुपते ! मैं वही बात कह रहा हूँ। इन्होंने सीताजी से भेंट कर ली है; इसी लिए मधुवन को लूटा है और मना करने पर मार-पीट भी की है। यह विनती करके सुग्रीव ने शीघ्र ही उस (उनमें से एक) प्रहरी को आज्ञा दी कि अभी लौटकर जाओ और उन्हें यहाँ भेज दो। १४० श्रीहनुमान आदि अब शीघ्र ही यहाँ आ जायें। ऐसी आज्ञा पाते ही (वे प्रहरी) निर्भयतापूर्ण तत्काल लौटकर दौड़ पड़े। सुग्रीव के मामा दधिमुख गये और आदेश सुना दिया। प्रसन्न होकर हनुमान आदि भी रघुनाथ के पास चले गये। १४१ सभी ने राम एवं सुग्रीव को साष्टांग दण्डवत की। वहीं हनुमान ने एक-एक बात का सविस्तार वर्णन किया—हे रघुनाथ ! लंकापुरी में जाकर आज सीताजी से भेंट कर ली। सीताजी को देखते ही मैंने सूक्ष्म रूप धारण कर लिया। १४२ (हनुमान ने आगे कहा—) पत्तों के अन्दर छिप कर जननी के सम्मुख हो, निकट रहा। आपके विषय में जो कुछ भी समाचार था, मैंने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। मैंने उनसे अपने उसी सूक्ष्मरूप में ही सारी बातें कीं। श्रीमन् से दूर

भोकी दुब्लि हजूर दूर रहँदा संझेर साह्लै रुँदी ।
राम्राम् बोल्दि अनाथ् भईकन बहुत् विह्वल् निरन्तर् हुँदी१४३

अश्शोक्का वनमा सिसौ पनि छ एक् त्यै वृक्षका बीचमा ।
झुन्डीन्या मतलब् लिई खडि भइन् सूनिन् उसै बीचमा ॥
यो वृत्तान्त सुनी हुकूम् पनि भयो को होस् तँ बोल्छस् कहाँ।
क्या लूकीकन बोल्दछस् अब नलुक् आईज साम्ने महाँ ।१४४।

पायां येहि हुकूम् जसै जननिको वानर् स्वरूप्ले गयां ।
को होस् भन् भनि सोधिबक्सनुभयो फेर् विन्ति गर्दो भयां ॥
फेर् वृत्तान्त गरीसक्यां हजुरको औंठी दियाथ्यां जसै ।
बर्बर् आंसु खसालनू पनि भयो विश्वास लाग्यो तसै।१४५।

आफ्नू दुःख हवाल् सबै कहनुभो यस्ता विपत् छन् भनी ।
आऊँछन् रघुनाथ् भनेर बहुतै मैले बुझायां पनि ॥
आज्ञा भो रघुनाथका हजुरमा सब् दुःख मेरो कही ।
लङ्कामा प्रभुको सवारि तिमिले चांडो गराऊ गई ।१४६।

बात्चित् गरी जब यतातिर फिर्न लाग्याँ ।
विश्वास पार्न जननी सित चीज माग्याँ ॥

विरह-पीड़ित, भूखी-प्यासी क्षीणगात हो सीता रोती रहती है । वे अनाथ-सी होकर हर समय राम-राम की रट लगाती, विलाप करती रहती हैं । १४३ अशोकवन में जो एक शीशम का वृक्ष है, उसी के बीच में लटकने के उद्देश्य से जैसे ही वे उठकर खड़ी हुई उसी समय यह वृत्तान्त सुनकर उन्होंने अज्ञा दी "तुम कौन हो और कहाँ से बोल रहे हो ? अब छिपो मत, सामने आ जाओ" । १४४ जननी का यह आदेश पाकर मैं वानर-स्वरूप में गया । (वे) पूछने लगीं—"कहो कौन हो ?", तब मैंने विनती की और आपकी मुद्रिका उन्हें दी । श्रीमन् की अंगूठी पाते ही उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होने लगे और उन्हें मेरे ऊपर विश्वास हुआ । १४५ उन्होंने मुझसे अपनी सारी विरह-कथा कही और अपनी विपत्तियों का सविस्तार वर्णन कर डाला । तब मैंने समझाया कि रघुनाथजी निश्चय ही यहाँ आयेंगे । तब उन्होंने आज्ञा दी कि रघुनाथ की सेवा में मेरी सारी दुःखकथा सुना देना और शीघ्र ही जाकर प्रभु की सवारी लंकापुरी में लाने का प्रबन्ध करना । १४६ बातचीत करके जब इधर की ओर आने लगा तो आपको विश्वास दिलाने के लिए जननी की निशानी कोई वस्तु माँगी तो उन्होंने शिर में धारण किया हुआ चूड़ामणि निकाल कर दिया

चूडामणी दिनुभयो शिरमा रह्याको ।
कागको कुरा कहनुभो अघि जो भयाको ।।१४७।।

लक्ष्मण्लाइ अवाच्य बात् भनि बहुत् बोल्याकि छू तापनि ।
त्यो रिस् लक्ष्मणले कदापि नलिउन् येसो भनीथिन् भनी ।।
हात् जोरीकन विन्ति खुप् गरिदिया येती हुकुम् भो जसै ।
सव् वृत्तान्त सुनी बिदा पनि भयाँ फर्केर आयाँ तसै ।१४८।

माई सीत बिदा भई जब फिन्याँ मन्मा लहड् यो गयो ।
रावण्लाइ नभेटि जाँ म कसरी भन्न्या विचार् यो भयो।
भेटी रावणलाइ अर्ति पनि दी फिर्नू असल् हो भनी ।
फर्की ध्वस्त गर्न्याँ अशोक वनको मार्न्याँ अनेक् वीर् पनि४९

कान्छो रावण-पुत्र अक्षय कुमार् मार्न्याँ र रावण् जहाँ ।
थीयो ताहिं गयाँ भन्न्याँ हित वचन् टेरेन केही तहाँ ।।
गर्थ्यो बक्बक बात् अनेक् तरहका मैले भुसूनै गनी ।
रावण्कै अघि खाक् गरी सकिदियाँ पोलेर लङ्का पनि ।१५०।

येती कर्म गरी यहाँ हुजुरमा आयाँ म ऐले भनी ।
येती विन्ति गरी खडा भइ रह्याँ ताहाँ ति सेवक् बनी ।।
श्रीराम्ले पनि काखमा लिनुभया सर्वस्व दिन्छू भनी ।
वात्ले चित्त बुझाइ बक्सनुभयो सर्वस्व यै हो भनी ।१५१।

और पहले की कभी घटी हुई कौए सम्बन्धी घटना भी सुनायी । १४७ लक्ष्मण को अनेक अवाच्य वाक्य मैंने कहा है, इसके लिए उन्होंने हाथ जोड़ कर विनती की है कि वे उनसे क्रोधित न हों। फिर मैं आज्ञा लेकर विदा हुआ, और लौट कर आया हूँ । १४८ माता (सीता) से विदा लेकर चला तो मन में विचार हुआ कि रावण से भेंट किये बिना कैसे चलूँ । यह सोच कर कि रावण से भेंट कर उसे उपदेश देकर लौटना ही उत्तम होगा, मैं लौट गया और अशोक वन को उजाड़ डाला । अनेक वीरों को भी मौत के घाट उतार दिया । १४९ मैंने रावण के कनिष्ठ पुत्र अक्षयकुमार को मार डाला और रावण जहाँ था, वहीं वह पहुँचाया गया । वहाँ मैंने उसी के हित की अनेक बातें बतायीं, किन्तु उसने किसी बात पर भी ध्यान नहीं दिया । वह अनेक प्रकार की बातें बकता, किन्तु मैंने सबको भुनगा की तरह समझ कर समाप्त कर दिया । रावण के ही सामने उसकी लंका जलाकर राख कर डाली । १५० इन सब कार्यों को समाप्त कर अब आप की सेवा में उपस्थित हुआ हूँ । इतनी विनती

मैले खुश् भइ काख् दियाँ पनि भन्या फेर् दीनु बाँकी रती।
केही चीज् रहँदैन सब् मिलि गयो यी बात् बताऊँ कति ॥
काखमा राखि हुकूम् भयो यति जसै खूशी हनूमान् भया।
आनन्दाश्रु गिराइ भक्ति रसले हाजिर् हजूर्मा रह्या१५२

धन्य हुन् इ हनुमान् यि सरीको।
कोहि छैन अरु भक्त हरीको ॥
भक्ति खुप् गरि त काख् पनि पाया।
लोकमा अधिक धन्य कहाया ॥१५३॥

जस्को पुजा तुलसि-पत्र चढाइ गर्छन्।
उस्ता पनी त भवसागर-पार तर्छन्।
ई ता उनै प्रभुजिका दुत हुन् त काहाँ।
सक्नू छ वर्णन गरी यिनको त याहाँ ॥१५४॥

॥ सुन्दरकाण्ड समाप्त ॥

करके सेवक बन कर हनुमान वहाँ खड़े हो गये। "सर्वस्व देता हूँ"—कहते हुए रघुनाथ ने हनुमान को गोद में बैठा लिया और समझाते हुए बोले कि यही सर्वस्व है। वे बोले कि प्रसन्न होकर अपनी गोद अर्पण कर देने के बाद मेरे पास कुछ नहीं शेष रहता। अतः तुम्हें सब प्राप्त हो गया, यह बात कहाँ तक बताऊँ? गोद में रख कर जैसे ही (राम ने) यह आदेश दिया हनुमान आनन्द से ओतप्रोत हो गये—प्रेमाश्रु बहाते हुए वे (राम की) शरण में पड़े रहे। १५१-१५२ धन्य हैं यह हनुमान! हरि के भक्तों में इनके समान कोई नही। इसी भक्ति की शक्ति से ही उन्हें हरि की गोद प्राप्त हुई। इसी लिए वे जगत् में अधिक धन्य कहलाये। १५३ इनकी (हनुमान की) पूजा केवल तुलसी चढ़ा कर की जाती है। जो ऐसा करते हैं, वे लोग भवसागर पार तर जाते हैं। ये तो उन्हीं प्रभुजी के दूत हैं, अतः इनका पूर्णतया वर्णन कर सकना भी अत्यधिक कठिन है। १५४

॥ सुन्दरकाण्ड समाप्त ॥

युद्ध काण्ड

लङ्कापुरी सकल खाक् गरि सैन्य मारी ।
फेरी समुद्र सहजै तरि आइ वारी ।।
सीताजिको जब सबै समचार् बताया ।
श्रीरामले ति हनुमान्कन खुप् सह्राया ।। १ ।।

भन्छन् श्रीरघुनाथ् अहो इ हनुमान्- ले खुप् ठुलो काम् गऱ्या ।
एक्लै गैकन रावणादि विरको सेखी इनैले हऱ्या ।।
यत्रो क्षार समुद्र कूदिकन फेर् खाक् गर्नु लंका अग्नि ।
को सक्ला सब डर्दछन् इ जति छन् इन्द्रादि द्यौता पनि ।।२।।

सुग्रीव्का सब मन्त्रिमा इ सरिको होला न काही भया ।
छोरो रावणको निभाइकन ता सामने उसैका गया ।।
सेवक्ले जति गर्नुपर्छ तति सब् सेवा इनैले गऱ्या ।
सीताको समचार् बतायर यहाँ हाम्रो ठुलो ताप् हऱ्या ।।३।।

सम्पूर्ण लंकापुरी को राख करके तथा सेनाओं को समाप्त करके जब हनुमान पुनः समुद्र पार करके इस ओर श्रीराम के पास आये और सीता जी का सब समाचार बताया तो श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने हनुमान की भूरि-भूरि सराहना की । १ श्रीरघुनाथ जी कहते हैं, ओह ! इस हनुमान ने अत्यन्त महान् कार्य किया है । वहाँ जाकर रावणादि वीरों का अहंकार इसने अकेले ही नष्ट किया है । इतने महान् और विस्तृत सागर को छलाँग मार कर पार करना, और फिर लंका को भस्म करना, दूसरा और कौन कर सकता है । इसी लिए ये इन्द्रादि जितने देवता हैं (उससे) सभी डरते हैं । २ सुग्रीव के सब मंत्री एवं भाइयों में इसके समान न कोइ हुआ है न होगा, जो रावण के पुत्र को मार कर उसी के समक्ष प्रस्तुत हुआ । सेवक को जो कुछ भी करना चाहिए वह सभी कुछ इसने किया । सीता का समाचार ला कर यहाँ इसने हमारे विषम तापों का हरण किया । ३ यह हनुमान महान्वीर है, तभी तो (इतनी सरलता से)

वीर् हुन् ई हनुमान् र कूदिकन गै कूदेर आया यहाँ ।
यो सागर् कसरी तरी म अहिले पौंचन्छु लंकामहाँ ॥
गैह्लो क्षार समुद्र यो छ विचमा जलमा अनेक् जन्तु छन् ।
त्यो सागर् कसरी तरिन्छ भनि खुप् आत्तिन्छ मेरो त मन् ॥४॥
रावण्लाइ कसोरि मारुँ कसरी तारूँ म फौज् यो भनी ।
चिन्ता हुन्छ कसोरि पाउँछु अहो ! मेरी पियारी पनि ॥
राघव्का इ वचन् सुनीकन तहाँ सुग्रीव् अगाडी सरी ।
गर्छन् बिन्ति हजूरमा रघुपते ! क्या हुन्छ चिन्ता गरी॥५॥
यो फौज् वानरको ठुलो छ बलियो लड्न्या छ घूँडा धसी ।
अग्नीमा पनि पस्नु पर्दछ भन्या पस्न्या छ कम्मर् कसी ॥
सागर् तर्न उपाय मात्र त हवस् यो फौज जावस् तरी ।
रावण् मार्न कठिन् छ क्या सहजमा मारिन्छ येसै घरि ॥६॥
मेरो चित्तमहाँ त यो छ रघुनाथ् साम्ने हजूर्मा परी ।
लड्न्या वीर् कहिं छैन बिन्ति गरियो सारा तिनै लोक् भरी ॥
हाम्रो निश्चय जित् हुन्याछ बढिया देखिन्छ लक्षण् पनि ।
मार्छौं राक्षसलाइ आज सहजै साना भुसूना गनी ॥७॥

कूद कर गया और कूद कर आया भी है। यह सागर पार करके मैं किस प्रकार लंका पहुचूँगा। यह सागर अत्यधिक गहरा है, और जल के मध्य में अनेक जन्तु हैं। मेरा तो मन अत्यधिक घबरा रहा है, यह सागर कैसे पार किया जा सकेगा ! ४ मुझे यही चिन्ता हो रही है कि सेना को समुद्र-पार कैसे ले जाऊँ और रावण को कैसे मार डालूँ। अब मैं अपनी प्राणप्यारी प्रियतमा को पुनः कैसे प्राप्त कर पाऊँगा। राघव के इन दुःख-भरे वचनों को सुनकर सुग्रीव आगे बढ़ कर सेवा में विनती करते हैं—हे रघुपते ! चिन्ता करके क्या होगा। ५ ये वानरों की विशाल सेना है जो घुटने धँसा कर युद्ध करने में भी बलिष्ट है। इन्हें यदि अग्नि में भी कूदना पड़ेगा तो कमर कस कर कूद पड़ेंगे। केवल सागर पार करने का उपाय बताने की कृपा करें। ये सेना जब सागर पार हो जायेगी। रावण को मारना क्या कठिन है। इसी समय सहज ही में मारा जा सकता है। ६ रघुनाथ ! मेरे विचार में तो यही है। श्रीमन् के सम्मुख आकर तो लड़नेवाला वीर कहीं तीनों लोक में नहीं। मेरी यही विनती है, हमारी विजय निश्चय ही होगी। लक्षण भी शुभ प्रतीत होते है। हम राक्षसों को आज सहज ही में भुनगों के समान नष्ट कर

सुग्रीव्का इ वचन् सुनी हुकुम भो श्रीरामजीको तहाँ ।
जुन् पाठ्ले त तरिन्छ सो गरियला कस्तो छ लंकामहाँ ॥
लङ्काको अकबाल् सुनौं त पहिले कस्तो छ तेस्को तखत् ।
सब् बूझीकन पो गया जितियला यैहो विचार्को वखत्॥८॥

ठाकुर्का इ वचन् सुनेर हनुमान् ताहाँ अगाडी सरी ।
भक्तीले गरि अञ्जली पनि बहुत् न्यूह्लेर शिर्मा धरी ॥
गर्छन् बिन्ति जगत्पते ! रघुपते लंका पुरी सुन्दरी ।
देखिन्छे जति देखतछन् ति सबको लिन्छे सबै मन् हरी ॥९॥

त्रीकुट् पर्वतका उपर् छ सुनको पर्खाल् छ चारौं तरफ् ।
थामै छन् मणिका जउत् घरमहाँ देखिन्छ तिन्को हरफ् ॥
एक् खावा त समुद्र भो अरु नजीक् अर्को खन्याको पनि ।
पर्खाल्का नजिकै छ बेस् वरिपरी वैरी नआउन् भनी ॥१०॥

घर पनि सुनकै छन् गल्लि जो छन् सुनैका ।
मणिजडित हुनाले झन् असल् छन् कुनैका ॥
घुमि घुमिकन हेर्‍याँ सब् बगैंचा तलाऊ ।
सहज सित कसैको केहि लाग्दैन दाऊ ॥११॥

डालेंगे । ७ सुग्रीव के इन वचनों को सुनकर श्रीराम की आज्ञा हुई कि जिस उपाय से समुद्र पार हो जाने की सम्भावना है वही किया जाएगा। पहले यह बताओ कि लंका में क्या दशा है, वहाँ का वर्णन तो सुनें कि वहाँ की राजगद्दी कैसी है। सब समझ-बूझ कर ही जाने से तो विजय प्राप्त होगी। यही विचार करने का समय है। ८ प्रभु के इन वचनों को सुनकर हनुमान आगे बढ़े और भक्तिपूर्वक पर्याप्त अंजली अर्पित की, तथा मस्तक में लगाते हुए विनती करने लगे—जगत्पते ! रघुपते ! लंकापुरी की सुन्दरी अत्यन्त सुन्दर दिखाई देती है और जितना देखती है सब के मन को मुग्ध कर लेती है। ९ त्रिकूट पर्वत के ऊपर चारों ओर सोने की दीवार है। जिन घरों में मणि के मन्दिर है उन्हीं पर उनके लेख दिखाई देते हैं। एक स्तम्भ तो समुद्र और दूसरा समीप ही में खड़ा हुआ है। दीवार के निकट चारों ओर खाई है, जिससे शत्रु न आ जाय। १० वहाँ के घर तथा मार्ग सभी सोने के हैं। कहीं-कहीं तो मणिजटित होने के कारण अत्यन्त रमणीक हो गया है। मैंने घूम-घूम कर चारों ओर सारे बगीचे तथा तालाब देख लिए हैं। सरलता से वहाँ प्रवेश होने का किसी को अवसर नहीं मिलता। ११ नगर के चार द्वार हैं, कहीं वीरों की विशाल सेना तत्पर

ढोका छन् चार् शहर्का तहिं विरहरुको फौज् छ ठूलो बस्याको ।
जो ताहाँ पस्न जाला उ सित तहिं लडी मर्न कम्मर् कस्याको ॥
एक् अर्बुद् पूर्व ढोकातिर अति बलवान् जङ्गि पाले बस्याको ॥
राक्षस् छन् हात्ति घोडा रथ अरु खजना ली खडा भै रह्याका ।१२।

ढोकैपिच्छे यसै रीत्सित खडि पहरा छन् सदा नित्य ताहाँ ।
येती जम्मा छ फौज् सब् भनिकन त खबर् पाइसक्नू छ काहाँ ॥
यस्तो मज्बूतिको फौज् छ तपनि उहि फौज् ध्वस्त चौथाइपारयाँ ।
लंका पोलेर सब् खाक् गरिकन सहजै वैरिको सेखि झार्याँ ॥१३॥

यहिं ढिल किन स्वामित् ! जाउँ सागर् छ जाहाँ ।
कछु ढिल तहिं होला तर्नुपर्न्या छ ताहाँ ॥
यति विनति हनूमान्ले गर्न्याथ्या जसै ता ।
हुकुम पनि ति सुग्रीव्लाइ भैगो यसै ता ॥ १४ ॥

हे सुग्रीव सखे ! असल् विजय यो मूहूर्त ऐले पर्न्यो ।
यस् सायेतमहाँ मुहूर्त नचुकी जस्ले त साइत् गर्न्यो ॥
तेस्ले जित्छ अवश्य यै बखतमा सायेत फौज्ले गरून् ।
मेरो दक्षिण नेत्र फुर्छ बढ़िया लक्षण् छ धीरज् धरून् ।१५।

हैं, जो भी वहाँ जाएगा उससे लड़कर मार डालने के लिए कमर कसे हुए है। पूर्व की ओर जो द्वार है वहाँ एक बलवान जंगी द्वारपाल है। राक्षसगण, हाथी, घोड़ा, रथ एवं ख़ज़ाने लेकर खड़े है। १२ इसी प्रकार प्रत्येक द्वार पर सदैव पहरेदार खड़े रहते हैं। वहाँ की सेना के सैनिकों की संख्या ज्ञात करना भी सम्भव नहीं है। ऐसी बलिष्ठ सेना है, फिर भी उसका चौथाई भाग का तो ध्वंस कर दिया और समस्त वीरों के घमण्ड को चूर कर आया हूँ। १३ स्वामी ! अब यहाँ विलम्ब क्यों कर रहे हैं। सागर की ओर चलिए, भले ही वहाँ कुछ लोगों को उतारने में कुछ विलम्ब हो जाये। हनुमान के विनती करते हीं सुग्रीव को आदेश दे दिया गया। १४ हे मित्र सुग्रीव ! यही वास्तविक विजय के शुभ मुहूर्त का अवसर है। इस अवसर को व्यर्थ गँवाये बिना जो कार्य करता है वह अवश्य ही विजय प्राप्त करता है। मेरा तो दक्षिण नेत्र फड़क रहा है, यह उत्तम लक्षण है। यदि इस शुभ अवसर को सेनाएँ हाथ से न जाने दें, तो हमें अवश्य ही विजय की प्राप्ति होगी। १५ वानरसेना लंका में प्रस्थान करके लंका पर आक्रमण कर दे तथा रावण को वंश-सहित नष्ट

रावण्लाइ कुलैसमेत् क्षय गरी ल्याइन्छ सीता पनि ।
वानर्को जति फौज् छ सब् अब चलोस् ठोकिन्छ लंका भनी ।।
लक्ष्मण् अंगदमा चढून् दुइ जना हामी हनूमान् महाँ ।
सुग्रीव्लाइ यती हुकूम दिइ गन्या प्रस्थात् प्रभूले तहाँ ।।१६।।

राम् सुग्रीव् हनुमानमा चढि चल्या लक्ष्मण्जि अंगद्महाँ ।
वानर्को सब फौज् चल्यो पृथिवि सब् डग्मग् गराई तहाँ ।।
चाहींदैन रसद् सबै विरहरू खान्छन् फलैफूल् फकत् ।
गर्जन्छन् सब वीर्हरू तस बखत् सब् काम्न लाग्यो जगत् १७

रात्दिन् फौज चल्यो टिकेन बिचमा काहीं कतै एक् घरि ।
विन्ध्याचल्कन नाघि फेरि मलया- चल् नाघि यस्तै गरी ।।
पौंच्या क्षार समुद्रका तिरमहाँ डेरा प्रभूको पऱ्यो ।
वानर्को त्यति फौजले खचित भै सारा किनारा भऱ्यो ।१८।

वानर्को सब फौज् तहाँ हुकुमले तिर्मा जसै ता बस्यो ।
सागर् तर्न उपाय केहि नहुँदा मन्मा ठुलो ताप् पस्यो ।।
भन्छन् वीर्हरु यो कसो गरि तरौं साह्रै कठिन भो यहाँ ।
यो सागर् नतरी त जान नहुन्या हींडेर लंकामहाँ ।।१९।।

करके महारानी सीता को स्वतन्त्र करे । लक्ष्मण अंगद की सहायता लें और हम दोनों हनुमान की सहायता लेंगे । सुग्रीव को यह आज्ञा दे कर प्रभुने भी वहाँ से प्रस्थान किया । १६ राम-सुग्रीव, हनुमान के ऊपर सवार हुए तथा लक्ष्मण अंगद पर सवार हुए और इस प्रकार लंका-विजय के लिए सम्पूर्ण बानरसेना को लेकर चल पड़े । वानरों के प्रस्थान करने पर उनकी भीड़ से समस्त पृथ्वी ढक गई । रसद की कोई आवश्यकता ही न थी, क्योंकि सभी वीर फल-फूलादि खा कर ही दिन पार कर सकते थे । सारे वीर गर्जते हुए जा रहे थे । उनके गर्जन से समस्त भू-मण्डल काँप उठा । १७ सेना सारी-रात, सारा-दिन चलती रही, क्षणभर को भी कहीं नहीं रुकी । विंध्याचल और फिर मलयाचल को लाँघते हुए इसी क्रम से सब लोग क्षीरसागर के किनारे पहुँचे और वहीं प्रभु ने पड़ाव डालने की आज्ञा दी । वानरों की असंख्य सेना से समुद्र-तट खचाखच भर गया । १८ आज्ञा पाकर एक-एक कर सभी लोग किनारे बैठ गए और सागर पार करने का उपाय सोचने लगे । कोई उपाय समझ में न आया तो वे गहरी चिन्ता तथा ताप से भर गए । वीरजन कहते हैं कि इस सागर को किस प्रकार पार किया जाए, यह तो अत्यन्त कठिन समस्या उत्पन्न हो गई है । अन्य कोई ऐसा मार्ग भी नहीं

सब् राक्षस्कन मार्दथ्यौं यहि वखत् सागर् तरी पार् गया ।।
आपस्मा यति वात् परस्पर गरी जम्मा प्रभूथ्यैं भया ।।
सीताजीकन संझि संझि रघुनाथ् ज्ञानै स्वरूपी पनि ।
लाग्या गर्न विलाप् अनेक् तरहले सीते ! कहाँ छौ भनी ।२०।

राम्को नाम फगत् लिन्याकन पनी सब् दुःख ताप् टर्दछन् ।
आफै श्रीरघुनाथलाइ पनि क्या सन्ताप् कतै पर्दछन् ।।
सच्चित् रूप् परिपूर्ण अद्वितिय एक् आत्मा स्वरूपी पनि ।
गर्छन् मानुष भै लिला पनि अनेक् सुक्खी र दुक्खी वनी ।२१।

कुदि कुदि सब लङ्का पोलि फेर् पुत्र मारी ।
बहुत विरहरूको सैन्य खुप् ध्वस्त पारी ।।
गरिकन सब भेट्घाट् फेर हनुमान् फिर्‍याको ।
सुनिकन तहिं रावण् भै गयो नूर् गिर्‍याको ।। २२ ।।

उहि बखतमहाँ त्यो मन्त्रणा गर्नलाई ।
सब विरकन ताहाँ डाक्न जल्दी पठाई ।।
वरिपरि सब राखी मन्त्रिथ्यैं भन्न लाग्यो ।
कसरि सहज उम्की त्यो हनूमान भाग्यो ।। २३ ।।

अब त जसरि मेरो हुन्छ सो हित् चिताऊ ।
बुझिकन सवले एक् मन्त्रणा लौ वताऊ ।।

जिससे पैदल चलकर ही लंका पहुँच जाए । १९ इसी समय किसी प्रकार सागर पार कर पाते तो सभी राक्षसों को मार डालते । परस्पर इसी प्रकार का विचार-विमर्श करते हुए सव लोग प्रभु के पास एकत्रित हो गए । सीताजी को बारम्बार स्मरण करके ज्ञान-सागर श्रीरघुनाथजी भी, 'सीते कहाँ हो !' कहते हुए विलाप करने लगे । २० सच्चिदानन्द-रूपी होकर भी मनुष्य के समान अनेक प्रकार से सुखी एवं दुखी वन कर वे लीलाएँ करते हैं, परन्तु वास्तव में, राम का तो केवल नाम लेने से ही सारे दुःख-संकट टल जाते हैं । २१ रावण को समाचार मिला कि हनुमान ने कूद-कूद कर सम्पूर्ण लंका को जला डाला है । उसके पुत्र को मार कर अनेक वीरों की सेना को ध्वस्त करके, सीता से भेंट करके, पुनः हनुमान लौट गया है तो वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया । २२ उसी समय विचार-विमर्श करने के लिए सव वीरों को बुलावा भेजा । सव को चारों ओर बैठा कर रावण मंत्रियों से कहने लगा कि हनुमान इतनी सरलता से बच कर किस प्रकार भाग निकला । २३ अब तो किसी प्रकार मेरे हित का कोई उपाय

तिमि सबकन् नाघी काम सिद्ध्याइ भाग्यो ।
मकन त हनुमान्‌का कामले लाज लाग्यो ॥ २४ ॥
यति हुकुम सुनी सब् घोचिया झैं ति जाग्या ।
अगि सरि सरि बिन्ती सेखिको गर्न लाग्या ॥
किन बहुत हजूर्‌को तेहि रामदेखि शंका ।
कसरि सहज जित्‌ला रामले आज लंका ॥ २५ ॥
कति विनति गरौं धेर् इन्द्रजित् पुत्र जस्को ।
छ त कसरि ति जित्छन् पुग्छ जोर् आज कस्को ॥
फकत हजुरका एक् पुत्रले इन्द्र जीत्या ।
यहि बुझि अरु दिक्पाल्‌का समेत् सेखि बीत्या ॥ २६ ॥
अधिपति मय हुन् सब् दैत्यका सो डरैले ।
खुरुखुरु यहिं आई छोरि सुम्प्या करैले ॥
अरु अब कहिं छन् क्या वीर् हजुर्‌का सरीका ।
सब विर वशमै छन् ई तिनै लोक्‌भरीका ॥ २७ ॥
अलिकति हनुमान्‌ले जो यहाँ वीर मान्यो ।
कुदि कुदि सब लङ्का पोलि जो ध्वस्त पान्यो ।

निकालो और सब लोग सोच-समझ कर अपना-अपना विचार प्रकट करो। तुम सबके देखते-देखते आगे निकल कर अपना कार्य समाप्त करके भाग गया। मुझे तो हनुमान की इस कार्य-कुशलता पर बड़ा क्षोभ हो रहा है। २४। रावण के यह वचन तथा आदेश सुनकर सब के हृदय में एक चुभन सी हुई। वे सब बारी-बारी से आगे बढ़-बढ़ कर अपने अहंकार को प्रगट करते हुए इस प्रकार वोले—श्रीमन्! उस राम से क्यों इतने भयभीत हैं? आज लंका पर विजय प्राप्त करना राम के लिये सरल नहीं होगा। २५। अधिक विनती क्या करूँ। आपका तो पुत्र इन्द्रजीत है, जिसने अकेले ही इन्द्र पर विजय प्राप्त की है। ऐसे पराक्रमी के सामने अन्य दिग्पालों का घमण्ड भी चूर हो गया, तो राम किस प्रकार टिक पायेगा। २६। समस्त दैत्यों ने भयभीत होकर, सीधे यहाँ आ कर विवश हो आत्मसमर्पण कर अपनी पुत्री आपको सौंप दी। हे श्रीमन्! क्या अब भी आपके समान कहीं अन्य कोई वीर है? तीनों लोक के समस्त वीर आपके वश में हो चुके हैं। २७। हनुमान अकेला था। वह अकेला क्या कर लेगा, यही सोच कर हम लोग चूक गए और वह कूद-कूद कर सम्पूर्ण लंका को भस्म कर गया। जो कुछ भी तहस-नहस वह कर गया

उ त फकत यसैले गर्न क्या सक्छ भन्दा ।
चुकिदियौं गरिहाल्यो फेरिको क्या छ धन्दा ।। २८ ।।
हुकुम दिनुहवस् लौ दश् दिशा वीर जाऊँ ।
जति जति अगि सर्छन् मारि तिन्लाइ आऊँ ।।
सकल पृथिविमाका वानरै छुट्टि गर्छौं ।
सकल हजुरको ताप् एक क्षण्मा त हर्छौं ।। २९ ।।

येती गर्व गरी सबै ति विरले विन्ती गर्‍याको सुनी ।
मेरो मत् पनि बिन्ति गर्दछु भनी आफ्ना मनैले गुनी ।।
गर्छन् विन्ति ति कुम्भकर्ण विरले हे नाथ् लियौ क्या मति ।
सीता क्यान हर्‍यौ चुक्यौ तिमि यहाँ कुन् हुन्छ तिम्रो गति ।३०।
श्रीराम्चन्द्रजिले अवश्य अघि नै देख्थ्या त एक् वाण् धरी ।
तिम्रा प्राण लिन्या थिया तहिं कहाँ बाँच्थ्यौ तिमी एक् घरि ।।
सीता चोरि गर्‍यौ र पो तिमि बच्यौ को टिक्छ साम्ने परी ।
तेस्को फल् सब पाउँछौ अब भन्या मार्छन् कुलै साफ्गरी।३१।
राम् जो हुन् प्रभु ई अनन्त अधिनाथ् चौधै भुवन्का धनी ।
लक्ष्मी हुन् जगदम्बिका इ यिनकी पत्नी सिताजी पनि ।।

वह केवल इसी कारण हुआ कि हमें उसकी ऐसी फ़ुर्तीली कार्य-कुशलता का अनुमान नहीं था। अब आगे इस प्रकार के भय की कोई आशंका नहीं। अब हम सब पूर्णतया उसका सामना करने योग्य हैं। २८ आज्ञा देने की कृपा करें। दशों दिशाओं को सारे वीर चले जायें और जो-जो शत्रु सम्मुख पड़ता जाये उसे मार आएँ। इस प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी के समस्त वानरों का सफ़ाया हो जायगा। हम सब मिल कर श्रीमन् के सकल तापों का हरण कर लेंगे। २९ उन सब वीरों द्वारा की गई गर्वपूर्ण विनती को सुनकर कुम्भकर्ण मन में विचार करते हुए कहता है—हे नाथ! आपने कैसी मति को धारण किया। सीता का अपहरण क्यों किया। आपने यहाँ पर बड़ी चूक कर दी है। अब पता नहीं आपकी क्या गति होगी। ३० यदि श्रीरामचन्द्र जी ने पहले ही देख लिया होता तो अवश्य ही उसी समय उनके एक ही वाण के प्रहार से आपके प्राण चले जाते; फिर आप कहीं एक क्षण के लिए भी जीवित न दिखाइ देते। आपने सीता का हरण चोरी से किया है, इसी लिए अभी तक जीवित हैं। उनके सामने पड़ने से कौन टिक सकेगा, इसका परिणाम आप अब भोगोगे। अब तो, श्रीरामचन्द्र जी आपको वंश-सहित मार डालेंगे। ३१ राम चौदह

सब् राक्षस्हरु नाश् गराउन यहाँ सीता तिमीले हऱ्यौ।
साँचा हुन् इ कुरा अवश्य तिमिले आफ्नै बहुत् नाश् गऱ्यौ ३२
जुन् काम् गर्नु उचित् थियेन उहि काम् ऐले गऱ्यौ तापनि।
सब् हाम्रा भरले गऱ्यौ अधिक वीर् छन् भाइ छोरा भनी॥
लड्छौं निश्चय भाइ वर्ग पनि सब् हामी जती छौं यहाँ।
स्वस्थै भै रहनू हवस् हजुरले शोक् गर्नुपर्ला कहाँ।३३।

तेस् कुम्भकर्ण विरले सब यो भन्याको।
श्री रामलाइ परमेश्वरमा गन्याको॥
सून्यो र इन्द्रजित भन्छ हुकूम् म पाऊँ।
सेना समेत सहज राम्कन मारि आऊँ॥ ३४॥

यस्तै तहाँ विरहरू सब बिन्ति पार्थ्या।
केवल् गफै गरि मुखै तरवार मार्थ्या॥
श्रीरामभक्त ति विभीषण ताहिं आई।
विन्ती गऱ्या वहुत हित् मनले चिताई॥ ३५॥
श्रीरामजीसित विरोध् किन हो गऱ्याको।
सीताजिलाइ तिमिले किन हो हऱ्याको॥

भुवन के स्वामी हैं, अनन्त अधिनाथ प्रभु है। उनकी पत्नी सीता, जगदम्बिका लक्ष्मी हैं। सारे राक्षसों का नाश कराने के लिए ही आपने सीता का हरण किया है। ये बातें सत्य हैं, आपने निश्चय ही अपनी बड़ी भारी हानि को स्वयं निमंत्रण दिया है। ३२ जो कार्य करना उचित नहीं था उसे भी आपने किया, केवल हम लोगों के भरोसे पर। भाई और पुत्रादि अत्यन्त वीर हैं, लड़ेंगे ही। श्रीमन् अब आप शान्त हो जाएँ। शोक क्यों करते हैं, धैर्य्य धारण करने की कृपा करें। ३३ उस वीर कुम्भकर्ण की सब बातों को तथा श्रीराम को परमेश्वर की श्रेणी में गिनने की बात को सुन कर इन्द्रजीत ने कहा, मुझे आज्ञा हो! मै राम को उनकी सेना सहित सहज ही में अभी मार कर चला आऊँ। ३४ इसी प्रकार वहाँ पर समस्त वीर-केवल वाक् प्रहार कर रहे थे। लेकिन श्रीराम के भक्त विभीषण ने वहाँ आकर मन में शुभकामनाएँ कीं और कई प्रकार की विनती की। ३५ श्रीरामभक्त विभीषण ने रावण से पूछा कि ऐसे महाबली श्रीराम, जिसने कि खर, त्रिशिर और दूषण जैसे बलिष्ट वीरों को मार डाला है, उसके सामने कोई विजय नही पा सकता है। अतः ऐसे पराक्रमी से विरोध कैसा, और आपने सीताजी का हरण क्यों किया? ३६

श्रीरामचन्द्रकन सक्तछ जित्न कस्ले ।
मान्या खर त्रिशिर दूषण वीर जस्ले ।। ३६ ।।

ठूला भन्नु इ कुम्भकर्ण विर हुन् क्या चल्छ इनको पनि ।
सेखी गर्दछ इन्द्रजित् नबुझि यो राम्लाइ मार्छू भनी ।।
सेखी गर्न जती छ सब् यहिं गरून् को टिक्छ साम्ने परी ।
सब् राक्षस्हरु नाश् हुनन् जब तहाँ चेत्तन् चुक्याको घरी ।३७।

सीताजी ग्रहतुल्य भैकन सबै खाक् गर्न आँटिन् यहाँ ।
यो प्राणान्त बखत् भयो अझ पनी चेत् छैन चेत् गो कहाँ ।।
बाँच्नाको यदि मन् छ पो त महाराज्! श्रीरामजीथ्यैं गई ।
सीता सुम्पिदिनू यही बखतमा सोझो र साम्ने भई ।३८।

श्रीराम्चन्द्रजि फौज् लिइकन यहाँ आई नलड्दै गया ।
आयो आज शरण् पर्‍यो भनि वहुत् गर्नन् प्रभूले दया ।।
चाँडै आज सिताजि सुम्पनुहवस् सीताजि लंका रही ।
बाँची सक्नु कदापि छैन अरुथ्यैं काहीं शरण्मा गई ।।३९।।

हित् अमृत् सरिको विभीषणजिको सून्यो वचन् यो जसै ।
लिन्थ्यो त्यो इ कुरा कहाँ अधिक झन् रावण् रिसायो तसै ।।

कुम्भकर्ण कैसा ही वहादुर वीर क्यों न हों। श्रीराम के समक्ष उसकी भी कुछ नही चलेगी। इन्द्रजीत भी राम को मारने का व्यर्थ अभिभान कर रहा है। जितनी डींग मारनी हो यहीं मारलो, प्रभु के सामने कोई भी नहीं टिक पायेगा। समस्त राक्षणगण नष्ट हो जाने पर वीते अवसर के लिए पश्चाताप करेंगे। ३७ सीताजी ग्रह-तुल्य हो कर यहाँ पर सव खाक करना चाहती है। अव प्राणान्त का समय हो चुका है। सवकी चेतना कहाँ लुप्त हो गयी है ? अतः किसी को चेतना नहीं है। विभीषण रावण से कहता है कि महाराज, यदि जीवित रहना है तो यही अवसर है कि आप श्रीराम के पास जाकर सीता जी को उन्हें सौप दें। ३८ श्रीराम-चन्द्र जी सेना लेकर यहाँ आ पहुँचे, इससे पहले ही यदि आप शीघ्र जाकर आज ही सीता जी को उन्हें सौंप दें, तो यह जानकर कि यह शरण में आया है, वे अत्यन्त दया प्रदर्शित करेंगे। सीताजी के लंका में ही रहने से आप सभी लोगों का जीवित रहना कठिन है। ३९ जैसे ही विभीषण की अमृत-बाणी रावण ने सुनी, वैसे ही उस बात को महत्व देने के वजाय उसको क्रोध आ गया। अत्यन्त ही क्रोधित होने पर उसने लोगों से कहा कि आज यह हमारा शत्रु बन गया है तथा इसे रामचन्द्र के प्रति श्रद्धा

लाग्यो भन्न रिसाइ आज सुन यो शत्रू सरीको भयो ।
मेरा शत्रु ति रामचन्द्र सित खुप् प्रीत् बस्न यस्को गयो।४०।
आफ्नै ज्ञाति बढ्यो भन्या अरु सबै ज्ञाती गिरोस् यो भनी ।
भन्छन् निश्चय भन्दथ्या उहि छटा यस्ले जनायो पनि ।।
ऐले मारिदिन्या थियाँ अरु भया भाई भयो क्या गरूँ ।
राक्षस्का कुलमा अधम् यहि भयो धिक्कार दिन्छू बरु ।।४१।।
मेरो आज नजीकमा रहनको लायक् तँ छैनस् भनी ।
धिक्कार् हो तँ अधम् भइस् भनि बहुत् धिक्कार दीयो पनि ।।
धिक्कार्को यति बात् सुन्या र झटपट् श्रीराममा मन् दिई ।
आकाश्मा झटपट् कुदीकन गया चार् मंत्रि साथ्मा लिई ।४२।
लाग्या रावणलाइ भन्न महराज् ! हीतै भन्याँ तापनि ।
धिक्कारै तिमिले गऱ्यौ नबुझि ज्ञन् शत्रू त हो यो भनी ।।
दाज्यू हौ पितृ तुल्य छौ यति सही ऐले फरक् लौ भयाँ ।
खूशी भै तिमि राज् गऱ्या म त उनै राम्का शरण्मा गयाँ।।४३।।
काली हुन् जगदम्बिका भगवती सीताजि राम् काल हुन् ।
भूभार् हर्ननिमित्त यो छ अवतार् बाँच्न्या छ पापी कउन् ।।

उत्पन्न हो गयी है । ४० अपने ज्ञान को देख कर दूसरों के ज्ञान का आभास हो जाता है, ऐसा निश्चय ही कहा जाता था, ठीक उसी प्रकार लक्षण इसने भी दिखाये । राक्षसवंश में यही एक अधम उत्पन्न हुआ है । यदि मेरे स्थान पर कोई और होता तो इसे अभी समाप्त कर देता । लेकिन क्या कर सकता हूँ, अपना ही भाई तो है । ४१ अत्यन्त ही क्रोधित होने के कारण रावण ने विभीषण को धिक्कारते हुए कहा, तुम मेरे साथ रहने के योग्य नहीं हो और अधम हो । रावण के मुख से ऐसी बात सुनकर विभीषण ने श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान किया और चार मंत्रियों को लेकर वहाँ से चला गया । ४२ विभीषण ने रावण से कहा कि महाराज ! हित की बात कहने पर भी आपने मुझ पर व्यर्थ ही क्रोध किया । आप मेरे भाई है और वड़ा भाई पिता के तुल्य होता है, यह ठीक है । लेकिन अव कुछ भी नहीं हो सकता । अब आप प्रसन्नचित्त होकर अपना राज्य चलायें, और मैंने तो अब श्रीरामचन्द्रजी की शरण स्वीकार की है । ४३ महारानी सीता जी काली, जगदम्बिका तथा भगवती का रूप हैं और श्रीराम काल हैं । वे भू-भार को हरने के लिए ही इस संसार में अवतरित हुए हैं; ऐसे प्रभु से कौन पापी अपनी जान बचा सकेगा । श्रीराम ने

श्रीराम्को मतलब् छ मार्न तव पो फिर्दैन तिम्रो मति।
काल्रूप् श्रीरघुनाथको अरु यहाँ को बुझ्न सक्छन् गति।४४।
सब् राक्षस्कुलको हुन्या छ अव नाश् छोड्छन् प्रभूले कहाँ।
तिम्रा नाश् कसरी म देखुँ म त लौ जान्छू प्रभू छन् जहाँ॥
खूशी भै चिरकाल तक् गर यहाँ राज्खुप् चिरायू भया।
येती बिन्ति गरी विभीषण सबै छाडेर राम्थ्यैं गया।४५।

चार् मन्त्रीसँग ली विभीषण गया श्रीरामका पासमा।
वाहाँ जान डराइ सम्मुख भया टाढै ति आकाशमा॥
हेनाथ्! आज शरण् पऱ्याँ चरणमा आयाँ म सेवक् भनी।
उच्चा शब्द गरी गऱ्या विनति खूप् वृत्तान्त आफ्नू पनि॥४६॥

हे राम्! रावण कुम्भकर्ण विरको भाई विभीषण् म हूँ।
रावण् आज अधम् भयो हजुरमा बिस्तार् कहाँ तक् कहूँ॥
सीता क्यान हऱ्यौ फिराउ भनि खुप् हीतैं भन्याँ तापनि।
झन् धिक्कार् गरि खड्ग लीकन उठ्यो काट्छू तँलाई भनी॥४७॥

यस्तो रावणले गऱ्यो र रघुनाथ् आयाँ हजूर्मा म ता।
संसार् पार् सहजैं उतार्छ जसले सो छोडि जाऊँ कता॥

तुम्हारा नाश करने के लिए ही जन्म लिया है, इसी कारण से तुम्हारी मति मे कोई परिवर्तन नहीं होता है। अतः काल-रूपी श्रीरघुनाथ की गति को यहाँ कौन समझ सकता है? ४४ अब तो वे समस्त राक्षस-वंश का समूल नाश कर डालेगे। लेकिन तुम्हारा नाश होते हुए मैं कैसे देख सकूँगा, इसलिए मैं तो भगवान श्रीरामचन्द्रजी की शरण में जाता हूँ। तुम प्रसन्न होकर राज्य सँभालो और चिरायु रहो। ऐसा कह कर विभीषण सब कुछ त्याग कर राम के पास चला गया। ४५ चार मंत्रियों को साथ लेकर विभीषण श्रीरघुनाथ के पास चला गया। वहाँ जाने से भयभीत होकर आकाश में ही दूर सम्मुख हुआ और अपना वृत्तान्त सुनाते हुए विभीषण ने श्रीराम से विनती की कि हे नाथ! मैं आपका ही सेवक हूँ और आज आपकी शरण में आ गया हूँ। ४६ विभीषण ने राम से अपना वृत्तान्त सुनाते हुए कहा कि हे प्रभु! मैं लंका के राजा रावण का भाई हूँ। वह आज अधम हो गया है, मैं कहाँ तक उसकी सेवा करता रहूँ। 'सीता को क्यों हरण किया? उसे श्रीराम को वापस सौंप दो', जब मैंने उससे ऐसा कहा तो वह क्रोधित हो-कर मुझ पर खड्ग लेकर प्रहार करने के लिए दौड़ा और मुझे तरह-तरह से धिक्कारा। ४७ जब रावण

यस्तो बिन्ति सुन्या विभीषणजिको सुग्रीव्जीले जसै ।
रावण्कै छल झैं बुझ्या र झटपट् बिन्ती गऱ्या यो तसै ।।४८।।

विश्वास् नमान्नु रघुनाथ ! इ त दुष्ट पो हुन् ।
गर्नन् इ औसर पऱ्या हुँदि जीयमा खुन् ।।
मर्जी हवस् इ सब पक्डि निभाइ हालुम् ।
भाई म हूँ पनि भन्यो उ छँदै छ मालुम् ।। ४९ ।।

विश्वास् कत्ति नमानि बक्सनुहवस् सब् दुष्ट पो हुन् इता ।
रावण् कै यदि भाइ हो त किन ढील् मारौं-न भन्छू म ता ।।
जैले पर्दछ छिद्र उस् बखतमा मार्नन् इ दागा गरी ।
मार्नालाइ हुकूम् हवस् सहजमा मारिन्छ येसै घरि ।।५०।।
मेरो मत् बिनती गऱ्याँ हजुरको क्या मत् छ ख्वामित् भनी ।
सुग्रीव्को बिनती सुनेर रघुनाथ् हाँसेर बोल्या पनि ।।
हे सुग्रीय सखे ! म आटुँ न सबै लोक् ध्वस्त ऐले गरी ।
फेर् सृष्टी क्षणमा गरूँ सहजमा लाग्दैन एक्काल् घरि ।५१।

ने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया, तो हे रघुनाथ ! मैं आपकी शरण में आ गया और अब आपकी ही सेवा करने की इच्छा है। जो प्रभु संसार को तारनेवाले हैं उस प्रभु को छोड़कर मैं और किसकी शरण में जाऊँ। विभीषण की ऐसी विनती सुनकर सुग्रीव ने भय के कारण श्रीराम से विनती की। ४८ सुग्रीव श्रीराम से विनती करते हुए कहने लगे, "हे रघुनाथ ! यह तो दुष्ट है। इस पर आप ज़रा भी विश्वास न करें। कहीं ऐसा न हो कि अवसर पाते ही आक्रमण कर दे। अपने को रावण का भाई बताता है और लगता भी ऐसा ही है। आज्ञा दें तो मैं अभी इन सब को पकड़ कर समाप्त कर डालूँ। ४९ हे रघुनाथ, आप किंचित्मात्र भी इसका विश्वास न करें। यदि रावण का ही भाई है तो फिर इसका नाश करने में विलम्ब कैसा। कोई अवसर मिलने पर उस अवसर का लाभ उठाकर ये हम पर आक्रमण कर दें, इससे पहले ही आप मारने की आज्ञा दें, जिससे इसका सहज ही नाश कर दिया जाय। ५० मेरा तो यही विचार है, हे प्रभु ! आपका क्या मत है।" सुग्रीव की विनती सुनकर श्रीरामचन्द्र जी हँसकर बोले, "हे मित्र सुग्रीव ! यदि मैं चाहूँ तो अभी सारी सृष्टि ध्वस्त कर डालूँ और चाहूँ तो क्षण में ही पुनः सृष्टि निर्माण कर लूँ। ऐसा करने में तो कुछ भी समय नहीं लगेगा। ५१ अपना भक्त समझ कर विभीषण को अन्दर आने की अनुमति दे दो।

तस्मात् भक्त बुझेर निर्भय दियाँ आउन् यि ल्याऊ यहाँ ।
उस् माथी पनि शत्रुदल् यदि भया मार्थ्या म छोड्थ्याँ कहाँ ॥
शत्रूका इ त ओरि हुन् तर पनी आया शरण्मा यहाँ ।
मेरो आज शरण् पऱ्या पनि भन्या तिन्लाइ छोड्छू कहाँ ।५२।

एकै बखत् पनि शरण् भनि जो मलाई ।
संझेर पर्दछ शरण् त म तेसलाई ॥
लिन्छू शरण् यदि उ शत्रु हवस् दयैले ।
मेरो व्रतै छ यहि छोड्छु कसोरि ऐले ॥ ५३ ॥

श्रीराम्चन्द्रजिको हुकूम् यति हुँदा ल्याया विभीषण् पनि ।
पौंचाया रघुनाथका हजुरमा ल्याई इनै हुन् भनी ॥
श्रीराम्चन्द्रजिको विभीषणजिले पाया र दर्शन् तहाँ ।
खुप् साष्टांग गरी प्रणाम् पनि गऱ्या पस्रेर पृथ्वीमहाँ ॥५४॥
दर्शन् श्रीरघुनाथको जब मिल्यो खूशी विभीषण् भया ।
जो ती दुःख थिया विभीषणजिका ताहीं तुरुन्तै गया ॥
सर्वात्मा रघुनाथको स्तुती गऱ्या ईश्वर इनै हुन् भनी ।
सर्वात्मा रघुनाथ् स्तुती सुनि बहुत् खूशी हुनूभो पनि ॥५५॥
क्या माग्छौ वर माग दिन्छु म भनी हूकूम् भएथ्यो जसै ।
भक्ती मात्र थियो वहाँ मनमहाँ त्यो भक्ति माग्या तसै ॥

यदि विभीषण के साथ शत्रु दल भी होते तो मैं उन्हें अवश्य मार डालता, छोड़ क्यो देता । शत्रु के तो ये सम्बन्धी हैं, तथापि मेरी शरण में आये हैं । जब मेरी शरण में आ पड़ते हैं तो मैं भी उन्हें छोड़ूँगा कहाँ ? ५२ श्रीराम ने बताया कि मुझे स्मरण करके जो भी एक बार मेरी शरण में आ जाता है उसे मैं अपनी शरण में ले लेता हूँ, चाहे वह शत्रु ही क्यों न हो । यही मेरा सबसे बड़ा व्रत है, इसे मैं कैसे त्याग सकता हूँ । ५३ श्रीरामचन्द्रजी की ऐसी आज्ञा होने पर विभीषण को उनके सम्मुख लाया गया । यही हैं, ले आया हूँ, ऐसा कह कर रघुनाथ की शरण में पहुँचाया गया । वहाँ पहुँच कर विभीषण ने श्रीराम के दर्शन प्राप्त किये और पृथ्वी पर लेट कर रघुनाथ को प्रणाम किया । ५४ श्रीरघुनाथजी के दर्शन पाकर विभीषण अत्यन्त प्रसन्न हुआ तथा विभीषण का सम्पूर्ण दुःख क्षण भर में समाप्त हो गया । ईश्वर यही हैं, ऐसा सोच कर विभीषण ने श्रीरघुनाथ की स्तुति की । स्तुति सुनकर सर्वात्मा श्रीरघुनाथ वहुत प्रसन्न हुए । ५५ क्या वरदान माँगते

हे नाथ् ! भक्ति रहोस् सदा हजुरमा कैले नविग्रोस् मति ।
छोटै मान्छु म भक्ति देखि अरु चीज् यस् सृष्टिमा छन् जति ५६
तस्मात् कर्म विनाश गर्नकन एक् ध्यान् मात्र तिम्रो हवस् ।
येतीले म कृतार्थ छू विषय सुख् सम्पूर्ण दूरै रहोस् ।।
केवल् भक्ती मिल्या प्रसन्न पनि छू बिन्ती गर्‍याथ्या जसै ।
होला लौ तिमिलाइ भक्ति पनि त्यो दीनूभयो वर् तसै ।।५७।।

जस्ले यो तिमिले गर्‍यौ स्तुति जती मेरो यती पाठ् गरोस् ।
तेस्लाई यति वर् म दिन्छु सहजै संसार सागर् तरोस् ।।
येती भक्त विभीषणै सित हुकूम् भो फेरि लङ्कामहाँ ।
राज् दिन्छू अहिले भनीकन लहड् आयो र मन्मा तहाँ ।।५८।।

भाई लक्ष्मणलाइ मर्जि पनि भो हे भाइ ! लंकामहाँ ।
राज् गर्नन् पछि तापनी म अभिषेक् दीनेछु दिन्छू यहाँ ।।
ल्याऊ जल् तिमि जाउ सागर भनी हूकूम् भएथ्यो जसै ।
दौडी सागरमा गई क्षणमहाँ ल्याईदिया जल् तसै ।५९।
राजा भै तिमिले रहू अब उपर् लङ्का पुरीको भनी ।
श्रीराम्चन्द्रजिले विभीषण-उपर् दीया अभीषेक् पनि ।।

हो, माँगो । मैं तुम्हें दूँगा, कह कर जैसे ही यह आज्ञा हुयी वैसे ही जो उस समय उसके मन में भक्ति थी वही माँगते हुए उसने कहा, हे नाथ ! मेरी भक्ति सदैव आपकी ओर रहे और मेरी मति कभी भी भ्रष्ट न होने पाये । इस संसार में भक्ति के अतिरिक्त अन्य जो भी वस्तुएँ हैं उन्हें मैं तुच्छ समझता हूँ । ५६ कर्मो का विनाश करने के लिए केवल आपका ही ध्यान रहे । वस इतने से ही मैं आपका कृतार्थ हूँ, सम्पूर्ण विषय-सुख दूर ही रहे । केवल भक्ति-प्राप्त से ही मैं प्रसन्न हूँ । जैसे ही उसने ऐसा कहा, वैसे ही प्रभु ने यह कह कर कि 'तुम्हें भक्ति प्राप्त हो' वरदान दिया । ५७ तुमने जितनी मेरी स्तुति की है यदि उतनी स्तुति कोई और भी करता तो उसे भी मैं इतना ही वरदान देता, जिससे वह सहज ही संसार-सागर से तर जाये । भक्त विभीषण से ऐसा कह कर राम ने पुनः कहा, 'मेरे मन में विचार आया है कि लंका में तुम्हारा ही राज्याभिषेक करूँगा । ५८ हे भाई ! भले ही तुम वाद में लंका पर राज्य करो, परन्तु मैं तो तुम्हें अभी ही राज्याभिषेक करूँगा ।' ऐसा कह कर श्रीराम ने लक्ष्मण को सागर से जल लाने की आज्ञा दी । वैसे ही लक्ष्मण ने दौड़कर सागर से जल लाकर दिया । ५९ अव तुम लंका के राजा वनकर रहो,

लंकाका अधिराज् विभीपण हुँदा सुग्रीव्हरू खुश् भया ।
ताहीं सुग्रिवजी विभीषणजिका साम्ने नजीक्मा गया ।६०।

खूशी भैकन अङ्कमाल् पनि गरी सुग्रीव भन्छन् तहाँ ।
सेवक् हौं सब रामका तर तिमी छौ मुख्य सब्मा यहाँ ॥
यस् रावण्कन मार्नलाइ महाराज् ! साहाय देऊ भनी ।
सुग्रीव्ले यति वात् गर्न्या जब तहाँ बोल्या विभीषण् पनि।६१।

हे सुग्रीव् महाराज् ! सहाय दिनको क्या शक्ति मेरो यहाँ ।
तीन् लोक्का अधिनाथ् परात्म रघुनाथ् आफैं खडा छन् जहाँ ॥
दास् हूँ श्री रघुनाथको म गरुँला सेवा त भर्सक् गरी ।
यस्तै बात्चित गर्दथ्या दुत तहाँ आये अगाडी सरी ॥६२॥

रावण्को शुक दूत त्यो अगि सरी सुग्रीव साम्ने भई ।
वाहीं जान त डर् भयो र डरले आकाश वीच्मा रही ॥
लाग्यो सुग्रिवलाइ भन्न महाराज् ! सुग्रीव् खरावी भयो ।
राम्लक्ष्मण् सितको मिलाप्मसितको वैरी हुन्या मन् गयो ॥६३॥

भाई हो मितको जनाउनु असल् सम्झा तँ जा लौ भनी ।
हूकूम् रावणको भयो र अहिले याहाँ म आयाँ पनि ॥

ऐसा कह कर रघुनाथ ने विभीपण का राज्यभिपेक किया । विभीपण के लंका का अधिराज वन जाने पर, सुग्रीव इत्यादि अत्यन्त प्रसन्न हुए । तत्पश्चात् सुग्रीव विभीषण के सम्मुख गये । ६० अत्यन्त प्रसन्नता से आलिंगन करते हुए सुग्रीव विभीषण से कहने लगे कि हम सव राम के सेवक हैं परन्तु हम सवमें से तुम मुख्य हो । हे महाराज ! अव रावण को मारने में सहयोग दो । सुग्रीव की यह वात सुनकर विभीषण वोले— । ६१ हे सुग्रीव महाराज ! सहयोग देने के लिए मेरे पास शक्ति कहाँ ! मैं तो श्रीरघुनाथ का दास हूँ । अतः मुझसे जो कुछ भी सहयोग हो सकेगा मैं अवश्य करूँगा । जहाँ तीनो लोक के अधिनाथ परमात्मा श्रीराम की शक्ति विराजमान हैं, तो वहाँ उनके सम्मुख किसी अन्य की शक्ति क्या है ? इसी प्रकार की वार्तालाप के वीच ही दूत उनके सम्मुख आ खड़ा हुआ । ६२ रावण का शुकदूत सुग्रीव के सम्मुख आया, लेकिन भय के कारण आकाश के वीच में ही रहकर वोला—' हे सुग्रीव महाराज ! वहुत बुरा हुआ जो राम-लक्ष्मण से मित्रता करके मुझसे वैर करने का विचार मन में आया है । ६३ तेरे भाई (वालि) के मित्र होने के नाते यह कहना उचित समझकर कहता हूँ कि तू यहाँ से चला जा'—ऐसी आज्ञा रावण ने दी है ।

तस्मात् रावणको हुकूम् सुन तिमी क्या काम आयौ यहाँ।
सब् लश्कर् लिइ फर्कि जाउ तिमि फेर् लौ राजधानी महाँ ।।६४।।
लंका यो जितिसक्नु छैन अहिले इन्द्रादिले ता पनि।
बानर् पो तिमि हौ त क्या गरूँ कुरा यो स्थान् जितौला भनी।
सीता जो अहिले हन्याँ त मइले श्रीरामकी पो हन्याँ।
भाई हौ मितका विरोध् नगर यो तिम्रो बिराम् क्या गन्याँ।।
मेरै भाइ समान हौ भनि बहुत् हित् जानि अर्ती दियाँ।
जो गछौं तर फर्कि जाउ म त हित् गर्दै छु गर्दै थियाँ।।
यस्तो रावणको हुकूम् छ महाराज् येती भनेथ्यो जसै।
पक्र्या वानरले त खैंचिकन खुप् हान्या मुठीले तसै ।।६६।।
वानर्ले बहुतै फजित् जब गऱ्या हे राम् ! मऱ्याँ लौ भनी।
श्रीराम्चन्द्र सुनून् भनेर शुकले साह्रै करायो पनि।।
दूत् हूँ मार्न उचित् त होइन प्रभू ! बिन्ती गरेथ्यो जसै।
कुट्नू छैन भनी हुकूम् हुन गयो सून्यार छोड्यो तसै।।६७।।
वानर् देखि छुट्यो जसै उहि बखत् कूदेर आकाश् गयो।
क्या उत्तर् दिनु हुन्छ पाउँम जवाफ् जान्छू म भन्दो भयो।।

उसके बाद रावण की आज्ञा पाकर आप, जिस काम से यहाँ पर आये हैं (उसे त्याग) समस्त सेना को लेकर आप राजधानी को लौट जाइए। ६४ इन्द्रादि के द्वारा भी लंका पर कोई विजय नहीं पा सकता है। आप तो वानर ही हैं इस लिए में यह कैसे कहूँ कि यह स्थान आप जीत ही लेंगे। रावण ने सीताजी का हरण यदि किया है तो राम की पत्नी सीता का ही हरण किया। आप उनके मित्र के भाई हैं, अतः विरोध न करें। आखिर उन्होंने आपका बिगाड़ा ही क्या है? ६५ मेरे भाई के समान हो, इसलिए तुम्हारे हित की बात कहता हूँ। वैसे तुम जैसा चाहो करो, मैं तो तुम्हारा हित चाहता था और चाह रहा हूँ और महाराजा रावण की यह आज्ञा है कि आप लौट जायें। जैसे ही दूत के मुख से यह बातें सुनीं, वानर ने उसको अपनी ओर खींच कर मुष्टि के द्वारा उस पर प्रहार किया। ६६ वानर ने जब अधिक परेशान किया तो शुक ने श्रीराम को सुनाने के उद्देश्य से कुछ तेज़ आवाज़ में चिल्लाकर कहा, हे राम! लो अब मरा। जैसे ही उसने यह विनती कि कि दूत हूँ, अतः दूत को मारना उचित नहीं, उसी क्षण न मारने की आज्ञा हुई और आज्ञा सुनकर तुरन्त ही छोड़ दिया गया। ६७ वानरों से ज्यों ही छुटकारा मिला त्यों ही उछल कर वह

यस्को सुग्रिवले जवाफ् तहिँ दिया मित्‌दाज्यु होस् तापनि ।
वाली झैं गरि मारुँला अधम होस् भन्दीनँ दाज्यू पनि ॥६८॥
श्रीराम्‌चन्द्रजिकी सिता हरि कहाँ उम्केर जालास् उसै ।
यस्तै रावणथ्यैं भन्यास् भनि भन्या सुग्रीवजीले तसै ॥
यस्तो सुग्रिवले जवाफ् जब दिया राम्को हुकूम् भो तहाँ ।
पक्रून् वानरले नछोड अहिले क्यै दिन् रहोस् यो यहाँ।६९।
श्रीराम्‌चन्द्रजिको हुकूम् यति हुँदा त्यो शूक बन्धन् पर्‍यो ।
यस् भन्दा अघि आइ शार्दुल फिर्‍यो विस्तार् यसैले गर्‍यो ॥
विस्तार् शार्दुलदेखि राम-बलको सून्यो र रावण् पनि ।
चिन्तामा परि गैगयो अति ठुलो आयेछ लश्कर् भनी॥७०॥
यै बीचमा रघुनाथ् रिसाउनुभयो आयेन सागर् भनी ।
लाल् लाल् नेत्र गराइ लक्ष्मणजिका साम्ने हुकूम् भो पनि ॥
हे भाई ! तिमि हामिलाइ यसले सामान्य मानिस् गनी ।
भेटै आज गरेन हेर तिमिले यस्को तमाशा भनी ॥७१॥
सागर् शोषण गर्नलाइ धनु ली वाण् खैंचनूभो जसै ।
कामिन् भूमि पनी भयंकर स्वरूप् राम्लाइ देखी तसै ॥

आकाश को गया और कहने लगा, बोलो, क्या उत्तर देना है ? उत्तर मिल जाय तो मैं चला चाऊँ। सुग्रीव ने वहीं पर उत्तर दिया। मित्र हो या भ्राता हो अर्थात् भ्राता होने का विचार नहीं रखूँगा। वालि की तरह मारूँगा फिर चाहे अधम ही क्यों न हो जाये। ६८ सुग्रीव ने वताया कि रावण से कहना कि तुम श्रीरामचन्द्रजी की पत्नी सीता जी को हर करके बचकर कहाँ जाओगे। सुग्रीव ने जब ऐसा जवाब दिया तब श्रीराम ने आज्ञा दी कि वानरों से कहो कि उसे पकड़ले और अभी न छोड़ें तथा कुछ दिन वह यहीं रहले। ६९ श्रीरामचन्द्र जी का यह आदेश होते ही उस शुक को बन्धन में कर लिया गया। इससे पहले ही शार्दूल वापस लौटा और उसीने रावण को सारा विस्तार बताया। शार्दूल के मुख से राम की शक्ति के बारे में विस्तार से सुना, और अति विशाल सेना आयी हुई है यह सुनकर रावण भी अति गम्भीर चिन्ता में पड़ गया। ७० इसी बीच में श्रीरघुनाथ सागर के न आने पर अत्यन्त क्रोधित हुए। लाल-लाल नेत्र करते हुए लक्ष्मण को आदेश दिया और कहा कि हे भाई ! जरा इसका तमाशा तो देखो ! इसने आज हमें और तुम्हें एक साधारण मनुष्य समझ कर भेंट तक नहीं की। ७१ जैसे ही सागर का शोषण करने के लिए

चार् कोश् तक् त समुद्रको जल पुग्यो दश् दिक् अँध्यारा भया ।
जो जन्तू जलमा थिया ति पनि ता सब् खल्बलाई गया ।७२।
यस्तो देखि डराइ सागर तहाँ सुन्दर् स्वरूप् एक् धरी ।
भेटी खातिरलाइ रत्नहरु बेस् लीयेर झट्पट् गरी ॥
श्रीराम्चन्द्रजिका गया शरणमा भेंटी अगाडी धरी ।
पाऊमा परि दण्डवत् पनि गऱ्या सब् शेखिशान् दूर् गरी७३।
हात् जोरी स्तुति बिन्ति धीर् गरि गऱ्या हे नाथ् म हूँ जड् यसै ।
सीतानाथ् प्रभुलाइ जानुँ कसरी क्यै चेत् नपाई उसै ॥
चेत् ऐले प्रभुले दिंदा हजुरमा आई शरण्मा पऱ्याँ ।
रस्ता दिन्छु दया रहोस् म छु अनाथ् हात् जोरि बिन्ती गऱ्याँ७४।
सागर्का इ वचन् सुनी हुकूम भो साँचो भन्यौ ता पनि ।
वाण्को थान् त खटाउनाकन पऱ्यो यस्लाइ लौ हान् भनी ॥
मेरो वाण् त अवश्य काम नगरी फिर्दैन ऐले यसै ।
ज्यान् राख्छौ त अवश्य देउ बदला टर्दैन यो वाण् कसै ॥७५॥
श्रीराम्चन्द्रजिको हुकूम् यति सुनी हात् जोरि बिन्ती गऱ्या ।
पापी छन् द्रु मकुल्यमा अहिर हुनु उत्तर् दिशामा परया ॥

श्रीरघुनाथ ने धनुष-बाण खींचा, वैसे ही रामको देख कर भूमि भयंकर रूप धारण करके काँपने लगी। समुद्र का जल चार कोस दूर तक पहुँच गया तथा जो जन्तु जल में निवास करते थे उन सब में भी खलबली मच गयी। ७२ यह सब देख कर भयभीत होकर सागर एक सुन्दर स्वरूप धारण करके भेट देने के लिए रत्नादि लेकर श्रीरघुनाथ की शरण में गया और भेंट को रघुनाथ के सामने रखकर उनके चरणों में गिरकर प्रणाम किया। ७३ धीरज धर कर तथा हाथ जोड़कर स्तुति की और कहा, हे नाथ ! मैं तो ऐसे ही जड़ हूँ, मैं सीता-पति प्रभु को कैसे जान सकता हूँ ! मुझमें तनिक भी चेतना नही आयी। प्रभु द्वारा चेतना जाग्रत कर देने से मैं आपकी शरण में आपकी सेवा करने के लिए आया हूँ। अतः मैं आपको रास्ता देता हूँ, मुझ-पर दया करने की कृपा करें क्योंकि में अनाथ हूँ। ७४ सागर के इस वचन को सुनकर आज्ञा हुई कि रहने दो, यदि तुम सत्य भी कहते हो तब भी बाण का लक्ष्य तो प्राप्त करना ही है। अतः इससे प्रहार करते है। मेरे बाण तो अवश्य ही बिना कार्य को पूर्ण किये वापस नहीं लौट सकते। यदि प्राण चाहते हो तो बदले में कोई और प्राण दो लेकिन यह बाण किसी भी रूप में टलने वाला नही है। ७५

ठाकुर्का यहि वाणले जति ति छन् पापी सबै नाश् गरोस् ।
यस्काम्ले म अनाथ् गरीब् हजुरको दास्को सबै ताप् हरोस्।७६।
यति विनति गऱ्याको सूनि खुप् हर्ष मानी ।
सकल हरिदिनूभो तेहि वाण् जल्दि हानी ।।
रिससित गइ वाण्ले पापिको नाश् गराई ।
सकिकन फिरि ठोक्रैमा पऱ्यो वाण आई ।।७७।।

यै बीच्मा ति समुद्रले चरणमा पस्रेर विन्ती गऱ्या ।
कीर्ती खुप् रहन्याछ सेतु वलियो हालेर लश्कर् तऱ्या ।।
सेतू बाँधनमा समर्थ नल छन् इन्ले त वर्दान् पनि ।
पायाको छ इ विश्वकर्म सुत हुन् बाँधून् इ सेतू भनी ।।७८।।
येती विन्ति गरेर पाउ परि फेर् सागर् अदृश्यै भया ।
सागर्को विनती सुनी नल पनी राम्का हजुर्मा गया ।।
हूकूम् भो नललाइ सेतु तिमिले चाँडै बनाऊ भनी ।
लश्कर् साथ लिया र जल्दि नलले सेतु बनाया पनि ।।७९।।
खुशि भइ नलले सब् वीरको तेज् जगाई ।
वरिपरि जति छन् सब् वृक्ष पर्वत् मगाई ।।

श्रीरघुनाथ का ऐसा आदेश सुनकर हाथ जोड़कर उसने विनती की कि उत्तर दिशा की ओर द्रुमकुल्य नामक नगर मे अनेक पापी ग्वाले रहते हैं। प्रभु के इसी वाण द्वारा उन सव पापियों को नाश किया जाय। ऐसा करने के पश्चात् मुझ दीन अनाथ और प्रभु के दास के समस्त संतापों का हरण करें। ७६ उसकी ऐसी विनती सुनकर राम अत्यन्त हर्षित हुए और तुरन्त ही उस वाण से प्रहार करके सकल ताप का हरण किया। वाण सीधा जाकर पापियों का नाश करके पुनः लौटकर तरकस में प्रवेश कर गया। ७७ इसी वीच समुद्र ने चरणों में लेट कर विनती की कि शक्तिशाली पुल को बाँध कर सेना को पार लाने से अत्यन्त कीर्ति होगी। पुल बाँधने में नल समर्थ है तथा इन्हें वरदान भी प्राप्त है। यह विश्वकर्मा-सुत है, अतः यही पुल को बाँधे। ७८ इस प्रकार से विनती करके सागर पुनः अदृश्य हो गया। सागर की विनती सुनकर नल भी राम के पास गया। नल को शीघ्रता से पुल बाँधने की आज्ञा हुई। अतः वह सेना को साथ लेकर पुल का निर्माण करने लगा। ७९ प्रसन्न होकर नल ने सव वीरों की शक्ति जाग्रत की। चारों ओर जो कुछ भी वृक्ष और पर्वत थे उनको मँगवा कर आगे आकर पुल बाँधने लगा। उसी क्षण रघुनाथ

अगि सरिकन सेतू वाँध्न लग्या जसै ता ।
शिव भनि रघुनाथ्ले मूर्ति थाप्या तसै ता ॥८०॥

रामेश्वर् भनि नाम् चलोस् अब उपर् संकल्प याहाँ लिई ।
गङ्गाजल् लिन काशि गैकन उ जल् ल्याई नुहाई दिई ॥
फ्याँक्ला कामरु त्यो समुद्र जलमा जस्ले बगोस् यो भनी ।
त्यो जन् मुक्त हवस् भनेर रघुनाथ् कोयो हुकूम् भो पनि॥८१॥

बाँध्या सेतु छपन्न कोश पहिले दिन् दोसरा दिन् असी ।
कोश चौरासि सक्या तृतीय दिनमा कस्मर् सबैले कसी ॥
कोश् अट्ठासि सक्या चतुर्थ दिनमा बाँकी बयान्नब्बे कोश् ।
पाँचौं दीनमहाँ सक्या नजर भो निस्क्येन एक् काहिंदोष्८२

तेही मार्ग गरेर फौज् सब तर्‍यो ढाक्यो त्रिकूट् पर्वतै ।
टाप ढाकिदियो रहेन बिचमा खाली भन्याको कतै ॥
भाईलाइ चढाइ अङ्गदमहाँ आफू हनूमान्महाँ ।
चढ्नूभो रघुनाथ र जानु पनि भो थीयो जगा ऊँच् जहाँ।८३।

ताहीं गैकन त्यो विचित्र नगरी लंकै नजर् भो जसै ।
त्यो रावण् पनि कौसिमा गइ तमास् हेर्थ्यो नजर् भो तसै ॥
यै बिच्मा शुकलाइ छोडिदिनुभो दौडेर त्यो शुक् गयो ।
रावण सीत तुरन्त गैकन सबै बिस्तार गर्दो भयो ॥८४॥

ने शिवजी का स्मरण करके मूर्ति-स्थापना की । ८० रामेश्वर के नाम से प्रसिद्धि हो, ऐसा सोचकर वहाँ पर संकल्प किया। काशी से गंगाजल लाकर स्नान किया। जो यह सोचकर समुद्र में कामरू फेंकेगा कि यह बह जाय तो वह प्राणी मुक्त हो जायगा, यह कहते हुए रघुनाथ ने आज्ञा दी । ८१ पहले दिन छप्पन कोस का पुल बाँधा । दूसरे दिन अस्सी कोस तथा तीसरे दिन सबने कमर कस कर चौरासी कोस समाप्त कर दिया । चौथे दिन अट्ठासी कोस और बाक़ी ब्यानवे कोस, पाँचवे दिन समाप्त कर दिया । देखने पर कहीं कोई दोष नहीं दिखायी दिया । ८२ उसी रास्ते से सारी सेना पार हो गयी । त्रिकूट पर्वत और टापू सब ढक दिया । कहीं पर कोई रिक्त स्थान नहीं बचा । भाई को अंगद पर चढ़ा कर स्वयं हनुमान पर सवार होकर चल पड़े, यद्यपि स्थान काफ़ी ऊँचा था । ८३ जैसे ही वहाँ जाकर विचित्र नगरी लंका को देखा तो वहाँ पर रावण भी तमाशा देखते हुए नज़र आया । उसी बीच शुक को छोड़ दिया । शुक दौड़ कर गया और वहाँ जाकर रावण को तुरन्त ही सारा

ऐले हे महाराज् ! गयाँ हजुरको हूकूम् हुनाले तहाँ ।
बाँध्या वानरले पऱ्याँ सकसमा आऊँ कसोरी यहाँ ॥
ऐले पो रघुनाथका हुकुमले छोडी दिया जा भनी ।
बाच्याँ बल्ल भनेर हर्षसित खुप् दौडेर आयाँ पनि ॥८५॥
आयो फौज् रघुनाथको अति ठुलो याहीं समुद्रै तरी ।
जीतीसक्नु कठिन् हुन्याछ वलले ऐले लडाई गरी ॥
सीताजी लगि रामका शरणमा की आज पर्नू हवस् ।
लड्नै मन् छ भन्या तुरन्त अब लौ संग्राम गर्नू हवस् ॥८६॥
राम्को एक् समचार् म भन्दछु हरिस् सीताजि उन्मत् लिई ।
संग्राम् गर्न अगाडि सर् वखत भो साम्ने मुहूँडा दिई ॥
भोली ध्वस्त गराउँछू अघि खवर् दीयाँ उचित् हो भनी ।
हाँकी भन्छु तँलाइ छोड्दिनँ यसै मैले नमारी पनि ॥८७॥
रावण्लाइ सुनाउनू यति थियो हे शुक् ! सुनाई दियास् ।
तैं जान्छस् त पठाउँ को अरु तहाँ तैंले मनैमा लियास् ॥
यस्तो श्रीरघुनाथको हुकुम भो भन्नू समचार् भनी ।
साँचो बिन्ति गरीसक्याँ उ समचार् मैले हजुर्मा पनि ॥८८॥

विस्तार सुनाया । ८४ "हे महाराज ! अभी श्रीमन् के आदेशानुसार मैं वहाँ गया । यदि वानर द्वारा वाँध लिया जाता तो संकट में पड़ जाता और यहाँ न आ पाता । अभी तो रघुनाथ की आज्ञा से छोड़ दिया गया हूँ ताकि मैं चला जाऊँ । अव मैं संकट से वच गया इसी कारण से तीव्रगति से दौड़कर यहाँ आ गया हूँ । ८५ श्रीरघुनाथ अपनी विशाल सेना के साथ समुद्र पार कर यहाँ आ पहुँचे है । उनसे युद्ध करके भी विजय पाना कठिन ही है, अतः आज ही सीताजी को श्रीराम की शरण में ले जाकर सौंप देने की कृपा करें । या युद्ध ही करना है तो शीघ्र ही संग्राम प्रारम्भ करने की कृपा करे । ८६ रामचन्द्रजी ने एक संदेश भेजा है उसे मैं वताता हूँ । "कौन सी मति को अपनाकर आपने सीता का हरण किया है। अब समय हो चुका है अतः मुँह समक्ष रख कर संग्राम करने के लिए आगे आओ । कल तुझे मैं ध्वस्त कर डालूँगा, अतः मैं तुझे पहले से सूचना देता हूँ । मैं तुझे ललकार कर कहता हूँ कि यदि तुझको न भी मारा तो ऐसे नहीं छोड़ूँगा । ८७ हे शुक ! केवल इतना ही तुम रावण को जाकर सुना देना । जब तुम ही जा रहे हो तो और किसको भेजूँ ? अतः तुम अपने मन में समझ लेना । ऐसा समाचार कहने के लिए श्रीरघुनाथ का आदेश हुआ है । अतः वह समाचार मैंने श्रीमन् के सम्मुख सत्य वर्णन

मेरो बुद्धि म बिन्ति गर्छु अहिले राम् हुन् जगत्का पति ।
जीती सक्नु कदापि छैन अरुले क्या भो हजुर्को मति ।।
सीता आज लगेर सुम्पनु हवस् राम्का चरण्मा परी ।
बाँच्न्या येति उपाय देख्छु नहि ता आयो मरण्को घरि ।।८९।।

यो बिन्ती शुकले गर्‍यो र सुनि खुप् रावण् रिसायो तहाँ ।
लाग्यो भन्न मलाइ पाजि शुक यो अर्ती दीन्या भो यहाँ ।।
औरै कोहि भया त निश्चय यहाँ मारीदिन्याँ पो थियाँ ।
यस्का गुण् अघिका थिया र गुणले बाँचिस् बिदा जा दियाँ।९०।

रावण्ले शुकलाइ जा भनि तहाँ बीदा जसै ता दियो ।
त्यो शुक् ब्राह्मण हो अघी पछि सराप् पर्दा तहाँ त्यो थियो ।।
राक्षस् हूनु सराप् पनी तहिं छुट्यो बीदा तुरुन्तै भयो ।
रावण्देखि बिदा भयो र पछि ता शुक् ब्राह्मणै भै गयो ।।९१।।

ब्राह्मण् हुन् घरमा थिया शुकऋषी एक् दिन् अगस्ती गया ।
भोजन् दिन्छु अगस्तिलाइ म भनी निम्ता ति गर्दा भया ।।
स्नान् सन्ध्या गरि आउँछू तब भनी हींड्या अगस्ती जसै ।
आयो राक्षस वज्रदंष्ट्र रिसले पायो र अन्तर् तसै ।।९२।।

किया है । ८८ मैं अभी यही विनती करता हूँ कि मेरे विचार से श्रीराम संसार के स्वामी हैं, अतः उनसे कोई भी नहीं जीत सकता । श्रीमन् की बुद्धि को क्या हो गया है । अब तो बचने का एक ही उपाय दीखता है कि राम की शरण में पड़कर सीताजी को सौंपने की कृपा करें, नहीं तो मृत्यु की घड़ी नजदीक आ गयी है ।" ८९ शुक की इस विनती को सुनकर रावण को बहुत क्रोध आया और कहने लगा—पाजी शुक ! आज तू ही मुझे शिक्षा दे रहा है । तेरी जगह यदि कोई और होता तो अवश्य ही उसे मार डालता । लेकिन पहले के तेरे कुछ गुण (सेवाएँ) हैं उसी कारण बच गया है; जा तुझे छोड़ दिया । ९० रावण ने शुक को विदा किया । वैसे ही उस शुक ने जो पहले शाप के फलस्वरूप वहाँ, ब्राह्मण से राक्षस की योनि में उत्पन्न हुआ था, शाप से तुरन्त मुक्ति पाई और रावण से विदा लेने के पश्चात् वह पुनः ब्राह्मण हो गया । ९१ ब्राह्मण होने के समय, शुक के घर में एक दिन ऋषि अगस्ति पधारे । उसने अगस्ति को भोजन के लिए निमंत्रित किया । जैसे ही अगस्ति जी 'स्नानादि करके आऊँगा' कहकर चले गये, वैसे ही ब्रजदंष्ट्र नामक राक्षस क्रुद्ध होकर आ गया । ९२ जैसा रूप मुनि अगस्ति का है, ठीक वैसा ही

जस्तो रूप् छ अगस्तिको उहि स्वरूप धान्यो र बोल्यो पनि ।
मासू खान मलाइ देउ तिमिले इच्छा छ मेरो भनी ॥
यस्तो छल् पहिले गऱ्यो र पछि फेर् खान्या बखतमा पनि ।
मासू मानिसको लगी मिसिदियो ठीक् शुक्कि पत्नी बनी ।९३।
भाग् देख्ता ति अगस्तिकारिसउठ्यो दीया सरापै पनि ।
मासू मानिसको दिइस् त तँ भयास् राक्षस् अवश्यै भनी ॥
शुक्ले बिन्ति गऱ्या खबर् हुन गयो यो छल् परयाको जसै ।
चाँडै छुट्ट हुन्या अगस्ति ऋषिले वेला बताया तसै ॥९४॥
हेशुक् ! राम् अवतार् हुन्याछ बसलौ रावण् कहाँ गै तहीं ।
राम्को दर्शन पाउला तहिं सराप् छुट्ला नजाऊ कहीं ॥
यस्तो अर्ति अगस्तिको सुनि उसै माफिक् गऱ्याका थिया ।
रामको दर्शनले सराप् छुटिगयो फेर् वृत्तिआफ्नैलिया॥९५॥
रावण्की महतारिको पनि पिता हूँ हित् म भन्छू भनी ।
रावण्का नजिकै गईकन भन्यो हित् माल्यवान्ले पनि ॥
राम् नारायण हुन् सिता पनि उनै लक्ष्मी भनी ज्ञानले ।
सीता सुम्पिदिहाल राख मनमा पूजा गरी ध्यानले ॥९६॥

स्वरूप धारण किया और बोला, कि मुझे मांस दो, मेरी मांस खाने की इच्छा है । इस प्रकार का छल पहले भी किया और भोजन के समय भी किया । ठीक शुक की पत्नी बनकर मनुष्य का मांस ले जाकर मिला दिया । ९३ मांस देखते ही अगस्ति ऋषि को क्रोध आ गया । उन्होंने उसी समय शाप दे दिया कि तुमने मनुष्य का मांस दिया है, तुम अवश्य ही राक्षस हो जाओ । इस छल किये जाने की बात सुनकर शुक ने विनती की । तब अगस्त ऋषि ने शीघ्र ही छुटकारा पाने का समय बताया । ९४ हे शुक ! राम का अवतार होगा । अतः रावण के यहाँ जाकर राम के दर्शन पाने पर ही तुम्हारा शाप समाप्त होगा; अब अन्यत्र कहीं न जाओ । अगस्ति का ऐसा उपदेश सुनकर शुक ने उसी के कहे अनुसार किया । फिर राम के दर्शन पाकर शाप से मुक्ति पायी और पुनः अपनी (ब्राह्मण-) वृत्ति को अपनाया । ९४ "हे रावण ! मैं तेरी माता का भी पिता हूँ अतः हित के लिए ही कहता हूँ कि राम नारायण हैं और सीता जी साक्षात् लक्ष्मी हैं । अतः तुम तो स्वयं ज्ञानवान् हो । सीता को बिना देर किये ही श्रीरघुनाथ को सौंप दो ।" रावण के पास जाकर, मल्यावान ने इस प्रकार कहा और समझाया कि मन में ध्यान देकर राम का पूजन करो । ९६ नगर में उत्सव का

उल्का हुन्छ अनेक् अनेक् शहरमा उत्सव् भन्याको रती ।
काहीं छैन बताउँ यो म महाराज् ! याहाँ हजूर्मा कति ॥
तस्मात् बिन्ति छ यो बहुत् हजुरमा हित् जानि लीनू हवस् ।
सीतानाथ्कन ईश्वरै बुझि सिता सुम्पेर दीन हवस् ॥९७॥

यो बिन्ती सुनि माल्यवान् सित बहुत् रावण् रिसायो तहाँ ।
लाग्यो भन्न रिसाइ आज तिमि क्या बोल्छौ बुढा भै यहाँ ॥
क्याले राम् परमेश्वरै भनि भन्यौ मानिस् त हुन् ती पनि ।
लिन्छन् वानरको सहाय कसरी जानूँ म ईश्वर् भनी ॥९८॥

तिम्रा बात् सुनि चित्त पोल्छ तिमिता जाऊ घरैमा भनी ।
मन्त्री वर्ग लगाइ साथ घरमा जल्दी पठायो पनि ॥
रावण् उच्च अटालिमा बसि कती आया बड़ा वीर् भनी ।
हेर्दै लड्न त मन् गरीकन हुकूम् दिन्थ्यो लडून् वीर् भनी॥९९॥

देख्नूभो रघुनाथले र तहिं वाण् छोडीदिनूभो जसै ।
तेस् बाण्ले दश छत्रदश् मुकुट सब् काटी खसाल्यो तसै ॥
आफ्ना छत्र र दश् मुकुट् जब गिऱ्या लाज् मानि रावण् पनि ।
ओर्ल्यो जल्दि अटालिदेखि र गयो हान्नन् इ फेरी भनी॥१००॥

कहीं नामोनिशान नहीं है। उधम ही मात्र है। हे महाराज ! यहाँ कुछ भी नहीं जो आपको बताऊँ। इसीलिए श्रीमन् से मेरी यह विनती है कि इसे हित की बात समझें और सीतापति को ईश्वर जानकर सीता को उन्हें सौंपने की कृपा करें। ९७ इस विनती को सुनकर रावण को माल्यवान पर अत्यधिक क्रोध आया और क्रोधावस्था में ही कहने लगा कि वृद्ध होकर भी तुम आज यह क्या कह रहे हो, राम को कैसे परमेश्वर कहा, वह भी तो मनुष्य ही है। वह तो वानरों की सहायता लेता है, उसे मैं किस प्रकार ईश्वर मानूँ। ९८ तुम्हारी बातें सुनकर तो मेरा चित्त ही जलने लगता है। अतः तुम घर लौट जाओ। तुरन्त ही माल्यवान को मन्त्रियों के साथ करके उसे घर भेज दिया। वहाँ उच्च अट्टालिका में बैठ, कितना बड़ा वीर आया है, देखते हुए लड़ना समाप्त करके, वीरों को लड़ने की आज्ञा दे रहा था। ९९ रघुनाथ ने जैसे ही देखा वैसे ही अपने बाण से प्रहार किया। उस वाण के प्रहार से ही दस छत्र और दसों मुकुट टूट कर गिर गये। अपने दस छत्र तथा मुकुटों को गिरा देखकर रावण अत्यन्त ही लज्जित हुआ और अट्टालिका से उतर कर चला गया, इस भय से राम फिर से प्रहार न कर दें। १०० दरबार के

दर्बार् भित्र पसी हुकूम् पनि दियो लौ लड्न जाऊ भनी ।
निस्क्या लड्न भनी प्रहस्तहरु वीर् छोपेर भूमी पनि ॥
राँगा ऊँट् गदहा र सिंहहरुमा वीर् वीर् सवारी भया ।
नाना शस्त्र र अस्त्र लीकन अनेक् वीर् लड्न जल्दी गया॥१०१॥

चार् ढोकातिरबाट निस्किकन फौज् साम्ने भयेथ्यो जसै ।
वानर्ले नजिकै गईकन जगा घेरी लिया सब् तसै ॥
रावण्को सब फौज निस्कन तहाँ पायेन ठाऊँ पनि ।
गर्जन्छन् सब वीर वानरहरू राम्चन्द्र जित्छन् भनी॥१०२॥

यस्तै रीत्सित घेरि हान्न पनि जब् लाग्या यि वानर्हरु ।
राक्षस्को पनि फौज् हटेन डरले प्राण् त्यज्न लाग्या बरु ॥
संग्राम् यस् रितले जसै हुन गयो ताहाँ ति वानर् भन्या ।
श्रीराम्को करुणा कटाक्ष हुनगै अत्यन्त योद्धा वन्या ॥१०३॥

राक्षस्तर्फ भन्या घट्यो वल सबै ठूला ठुला वीर् मर्‍या ।
मार्‍या वानरले ति राक्षस सबै चौथाइ बाँकी गर्‍या ॥
आफ्नू फौज् सब नष्ट देखिकन वीर् साह्लै लडाकी शुरो ।
आयो इन्द्रजितै म लड्दछु भनी सर्वास्त्रमाको पुरो ॥१०४॥

अन्दर प्रवेश करते ही रावण ने वीरों को लड़ने के लिए जाने की आज्ञा दी । समस्त वीर नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्र लेकर, भैंस, ऊँट, गर्दभ, और सिंह पर सवार होकर युद्ध के लिए शीघ्र ही चल दिये । १०१ जैसे ही चारों ओर के द्वारों से रावण की सेना निकली, वैसे ही वानर-सेना ने आकर उन सबको घेर लिया । रावण की सेना को वहाँ से निकलने का कोई स्थान नहीं रहा । समस्त वीर वानर गर्जना करते हुए कह रहे थे कि श्रीराम ही विजयी होंगे । १०२ इसी क्रम से घेरते हुए वानर-सेना रावण की सेना पर प्रहार करने लगी । राक्षसों की फ़ौज वहाँ से भागी नहीं, वल्कि राक्षसगण भयभीत होकर अपने प्राण त्यागने लगे । जब संग्राम इस प्रकार होने लगा तब वानर कहने लगे, "यह सब श्रीराम की महिमा है । उन्हींकी कृपा है कि हम सब अत्यन्त योद्धा बन गये है" । १०३ राक्षसों की सारी शक्ति जाती रही और सब बड़े-बड़े वीर मारे गये । वानरों ने सभी राक्षसों को मार डाला, जिनमें से अब केवल चौथाई ही बाकी थे । अपनी सेना को इस प्रकार समाप्त होते देख वीर सूरमा इन्द्रजीत, जो सब अस्त्रों में प्रवीण था, युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा । १०४—वानर और सेना पर हथियारों से

वानर्को सब फौजलाइ हतियार छाड़ेर मर्दन् गऱ्यो ।
श्रीराम्ले पनि ब्रह्मपाश अति ठुलो जान्नै र मान्नै पऱ्यो ॥
एक् छिन् चुप् रहनू भयो र रघुनाथ् फेरी तयारी भई ।
ऐले मार्दछु मेघनाद्कन भनी साम्ने उसका गई॥१०५॥

माग्नूभो धनु देउ लक्ष्मण ! भनी श्रीरामजीले जसै ।
मार्छन् की भनि मेघनाद डरले फर्केर भाग्यो यसै ॥
भाग्दामा प्रभुजी मुसुक्क मनले हाँसेर भन्छन् अनि ।
यो बच्चा पनि जोरि खोज्न मकनै चाहन्छ कच्चा बनी॥१०६॥

पृथिवितल गिऱ्याका वीर् बचाऊनलाई ।
हुकुम प्रभुजिको भो वीर् हनूमानलाई ॥
ढिल नगर हनूमान् ! क्षीर सागर् छ जाऊ ।
तहिं छ अगम पर्वत् द्रोण लीयेर आऊ ॥१०७॥

वखति तहिं छ तेही ख्वाइ यो फौज् बचाऊ ।
यति गरि शुभ कीर्ति दश् दिशामा चलाऊ ॥
हुकुम सुनि तुरुन्तै द्रोण लीयेर आया ।
पृथिवितल गिऱ्याका वीरलाई बचाया ॥१०८॥

यति गरि हनुमान्ले कीर्तिले लोक छाया ।
फिरि लगि उहिं पर्वत् द्रोण राखेर आया ॥

प्रहार करने लगा । श्रीरामचन्द्र को अत्यधिक विराट ब्रह्मपाश का ज्ञान प्राप्त करने के लिए बाध्य होना ही पड़ा । श्रीराम एक दिन तो चुप रहे, किन्तु पुनः तैयार होकर, यह कहते हुए कि मेघनाद को अभी मारता हूँ, उसी के सामने जा डटे । १०५ जैसे ही श्रीरामने मेघनाद को मारने के लिए लक्ष्मण से धनुष-बाण माँगा, वैसे ही भयभीत होकर मेघनाद वहाँ से भाग खड़ा हुआ । उसको भागते देख कर प्रभु मन ही मन मुस्कराते हुए कहते हैं कि यह बच्चा इतना कमज़ोर होते हुए भी मुझसे लड़ने की अभिलाषा रखता है । १०६ भूमि पर गिरे हुए वीरों को बचाने का आदेश वीर हनुमान को देते हुए प्रभु राम ने कहा, हे हनुमान ! अब विलम्ब न करो । तुम क्षीरसागर चले जाओ और वहाँ पर एक अगम द्रोणपर्वत है, उसे उठा लाओ । १०७ उसी औषधि के द्वारा इस सेना को बचाओ और ऐसा करके दसों दिशाओं में अपनी कीर्ति फैलाओ । श्रीराम की ऐसी आज्ञा सुनकर हनुमान तुरन्त ही जाकर द्रोणपर्वत उठा लाये और उस औषधि को खिलाकर धराशायी वीरों को बचाया । १०८

जब त वखति पाई होश भो वानरै ता ।
तव त भइ खुसालू नाच्न लाग्या सबै ता ॥१०९॥

लाग्यो वानर-सैन्य गर्जन यसै वीच्मा र रावण् तहाँ ।
लाग्यो भन्न मलाइ मार्न बलवान् यो शत्रु आयो यहाँ ॥
जाऊ लौ अतिकाय वीर्हरु तहाँ खुप्लड्न कम्मर् कस्या ।
मार्न्याछू तिमिलाइ निश्चय नगै याहीं घरैमा वस्या॥११०॥

हुकुम् यो अतिकाय वीरहरुले सून्या र कम्मर् कसी ।
पौंच्या वानर सैन्य मार्न हतियार् छोडचा अगाडी पसी ॥
वानर्ले पनि वृक्ष पर्वत मुठी दाह्रा नखैले गरी ।
रावण्का वलको विनाश् गरिदिया ताहाँ अगाडी सरी॥१११॥

मार्नू भो रघुनाथले कति तहाँ सुग्रीवजीलें कति ।
अङ्गद् श्री हनुमान लक्ष्मण इनै वीर्ले गिराया कति ॥
श्रीराम्को करुणा कटाक्ष हुन गै वानर् वलीया भया ।
राक्षस्मा करुणा भयेन र तहाँ राक्षस् मरी गै गन्या॥११२॥

सर्वेश्वर् सर्वरूपी प्रभुकन यसरी लडन पो क्यान पर्थ्यो ।
वाक्वाण्एक्छोडि दींदा पनि तति रिपुको नाश् उसैले त गर्थ्यो ॥

ऐसा करने से हनुमान का यश सम्पूर्ण लोक में व्याप्त हो गया । फिर से जाकर हनुमान उस द्रोणपर्वत को वहीं पर रख आये । औषधि खाकर जब उन वानरों को चेतना आयी, तो वे सब प्रसन्नता के वशीभूत हो नाचने लगे । १०९ इसी बीच वानर-सेना की गर्जना हुई । इस गर्जना को सुनकर रावण ने कहा कि मुझे मारने के लिए शक्तिशाली शत्रु यहाँ आये हैं । हे विशाल शरीर वाले वीरो ! कमर कस कर शत्रु से लड़ने के लिए जाओ और यदि वहाँ न जाकर घर पर ही बैठे रहे तो मैं तुम सबको निश्चय ही मार डालूँगा । ११० रावण की विशाल सेना ने आज्ञा पाते ही कमर कस कर वानर-सेना को नष्ट करने के लिए आगे बढ़ कर प्रहार किया । वानर-सेना ने भी रावण की विशाल सेना पर पर्वत, गदा, मुष्टिक, एव नाखूनों से प्रहार किया । उनके इस प्रहार ने रावण की शक्ति को नष्टप्राय कर डाला । १११ कितनों को रघुनाथ ने स्वयं मारा और कितनों को सुग्रीव ने मारा । अंगद, हनुमान और लक्ष्मण जैसे वीरों ने न जाने कितनों को समाप्त कर डाला । श्रीराम की कृपा से समस्त वानर बलवान हो गये और राक्षसों पर कोई कृपा नहीं की; अतः अनेक राक्षस मारे गये । ११२ सबके ईश्वर प्रभु राम

मायाले सच्चिदात्मा नर भइ नरका युद्ध लीलादि गर्छन् ।
जुन् लीलाले त पापी अधम पतितको पाप सन्ताप हर्छन् ॥११३॥
रावण्ले अतिकाय वीरहरुको फौज् मारिएको जसै ।
सून्यो दुःखि भएर पूर्ण रिसले खुप् लड्न आँटचो तसै ॥
सुन्दर् एक् रथमा चढचो र हतियार् शस्त्रास्त्र फेर् सब् लियो ।
लङ्का रक्षण गर्नु इन्द्रजितले भन्न्या हुकूम् यो दियो॥११४॥
केही फौज् पनि साथमा लिइ गयो श्रीरामजी छन् जहाँ ।
रोक्या वानर सैन्यले र रिसले मान्यो अनेक् वीर् तहाँ ॥
सुग्रीवादि बड़ा वड़ा जति थिया वीर् वीर् तिनैले पनि ।
जीतीसक्नु भयेन सब्कन जित्यो मान्यो जमीन्मा गनि॥११५॥

देख्यो विभीषणजिलाइ गदा लियाका ।
श्रीरामका चरणमा दृढ मन् दियाका ॥
झन् मुख्य शत्रु त यही छ भनेर ठान्यो ।
साह्रै रिसाइकन शक्ति उठाइ हान्यो ॥११६॥

आयो शक्ति तहाँ विभीषणजिको प्राण् खैंचन्या सुर् गरी ।
लक्ष्मण्ले तहिं झट् बचाउनु भयो आफू अगाड़ी सरी ॥

के साथ युद्ध करने की क्या पड़ी थी। एक ही वाक्प्रहार से तो वे शत्रुओं को वहीं नष्ट कर सकते थे। माया-मोह से रहित सच्चिदानन्द, मानव-जन्म लेकर, मानव ही की भाँति लीला करते हैं, जिस लीला के द्वारा अनेक पापियों, अधम लोगों और पतितों के पाप और संताप का हरण होता है। ११३ रावण ने जैसे ही यह सुना कि उसकी विशाल सेना मार डाली गयी है, तो उसे बहुत दुःख हुआ और क्रुद्ध होकर वह स्वयं ही युद्ध करने के लिए तत्पर हो गया। तत्पश्चात् एक सुन्दर रथ पर सवार हुआ, और शस्त्रास्त्र सब कुछ लेकर आदेश दिया कि इन्द्रजीत अब लंका की रक्षा करेगा। ११४ कुछ फ़ौज लेकर श्रीराम जहाँ थे वहीं जा पहुँचा। वानर-सेना ने उसे रोककर अनेक वीरों को मार डाला। सुग्रीव आदि बड़े-बड़े जितने भी वीर थे उनको कोई भी नहीं जीत सका; बल्कि रावण के वीरों को ही ज़मीन पर गिरा-गिराकर मार डाला। ११५ श्रीराम के चरणों में ध्यान करता हुआ और हाथों में गदा लिए विभीषण को देख कर सोचा कि असली शत्रु तो यही है, और क्रोधित होकर उसी पर अपनी शक्ति से प्रहार किया। ११६ शक्ति विभीषण के प्राणों को समाप्त करने के उद्देश्य से मारी थी, लेकिन लक्ष्मण ने आगे बढ़कर उन्हें

शक्ती लक्ष्मणलाइ बज्रन गयो लक्ष्मण्जि मूर्छा पऱ्या ।
मूर्छा पर्नु कहाँ थियो प्रभुजिले चेष्टा नरैको गऱ्या ॥११७॥

लक्ष्मण्लाइ उठाउनाकन तहाँ दौडेर रावण् गयो ।
सक्थ्यो रावणले उठाउन कहाँ आश्चर्य मान्दो भयो ॥
लक्ष्मण्लाइ उठाउन्या बखतमा देख्या उठ्यो रिस् पनि ।
यै बीचमा हनुमान् गया नजिकमा रावण् गिराऊं भनी॥११८॥

हान्या बज्र समान् कठोर मुठिले बज्र्यो मुठी त्यो जसै ।
रावण् हो बलवान् तथापि रगतै छाद्दै गिऱ्यो पो तसै ॥
लक्ष्मण् श्रीहनुमानदेखि खुशि भै साह्रै हलूका भया ।
लक्ष्मण् लाइ उठाइ जल्दि हनुमान् रामचन्द्रजीथ्यैं गया॥११९॥

लक्ष्मण् नारायणै हुन् भनि बुझि डर भै शक्तिले छाडिदीयो ।
रावण् मूर्छा पऱ्याको पनि उठि उ बखत् फेर् धनुर्बाण लीयो ॥
सीतानाथ् श्रीजगन्नाथ् प्रभु पनि हनुमान् वीरका पीठमाहाँ ।
चढ्नूभो लड्न मन्सुब् गरिकन लिनु भो फेर् धनुर्बाणताहाँ ॥१२०॥

टङ्कार् खुप् धनुको गरी हुकुम भो उम्केर जालास् कहाँ ।
तेरा बन्धु निभाइ यो रणमहाँ मार्छू तँलाई यहाँ ॥

बचा लिया। शक्ति लक्ष्मण के जाकर लगने से, वे मूर्छित हो गये। लक्ष्मण का मूर्छित होना था कि श्रीराम मनुष्य की ही भाँति प्रयत्न करते रहे। ११७ लक्ष्मण को उठाने के लिए रावण दौड़कर वहाँ गया, लेकिन रावण कहाँ उठा सकता था। यह देखकर आश्चर्य हुआ। लक्ष्मण को उठाते देख (हनुमान को) क्रोध आया। इसी बीच हनुमान रावण को मार गिराने के उद्देश्य से उसके नजदीक जा पहुँचे। ११८ उन्होंने आकर वज्र के समान दृढ़ मुट्ठी से रावण पर ऐसा प्रहार किया कि रावण इतना बलिष्ठ होते हुए भी रक्त वमन करते हुए उसी क्षण गिर पड़ा। लक्ष्मण ने हनुमान से प्रसन्न होकर अपने को भारों से विमुक्त अनुभव किया। तत्काल ही हनुमान लक्ष्मण को उठाकर श्रीराम के पास ले गये। ११९ लक्ष्मण को नारायण जानकर शक्ति ने मूर्छित मात्र करके छोड़ दिया। उसी समय रावण ने भी मूर्छावस्था से उठकर अपना धनुष-बाण सँभाला।" सीतापति श्रीजगन्नाथ प्रभु ने भी वीर हनुमान की पीठ पर सवार होकर युद्ध करने की इच्छा से धनुष-बाण सँभाल लिया। १२० धनुष-बाण को ठीक करते हुए आज्ञा दी, "बचकर कहाँ जाओगे। तुम्हारे सभी बन्धुओं को समाप्त कर

रावण्ले इवचन् सुन्यो र विजवाफ् भै रिस् मनैमा लियो ।
हान्यो श्रीहनुमानलाइ शरले घाऊ लगाई दियो॥१२१॥
घाऊ श्रीहनुमानका शरिरमा देख्नू भयेथ्यो जसै ।
साह्रै रिस् उठि कालरुद्र सरिका ठाकुर् हुनू भो तसै ॥
घोडा रथ् ध्वज सूत शस्त्र धनु सब् छत्रै पताकै पनि ।
काटी रावणलाइ हान्नु पनि भो मूर्छा परोस् योभनी॥१२२॥
काटी रावणलाइ हान्नु पनि भो मूर्छा तुरुन्तै पऱ्यो ।
हातैमा धनु थाम्न शक्ति नहुँदा हात्देखि भैंमा झऱ्या ॥
यै बीचमा शिरका किरीट शरले काटी खसाली दिया ।
रावण्का सब सेखि सान् प्रभुजिले खैंचेर ताहीं लिया॥१२३॥
बाधा रावणलाइ खुप् सित भयो बीदा प्रभूले पनि ।
ऐले जा घरमा भनी दिनुभयो भोली लडौंला भनी ॥
सेखी सान् रतिभर् तहाँ नरहँदा रावण् मऱ्या झैं भयो ।
लाज् मानीकन लड्न शक्ति नहुँदा फर्केर घर्मा गयो ॥१२४॥
लक्ष्मण् मूर्छित झैं भया र रघुनाथ् शोक् गर्न लाग्या हरि ।
जस्तो मानिस गर्छ सोहि रितका चेष्टा अनेकौं गरी ॥

तुमको भी इसी रणभूमि में मार डालूंगा। रावण ने इन बातों को सुना तो अत्यन्त क्रोधित हुआ और क्रुद्धावस्था में ही हनुमान को सर से टक्कर लगाकर आहत किया। १२१ जैसे ही श्रीराम ने हनुमान के शरीर में लगी चोट देखी, वैसे ही अत्यन्त क्रोधित होकर उन्होंने कालरूप के समान देवता का रूप धारण कर लिया, और घोड़ा, रथ, ध्वज, सूत, शस्त्र धनुष तथा पताकाओं को काटकर अंत में रावण पर भी प्रहार किया, जिससे वह मूर्छित हो जाये। १२२ ज्यों ही श्रीराम का बाण लगा वैसे ही रावण मूर्छित होकर गिर पड़ा। शक्ति क्षीण हो जाने के कारण धनुष हाथ से भूमि पर गिर पड़ा। इसी बीच उन्होंने रावण के सिर का मुकुट भी काट कर गिरा दिया और उसके सारे अभिमान को खींच लिया। १२३ रावण को भी अत्यन्त बाधा हुई। प्रभु भी विदा होते हुए बोले कि अभी घर जाओ, कल फिर युद्ध करेंगे। अभिमान इस तरह टूट जाने पर रावण मृत के समान हो गया और शक्ति न होने के कारण लज्जित होकर वापस लंका लौट गया। १२४ लक्ष्मण के मूर्छित होने पर प्रभुजी शोक करने लगे। और जिस प्रकार मनुष्य प्रयत्न करते हैं उसी प्रकार प्रभु भी चेष्टा करने लगे। लक्ष्मण को

लक्ष्मण् लाइ बचाउ फेरि हनुमान् ! ली आउ औषध् भनी ।
हूकूम् यो रघुनाथको तहिं हुंदा दौड्याहनूमान् पनि।।१२५।।
औषध् लीन गया जसै त हनुमान् चाल् पाइ रावण् पनि ।
रात्रीमा उठि कालनेमि सित गो क्यै विघ्न पारूँ भनी ।।
राजा रावणलाइ रात्रि बिचमा देख्यो अकस्मात् जसै ।
सन्मान् खुप् गरि ताहिं हाजिर रह्यो त्यो कालनेमी तसै।।१२६।।
मैले क्या गरुँ कीन आउनु भयो यो राति एक्लै यहाँ ।
यो बिन्ती सुनि कालनेमि सित सब् विस्तार् बतायो तहाँ ।।
यस्तो भो सुन कालनेमि अहिले लक्ष्मण् गिर्याका थिया ।
तिन्लाई पनि फेर् बचाउन ठुलो राम्चन्द्रले सुर् लिया।।१२७।।
औषध् लीन भनेर आज हनुमान् द्रोणाचलैमा गयो ।
औषध् ल्याउन विघ्न पार तिमिले लौ जाउ वेला भयो ।।
मायाले मुनि वेष् धरेर हनुमान्- लाई भुलाऊ गई ।
सक्न्या छौ तिमिले भुलाउन ठुलो योगी सरीका भई।।१२८।।
यस्तो रावणले हुकूम् जब दियो लौ विघ्न गर् जा भनी ।
राम् ईश्वर् बुझि कालनेमि बिरले क्यै बिन्ति पार्‍यो पनि ।।

बचाओ हनुमान ! शीघ्र ही औषधि ले आओ। रघुनाथ की इस आज्ञा को सुनकर हनुमान भी दौड़ पड़े। १२५ औषधि लाने के लिए हनुमान का चले जाना जैसे ही रावण को ज्ञात हुआ उसी क्षण रावण कोई विघ्न डालने के उद्देश्य से रात्रि को ही उठकर कालनेमि के पास गया। रात्रि में अचानक राजा रावण को जैसे ही देखा कालनेमि ने वहाँ उपस्थित रहकर अतिथि-सत्कार किया। १२६ मैं क्या सेवा कर सकता हूँ ? इतनी रात्रि गये अकेले कैसे पधारने की कृपा करी ? यह विनती सुनकर रावण ने कालनेमि से सारा विस्तार कह सुनाया। रावण ने कहा ऐसा हुआ है, सुनो कालनेमि ! अभी लक्ष्मण मूर्छित हो कर गिरा है और उसे बचाने के लिए श्रीराम ने एक बड़ा उपाय किया है। १२७ आज हनुमान औषधि लाने के लिए द्रोणाचल को गया है। औषधि लाने में तुम विघ्न उत्पन्न कर दो। समय हो गया है और तुम अभी जाओ। मायारूपी मुनि का भेष धरकर हनुमान को भुलावा दो। एक महान् योगी बनकर तुम अवश्य ही उसको भुलावा दे सकोगे। १२८ जैसे ही रावण ने विघ्न उत्पन्न करने की आज्ञा दी कालनेमि ने भी श्रीराम को ईश्वर जानकर रावण से विनती की कि हे अधिराज मैं आपके

येती हित् बुझि बिन्ति गर्छु अधिराज् ! हीतैं भन्यो यो भनी ।
मेरो बिन्ति सघाइ वक्सनु हबस् होला ठुलो हित् पनि॥१२९॥
ज्यान्को आश् पनि कत्ति छैन अधिराज् दीन्यैछु यो ज्यान् पनि ।
जीतीन्या तर छैन जान इत हुन् चौधै भुवन्का धनी ॥
भाई बन्धु मराइ बाँचिकन पो क्या सोख एक्लो भई ।
ईश्वर हुन् पर रामका शरणमा ऐले तुरन्तै गई ॥१३०॥
सीता सुम्पिदिहाल राज्य पनि यो देऊ विभीषण् गरून् ।
खूशी भैकन आजदेखि रघुनाथ् तिम्रा विपत्ती हरून् ॥
जाऊ लौ वनमा र लेउ मनमा आत्मै विचार्को मति ।
मायाले त भुलाउँछिन् जगतमा यस्तै छ तिन्को गति॥१३१॥
आत्मा चिन्न अवश्य पर्छ महाराज् एकाग्र भै ध्यान् गरी ।
आत्मा चिन्न समर्थ होइ नसक्या राम् भज्नु एक्मन् गरी ॥
कौस्तुभ् हार किरीट केयुर अनेक् भूषण् शरीर्मा धरी ।
आफ्ना यै हृदयारविन्द बिचमा राखेर खुप् ध्यान् गरी॥१३२॥
सीताराम्कन भज्नुपर्छ अधिराज् ! राम् हुन् जगत्का पति ।
ईश्वर् जानि अश्य छोड तिमिले यस्तो विरोध्को मति ॥

हित के लिए ही यह कहता हूँ। मेरी विनती को स्वीकार करने की कृपा करें, बड़ा ही हित होगा। १२९ प्राण की तो मुझे तनिक भी चिंता नहीं है अधिराज ! ये प्राण भी दे दूँगा, तब भी आप जीत नहीं पायेंगे। स्वयं ही सोचिए कि वे तो चौदह भुवन के स्वामी हैं। भाई-बन्धुओं को मरवाकर राजा के बचे रहने में क्या सुख है। राम ईश्वर ही हैं, अतः तुरन्त राम की शरण में जायें। १३० आज ही सीता को भी सौंप दें और राज भी विभीषण को दे दे। तत्पश्चात् प्रसन्नचित्त से रघुनाथ आपकी विपत्ति का हरण करेंगे। वन में जाकर मन में आत्मतत्व का चिन्तन करें। उनकी गति ही ऐसी है कि इस संसार में माया द्वारा भुलाया जाता है। १३१ एकाग्रचित्त से ध्यान करके आत्मा को अवश्य पहचानना पड़ता है। और यदि पहचानने में असमर्थ हों, तो एक मन से राम का भजन करें। कौस्तुभ, हार, मुकुट और केयूर, अनेक प्रकार के आभूषणों से युक्त राम को अपने इसी हृदय-अरविन्द में ग्रहण कर ध्यान करें। १३२ सीता तथा राम को तो अवश्य ही भजना चाहिए। श्रीराम तो जगत् के स्वामी हैं। उनको ईश्वर समझकर इस विरोधपूर्ण मति को अवश्य ही त्याग दें। इतनी

येती बिन्ति गरेर चुप् भइरह्यो त्यो कालनेमी तहाँ।
अमृत्तुल्य वचन् सुन्यो तपनि त्यो लिन्थ्यो अधम्ले कहाँ॥१३३॥
रावण्ले त रिसाइ तेस्कन तहाँ झन् मार्न मन्सुब् गर्‍यो।
मार्न्यैं मन् बुझि कालनेमि विरले फेर् बिन्ति ताहाँ गर्‍यो॥
यस्तो क्यान रिसानि हुन्छ अधिराज्! ऐले तहाँ मै गई।
सर्कार्को सब काम बन्दछ भन्या जान्छू तयारी भई॥१३४॥
येती बिन्ति गरेर तेहि विचमा ऊठेर दौड्यो पनि।
लाग्यो गर्न उपाय फेरि हनुमान् फिर्नन् नपाउन् भनी॥
रस्तामा गइ एक् तपोवन असल् तेस्ले तयारी गर्‍यो।
मायाले फुलका र फल् सहितका वृक्षादि ले वन् भर्‍यो॥१३५॥
एक् आश्रम् पनि कल्पना तहिं गर्‍यो आफू मुनीश्वर् बनी।
तेसै आश्रममा बस्यो म हनुमान्-लाई छलूँला भनी॥
तेस्का शिष्य अनेक् थिया वरिपरी ताहीं हनूमान् गया।
क्या देख्याँ अधि आश्रमै पनि यहाँ थीयेन भन्दा भया॥१३६॥
कस्को आश्रम हो बुझी जल पिई जाँलाँ म जल्दी भनी।
बुझ्नै खातिर तेहि आश्रम विषे पौंच्या हनुमान् पनि॥

विनती करके कालनेमि शान्त हो गया। लेकिन वह अधम रावण इन अमृत तुल्य बातों को क्यों मानने लगा। १३३ क्रोधित होकर रावण ने उसे मार डालने की सोची। अपने मारे जाने के निश्चय को जानकर कालनेमि ने फिर से विनती की, हे अधिराज! आप वृथा क्रोधित क्यों होते हैं। यदि मेरे वहाँ जाने से आपका काम बनता है, तो मैं अवश्य ही जाऊँगा। १३४ इतना कहकर उसी समय वह उठकर चला गया। वह ऐसा उपाय करने लगा कि हनुमान पुनः लौट ही न सकें। रास्ते में उसने एक उत्तम तपोवन की रचना की जो मायारूपी फूल तथा फलों के वृक्षों से भर गया। १३५ मुनीश्वर बन कर वहाँ पर उसने एक आश्रम की कल्पना की और उसी आश्रम में हनुमान से छल करने के उद्देश्य से बैठ गया। उसमें चारों ओर अनेक शिष्य बैठे थे। हनुमान वहाँ गये और कहा यह मैं क्या देख रहा हूँ? पहले तो यहाँ पर कोई उपवन नहीं था। १३६ आश्रम किसका है, यह पता लगाने के लिए तथा जल पीने के लिए हनुमान उस आश्रम में पहुँचे। योगी के रूप में कालनेमि शिव का पूजन करके हनुमान के कार्य में बाधा डालने का उपाय सोचने

योगी भैं भइ कालनेमि शिवको पूजा विधान्ले गरी।
कुन् रीत्ले हनुमानलाइ ठगुँला भन्न्या इरादा धरी॥१३७॥
थीयो आश्रममा र दर्शन गरूँ भन्न्या इरादा धर्‍या।
योगेश्वर् बुझि भक्ति राखि हनुमान् ज्यूले नमस्कार् गर्‍या॥
दूत तहूँ श्रीरघुनाथको म हनुमान् भन्छन् मलाई पनि।
औषध् ल्याउन जो हुकूम् प्रभुजिको हूँदा म आयाँ भनी॥१३८॥
सब् वृत्तान्त गर्‍या र जल्पिउनको इच्छा बहूतै थियो।
खोज्या जल् हनुमानले र खुशि भैं तेस्ले तहाँ जल् दियो॥
आऊ फल् फुल खाउ पीउ हनुमान् ठण्डा छ यो जल् पनि।
साह्लै हत्पत गर्नु छैन तिमिले कैले म जालाँ भनी॥१३९॥
योगी हूँ सब जान्दछू म अहिले राम्ले नजर् खुप् गरी।
लक्ष्मण्लाइ बचाइ बक्सनु भयो सम्पूर्ण बाधा हरी॥
बानर् को पनि फौज् खडा सब भयो येती भनेथ्यो जसै।
तिर्खा मेटिइन्या नदेखि जलले बोल्या हनुमान् तसै॥१४०॥
तिर्खा ज्यादि छ जल् कमी छ यतिले मेट्तैन तिर्खा पनि।
धेरै जल् छ कहाँ बताउनु हवस् वाहाँ म खाँलाँ भनी॥
सून्यो श्रीहनुमानका र इ वचन् क्वै एक् तलाऊ थियो।
त्यो देखाउनलाइ एक अगुवा शिष्यै पठाई दियो॥१४१॥

लगा। १३७ आश्रम के अन्दर दर्शन करने के विचार से जाकर और कालनेमि को मुनी समझ कर हनुमान ने उसे प्रणाम किया। वे बोले मैं श्रीरघुनाथ का दूत हूँ, मुझे हनुमान कहते हैं। प्रभुजी द्वारा औषधि लाने की आज्ञा पाकर मैं यहाँ आया हूँ। १३८ सब वृतान्त सुनाकर, पिपासा-शान्ति के लिए हनुमान ने जल माँगा, और उसने भी प्रसन्न होकर जल दे दिया। आओ हनुमान, फल फूल आदि खाकर ठण्डा पानी पियो। उसने पुनः कहा कि तुम्हें लौटने के लिए शीघ्रता करने की आवश्यकता नहीं है। १३९ मैं योगी हूँ और सब कुछ जानता हूँ। अभी श्रीराम ने कृपादृष्टि करके सब बाधाओं को दूर करके लक्ष्मण को बचाने की कृपा की। वानरों की फ़ौज भी पुनः खड़ी हो गयी है। जैसे ही यह बात कही वैसे ही, प्यास न बुझते देख कर, हनुमान बोले। १४० प्यास अधिक लगी है और जल इतना कम है कि प्यास बुझेगी भी नहीं। अधिक जल कहाँ है मैं वहीं जाकर पी लूँगा; बताने की कृपा करें। हनुमान की बात सुनकर एक शिष्य को अगुवा बनाकर

ऐले जाउ र जल् पियेर हनुमान् फर्केर आऊ यहाँ ।
केही मन्त्र म दिन्छु त्यो सुनि गया मिल्न्या छ औषध् तहाँ ।।
सून्या श्रीहनुमानले र इ वचन् बेस् हो हवस् लौ भनी ।
पौंच्या जल्दि तलाउमा र हनुमान् वीर्ले पिया जल्पनि।।१४२।।

ताहाँ तेहि तलाउ-भित्र मकरी क्वै एक् बस्याकी थिई ।
खैंची श्रीहनुमानलाइ निलुँला भन्न्या ठुलो सूर् लिई ।।
च्यापू च्याति पछारि ताहिं मकरी- लाई निभाया जसै ।
स्त्रीको सुन्दर रूप् बन्यो र विनती त्यो गर्न लागी तसै।।१४३।।

स्वर्गैमा म त अप्सरा अघि थियाँ नाम् धान्यमाली थियो ।
ब्राह्मण्का त सरापले मकरिको रूप् यो बनाईदिया ।।
तेसै रूप्कन मारि बक्सनु हुँदा आपत्ति मेरा गई ।
जान्छू स्वर्गविषे म फेरि हनुमान् जस्ता कि तस्ती भई।।१४४।।

अर्को बिन्ति म गर्छु अर्ति सरिको त्यो हो हजूर्को खुनी ।
जस्लाई मुनि भन्नु हुन्छ हनुमान् ! थीयो कहाँ त्यो मुनि ।।
औषध् लीन गयेछ आज हनुमान् लौ विघ्न गर् जा भनी ।
रावण्ले उपदेश् दियो र बलवान् त्यो कालनेमी पनि।।१४५।।

जहाँ पर एक तालाब था, उसे दिखाने के लिए भेज दिया । १४१ अभी जाओ हनुमान ! और जल पीकर यहीं लौट आना । मैं तुम्हें कुछ रहस्य बताऊँगा । उसे सुनकर जाने से औषधि मिलेगी । हनुमान ने इन वचनों को सुना और तालाब में पहुँच कर शीघ्र ही जल पिया । १४२ उसी तालाब में एक मगरमच्छिनी रहती थी । हनुमान को निगल जाने के इरादे से उसने उन्हे खींच लिया । तत्काल ज्योंही जबड़ा फाड़कर उस घड़ियालिन को पछाड़ कर मार डाला त्योंही एक सुन्दर स्त्री का रूप धारण कर विनती करती हुई बोली । १४३ मैं स्वर्ग की अप्सरा थी । मेरा नाम धान्यमाली था । ब्राह्मण के शाप से मैं मगरमच्छ बन गयी । उसी रूप को नष्ट कर देने से मेरी विपत्ति समाप्त हो गयी है । हे हनुमान ! मैं जैसी की तैसी ही होकर पुनः स्वर्ग को जाती हूँ । १४४ एक विनती मैं करती हूँ कि वह आपका वध करने वाला है, जिसे आप मुनि समझते हैं । हनुमान ! वह मुनि कहाँ है ? आज हनुमान औषधि लेने गये हैं, ऐसा जानकर रावण ने उस बलिष्ठ कालनेमि को विघ्न उत्पन्न करने के लिए यहाँ आने की आज्ञा दी । १४५ तभी उसने विघ्न उत्पन्न करने के लिए एक चाल यह

विघ्नै गर्न भनेर आइ अहिले त्या चाल तेस्ले गऱ्यो ।
तेस्लाई तहिं मार औषधि पनी ली जाउ बेला पऱ्यो ।।
यो बिन्ती गरि इन्द्रका हजुरमा त्यो धान्यमाली गई ।
आश्रम्मा हनुमान् फिऱ्या उहि बखत् केही नजान्न्या भई।। १४६।।
देख्यो श्रीहनुमानलाइ नजिकै आई पुग्याको जसै ।
मेरो काम् अब सिद्ध गर्दछु भनी त्यो बोल्न लाग्यो तसै ।।
ऐले दिन्छु म सिद्ध मन्त्र हनुमान् ! यो मन्त्र लेऊ पनि ।
देऊ लौ गुरु-दक्षिणा पनि ठुला मेरा गुरू हौ भनी।। १४७।।
छल्छाम्का इ वचन् सुन्या र हनुसान् वीर्को उठचो रीस् पनि ।
हान्या मुड्कि उठाइ तेहि बिचमा लौ दक्षिणा ले भनी ।।
पायो चोट् तहिं मुड्किको र मुनि वेष् तेस्को तुरुन्तै गयो ।
जस्तो राक्षसको स्वरूप् अघि थियो सोही स्वरूप्को भयो।। १४८।।
माया राक्षसको अनेक् तरहका त्यो गर्न लाग्यो जसै ।
हान्या मुड्कि उठाइ फेरि शिरमा ताहीं मऱ्यो त्यो तसै ।।
येती कर्म गरेर जल्दि हनुमान् द्रोणाचलैमा गया ।
पर्वत् बोकि तुरन्त फर्कि सहजै दाखिल् प्रभूथ्यैं भया।। १४९।।
खूशी खुप् रघुनाथ् तहाँ हुनुभयो औषध् सुषेण्ले गऱ्या ।
बाधा लक्ष्मणमा सबै जति थिया त्यै औषधिले हऱ्या ।।

चली कि उसे वहीं मारकर औषधि लेकर चला जाये। इन्द्र जी की सेवा में वह धान्यमाली भी गयी और उसी समय आश्रम में श्रीहनुमान भी अनजान बनकर आये। १४६ हनुमान को निकट आते देख कर उसने सोचते हुए कि अब मैं अपना कार्य सिद्ध करता हूँ, कहने लगा—"हे हनुमान ! अभी मैं तुमको एक सिद्धमंत्र देता हूँ। इस मंत्र को स्वीकार करो तथा मुझे अपना गुरु जानकर दक्षिणा दो। १४७ उसके मुख से इस प्रकार के कपट के वचन सुनकर हनुमान अत्यन्त क्रोधित हुए। तुरन्त ही मुट्ठी बाँध कर उस पर प्रहार करते हुए कहा—लो दक्षिणा ! प्रहार होते ही उसका मुनि का रूप भंग हो गया। तत्काल ही वह राक्षस-रूप बन गया। १४८ जब वह राक्षस अनेक प्रकार से छल करने लगा तो क्रुद्ध हनुमान ने फिर से उस पर अपनी मुष्ठि से सिर पर प्रहार किया, ऐसा करने से वह राक्षस तुरन्त ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। इस कार्य को समाप्त करके हनुमान तुरन्त ही द्रोणाचल की शरण में गये और (उस) पर्वत को उठाकर बड़ी ही सरलता से श्रीरघुनाथ के समक्ष आ उपस्थित हुए। १४९ यह सब देख कर

रावण्माथि दगा धरेर सहजै लक्ष्मण् उठ्याथ्या जसै ।
बाँच्या भाइ दया गर्‍यौ र हनुमान्! भन्न्या हुकूम् भो तसै॥१५०॥

संग्राम्को मतलब् गरेर प्रभुजी साम्ने हुनूभो तहाँ ।
वानर्को पनि फौज् सबै अघि सर्‍यो ऊ झन् रहन्थ्यो कहाँ ॥
जस्तै सर्प गिराउँछन् गरुडले सोही तमासा गरी ।
रावण्लाइ गिराइ बक्सनु हुँदा गीरेर मूर्छा परी॥१५१॥

ऊठी दुःख बहूत पाइ मनले हारी गयाको थियो ।
श्रीराम्चन्द्रजिको प्रचण्ड बल त्यो बूझी लहड् खुप् लियो ॥
बेस् सिंहासनमा बसी सकल वीर् राखी सभा खुप् गरी ।
लाग्यो भन्न म मर्छु हेर विर हो ! राम्का अगाडी परी॥१५२॥

राम् नारायण हुन् अवश्य बुझियो चौधै भुवन्का धनी ।
मानिस्को अवतार् लिया प्रभुजिले मार्छन् मलाई पनि ॥
मानिस्देखि त मर्नुपर्छ मइले ब्रह्माजिको वर् छ यो ।
मानिस् भै रघुनाथ् सर्‍या अधि भन्या काल् टार्न सक्न्याछ को॥१५३॥

राजा वीर् अनरण्य सूर्य कुलमा क्वै एक महात्मा थियो ।
मैले व्यर्थ विरोध् गर्‍याँ र उ बखत् तिन्ले सराप् पो दिया ॥

रघुनाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए और औषधि लेकर लक्ष्मण का उपचार करने लगे । लक्ष्मण के शरीर में जितनी पीड़ा थी, समस्त पीड़ा उसी औषधि से शान्त हुई । रावण से प्रतिशोध लेने की भावना के उत्पन्न होते ही लक्ष्मण उठ खड़ा हुआ । भाई को तुरन्त ही स्वस्थ हुआ देखते ही श्रीरघुनाथ ने प्रसन्न होते हुए हनुमान को धन्यवाद दिया । १५० संग्राम करने के विचार से श्रीरघुनाथ सामने आये तथा समस्त वानरसेना भी वहाँ उपस्थित हो गयी । जिस प्रकार गरुड़ ने सर्प को गिराने के लिए तमाशा किया था, उसी प्रकार रघुनाथ ने रावण को भी गिराकर मूर्छित कर दिया । १५१ बड़े कष्ट के साथ (वह) उठ कर मन-ही-मन अपनी हार पर पश्चाताप करने लगा । अतः श्रीरामचन्द्र की प्रचण्ड शक्ति को रावण समझ गया । तत्पश्चात् समस्त वीरों को बुलाकर एक सभा की और कहने लगा, वीरो ! मैं राम के आगे जाकर ही मृत्यु को प्राप्त होऊँगा । १५२ श्रीराम नारायण हैं तथा चौदह भुवनों के मालिक हैं—यह बात रावण की समझ में आ गयी । मुझे मारने के लिए ही राम ने मनुष्य का अवतार लिया है । मनुष्य के हाथों ही मुझे मरना है—यही वर ब्रह्मा ने दिया

मेरा वंशमहाँ अवश्य अवतार् नारायणैले लिनन् ।
तेरो राक्षसवंश मारि सहजै तैंलाइ मारीदिनन्॥१५४॥
दीया येति सराप् र तेस् बखतमा राजा बिती पो गया ।
सोही पूर्ण गराउनाकन यहाँ श्रीराम् तयारी भया ॥
आया श्रीरघुनाथ् मलाइ अहिले मार्नैं इरादा धरी ।
मार्छन् निश्चय आज मर्छु सहजै राम्का अगाडी परी॥१५५॥
भाई मूर्ख छ कुम्भकर्ण अझतक् यस्तो पऱ्यो तापनि ।
सूतेको छ उठाइ ल्याउ अहिले चाँडो हुकूम् भो भनी ॥
हूकूम् पाइ बड़ा बड़ा विर गया ल्याऔं उठाई भनी ।
पौंची जल्दि उठाइ झट् हजुरमा ल्याई पुऱ्याया पनि॥१५६॥
पाऊमा परि कुम्भकर्ण बलवान् साम्ने बसेथ्यो जसै ।
रावण् ले पनि दीन् वचन् गरि सबै विस्तार् सुनायो तसै ॥
हे भाई ! सुन कुम्भकर्ण ! अहिले आपत् मलाई पऱ्या ।
छोरा नाति समेत् बड़ा विरहरू ऐल्हे बहूतै मऱ्या॥१५७॥
प्राण्को अन्त्य हुने बखत् भइ गयो बाँच्न्या उपायै कहू ।
राम् शत्रू बलवान् बुझिन्छ तिमिलौ साह्लै चनाखा रहू ॥

है। १५३ (रावण ने आगे कहा—) सूर्य-कुल में एक महात्मा राजा अरण्य थे। उनका विरोध करने पर उन्होंने मुझे शाप दे दिया था कि नारायण मेरे वंश में अवश्य ही अवतार लेंगे और तेरे राक्षस वंश के साथ तुझे भी सहज ही समाप्त कर डालेंगे। १५४ ऐसा शाप देकर उस समय उस राजा का प्राणान्त हो गया। उनका कार्य पूर्ण करने के लिए श्रीरघुनाथ ने यहाँ अवतार लिया, वे मुझे ही समाप्त करने के लिए अवतरित हुए हैं। आज वे निश्चय ही मुझे मार डालेंगे। १५५ रावण कहने लगा कि कुम्भकर्ण महामूर्ख है, जो इतना सब होने पर भी अभी तक सो रहा है, अतः (उसने) उसे जगा लाने के लिए (प्रहरियों को) आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही बड़े-बड़े सैनिक उसे उठाने के लिए गये और लाकर रावण के सम्मुख उपस्थित किया। १५६ जैसे ही कुम्भकर्ण रावण के पाँव में पड़कर सम्मुख बैठा, तभी रावण ने दीन वचनों में उसे सारा विस्तार कह सुनाया और बोला—देखो भाई कुम्भकर्ण ! इस समय मुझ पर भारी विपत्ति आयी है। पुत्र-पौत्र सहित अनेक वीर मारे जा चुके है। १५७ अब तो प्राणों के अन्त होने की घड़ी आ गयी है। अब बचने का क्या उपाय किया जाय ?

गम्भीर् येहि समुद्रमा पनि सहज् साँघू लगाई तऱ्यो।
बानर्को सब फौज् समेत् तरि यहाँ धेर् वीरको नाश् गऱ्यो॥१५८॥

वानर् देख्छु म वीर् अनेक् तरहका सूरा लडाकी बडा।
हाम्रा लश्करमा अनेक् विर मऱ्या बानर् सबै छन् खडा॥
तिन्को नाश् गरिसक्नु देख्तिनँ यहाँ कौनै उपायै गरी।
नाश् तिन्को तिमिले गराउ अहिले चाँडो अगाडीसरी॥१५९॥

रावण्ले इ वचन् विलाप सरिका बोली सकेथ्यो जसै।
हाँस्यो खुप् सित कुम्भकर्ण र तहाँ बिन्ती गऱ्यो साफ् तसै॥
मैले क्यागरुँ बिन्ति आज अधिराज् पले गऱ्याथ्याँ पनि।
राम्नारायण हुन् सिता प्रभुजिकी हुन् योगमाया भनी॥१६०॥

मेरो बिन्ति सधेन उस् बखतमा झन् खुप् रिसानी भयो।
तेसैको फल हो अवश्य अधिराज जो वीरको ज्यान् गयो॥
एक् दिन् पर्वतका उपर् शिखरमा थीयाँ म राती महाँ।
नारद्जीकन मध्यरात्रि बिचमा देख्याँ अकस्मात् तहाँ॥१६१॥

सोध्याँ आउनुभो हजुर् किन यहाँ जानू छ काहाँ भनी।
मेरो बिन्ति सुनेर सब् ति ऋषिले बिस्तार् बताया पनि॥

हमारा शत्रु राम काफ़ी बलिष्ठ मालूम देता है, अतः तुम लोग अत्यन्त सतर्क रहो। इतने गहरे समुद्र में भी वह सेतु बाँधकर सरलता से इस पार आ गया है (और उसने) वानर-सेना-सहित (आकर) यहाँ के अनेक वीरों का नाश किया है। १५८ रावण कह रहा है कि मैं देख रहा हूँ कि वानरों में प्रत्येक शूर, वीर और कुशल योद्धा है; उनको नष्ट करने का मुझे कोई उपाय नहीं दीख रहा है। अब तुम ही इन सबका नाश करो। १५९ जैसे ही रावण ने ऐसा कहा, वैसे ही कुम्भकर्ण ठहाके लगाकर हँसा और विनती करते हुए बोला, हे अधिराज! आज मैं क्या निवेदन करूँ? मैंने तो आपसे पहले ही कहा था कि रामचन्द्र नारायण हैं और सीता जी उन्हीं प्रभु की योग-माया हैं। १६० उस समय आपने मेरी विनती स्वीकार नहीं की और मेरे ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। हे अधिराज! यह उसी अस्वीकृति का फल है, जिससे अनेक सैनिकों का प्राणान्त हो गया। एकदिन रात्रि के समय मैं पर्वत के शिखर पर था कि अचानक बीच वन में नारद जी दिखायी दिये। १६१ मैंने नारद जी से पूछा था कि श्रीमन् आप यहाँ कैसे पधार पड़े और इस समय कहाँ जायेंगे? मेरे विनती करने पर उन्होंने सब विस्तारपूर्वक

विस्तार् लौ सुन कुम्भकर्ण ! अहिले जीतेर सब् लोक् लियौ ।
इन्द्रादीहरुलाइ दुःख तिमिले अत्यन्त साह्रै दियौ।।१६२।।

सब् इन्द्रादि ति विष्णुका हजुरमा पौंची शरण्मा पऱ्या ।
यस् रावण्कन मारिदेउ भगवन् भन्न्या त बिन्ती गऱ्या ।।
ब्रह्माको वरदान् छ मर्नु तइँले मानीसदेखी भनी ।
मानिस् भैकन मारि बक्सनु हवस् मन्र्याछ रावण् पनि।।१६३।।

येती बिन्ति गरेर देवगण सब् पाऊ पऱ्याथ्या जसै ।
सोही रीत्सित मारुँला भनि हुकूम् श्रीविष्णुको भो तसै ।
सोही बात् परिपूर्ण गर्न रघुनाथ् ऐले तयारी भया ।
मान्र्यैछन् तिमीलाइ निश्चय भनी ऊठेर नारद् गया।।१६४।।

तस्मात् अवश्य रघुनाथ्कन देव जानी ।
ई वैरि हुन् भनि यहाँ रति भर् नमानी ।।
यो वैरभाव तिमिले अब छाडिदेऊ ।
भक्ती गरीकन भजन् गरि आज लेऊ ।।१६५।।

भक्ती मुख्य छ सर्व साधनमहाँ भक्ती छ सब् ज्ञान् दिन्या ।
भक्तीले सब मुक्त हुन्छ दुनियाँ हो नित्य जानी लिन्या ।।
भक्ती हीन् भइ कर्म गर्दछ भन्या यो निष्फलै हो भनी ।
जानी श्रीरघुनाथका चरणमा भक्ती लगाऊ पनि।।१६६।।

बताया और कहने लगे—हे कुम्भकर्ण ! तुमने इन्द्रादि देवो को अधिकाधिक कष्ट दिया है। १६२ वे सब विष्णु भगवान के पास गये और विनती करने लगे कि इस रावण का वध करने की कृपा करें। उसे मनुष्य के हाथों मरना है—यही ब्रह्मा का वरदान है। अतः आप मानव-रूप धारण करके उसका वध करने की कृपा करे। १६३ जैसे ही देवगणों ने इस प्रकार विनती की, वैसे ही विष्णु देवता ने कहा कि मै उसे मार डालूँगा। वही कार्य पूरा करने के लिए रघुनाथ तैयार हुए हैं, वे तुम्हें निश्चय ही मार डालेंगे-इतना बता कर नारद उठ खड़े हुए। १६४ अतः हे अधिराज ! रघुनाथ को देव जानकर इस आपसी वैर भाव को समाप्त कर दें तथा भक्तिपूर्वक भजन (राम-नाम-जप) आदि करे। १६५ इन सभी साधनों में भक्ति ही महान है, भक्ति ही ज्ञान को बढ़ाती है। भक्ति के अभाव में व्यक्ति जो भी कार्य करता है, उसे निष्फल जानकर आप श्रीरघुनाथ की भक्ति में लीन होने की कृपा करे। १६६ श्रीरघुनाथ जी

हज्जारन् अवतार छन् प्रभुजिका रामावतार्ले सरी।
अर्को छैन भजन् गर्‍यो पनि भन्या जस्का भजन्ले गरी।
जाला दुःख कतै नपाइ सहजै संसार-सागर् तरी।
सोही ठाम् पुगिजान्छ पूर्णरुपले जहाँ रहन्छन् हरि॥१६७॥

जो रामचन्द्रतिर रात् दिन चित्त धर्छन्।
राम्कै चरित्र पढि खुप् सित मग्न पर्छन्॥
तिन्का ति कर्मवशका सब पाप छुट्छन्।
बैकुण्ठका सकल सौख्य तिनै त लुट्छन्॥१६८॥

सून्यो विन्ति र कुम्भकर्ण विरको साह्रै रिसायो पनि।
लाग्यो भन्न तँलाइ डाकिनँ यहाँ ज्ञान् सुन्न देलास् भनी॥
जस्तो भन्छु म सोहि मान्नु छ भन्या गर् युद्ध साम्ने सरी।
सुत्नाको मतलब् छ पो पनि भन्या जा सुत् पलङ्मा परी॥६९॥

रावण्का इ वचन् सुनेर अहिले साह्रै रिसाया भनी।
क्वै उत्तर् नगरी उठीकन गयो खुप् लड्न आँट्यो पनि॥
पर्खाल् नाघि गयो र लड्नकन सुर् बाँधी करायो जसै।
कालै तुल्य बुझेर वानरहरू साह्रै डराया तसै॥१७०॥

वीर् वीर् वानरलाइ पक्रि मुखमा हाल्दै र निल्दै गयो।
प्वाँख् लागीकन पर्वतै उडि तहाँ आई गया झैं भयो॥

के हजारों अवतार हुए है, उनमें श्रीराम के बराबर कोई अन्य नहीं है। उनका भजन किया जाना चाहिए, जिससे कि मनुष्य समस्त संसार-सागर तर जायेगा तथा उसी स्थान का आनन्द प्राप्त कर सकेगा, जहाँ प्रभु विराजमान हैं। १६७ जो मनुष्य श्रीराम की ओर अपनी भक्ति लगाये रखते हैं और राम के चरित्र को पढ़ते रहते हैं, उनके पाप स्वयं ही नष्ट हो जाते है। अतः वे ही स्वर्ग का आनन्द प्राप्त कर पाते हैं। १६८ इस प्रकार कुम्भकर्ण की ऐसी विनती सुनकर रावण अत्यन्त क्रोधित हुआ और कहने लगा यहाँ तुम्हें ज्ञान का उपदेश देने के लिए नहीं बुलाया गया है। अतः जो मैं कहता हूँ, वह तुम्हें मानना ही पड़ेगा। तुम राम के सामने जाकर युद्ध करो और यदि सोने की इच्छा है तो जाकर पलंग पर लेट सकते हो। १६९ रावण के इन शब्दों को सुनकर वह (कुम्भकर्ण) समझ गया कि यह अत्यन्त क्रोधित है, वह उठ कर खड़ा हो गया और युद्ध के लिए चल पड़ा। वह दीवार लाँघ कर जैसे ही लड़ने के लिए गया, वैसे ही वानर-सेना (उसे साक्षात्) काल समझ कर भयभीत हो गयी। १७० युद्ध-स्थल में आये हुए वीर

सक्थ्या कुन् अधि टिक्न तेस् बखतमा तेस्का अगाडी परी ।
वानर्को सब फौज् तहाँ हटिगयो साहै सकस्मा परी।।१७१।।

दाज्यू भनी तहि विभीषण भेट्न आया ।
पाऊ परीकन बहुत् गरि बिन्ति लाया ।।
कान्छो विभीषण म हूँ करुणा म पाऊँ ।
लङ्कामहाँ मकन बस्न मिलेन ठाउँ ।।१७२।।

सीता नराख घरमा तिमि सुम्पिदेऊ ।
राम्चन्द्रलाइ परमेश्वर जानिलेऊ ।।
बिन्ती गर्‍याँ यति र लात् पनि मारिलीया ।
निक्लेर जा भनि मलाइ निकालिदीया ।।१७३।।

चार् मन्त्रि साथ लिइ निक्लि म याहिं आयाँ ।
श्रीरामका शरणमा परि बिन्ति लायाँ ।।
ठूलो दया गरिलिया प्रभुले मलाई ।
आज्काल् खुशी छु रघुनाथ् सित बस्न पाई ।।१७४।।

बिन्ती विभीषणजिको जब सूनिलीया ।
भाई चिन्हीकन खुशी भइ काख लीया ।।

वानरों को (उसने अपने) मुख में रखकर निगलना आरम्भ कर दिया। उसी समय एक पर्वत उड़कर वहाँ आया, फिर भला उस विशाल पर्वत के सामने कौन व्यक्ति टिक सकता था! सभी वानर संकट में पड़ गये और भय के कारण वहाँ से दूर भाग गये। १७१ विभीषण अपने भाई रावण से भेंट करने वहाँ आया तथा पाँव पकड़ कर विनती करने लगा मैं आपका भाई विभीषण हूँ। मुझे लंका में रहने की कोई जगह नहीं मिली, अतः मुझ पर कृपा करें। १७२ विभीषण ने रावण से जैसे ही यह कहा कि आप सीता को अपने महल में न रखें तथा श्रीराम को परमेश्वर जानकर सीता को उन्हें सौंप दें, वैसे ही रावण ने उसे लात मारते हुए, महल से निकल जाने की आज्ञा दी। १७३ रावण के द्वारा निकाल देने पर विभीषण श्रीराम की शरण में गये तथा चार मंत्रियों को (अपने) साथ (भी) ले लिया। साथ ही यह विनती भी की कि आज मैं श्रीरघुनाथ के चरणों में रहकर अत्यन्त प्रसन्न हूँ, क्योंकि प्रभु ने मेरे ऊपर महान कृपा की। १७४ विभीषण की ऐसी विनती सुनकर श्रीरघुनाथ ने विभीषण को अपनी गोद में बैठा लिया और आशीर्वाद दिया—भाई! तुम चिरंजीव रहो और श्रीराम को देव

भाई ! चिरञ्जिवि रह्या तिमि देव जानी ।
राम्‌चन्द्रको गर भजन् अति हर्ष मानी ॥१७५॥
खुप् भक्त छौ बुझिलियाँ तिमि भाइलाई ।
भन्थ्या चिन्हेर अघि नारदले मलाई ॥
साँच्चै भयो ति ऋषिले जति हो भन्याको ।
प्रत्यक्ष देख्छु तिमि भक्त बडा बन्याको ॥१७६॥
भाई विभीषण ! परै रहु जल्दि जाऊ ।
संग्रामका बखतमा नजिकै नआऊ ॥
यस्ता वचन् सुनि बिदा भई फर्कि आया ।
थामी नसक्नु भइ आँसु पनी सखाया ॥१७७॥

बीदा भै जब ता विभीषण फिन्या यो फौज् गिराऊँ भनी ।
लाग्यो घुम्न र कुम्भकर्ण विरले धेर् फौज् गिरायो पनि ।
बानर्‌को सब फौजलाइ बलले थिच्तै र मिच्तै गयो ।
कुन् सक्थ्यो अघि टिक्न तेस् बखतमा खुप् ध्वस्त गर्दो भयो॥१७८॥
मुद्‌गर् हात लियेर येहि रितले त्यो घुम्न लाग्यो जसै ।
फौज्‌को नाश् बहुतै गर्‍यो र रघुनाथ् साह्रै रिसाया तसै ॥
वायव्यास्त्र उठाइ मुद्‌गर समेत् हातै खसाल्छू भनी ।
हान्या श्रीरघुनाथले र सहजै काटी खसाल्या पनि॥१७९॥

जानकर हर्षित मन से (उनका) भजन करो। १७५ पहले ही किसी समय मुझे नारद जी ने बताया था कि तुम मेरे बड़े भक्त हो। उन्होंने जो कुछ भी बताया, वह सब कुछ सत्य निकला। अतः मैं तुम्हें एक महान भक्त के रूप में प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। १७६ भाई विभीषण ! दूर ही रहो, युद्ध के समय सामने मत आओ। ऐसे वचनों को सुनकर विभीषण लौट पड़े (उस समय) उनकी आँखों में जो आँसू मचल रहे थे और बाहर निकल पड़ना-चाहते थे, उन्हें वे रोक न सके। १७७ विभीषण वहाँ से विदा लेकर लौट पड़े। वीर कुम्भकर्ण सेना को मार-गिराने में लीन था और अनेक (वानर-) सैनिकों को धराशायी भी कर दिया। वह वानरों के अनेक सैनिकों को अपनी शक्ति से रौंदता रहा। १७८ हाथों में गदा लेकर जब उसने (वानर-) सेना को क्षति पहुँचायी तो रघुनाथ अत्यन्त ही क्रोधित हुए। गदा-सहित हाथों को गिराने के लिए वायव्यास्त्र से श्रीरघुनाथ ने प्रहार किया और बड़ी ही सरलता से (उसके हाथों को) काटकर गिरा दिया। १७९

गीऱ्यो हात् जब कुम्भकर्ण विरको मुद्गर् सहित्को तहाँ ।
ठूलो शब्द गरेर फेरि रिसले धाया प्रभू छन् जहाँ ।।
साल्को वृक्ष उखेलि हान्न भनि त्यो आयो नजीक्मा जसै ।
तेही हात् पनि काटिबक्सनुभयो वानर् भया खुश् तसै।।१८०।।

हातै गिऱ्या जब दुवै तब खुप् करायो ।
साह्रै रिसाइ रघुनाथ्तिर दौडि आयो ।।
फेर् अर्धचन्द्र सरिका दुइ वाण लीया ।
गोडै पनी सहज काटि खसालिदीया ।।१८१।।

हात् पाउ केहि नहुँदा अति दुःख पायो ।
मुख् बाइ राम्कन निलूँ भनि घस्त्रि आयो ।।
राम्चन्द्रले पनि मुखैभरि वाण हान्या ।
त्यो देखि फौजहरुले अति हर्ष मान्या ।।१८२।।

यै रीत् गरेर अघिबाट थला बसाया ।
फेर् हानि इन्द्रशरले शिर नै खसाया ।।
ढोका थुन्यो शहरको शिरले त ताहाँ ।
फेर उफ्रि गैकन पऱ्यो र समुद्रमाहाँ ।।१८३।।

जब कुम्भकर्ण का (एक) हाथ गदा-सहित (कटकर) नीचे गिर पड़ा तो श्रीरघुनाथ भयंकर गर्जना के साथ वहाँ गये। (परन्तु दूसरे हाथ से एक) विशाल वृक्ष को उखाड़कर जब वह पुनः प्रहार करने के लिए आगे बढ़ा तो वह हाथ (भी) श्रीरघुनाथ ने फिर से (बाण मारकर) नीचे गिरा दिये। ऐसा होते देखकर वानर-सेना अत्यन्त खुश हुई। १८० जब उसके दोनों हाथ कट कर गिर गये तब वह पीड़ित होकर चिल्लाने लगा तथा अत्यन्त क्रोधित होकर वह रघुनाथ की ओर दौड़ा। फिर (रामचन्द्र ने) अर्ध-चन्द्र के समान दो बाण चला कर उसके पाँव भी काट कर गिरा दिये। १८१ (जब उसके) हाथ-पाँव सभी समाप्त हो गये तो (वह) मुख खोलकर (उन्हें) निगलने के लिए खिसकता हुआ आगे आया। श्रीराम ने भी निरन्तर बाणों से (उस पर) प्रहार किया। यह दृश्य देखकर (वानर-) सेना में अत्यधिक हर्ष फैल गया। १८२ इस प्रकार श्री राम ने प्रारम्भ से लेकर अन्त तक उसे धराशायी किया। बाद में (रामचन्द्र ने) इन्द्रशर के प्रहार ने उसका सिर भी काट गिराया, जिससे उसका समस्त चेतन (होश) समाप्त हो गया। उसके पश्चात् जैसे ही (शेषधड़ के बल) वह (अचानक) उछला, वैसे ही वह समुद्र में (जाकर) गिर पड़ा। १८३ (श्रीरघुनाथ

ग्राहादि जन्तु मिचि नाश् बहुतै गरायो ।
इन्द्रादि देवगणको पनि ताप् हरायो ॥
खुप् पुष्प-वृष्टि रघुनाथ-उपर् खसाया ।
राम्लाइ भेट्न भनि नारद ताहिं आया ॥१८४॥

नारद्ले स्तुति खुप् गन्या प्रभुजिको नारायणै हुन् भनी ।
भोलीदेखि हुन्या कुरा जति थिया सो सब् बताया पनि ॥
हे नाथ् ! वीर् यहि कुम्भकर्ण विर हो यो ता सहज्मा गयो ।
खूपै वीर् अब इन्द्रजित् छ उसको लौ भोलि वेला भयो॥१८५॥

भोली मर्दछ इन्द्रजित् पनि यहाँ लक्ष्मण्जिका हात् परा ।
आफैं मार्नुहुन्याछ रावण भन्या पर्सी लडाईं गरा ॥
देख्न्यै छन् मुनि देव सिद्धगणले त्यो सब् तमाशा भनी ।
नारद् ताहिं बिदा भईकन गया त्यो ब्रह्मलोक्मा पनि॥१८६॥

रावण्ले पनि कुम्भकर्ण त मन्यो भन्न्या सुनेथ्यो जसै ।
साह्रै दुःख परी विलाप् पनि गरी मूर्छा पन्यो खुप् तसै ॥
रावण्लाइ बुझाउनाकन अघी त्यो इन्द्रजित् वीर् सन्यो ।
जल्दी बिन्ति गन्यो खडै छु म छँदै कुन् ताप् हजूर्मा परचो॥१८७॥

ने) ग्राह आदि जल-जन्तुओं का भी दमन कर कितनो (ही अनाचारियों) को नष्ट किया । इन्द्रादि देवगणों के अन्दर जो ताप था, वह शीतलता में बदल गया और उन्होंने श्रीरघुनाथ के ऊपर पुष्पों की वृष्टि करके उनका स्वागत किया । इस अवसर पर नारद जी भी रामचन्द्रजी से मिलने आये । १८४ नारद जी ने प्रभुजी के समक्ष दोनों हाथों को जोड़कर स्तुति की और आगे जो कुछ बातें घटने वाली थीं, उन सबकी सूचना दी । हे नाथ ! यही (वह) वीर कुम्भकर्ण था, जो परलोक सिधार गया । इसके बाद (लंका) का वीर इन्द्रजीत है, जिसको कल ही सामना करके समाप्त करना होगा । १८५ नारद जी ने बताया कि कल यही इन्द्रजीत लक्ष्मण के हाथों मारा जायेगा तथा परसों के युद्ध में आप स्वयं ही रावण का वध करेंगे और यह सारा तमाशा मुनिगण तथा सिद्ध लोग देखेंगे—ऐसा कह कर नारद जी वहाँ से विदा हो गये । १८६ रावण के कानों में जैसे ही कुम्भकर्ण की मृत्यु की खबर पड़ी, वह विलाप करता हुआ मूर्छित होकर गिर पड़ा । रावण को सान्त्वना देते हुए वीर इन्द्रजीत आगे बढ़ा और कहने लगा—अभी मैं आपके सामने जीवित खड़ा हूँ । मेरे होते हुए आपके ऊपर कौन-सा संकट

शत्रूको भय आज कत्ति नरहोस् ई शत्रु मै मारुँला।
सब् शत्रूहरु मारि ताप् हजुरको चाँडै सहज् टारुँला॥
होम् गर्छू म निकुम्भिलास्थल महाँ ऐले तुरुन्तै गई।
होम् सम्पूर्ण गऱ्या मलाइ अहिले अग्नी प्रसन्नै भई॥१८८॥
दीन्याछन् हतियार् तिनै लिइ गई संग्राम गर्छू जसै।
कुन् साम्ने भइ टिक्छ तेस् बखतमा सब् ध्वस्त हुन्छन् तसै॥
येती बिन्ति गऱ्यो र होम् गरुँ भनी ऊठेर जल्दी गयो।
भक्ती राखि निकुम्भिलास्थल महाँ होम्‌गर्न लाग्दो भयो॥१८९॥
सून्या त्यो समचार् विभीषणजिले होम् गर्न लाग्यो भनी।
सो विस्तार् रघुनाथका हजुरमा गै बिन्ति पाऱ्या पनि॥
ऐले हे रघुनाथ! इन्द्रजितले होम् गर्न लाग्यो भनी।
सून्याँ यो सुनि बिन्ति गर्नु अहिले आयाँ हजूर्‌मा पनि॥१९०॥
होम्‌को बिघ्न त गर्नु पर्छ अधिराज्! होम् सिद्ध पाऱ्यो भन्या।
राक्षस्‌गण् जितिसक्नु छैन अहिले ई सब् अजेयै बन्या॥
लक्ष्मण्‌लाइ मलाइ बक्सनुहवस् हूकूम् म जान्छू तहाँ।
मार्छन् लक्ष्मणले अवश्य अहिले त्यो बाँच्न सक्ला कहाँ॥१९१॥

आ पड़ा।१८७ (इन्द्रजीत ने आगे कहा-) आप शत्रुओं से बिल्कुल भी भयभीत मत होइये। मैं समस्त शत्रुओं का नाश करके आपके ताप को हर लूँगा। वह हवन करने के लिए कुम्भिला नामक स्थल पर चला गया, हवन के सम्पूर्ण होने पर अग्नि देवता प्रसन्न हो गये।१८८ हवन करने से पहले इन्द्रजीत ने सोचा, अग्निदेव प्रसन्न होकर मुझे हथियार प्रदान करेंगे और जिस समय मैं संग्राम करूँगा सबको ध्वस्त कर डालूँगा; कोई नहीं टिक सकेगा मेरे सामने। ऐसा सोचकर (वह) तुरन्त हवन करने के लिए चल पड़ा।१८९ हवन करने की बात जैसे ही विभीषण ने सुनी, वैसे ही श्री रघुनाथ के पास जाकर (उसने) विनती की हे रघुनाथ! इन्द्रजीत हवन कर रहे है, यही कहने के लिए मैं यहाँ उपस्थित हुआ हूँ।१९० (विभीषण ने आगे कहा-) हे अधिराज! इस हवन में तो विघ्न उत्पन्न करना ही होगा। यदि यह हवन सिद्ध हो गया तो राक्षसगणों को पराजित कर सकना असम्भव होगा तथा वे सव विजयी हो जायेंगे। लक्ष्मण को मेरे साथ भेज दें। मैं उनके साथ जाकर उस हवन को भंग कर दूँगा। अतः मुझे आज्ञा दें; मैं वहाँ जाऊँगा और लक्ष्मण तो उसे निश्चय ही मार डालेंगे।१९१ उसकी

येती विन्ति सुनी हुकूम् हुन गयो जान्छू म मार्छू भनी ।।
फेरी बिन्ति विभीषणै सरि गन्या यस्तो छ यो वीर् भनी ।
खाँदै कत्ति नखाइ कत्ति नसुती रात् दिन् नियम् खुप् गरी।
जस्को वर्त छ वाह्र वर्ष उ पुरुष् तेरा अगाडी सरी।।१९२।।
तेरो प्राण लिन्याछ यो छ वरदान् यस्तो हुनाले गरी ।
मारीसक्नु कदापि छैन अहिले कोही अगाडी सरी ।।
रात् दिन् कत्ति नखाइ कत्ति नसुती तेस्तो रह्याको यहाँ ।
लक्ष्मण् छन् अब लौ हुकूम् दिनुहवस् तेस्लाइ मारून् तहाँ।।१९३।।

ईश्वर् तिमी हौ रघुनाथ् इ भाई ।
लक्ष्मण् त शेष हुन् करुणा जनाई ।।
भूभार हर्नाकिन जन्म लीयौ ।
यो रूप् भजन् गर्न वनाइदीयौ ।।१९४।।

साँचो विन्ति गर्‍याँ म जान्दछु सवै यो वीर् छ यस्तो भनी ।
हिंड्दैदेखि नखाइ कत्ति नसुती लक्ष्मण् रह्याको पनि ।।
जानीजानि म चूप् रह्याँ किन भन्या लाग्न्यैछ यो काम् भनी ।
उत्तर् येति तहाँ विभीषणजिका साम्ने हुकूम् भो पनि।।१९५।।

ऐसी विनती सुनकर श्रीरघुनाथ ने कहा कि मैं स्वयं उसे मारने के लिए जाता हूँ। पुनः विभीषण (ने राम का) मार्ग रोककर कहा कि लक्ष्मण ऐसा महान वीर है कि जिसने विना खाये-पिये-सोये निरन्तर बारह वर्ष तक व्रत किया है। १९२ इन्द्रजीत लक्ष्मण के हाथों मारा जायेगा—ऐसा वरदान है। इस कारण अव कोई भी (अन्य व्यक्ति) अग्रसर होकर उसे नहीं मार सकता। दिन-रात न सोकर विना खाये-पिये, सचेत होकर रहने वाले (वह) लक्ष्मण (ही) हैं (जो उसे मार सकते हैं) अत. अब उन्हें (लक्ष्मण को) इन्द्रजीत का वध करने की आज्ञा दें। १९३ हे रघुनाथ! आप ईश्वर है। ये आपके भाई हैं अर्थात् लक्ष्मण तो (आपके ही) शेप भाग (अंश) है। और भू-भार हरने के लिए ही (आप दोनों ने मानव रूप में मृत्यु लोक में) जन्म लिया है और इस रूप का निर्माण भजन करने के लिए (ही) किया गया है। १९४ मैं यह जानता हूँ कि इन सब वीरों के बारे में जो कुछ भी कहा गया है वह सब सत्य कहा गया है। चलते समय भी विना खाये और विना सोये ही लक्ष्मण रहे हैं, लेकिन फिर भी मैं चुप ही रहा, क्योंकि मैं जानता था कि किसी न किसी समय यह भी काम आयेगा। १९५ और उसी क्षण लक्ष्मण को (राम की) आज्ञा हुई

लक्ष्मण्लाइ पनी हुकूम् तहिं भयो भाई ! तयारी भया ।
केही फौज् पनि साथमा लिइ तहाँ ऐले तुरुन्तै गया ॥
चाँडै प्राण् लिइहाल इन्द्रजितको जान्छन् विभीषण् पनि ।
सब्को छिद्र बताउनन् बखतमा यस्तो छ याहाँ भनी ॥१९६॥

हूकूम् यो रघुनाथको सुनि धनू लीई तयारी भया ।
राम्का पाउ समाइ लक्ष्मण तहाँ क्यै बोल्न लागी गया ॥
मेरा बाण् अब इन्द्रजीत विरको प्राण्लाइ जल्दी हरी ।
पाताल् भोगवतीमहाँ पुगि तहाँ निर्मल् हुनन् स्नान् गरी॥१९७॥

येती बिन्ति गरी घुमी वरिपरी लक्ष्मण् चरण्मा पऱ्या ।
बीदा भै रघुनाथका हुकुमले साइत् तुरुन्तै गऱ्या ॥
केही फौज् लिइ जाम्बवान् र हनुमान् अङ्गद् इ साथ्मा गया ।
पौंच्या जल्दि र इन्द्रजीत विरका फौज्लाइ देख्ता भया॥१९८॥

हूकूम् सिरोपर धरीकन जल्दि पौंची ।
लक्ष्मण् अघी जब सऱ्या धनुलाई खैंची ॥
लश्कर्हरू पनि अगाडि सरेर धाया ।
ताहाँ विभीषण अगी सरि बिन्ति लाया ॥१९९॥

कालो मण्डल देखिइन्छ अघि जो त्यो फौज हो वीरको ।
टुक् टुक् पारि गिराइबक्सनु हवस् सब् वीरका शीरको ॥

कि हे भाई ! कुछ सेना साथ लेकर, तुरन्त जाकर, तुम इन्द्रजीत का नाश करो। तुम्हारे पीछे विभीषण भी जायेगा। (इन सबका) रहस्योद्घाटन यथा समय होगा। १९६ श्रीरघुनाथ की ऐसी आज्ञा सुनते ही लक्ष्मण धनुष लेकर तैयार हो गये तथा श्रीराम के चरणों में पड़कर कुछ विनती कर बोले कि मेरा वाण अब वीर इन्द्रजीत का प्राणान्त करके पातालभोगवती में जाकर निर्मल जल में स्नान करेगा। १९७ चारों ओर परिक्रमा करके लक्ष्मण श्रीराम के चरणों में पड़े; फिर विदा लेकर रघुनाथ की आज्ञानुसार तुरन्त मुहूर्त निकाला। फ़ौज के साथ जामवन्त, हनुमान, अंगद आदि भी गये (और) वहाँ पहुँचकर वीर इन्द्रजीत की फ़ौज को निहारने लगे। १९८ आज्ञा पाकर लक्ष्मण शीघ्र ही वहाँ पहुँचे और तुरन्त जब धनुष-बाण खींच आगे बढ़े तो विभीषण ने विनती की। १९९ हे लक्ष्मण ! आगे जो काला दल दीख रहा है वह सब इस फ़ौज के वीर है। इनके सिरों के टुकड़े-टुकड़े कर डालिए और इनको धराशायी करने की कृपा करें। यदि आप

ऐले जल्दि नहानिबक्सनु भया होम् सिद्ध गर्न्या छ यो ।
होम्को सिद्ध गर्‍यो भन्या हुँदि कसै जीती नसक्नू छ यो ॥२००॥
तेस् फौज्लाइ गिराइबक्सनुभया त्यो इन्द्रजित् वीर् पनि ।
होम् छोडीकन लड्न आउँछ यहाँ त्यो फौज् गिरायो भनी ।
येही युक्ति तहाँ विभीषणजिले विन्ती गर्‍याथ्या जसै ।
लक्ष्मण्ले पनि सैन्यमाथि शरको वर्षा गराया तसै ॥२०१॥
वानर्ले पनि बृक्ष पर्वत शिला फौज्माथि फेक्र्या जसै ।
राक्षस्को पनि फौज् अघी सरि सरी खुप् लड्न लाग्यो तसै ॥
लक्ष्मण्ले शरले अनेक् तरहले मार्‍यो र नाश्यो भनी ।
साह्रै क्रोध गरेर इन्द्रजित वीर् होम् छोडि आयो अनि॥२०२॥
पक्का बेस् रथमा चढी धनु लिइ साम्ने अगाडी सरी ।
लाग्यो लक्ष्मणलाई भन्न अब हेर् मेरा अगाडी परी ।
आँ टिस् मर्न भन्या र ताहिं नजिकै थीया विभीषण् पनि ।
तिन्लाई पनि खुप् भन्यो तँ कुलको शत्रू अधम् होस् भनी ॥२०३॥

येती भन्यो र रिसले रथमा वस्याको ।
सब्लाइ जित्न भनि कम्मर खुप् कस्याको ॥

इसी समय शीघ्रता से प्रहार नहीं करेंगे तो वह हवन सिद्ध कर लेगा और यदि हवन सिद्ध हो गया तो फिर इस पर विजय पाना असम्भव हो जायेगा । २०० उस सेना को यदि आप धराशायी कर दें तो वीर इन्द्रजीत अपनी सेना को धराशायी होते जानकर, हवन को त्याग देगा और युद्ध करने के लिए पहुँच जायेगा । विभीषण की ऐसी युक्तिपूर्ण विनती लक्ष्मण ने सुनी और उसी समय विपक्षी सेनाओं पर वाण-वर्षा आरम्भ कर दी । २०१ जैसे ही वानरों ने वृक्ष तथा पर्वत-शिलाओं से उन सेनाओं पर प्रहार किया, राक्षसी सेना भी आगे बढ़ी और उसने युद्ध आरम्भ कर दिया । इन्द्रजीत को जैसे ही लक्ष्मण द्वारा चलाये गए वाणों तथा अनेक प्रकार से सैनिकों के मारे जाने की सूचना मिली, वह अत्यधिक क्रोधित होकर हवन को त्याग कर लड़ने के लिये आ पहुँचा । २०२ वह एक उत्तम रथ पर सवार तथा हाथ में धनुष लिये हुए अग्रसर हुआ और लक्ष्मण से कहने लगा, अरे मेरे सम्मुख आकर अपनी मृत्यु को क्यों आमंत्रित करने लगे हो । वहीं निकट से विभीषण भी आ गया अतः उसे भी 'तुम कुल के अधम शत्रु हो' आदि कह कर कटु-वचनों से प्रहार करने लगा । २०३ इतना कहकर क्रोधित मन से वह रथ पर सवार हो

केही नटेरि अरु वानरलाइ हेला।
साह्रै गराइकन भन्छ परे इ फेला ॥२०४॥
बाण् हानि प्राण सबको म हरेर लिन्छु।
तिम्रो शरीर् पृथिविमा म गिराइदिन्छु ॥
यस्ता वचन् सुनि ति लक्ष्मणजी रिसाया।
हान्या र वाण् तहिं तुरन्त थला बसाया ॥२०५॥
मूर्छा पऱ्यो दुइ घरी र जुरुक्क उठ्यो।
लाल् लाल् नजर् गरि रिसाइ अगाडि छूट्यो।
मेरो पराक्रम रती नबुझेर पैले।
हानिस् पराक्रम तँ लौ बुझिले न ऐले ॥२०६॥
येती भन्यो र मनले अति वीर मानी।
लक्ष्मण्जिलाइ तहिं सात् शर जल्दि हानी ॥
दस् वाणले त हनुमान् विरलाइ हान्यो।
झन् मुख्य शत्रु त विभीषणलाइ मान्यो ॥२०७॥
हान्यो फेर् सय शर् विभीषण उपर येती गरेथ्यो जसै।
हान्या लक्ष्मणले कवच् शरिरको काटीदिया पो तसै ॥

गया। सब ओर से मन हटाकर केवल विजय प्राप्ति हेतु समस्त वानरों को तिरस्कृत करके वह कहने लगा कि अब ये सब अपने पंजे में आ गये हैं। २०४ प्राण लेने वाला बाण चला कर मैं सबको मार डालूँगा तथा उनके शरीर को धराशायी कर दूँगा। उसके ये वचन सुनकर लक्ष्मण जी क्रोधित हुए और तुरन्त ही बाण से प्रहार करके उसे वहीं धराशायी कर दिया। २०५ वह दो घड़ी मूर्छित हो कर पड़ा रहा। पुनः चेतन हो कर उठा और लाल नेत्र करके क्रोध से आगे बढ़ा और कहने लगा कि तुमने मेरे पराक्रम को किंचित मात्र भी नहीं समझा और पहले ही प्रहार कर दिया। अतः अब समझ लेना। २०६ इतना कह कर उसने मनमें अपने को एक बड़ा वीर समझ कर लक्ष्मण पर सात बाणों से प्रहार किया और दस बाण वीर हनुमान पर फेंके। विभीषण को तो उसने विशेष शत्रु ही समझा। २०७ पुनः सौ बाणों का प्रहार विभीषण पर जैसे ही उसने किया लक्ष्मण ने अपने बाण से उसके शरीर के कवच को काट दिया। अपने शरीर के कवच को कटे हुए देख कर उसने भी हज़ार शरों के प्रहार से लक्ष्मण के कवच के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। २०८ लक्ष्मण ने

हज्जार् शर्कन हानि लक्ष्मणजिका गाथ्का कवच्को पनि ।
टुक् पारेर गिराउँ दो तहिँ भयो मेरो गिरायो भनी ॥२०८॥

लक्ष्मण्ले पनि फेरि पाँच शरले घोडा र रथ् सूत् धनु ।
काटी वक्सनुभो उसै बखतमा अर्को उठायो धनु ॥
फेर् तेसै धनुलाइ काटिदिनुभो तीन् वाणले फेर् धनु ।
लीयो लक्ष्मणलाइ धेर शरले हान्यो छिटो क्या भनूँ ॥२०९॥

बाणैले गरि सब् भन्यो दश दिशा वानर् सकस्मा पऱ्या ।
लक्ष्मले पनि इन्द्रजीत विरको प्राण् लीन मन्सुब् धऱ्या ।
जुन् इन्द्रास्त्र थियो उही धनुमहाँ लाई अगाडी सऱ्या ।
चिन्तन् श्रीरघुनाथको गरि तहाँ जल्दी प्रतिज्ञा गऱ्या ॥२१०॥

धर्मात्मा यदि सत्य दाशरथि छन् हुन् नाथ् जगत्‌काधनी ।
साँचै ता अब इन्द्रजित् यहिं मरोस् येसै शरैले भनी ॥
छोड्या बाण र इन्द्रजीत विरको शीरै खसाया जसै ।
इन्द्रादीहरु पुष्प वृष्टि खुशि भै खुप् गर्न लाग्या तसै ॥२११॥

हर्षैले नगरा बज्या पृथिविको जुन् भारि हो त्यो गयो ।
हर्षैले जय शब्दको ध्वनि पनी ताहाँ बहूतै भयो ॥
लक्ष्मण् लेपनि शङ्खको ध्वनि र खुप् टङ्कार् धनूको गऱ्या ।
वानर्ले गहुतै गऱ्या स्तुति तहाँ आनन्दमा सब् पऱ्या ॥२१२॥

भी पुनः पाँच शरों से प्रहार करके उसके घोड़े, रथ, सारथी तथा धनुष काट दिये और उसने उसी क्षण दूसरा धनुष धारण कर लिया। उस धनुष को भी लक्ष्मण ने तीन वाणों के प्रहार से पुनः काट दिया। उसने फिर धनुप धारण किया और वड़ी ही तीव्रता से लक्ष्मण को अनेक शरों से पुनः प्रहार किया। २०९ वाणों के प्रहार से वानर-सेना दसों दिशाओं से संकट में घिर गई। लक्ष्मण ने भी वीर इन्द्रजीत के प्राण लेने की ठान ली। जो इन्द्रास्त्र थे उन्हें वह धनुष पर चढ़ा कर आगे वढ़े और श्रीरघुनाथ जी का चिन्तन कर तुरन्त यह प्रतिज्ञा की कि— २१० यदि सत्यावादी दशरथ वास्तव में धर्मात्मा हैं और श्रीरघुनाथ जगतपति हैं तो अब इन्द्रजीत इसी बाण से यहीं पर मर जायेगा। इतना कहकर उन्होंने वाण से प्रहार किया और वीर इन्द्रजीत के सिर को जैसे ही गिराया, इन्द्रादि देवगण अत्यन्त प्रसन्न हो कर पुष्प-वर्षा करने लगे। २११ पृथ्वी पर वड़े-वड़े नगाड़े वज उठे और जय-जयकार की ध्वनि गूंजने लगी। लक्ष्मण ने भी शंख

लक्ष्मण्जी सब फौज् लियेर रघुनाथ् ज्यूका हजूर्मा गया ।
पाऊमा परि दण्वत् गरि तहाँ सब् बिन्ति गर्दा भया ।।
खुशी खुप् हुनुभो सुनेर रघुनाथ् हूकूम् भयो बेस् गऱ्यौ ।
माऱ्यौ इन्दजितै त आज तिमिले सब् शत्रुको मूल् हऱ्यौ।।२१३।।
मेरो शत्रु अवश्य छैन अब वीर् जुन् वीर हो सो गयो ।
यस् रावण्कन मार्नलाइ सजिलो यैं वीर जाँदा भयो ।।
ऐले युद्ध हुँदा म मार्छु सहजै भन्न्या हुकूम् यो भयो ।
रावण् वीर् पनि सब् सुन्यो र समाचार मूर्छा परी गै गयो ।।२१४।।
मूर्छादेखि उठी विलाप् अति गरी फौज् लड्न पेल्यो पनि ।
हात्मा एक् तरवार् लिएर रिसले सीता म काट्छू भनी ।।
दौड्यो त्यो र सुपार्श्व मन्त्रि नजिकै थीयो अगाडी सऱ्यो ।
स्त्री घात् गर्नु अवश्य छैन महाराज्! यो जल्दि विन्ती गऱ्यो।।२१५।।

सुपार्श्वकों बिन्ति सुन्यो र ताहाँ ।
फर्क्यो फरक्कै दरबारमाहाँ ।।
शोक्ले बहुत् मूर्ख समान भैगो ।
फेरी सभा गर्छु भनेर गैगो ।।२१६।।

की ध्वनि की और धनुष को बड़ी जोर-जोर से टंकारा ! आनन्दित होकर सभी वानरों ने भी खूब स्तुति की । २१२ लक्ष्मण जी समस्त सेना को लेकर रघुनाथ जी के पास गए और उनके चरणों में गिर कर दण्डवत की और सविस्तार सब हाल कह सुनाया । सारा समाचार जानकर रघुनाथ जी अत्यन्त प्रसन्न हुए । उन्होंने प्रशंसा करते हुए कहा कि आज इन्द्रजीत को मारकर तुमने शत्रुओं की जड़ नष्ट कर दी । २१३ अवश्य ही अब मेरा कोई शत्रु नहीं, जो वीर शत्र था वह सो गया । इस वीर के चले जाने से अब रावण का मारना सरल हो गया । युद्ध होने पर मैं सरलता से उसे मार डालूँगा । ऐसा श्रीरघुनाथ ने कहा । उधर रावण ने जब यह समाचार सुना तो वह मूर्छित होकर गिर पड़ा । २१४ जब मूर्छा से उठा तो विलाप करने लगा, फिर मन स्थिर करके अधिकाधिक सैनिकों को लड़ने के लिए भेजा । स्वयं हाथ में तलवार ले क्रोध में भरा हुआ और यह कहता हुआ कि सीता को मैं अभी मार डालूँगा दौड़ा किन्तु मंत्री ने रोक लिया और विनती की कि स्त्रीघात करना उचित नहीं । २१५ सुपार्श्व की विनती सुनकर वह तत्क्षण दरबार को लौट गया । शोक में डूबा हुआ वह किंकर्त्तव्य-विमूढ़ सा पुनः दरबार में

सब् मन्त्रिले सँग बसेर विचार गर्दा ।
हीतैं हुन्या ठहरियो र अगाडि सर्दा ॥
जो बाँकि राक्षस थिया सब साथ लीयो ।
खुप् लड्नलाइ रघुनाथ् तिर चित्त दीयो ॥२१७॥
त्यो अग्निमा सलह झैं जब पर्न आयो ।
सक्थ्यो कहाँ अधिक ठक्कर फेरि पायो ॥
धेर् वीर् मऱ्या हृदयमा पनि वाण लाग्यो ।
टिक्नै तहाँ नसकि जल्दि फिरेर भाग्यो ॥२१८॥
सम्झ्यो गुरूकन विपत्ति पऱ्यो र ताहाँ ।
चाँडै गुरूसित गई शिर पाउमाहाँ ॥
राखी गऱ्यो विनति दुःख वहूत पायाँ ।
यै दुःखको विनति गर्न त आज आयाँ ॥२१९॥
हे नाथ् ! हजूर गुरु भई पनि दुःख पऱ्याँ ।
क्या भो मलाइ कसरी अब चित्त धऱ्याँ ॥
यस् रामले सकल वन्धु र पुत्र माऱ्यो ।
शूरा अनेक् विरहरू पनि छुट्टि पाऱ्यो ॥२२०॥
रावण्को विनती सुन्या र गुरुले पाएछ आपत् भनी ।
गर्नूसम्म गरोस् भनेर उपदेश् दीया गुरूले पनि ॥

सभा करने के विचार से प्रविष्ट हुआ । २१६ सब मंत्रियों ने बैठकर रावण के हितार्थ विचार-विमर्श किया । शेष बचे हुए राक्षसों को लेकर आगे बढ़कर रघुनाथ जी से युद्ध करना ही उत्तम ठहराया गया । २१७ रणभूमि में पहुँच कर राक्षसों की वही दशा हुई जो आग में कूदने पर होती है । वे अधिक क्या कर सकते थे । पुनः पराजित हुए । अनेक वीर मारे गए । उनके हृदय में वाण लगा । वे टिक न सके और भाग खड़े हुए । २१८ विपत्ति पड़ने पर रावण ने गुरु का स्मरण किया और उनकी शरण में जाकर चरणों में गिरकर अत्यधिक शोक ग्रस्त होकर विनती की कि दुःख के कारण ही मैं आज आपके पास प्रार्थना करने आया हूँ । २१९ हे नाथ ! आप जैसे गुरु को पाकर भी मैं इतना दुःख पा रहा हूँ । अब मेरे चित्त को कैसे शान्ति मिलेगी । मुझे आखिर ये क्या हो गया, इस राम ने मेरे सभी वन्धु-बान्धवों को मार डाला और मेरे अनेक शूर-वीरों को वीर गति दे दी । २२० रावण की दुःख भरी विनती सुनकर गुरु ने उसे सांत्वना

हे रावण् ! सुन मंत्र दिन्छु अब गै होम् गर्नु खुप् ध्यान् धरी ।
होम् सम्पूर्ण गर्‍यौ भन्या त हतियार् मिल्नन् तिनैले गरी ॥२२१॥
जित्न्याछौ सब वीरलाइ भनि यो आज्ञा गुरूको जसै ।
पाएथ्यो खुशि भै उठी घर गई होम् गर्न आँट्यो तसै ॥
पाताल् तुल्य गुफा खनी तहिं बस्यो होम् गर्नलाई पनि ।
ढोका बन्द गर्‍यो सबै शहरको कोही नआउन् भनी॥२२२॥

लूक्यो रावण येहि रीत्‌सित र खुप् होम् गर्न लाग्यो तहाँ ।
लूक्यो रावण तापनी तर धुवाँ लूकी रहन्थ्यो कहाँ ॥
देख्या तेहि धुवाँ विभीषणजिले होम् गर्न लाग्यो भनी ।
पायाँ भेद् भनि रामका हजुरमा गै बिन्ति पार्‍या पनि॥२२३॥

लाग्यो रावण होम गर्न महाराज् ! होम् सिद्ध पार्‍यो भन्या ।
साँचो बिन्ति म गर्दछू हजुरमा ई सब् अजेयै बन्या ॥
हूकुम् वानरलाइ बक्सनुहवस् वीर् वीर् अगाडी सरी ।
जल्दी गैकन यज्ञ नाश् गरिदिउन् हूकूम् शिरोपर् धरी॥२२४॥

बिन्ती येति गर्‍या विभीषणजिले हूकुम् प्रभूको भयो ।
अङ्गद वीर् हनुमान् दुवै इ खटिया दश् कोटिको फौज् गयो ॥

के लिए उपदेश दिया। हे रावण ! सुनो, मैं मंत्र देता हूँ। ध्यान-पूर्वक हवन करना। यदि हवनादि सम्पूर्ण रूप से करोगे तो उसके प्रभाव से तुम्हें शस्त्र प्राप्त होंगे। २२१ जैसे ही गुरु का यह आशीर्वाद मिला कि सब शत्रुओं पर विजय प्राप्त होगी, वह अत्यन्त प्रसन्न होकर उठा और हवन की तैयारी में लग गया। पाताल के समान गुफा बनाई। नगर के सारे द्वार बन्द कर दिये जिससे कोई भी अन्दर प्रवेश न कर सके। इस प्रकार पूर्ण प्रबन्ध करके वह अन्दर बैठ गया। २२२ इस प्रकार रावण ध्यान-मग्न हो कर हवन करने के लिये छिप कर बैठ गया। परन्तु धुवां कैसे छिप सकता था। उस धुवें को देखकर विभीषण ने भेद को जान लिया। उसने राम की सेवा में जाकर यह सारा समाचार सविस्तार वर्णन कर दिया। २२३ महाराज ! रावण हवन करने लगा है। यदि उसने हवन सिद्ध कर लिया तो मैं सत्य कहता हूँ कि वह अजेय हो जायेगा। आप वानरों को आज्ञा दें कि वे वीर उसको शिरोधार्य कर शीघ्र ही जा कर उसके यज्ञ को नष्ट कर दें। २२४ विभीषण की विनती सुनकर प्रभु ने आज्ञा दी कि अंगद, वीर हनुमान तथा दस कोटि सेना दीवार लांघ कर

पखालि् नाघि गया र तेस् शहरमा दर्वार् पुग्याथ्या जसै ।
चौकी रावणका थिया जति तहाँ तिन्लाइ मान्या तसै॥२२५॥

रानी हुन् सरभी विभीषणजिकी लंकै शहर्मा थिइन् ।
रावण् लूकिरहेछ ताहिं छ भनी तिन्ले इशारा दिइन् ॥
गूफाका मुखमा त पत्थर ठुलो लाएर पक्का गरी ।
होम् गर्थ्यो तहिं भित्र रावण उहीं पौंच्या ठुलो वेग् गरी॥२२६॥

त्यो पत्थर्कन लात्ति अङ्गदजिले दीया धुलै भै खस्यो ।
होम्को विघ्न गराउनाकन तहाँ क्यै फौज भित्रै पस्यो ॥
रावण् येति हुँदा पनी दृढ भई ध्यान् गर्न लाग्यो जसै ।
वीर् वीर् वानरले अनेक् तरहले त्यो यज्ञ नाश्या तसै॥२२७॥

रावण्ले तहिं होम गर्न भनि एक् सूरो लियाको पनि ।
खोस्या श्रीहनुमानले र रिसले हान्या उठोस् यो भनी ॥
ध्यानैमा दृढ मन् गरी अचल भै रावण् बसेथ्यो जसै ।
ल्याया अङ्गदले त खैंचि नजिकै मन्दोदरी पो तसै ॥२२८॥

ती मन्दोदरिलाइ रावण नजीक् पौंचाइ हुर्मत् लिया ।
चोलो खोलि अफालि फेरि कटिको सारी खसाली दिया ॥
लायाका गहना समेत् शरिरका वस्त्रै अफाल्या जसै ।
रूँदै रावणका नजीक रहँदी बिन्ती गरिन् यो तसै॥२२९॥

नगर के द्वार में पहुँच कर, रावण के सभी रक्षकों को मार डालें। २२५ विभीषण की रानी उसी नगर में थी और उन्होंने ही यह सकेत किया था कि रावण वहाँ छिपा हुआ है। गुफा के द्वार पर दृढ़ पत्थर लगा कर रावण छिपा हुआ हवन कर रहा था। वहीं सारे वानर आँधी के समान पहुँच गए। २२६ उस पत्थर को लात मार कर अंगद ने धूल के समान बिखेर दिया। हवन में विघ्न डालने के लिए समस्त सेना अन्दर प्रवेश कर गई। इतना होने पर भी रावण दृढ़तापूर्वक ध्यानमग्न बैठा हवन करता रहा। वीर वानरों ने यज्ञ को विध्वंस कर दिया। २२७ रावण ने हवन करते समय एक शूर को भी अपने साथ रक्खा था। उसे भी श्री हनुमान ने प्रहार करके भगा दिया। रावण अभी भी ध्यान-मग्न अटल बैठा था। अंगद मन्दोदरी को भी वहाँ खींचकर ले आया। २२८ वह मन्दोदरी को रावण के सामने लाकर सताने लगा। चोली उतार कर फेंक दी और साड़ी भी कमर से नीचे गिरा दी। उसके शरीर पर धारण किए हुए समस्त वस्त्राभूषण जब उसने उतार कर फेंक दिये तो

हे नाथ् ! आज कता गयो हजुरको लज्जा अनाथ् क्या गरूँ ।
पत्नीका इ विलाप् सुनी जिउनु धिक् मर्नू निको हो बरु ॥
येती बिन्ति गरिन् र पुत्रकन खुप् संझेर लागिन् रुनैं ।
अर्को कोहि थिएन ताहिं तिनको साहाय हून्या कुनैं॥२३०॥
भर्तालि पनि बाँचुला भनि यहाँ लज्जैं समेत् त्याग् गर्‍या ।
तेरो ज्यान् अधि गै गयो गरुँ कसो ऐल्हे विपत्ती पर्‍या ॥
ती मन्दोदरि रानिको अति विलाप् साम्ने सुनेथ्यो जसैं ॥
ऊठ्यो खड्ग लिएर अंगदजिका हान्यो कटीमा तसैं॥२३१॥
होभ्को नाश गराइ अंगदहरू दौडेर रामथ्यैं गया ।
ती मन्दोदरि रानि रावण यिनैं का बात् तहाँ खुप् भया ॥
लाग्यो रावण भन्न रानि ! अहिले बाँच्नू असल् हो भनी ।
बाँच्नैं खातिर ता म चूप् भइरह्याँ येती हुँदामा पनि ॥२३२॥
बाँ चेदेखि त देखिइन्छ सब थोक् यस्तो बुझी ज्ञानले ।
यो शोकदूर् गरिहाल हुन्छ अब क्या यस्ता असत् ध्यानले ॥
अज्ञानैं छ भुलाउन्या शरिरमा यो देह मै हूँ भनी ।
त्यै अज्ञान् बलवान् भयो पनि भन्या फैलिन्छ संसार् पनि॥२३३॥

दुःखी होकर मन्दोदरी रावण के निकट जा कर विलाप करती हुई कहने लगी। २२९ हे नाथ ! आज आपकी लाज कहाँ चली गई। मैं अनाथा क्या करूँ। पत्नी का विलाप सुन कर रावण का ध्यान भंग हुआ। वह सोचने लगा, इस प्रकार जीवित रहने से तो मर जाना श्रेयस्कर है। मन्दोदरी ऐसी बिनती कर पुत्र को सोच-सोच कर रोने लगी। २३० स्वामी द्वारा बचाये जाने की आशा से उसने लज्जा का भी त्याग किया और बोली कि यदि पहले ही आपके प्राण चले गए तो इस विपत्ति में मैं क्या करूँगी। मन्दोदरी का ऐसा विलाप सुनकर वह खड़्ग ले कर उठा और अंगद की कमर में प्रहार किया। २३१ हवन का विध्वंस कर अंगदादि राम के पास दौड़े गये। रानी मन्दोदरी और रावण के ही विषय में चर्चा हुई। रावण ने कहा कि रानी ! अभी बच के रहना ही उत्तम है, यही सोच कर इतना सब कुछ होने पर भी मैं चुपचाप बैठा रहा। २३२ बच जायेंगे तो सब कुछ देख सकेंगे, यही सोच कर अपने मन से शोक को दूर करो। अब ध्यान से अज्ञान को हटा कर रखना है। यह धारणा भी व्यर्थ है कि शरीर में जो प्राण हैं वह मैं ही हूँ। ऐसी अज्ञान की भावना यदि प्रबल हो गयी तो यह संसार भर में फैल जायगी। २३३ हे मन्दोदरी ! आतमा को ज्ञान

आत्मज्ञान स्वरूप् बुझेर मनले अज्ञानको नाश् गरी ।
स्वस्थै भै रहु शोक् नमानि तिमिले क्या हुन्छ यो शोक् गरी ।।
हे मन्दोदरि ! मार्छु राम्‌कन सहज् संग्राम ठूलो गरी ।
रामैले यदि मार्दछन् त पनि बेस् जान्याछु संसार् तरी।।२३४।।

संग्राम्‌मा मरिगै गयाँ पनि भन्या मार्नू र सीता यहाँ ।
अग्नीमा तिमिले प्रवेश् तब गरी आया म जान्छू जहाँ ।।
रावण्‌का इ वचन् सुनेर अति ताप् मान्दी ति मन्दोदरी ।
साँचो बिन्ति म गर्छु आज महाराज् ! भन्दै अगाडी सरी ।।२३५।।

बिन्ती रावणथ्यैं गरिन् पनि तहाँ राम् हुन् जगन्नाथ् हरि ।
जीती सक्नु कदापि छैँन अरुले कस्तै लडाईँ गरी ।।
वैवस्वत् मनुलाइ मत्स्यरुपले जस्ले र रक्षा गर्‍या ।
फेरी कूर्म भएर मन्दर पनी जस्ले पिठैमा धर्‍या।।२३६।।

प्राण खैंचेर लिया वराह रुपले जस्ले हिरण्याक्षको ।
बाँची कोहि फिरेन लड्‌दछु भनी साम्‌ने गयाको छ जो ।।
ठूलो दैत्य थियो हिरण्यकशिपू मार्‍या नृसिंहै भई ।
राज्यै खैंचिलिया छलेर बलिको वामन् स्वरूप्‌ले गई।।२३७।।

स्वरूप समझ कर मन से अज्ञान का नाश कर दो और स्वस्थ मन से रहो । शोक न करो । शोक करने से होगा भी क्या ? मैं राम से घोर युद्ध करूँगा और उन्हें मार डालूंगा । यदि मैं राम के हाथों मारा भी गया तो भी उत्तम होगा । मुझे मोक्ष मिलेगी और मैं संसार सागर से तर जाऊँगा । २३४ यदि संग्राम में मैं मर भी जाऊँ तो सीता जी यहाँ हैं उन्हें मार डालना और तुम अग्नि में प्रवेश कर वहीं आ जाना जहाँ मैं जा रहा हूँ अर्थात् स्वर्ग को । रावण के वचन सुनकर मन्दोदरी को अत्यन्त ताप हुआ । वह विनती करते हुए आगे बढ़ी और बोली महाराज ! मैं सत्य कहती हूँ । २३५ राम जगन्नाथ हरि हैं । अतः संग्राम में किसी प्रकार उन्हें कोई भी पराजित नहीं कर सकता । जिसने मत्स्यरूप धारण कर वैवस्वत्मनु की रक्षा की और पुनः कूर्म होकर मन्दर को अपनी पीठ पर धारण किया । २३६ वाराहरूप धारण कर जिसने हिरण्याक्ष का बध किया । जो भी युद्ध करने के लिए सामने आया कोई भी बचकर नहीं निकला । हिरण्यकश्यपु एक बहुत ही बड़ा बलवान राक्षस था उसे भी उन्होंने नरसिंह रूप धारण कर मार डाला । बावन रूप धारण कर छल से बलि के राज्य को छीन लिया । २३७ पृथ्वी में परशुराम

थीया क्षत्रिय पृथ्विमा परशुराम् भै नाश् सबैको गऱ्या ।
तिम्रो प्राण् लिनलाइ आज पनि नाथ् राम् भै अगाड़ी सऱ्या ।।
सीता हर्नु थिएन हेलन गरी सीताजि हर्नूभयो ।
ये काम्ले इ विपत् पऱ्या हजुरमा ज्यान् इन्द्रजित्को गयो।।२३८।।

सीता सुम्पनुपर्छ आज अधिराज् राम्चन्द्रजीथ्यैं गई ।
लङ्कामा पनि राज् विभीषण गरून् राम्का पियारा भई ।।
सब् छोडीकन आज जाउ वनमा येती भनीथिन् जसै ।
रावण्ले पनि ई वचन् सुनि जवाफ् खुप् दीन लाग्यो तसै।।२३९।।

हे मन्दोदरि! इन्द्रजित् पनि मऱ्यो ठूला ठुला वीर् मऱ्या ।
कुम्भैकर्ण मऱ्यो अनेक् अरु पनी संग्राममा वीर् पऱ्या ।।
येतीसम्म भएपछी कसरि फेर् लत्रेर पाऊ परूँ ।
शत्रुथ्यैं गइ लत्रि बाँच्नु ननिको प्राण् आज जावस् बरु।।२४०।।

विष्णू हुन् रघुनाथ् सिता पनि यिनै लक्ष्मी भनी जान्दछु ।
जानी जानि सिता हऱ्याँ त म उसै क्या आज डर् मान्दछू ।।
राम्का हात परी मरूँ भनि त हेर् सीताजिलाई हऱ्याँ ।
राम्का हात परी मऱ्याँ पनि भन्या संसार् सहज्मा तऱ्याँ।।२४१।।

का रूप धारण कर सबका विनाश किया। आज राम के रूप में नाथ आपके प्राण लेने के लिए सम्मुख आये है। आपको सीता का हरण नहीं करना चाहिये था। आपने बिना किसी विचार के सीता जी को हरने की धृष्टता की, इसी कारण आपके ऊपर विपत्ति आई है। इन्द्रजीत का भी प्राणान्त इसी कारण हो गया। २३८ हे अधिराज! आज रामचन्द्रजी के पास जाकर आप सीता जी को सौंप दें। यही उचित और उत्तम होगा। लंका में विभीषण ही राम का प्रिय होकर राज्य करे। सब छोड़कर आप वन को चलें। मन्दोदरी के वचन सुन कर रावण बोला— २३९ हे मन्दोदरी! इन्द्रजीत भी मर गया तथा वड़े-वड़े वीर मारे गये। कुम्भकर्ण भी मर गया तथा अनेक वीर संग्राम में मारे गये। इतना सब कुछ हो जाने पर भी अब मैं किस प्रकार झुक कर पांव पड़ूँ। शत्रु के सामने इस प्रकार झुकने से तो अच्छा यही है कि मेरा प्राण ही चला जाये। २४० रघुनाथ विष्णु हैं और सीता लक्ष्मी हैं, यह मैं भली प्रकार जानता हूँ, यह सव जानबूझ कर भी मैंने सीता जी का हरण किया तो फिर मैं अव भयभीत क्यों होऊं। राम के हाथों मरने की इच्छा से ही मैंने सीताजी का हरण किया। राम के हाथों

फेरी तुरन्त रघुनाथ् सित लड्न जान्छु ।
मार्नन् मलाइ रघुनाथ् तब खूशि मान्छु ।।
संसारका सकल तापहरुलाइ तोडी ।
जान्याछु पारि तिमिलाइ त वारि छोडी ।।२४२।।

राग् द्वेष्का भेल चल्छन् भँवरि सरि यि युग् घुम्दछन् बीचमाहाँ ।
पुत्रादी मत्स्य झैं छन् रिस पनि वडवानल् सरीको छ ताहाँ ।।
कामैको जाल् छ ठूलो तर पनि बलियो ताहि जाल्लाइ फारी ।
संसार्-सागर् सहज्मा तरिकन हरिथ्यैं बस्न जान्याछु परि ।।२४३।।

मन्दोदरी सित यती भनि लड्नलाई ।
कम्मर् कसेर बलियो रथ एक् मगाई ।।
रथ्मा चढेर रघुनाथ् सित जान आयो ।
राम्चन्द्रको सकल वानर फौज् डरायो ।।२४४।।

त्यो रावण् रणभूमिमा जव पुग्यो साम्ने हनूमान् गया ।
मूर्छा पारि गिराउँ यस्कन भनी एक् मुड्कि हान्दा भया ।।
छातीमा जब मुड्कि बज्रन गयो खुप् वज्र तुल्यै गरी ।
घूँडा टेकि गिऱ्यो पनी दुइ घडी मूर्छा तुरुन्तै परी ।।२४५।।

यदि मैं मरा तो सहज ही में संसार सागर से तर जाऊँगा । २४१ पुनः शीघ्र ही रघुनाथ जी से युद्ध करने जाता हूँ । रघुनाथ मुझे मार डालें तब भी मैं प्रसन्न हूँ । संसार के समस्त तापों से दूर, तुम्हें इस ओर छोड़ कर मैं उस पार चला जाऊँगा । २४२ राग द्वेष की नदी बहेगी और इस के मध्य जीव भंवर के समान चक्कर लगायेगा । पुत्रादि मछली के समान हैं । क्रोध भी वड़वानल के समान है, काम से युक्त महाजाल बिछा हुआ है तथापि इस देह को जलाकर चला जाऊँगा और सहज ही इस संसार सागर से तर कर हरि के पास सदा के लिए उस पार चला जाऊँगा । २४३ मन्दोदरी से इतना कह कर, उसने युद्ध के लिए कमर, कसी और एक शक्तिशाली रथ मंगवाया और उस पर सवार होकर राम से लड़ने के लिए आया । रामचन्द्र की समस्त वानर सेना एक बार भयभीत हो गई । २४४ रणभूमि में पहुँचते ही रावण के सामने हनुमान गया । उसे मूर्छित कर धराशायी करने के उद्देश्य से उसने रावण पर एक मुक्के से प्रहार किया । वक्षस्थल पर मुक्का पड़ते ही बज्र के समान आघात हुआ और वह दो घड़ी तक मूर्छित पड़ा रहा । २४५ मूर्छा से उठ कर रावण ने हनुमान को (शावाशी) देते हुए कहा कि तू

मूर्छादेखि उठ्यो र रावण तहाँ स्याबास् तँ होस् वीर्भनी ।
ठूलो वीर् हनुमानलाइ बुझि खुप् साह्रै सह्रायो पनि ॥
रावण्ले हनुमानको सह्रनि खुप् ताहाँ गरेथ्यो जसै ।
रावण्का सब सेखि तोड्न हनुमान् वीर् बोल्न लाग्या तसै ॥४६॥

हे रावण् ! किन गर्दछस् सह्रनि यो धिक्कार् म मान्छू बरु ।
मेरो मुड्कि पऱ्यापछी पनि बचिस् बोल्छस् यहाँ क्या गरूँ ॥
एक् चोट् हान् तँ पनी तँलाई म पनी फेर् हान्छु छातीमहाँ ।
एक् मुड्की अब हानुँला त नमरी उस्केर जालास् कहाँ॥२४७॥

ई बात् श्री हनुमानले जब गऱ्या बेसै भन्यो यो भनी ।
एक् चोट् श्री हनुमानका हृदयमा ताकेर हान्यो पनि ॥
फेरी श्रीहनुमान् सऱ्या अघि तहाँ मुड्की उठाई जसै ।
रावण् टिक्न सकेन एक् क्षण पनी अन्यत्र भाग्यो तसै॥२४८॥

रावण्का सँग चार् जना विर थिया मन्त्री लडाका पनि ।
ई चार् वीर्कन चार् जना अघि सऱ्या ऐले निभाऊँ भनी ॥
अङ्गद् श्रीहनुमान नील नल यी चार् वीर कूदी गया ।
रावण्का सँगका ति चार् विर सहज् मारेर फिर्दा भया ॥२४९॥

ती चार् जना जब मऱ्या तब झन् रिसायो ।
राम्का उपर् अघि सरीकन वाण् खसायो ॥

ही एक वीर है । हनुमान को महावीर समझ कर उनकी सराहना की । रावण की प्रशंसा युक्त बातें सुनकर हनुमान ने कहा, "हे रावण ! तुम क्यों इस प्रकार प्रशंसा कर रहे हो मैं तो इसे धिक्कारता हूँ और तुच्छ समझता हूँ ।" २४६ मेरे मुक्के के प्रहार से भी तुम बच गए और कहते हो क्या करूँ । एक बार तुम भी मुझ पर प्रहार करो तब पुनः मैं तुम्हारे वक्षस्थल पर प्रहार करूँगा । अब एक मुक्की और मार लूँ तो फिर देखें तुम बच कर कहाँ जाते हो । इतना कह कर हनुमान चुप हो गए । तुमने ठीक कहा है, यह कहते हुए— २४७ (रावण ने भी उसी समय) हनुमान के हृदय को लक्ष्य बना कर एक चोट कसकर प्रहार किया । पुनः एक मुट्ठी बाँध कर जब श्री हनुमान अग्रसर हुए तो रावण एक क्षण भी वहाँ टिक नहीं सका, वह अन्यत्र भाग गया । रावण के संग चार लड़ाकू वीर भी थे । २४८ इन चार वीरों को हम चार वीर अग्रसर होकर अभी समाप्त कर दें, ऐसा सोचकर, अंगद, श्री हनुमान, नील तथा नल चारों वीर कूद पड़े । रावण के साथ जो चार वीर थे वे उनको सहज ही में

बाक्ला बुँदै सरि ति शर् जब खस्न आया ।
खुप् वानरादि विरले पनि दुःख पाया ॥२५०॥

यो चाल् वानरको बुझी रघुपती सामने अगाडी सरी ।
लाग्या लड्न तहाँ अनेक् तरहले त्रैलोक्यका नाथ् हरी ॥
त्यो रावण् रथमा थियो रघुपति खाली जमीन्मा थिया ।
राम्का खातिर इन्द्रले अति असल् एक् रथ् पठाई दिया॥२५१॥

जल्दी मातलि सारथी रथ लिई राम्का हजूरमा गया ।
हात् जोरीकन रामका हजुरमा यो बिन्ति गर्दा भया ॥
हे नाथ् ! रथ् लिइ इन्द्रका हुकुमले आयाँ खडा छू पनि ।
यै रथमा चढिबक्सियोस् हजुरले बेस् बिन्ति पार्‍यो भनी॥५२॥

यो बिन्ती गरि मातली अघि सर्‍या स्वामित् सितानाथ् पनि ।
तेस् रथ्लाइ परिक्रमा गरि चढ्या चढ्नै उचित् हो भनी ॥
ताहाँ देखि त मच्चियो अधिक झन् संग्राम् निरंतर् गरी ।
जुन् बाण् रावणले त छोड्छउहिबाण् काट्छन् रमानाथ् हरि॥५३॥

यस्ता रीत्सित शस्त्र अस्त्र सब थोक् काट्या प्रभूले जसै ।
रावण्ले पनि राक्षसास्त्र लिइ खुप् फेर् हान्न लाग्यो तसै ॥

मारकर लौट आये । २४९ जब उन चारों वीरों को उन्होंने मार डाला तो रावण क्रोधित होकर आगे बढ़ा और राम के ऊपर बाण फेंका । मूसलाधार पानी के समान जब बाण-वर्षा होने लगी तब वानर सेना घोर संकट में फंस गई । २५० वानरों की ऐसी अवस्था देखकर श्रीरघुनाथ आगे बढ़े और युद्ध करने में लीन हो गये । रावण रथ पर था तथा रघुपति नाथ भूमि पर विराजमान थे । इसलिए उनकी सुविधा के लिए एक अत्यन्त सुन्दर रथ इन्द्र ने भेज दिया । २५१ मातली सारथी रथ लेकर श्रीरघुनाथ के पास पहुँचे और विनती की कि हे ! रघुनाथ ! इन्द्रदेव की आज्ञानुसार रथ लेकर आया हूँ, अतः इस रथ पर आप विराजने की कृपा कीजिए । २५२ मातली के विनती करने पर सीताजी आगे वढ़ीं और रथ की परिक्रमा करके उस पर सवार हो गयीं । तत्पश्चात संग्राम और अधिक भयावह रूप धारण करने लगा तथा जिस बाण को रावण छोड़ता है उसे श्रीरघुनाथ अपनी शक्ति से नष्ट कर डालते हैं । २५३ जब श्रीरघुनाथ ने रावण के सारे अस्त्रशस्त्र काट डाले तो रावण ने राक्षसशस्त्र का उपयोग करना शुरू कर दिया । रावण जितने भी बाणों का प्रहार कर रहा था उसके सारे वाण सर्परूप होकर धरती पर गिर

रावण् हान्दछ बाण् जती जति तहाँ सब् सर्प रूप् भै खस्या ।
हान्या वाण् रघुनाथले पनि र ती बाण् ता गरुड् भै खस्या।।५४।।
काट्या सर्प पनी सबै गरुडले पक्रेर टुक् टुक् गरी ।
तेस् बीचमा शरवृष्टि खुप् सित गर्‍यो राम्का अगाडी सरी ।।
धक्का केहि दियो प्रभूकन तहाँ फेरी गिराऊँ भनी ।
हान्यो मातलिलाइ वाण् र पछि फेर् केतू खसाल्यो पनि।।२५५।।
घोडैलाइ पनी अनेक शरले खुप् हान्न लाग्यो जसै ।
आश्चर्यैं भइ देव पितृ ऋषिगण् खेद् मान्न लाग्या तसै ।।
लीलाले रघुनाथ् पनी जब तहाँ दुःखी सरीका भया ।
वानर्को सब फौज् विभीषण समेत् साह्रै डराई गया।।२५६।।
बीस बाहू दश शिर् भयङ्कर स्वरूप् मैनाक् सरीको भई ।
लड्थ्यो रावण रामका हजुरमा साम्ने नजीकै गई ।।
उठ्थ्यो रिस् प्रभुको र तेहि बिचमा कालाग्नि जस्ता बनी ।
रावण्का दश शिर् गिराउन लिया जल्दी धनुर्वाण् पनि।।२५७।।
कालाग्नी सरिको भयङ्कर स्वरूप् राम्को बनेथ्यो जसै ।
कामिन् पृथ्वि पनी भयङ्कर स्वरूप् देखिन् र राम्को तसै ।।
रावण् को पनि चित्तमा भय पर्‍या उल्का बहूतै भया ।
क्या गर्छन् प्रभुले यहाँ भनि तहाँ सब् लोक् डराई गया।।२५८।।

पड़ते थे। परन्तु जो बाण रघुनाथ ने छोड़ा था वह बाण गरुड़ रूप में नीचे आ गिरा। २५४ सम्पूर्ण सर्पो को पकड़ कर गरुड़ ने टुकड़े-टुकड़े कर डाला। और श्रीरामचन्द्र जी पर बाणों की वर्षा की। श्रीरघुनाथ को इससे धक्का तो लगा पर उन्होंने आगे बढ़कर मातली पर बाण प्रहार किया और केतु को भी मार गिराया। २५५ जब घोड़ों के ऊपर भी बाण प्रहार होने लगा तो देवपितृ ऋषिगण भी आश्चर्य-चकित और अत्यन्त ही दुखित हुए। साथ ही साथ श्रीरघुनाथ को भी अत्यन्त ही खेद हुआ और विभीषण सहित वानरों की सेना भी अत्यधिक भयभीत हो गयी। २५६ बीस हाथ और दस सिर वाला रावण भयंकर स्वरूप धारण करके श्रीरघुनाथ के सामने युद्ध करने में मस्त था। यह देखकर श्रीरघुनाथ को अत्यन्त ही क्रोध आया और उन्होंने भी रावण की भुजाओं और सिरों को काट गिराने के लिए धनुष बाण सम्भाल लिया। २५७ श्रीरघुनाथ के कालाग्नि जैसे भयंकर स्वरूप को देख कर पृथ्वी भी कांपने लगी। उनके इस भयंकर रूप को देखकर रावण भी वहुत भयभीत

आकाश्मा बसि हेर्दथ्या जति थिया सब् देवतागण् पनि ।
कस्ता रौत्सित मर्छ रावण तहाँ हेरौं तमाशा भनी ॥
राम्को रावणको परस्पर तहाँ खुप् युद्ध ठूलो भयो ।
रात्रीको दिनको प्रकाश् नभइ काल् धेर् युद्ध हूँदा गयो ॥२५९॥

रावण् को शिर काट्नलाइ जव बाण् फेंक्या प्रभूले तहाँ ।
तालैका फल झैंगिऱ्या तपनि शिर् गीरेन पृथ्वीमहाँ ॥
एकोत्तर् शय शिर् गिऱ्या जति गिरुन् सब् बन्न लाग्या जसै ।
क्या भो आज भनी प्रभूकन पनी आश्चर्य लाग्यो तसैं॥२६०॥

ठूला दैत्य बडा बडा विर पनी जुन् वाणले मारिया ।
सोही वाण् पनि आज रावण्-उपर् ताकेर खुप् हानिया ॥
काट्छन् शिर् पनि वाणले र दशशिर् भैंमा खसाल्छन् पनि ।
फेर् ज्यूँकातिउँ शिर् हुन्या गरुँ कसो क्या भो यहाँको जनी॥६१॥

यो चिन्ता रघुनाथमा जब पऱ्यो साम्ने विभीषण् गया ।
यो हेतू छ भनेर हेतु जति हो सब् बिन्ति गर्दा भया ॥
ब्रह्माको वरदान् छ शिर् खसिगया फेर् उम्रनन् शिर् भनी ।
फेर् अमृत् पनि नाभिमा छ तव यो मर्दैन काट्या पनि ॥२६२॥

हुआ और साथ ही यह सोंचकर कि क्रोध में प्रभु न जाने क्या कर डालें सभी लोग अत्यन्त भयभीत हुए और चारों ओर कोलाहल मच गया । २५८ समस्त देवगण आकाश से यह तमाशा देखने लगे कि रावण किस प्रकार मारा जाता है । राम और रावण में परस्पर युद्ध छिड़ा हुआ था, गत दिन उसमें ही वीत गया । २५९ जव प्रभु ने रावण के सिर को काटने के लिए प्रहार किया तो जितने सिर वह गिराते जाते उतने ही फिर से वहाँ वन जाते । यह देखकर राम अत्यन्त ही आश्चर्य में डूब गये और दूसरा उपाय सोचने लगे । २६० जिन वाणों से वलशाली दैत्यों को मार गिराया गया था उन्हीं वाणों से तो रावण के सिरों पर प्रहार किया जा रहा है लेकिन वे सिर तो ज्यों के त्यों फिर अपनी जगह आ जाते हैं, यह सोचकर श्रीरघुनाथ अत्यन्त ही चिन्तित हुए । २६१ जब विभीषण ने देखा कि श्रीरघुनाथ अत्यन्त ही चिन्तित हैं तो उसने श्रीरघुनाथ को बताया कि उसे ब्रह्मा का वरदान प्राप्त है, इसलिए उसका सिर कटकर फिर से उत्पन्न हो जाता है । उसकी नाभि में अमृत है, अतः सिर कटने पर भी वह नहीं मरता है । २६२ विभीषण ने श्री राम से विनती की कि हे रघुनाथ ! आप उस अमृत का शोषण कीजिए । जब सारा अमृत सूख जायेगा तो

त्यो अमृत् सब शोषि बक्सनुहवस् सब् सुक्छ अमृत् जसै ।
चाँडैत्यो मरिजान्छ तेस् बखतमा उठ्तैन फेरी कसै ।।
हात् जोरेर जसै विभीषणजिले यो गुह्य खोलीदिया ।
ठाकुर्ले पनि अग्निवाण झटपट् हानेर शोषीलिया ।।२६३।।

त्यो अमृत्कन शोषिबक्सनु भयो यो दिन्छ अर्ती भनी ।
रिस्ले शक्ति लिई विभीषण उपर् ताकेर हान्यो पनि ।।
राम्ले शक्ति र शिर् दशै छिनिदिया फेर् एक शिर्को भई ।
नाना शस्त्र लिएर खुप् सित लड्यो राम्का अगाडी गई।।२६४।।

तेस् बीच्मा पनि मातली अघि सरी हात् जोरि बिन्ती गर्‍या ।
हे नाथ् ! रावण लड्छ यो अझ भन्या फेर् शस्त्र हान्नै पर्‍या ।।
ब्रह्मास्त्रै अब छोडि बक्सनुहवस् खुप् मर्म तोड्न्या गरी ।
मार्न्या युक्ति त एक् यही छ नहिं ता मर्दैन काट्या पनि।।२६५।।

बिन्ती मातलिको सुनी प्रभुजिले एक् बाण् तुरुन्तै लिया ।
जस्मा अग्नि र वायु सूर्य्य इ समेत् लोक्पाल् बस्याका थिया ।।
मन्त्री वेदविधानले र धनुमा त्यो वाण लगाया जसै ।
प्राणीलाइ पनी बहुत् भय भयो खुप् भूमि कामिन् तसै।।६६।।

वह तुरन्त ही मर जायेगा तथा फिर वह उठ नहीं सकेगा। इस रहस्य को सुनकर श्रीरघुनाथ अत्यन्त ही प्रसन्न हुए और उन्होंने अग्निबाण का प्रहार करके तुरन्त ही उसके नाभि के अमृत को सुखा डाला। २६३ श्रीराम ने जब उसके नाभि का अमृत सुखा डाला तब रावण ने क्रोधित होकर विभीषण के ऊपर शक्ति बाण से प्रहार किया। इतने में राम ने भी शक्ति बाण से प्रहार किया तथा उसके दसों सिरों को छिन्न-भिन्न कर दिया तथा रावण पुनः एक ही सिर वाला रह गया। रावण भी राम के सम्मुख आगे बढ़कर भाँति-भाँति के हथियारों द्वारा रामचन्द्र जी से खूब लड़ा। २६४ इसी बीच मातली ने हाथ जोड़कर श्रीरघुनाथ से विनती की कि हे नाथ ! रावण तो अभी तक लड़ ही रहा है और इसके ऊपर फिर से प्रहार करना ही पड़ेगा, अतः इस बार आप ब्रह्मास्त्र छोड़िये जो अत्यन्त ही मर्मभेदी हो तभी ये मरेगा। इसके मारने की यही एक युक्ति है अन्यथा यह किसी प्रकार नहीं मर सकता है। २६५ मातली की विनती को सुनते ही प्रभु ने एक ऐसा बाण लिया जिसमें अग्नि, वायु तथा सूर्य इन तीनों से युक्त स्वयं लोक पाल प्रविष्ट थे। सम्पूर्ण वेद विधान के साथ उन्होंने जैसे ही उस बाण को धनुष पर रखा रावण के

दाज्यूको किरिया गरून् सब हरून् ती रानिका शोक् पनि।
हूकूम् येति मिल्यो र लक्ष्मण गया जल्दी बुझाऊँ भनी॥
लाग्या भन्न अहो विभीषण ! तिमी क्या यो न जान्न्या सरी।
लाग्यौ गर्न विलाप् अनेक् तरहले खाली जमीन्मा परी॥२७४॥

तिम्रो यो अघि जन्ममा कउन हो ऐले त दाज्यू भयो।
फेरी क्या हुनलाइ रावण यहाँ छोडेर काहाँ गयो॥
जस्मा भैकन बालुवा जसरि फेर् फिर्छन् र गङ्गामहाँ।
यस्तै रीत्सित फिर्दछन् इ दुनियाँ क्वै छैन आफ्नू यहाँ॥२७५॥

अज्ञान्को मति यो नलेउ तिमिले झूठो जगत् हो भनी।
जानी श्री रघुनाथका चरणमा खुप् ध्यान् लगाऊ पनि॥
प्रारब्धै बलवान् बुझेर सब यो राज्यादि गेर्दै रहू।
जो पर्छन् परिआउन्या सब कुरा नीका ननीका सहू॥२७६॥

दाज्यूको गहिराल आज तिमिले क्रीया विधान्ले गरी।
रुन्छन् रानिहरू बुझाउ अहिले चाँडै अगाडी सरी॥

कहते है कि तुम सब दुःख में ही डूबे हुए हो, समस्त रानियाँ शोक में डूबी हुई विलाप कर रही हैं और तुम भी उनके साथ केवल रो रहे हो और अपने कर्तव्य का कुछ भी ख्याल नहीं करते। उठो और मन में शांति धारण करके विलाप करना छोड़ो तथा भाई का क्रिया-कर्म यथोचित रूप से सम्पन्न करो। २७४ लक्ष्मण जी विभीषण से कहते हैं कि पिछले जन्म में रावण तुम्हारा कौन था कौन जानता है पर इस जन्म में तो वह तुम्हारा बड़ा भाई हुआ। अब पुनः वह तुम्हें छोड़कर कहाँ चला गया कुछ पता नहीं। जिस प्रकार बालू गंगा जी में जन्म लेती है और एक जगह से दूसरी जगह बहती रहती है उसी प्रकार मानव जीवन और आत्मा भी ऐसी है। किसी के जीवन का कोई ठीक नहीं अर्थात जीवन अमर नहीं है। २७५ यह संसार झूठा है, अतः मन में अज्ञान बस इस संसार को कोई महत्व न दो और समस्त झूठी बातों से अपने ध्यान को हटाकर श्रीरघुनाथ जी के चरणों में लगा लो। संसार में समय ही बलवान है ऐसा समझ कर रहो। समय के प्रभाव से ही मनुष्य किसी समय यहाँ राज्य करता है और कभी दुःख भी पाता है। समय के प्रभाव से जो कुछ भी होता है वह सब सहन करना ही पड़ता है। २७६ इसलिए बड़े भाई का क्रिया-कर्म उचित ढंग से कर डालो। देखो रावण की सब रानियाँ रो रही हैं, आगे बढ़कर इन्हें समझाओ। श्रीरामचन्द्र जी की आज्ञानुसार लक्ष्मण ने पूर्ण प्रयास के साथ दुःखी परिवार को

यस्तै ठाकुरको हुकूम् छ भनि बेस् रीत्‌ले बुझाया जसै ।
विस्तार् लक्ष्मणको सुन्या र झटपट् ऊठ्या विभीषण तसै।२७७।
बिन्ती गर्न भनी जहाँ प्रभु थिया ताहाँ तुरुन्तै गया ।
हात् जोरीकन रामका हजुरमा क्या बिन्ति गर्दा भया ।।
हेनाथ् मर्जि भया कबूल् गरि लियाँ आज्ञा शिरोपर् धरी ।
बिन्ती गर्छु तथापि सत्य भगवान् ! एक् भारि शंका परी।।२७८।।

यो क्रूर हो प्रभु ! परस्त्रि पनी त हर्‍याँ ।
यस्को क्रिया कसरि योग्य भनेर गर्‍याँ ।।
बिन्ती गर्‍या यति विभीषणले र ताहाँ ।
खूशी भई हुकुम भो उहि बीचमाहाँ ।।२७९।।

बाचुन्ज्याल् रिस हुन्छ शत्रुसितको ऐले मरी यो गयो ।
यस्को रिस् अब गर्नु छैन अब ता मेरो त रिस् दूर् भयो ।।
रुन्छन् रानिहरू बुझाउ गर लौ क्रीया विधान्‌ले गरी ।
पैले यै नगरी हुँदैन तिमिले यै हो क्रियाको घरि।।२८०।।
हुकूम् येति सुन्या जसै प्रभुजिका योग्यै हुकूम् भो भनी ।
रानीलाइ बुझाउनाकन गया चाँडै विभीषण् पनि ।।

समझाया । लक्ष्मण जी के सांत्वना भरे वचनों को सुनकर विभीषण झटपट उठ बैठा । २७७ श्रीरामचन्द्र जी के पास कुछ विनती करने के लिए वह गया और उनकी शरण में विनती करने लगा कि हे नाथ ! आपकी आज्ञा शिरोधारि है लेकिन मेरे मन में एक शंका आई, है आप उसका समाधान कर दें । २७८ विभीषण ने कहा कि हे प्रभु ! यह तो ऐसा पापी जीव था कि पराई स्त्री का इसने हरण किया । ऐसे पापी का मैं क्रिया संस्कार किस प्रकार करूँ आप मुझे बतायें । विभीषण के यह बचन सुनकर प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्र ने कहा— २७९ हे विभीषण ! क्रोध तो जीवित और चल मनुष्य से किया जाता है अब तो वह मर चुका है । उसके साथ क्रोध करने से क्या लाभ, उससे किसी प्रकार का क्रोध करना उचित नहीं । अतः मेरा क्रोध समाप्त हो चुका है । सर्वप्रथम रोती हुई रानियों को समझाओ और क्रिया संस्कार पूर्ण विधान से करो । अब तो यही समय है, यह तुरन्त होना चाहिए । इसको न करना उचित न होगा ।२८० प्रभुजी की आज्ञा को सुनकर विभीषण तुरन्त रानियों को समझाने के लिए गया । रानियों को समझा बुझा कर घर भेज दिया और पूर्ण विधान के साथ रावण का क्रिया-कर्म सम्पन्न किया और फिर स्वयं राम के

रानलाइ बुझाइ सब् गरिसक्या क्रीया विधान्ले गरी।
रानी सब् घरमा पठायर गया जाहाँ थिया राम्हरि॥२८१॥
खूशी खुप् रघुनाथ् पनी हुनुभयो सम्पूर्ण खूशी भया।
बीदा भैकन मातली पनि तहाँ फेर् इन्द्रथ्यैं गै गया॥
लक्ष्मण्लाइ हुकूम् दिया प्रभूजिले पैले दियाँ तापनि।
गादीमा लगि फेर् विभीषण उपर् ऐले तिमीले पनि॥२८२॥

देऊ लौ अभिषेक् भनी प्रभुजिको हूकूम् भएथ्यो जसै।
लक्ष्मणले पनि गादिमाथि लगि फेर् दीया अभीषेक् तसै॥
गादीमाथि बसाइ साथ लिइ फेर् राम्चन्द्रजीथ्यैं गया।
लक्ष्मण्ले रघुनाथका हजुरमा सब् बिन्ति गर्दा भया॥२८३॥

तेस् बीच्मा रघुनाथ् प्रसन्न हुनुभो पूग्यो प्रतिज्ञा भनी।
सुग्रीव्लाइ पनी सह्लाउनु भयो तिम्रो कृपा हो भनी॥
ऐले हे हनुमान्! विभीषणजिको मत्ले सिताथ्यैं गई।
सब् सम्चार बताउ जाउ अहिले सूनुन् बहूत् खुश् भई॥२८४॥

जो भन्छिन् ति कुरा बताउन यहाँ फेर् जल्दि आऊ भनी।
हूकूम् हून गयो विभीषणजिका मत्ले हनूमान् पनि॥

पास गया। २८१ सब काम से निवृत्त होकर विभीषण जब श्रीराम के पास गया तो वे उसे देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और एक खुशी का वातावरण छा गया। मातली ने भी प्रसन्नता पूर्वक वहाँ से विदा होकर इन्द्र के निवास-स्थान को प्रस्थान किया। तत्पश्चात रामचन्द्रजी ने लक्ष्मणजी को आज्ञा दी। २८२ हथेली में सामग्री रखकर प्रभु जी ने कहा कि लो विभीषण अब तुमको भी अभिषेक करते हैं। लक्ष्मण ने भी हथेली में सब सामग्री रखकर विभीषण का अभिषेक किया। पुनः हथेली में सामान रखकर साथ ही साथ वे रामचन्द्रजी के पास गये और उनके सम्मुख लक्ष्मण ने विनती की। २८३ श्रीरघुनाथ जी इस अवसर पर हार्दिक प्रसन्न हुए और बोले कि अब प्रतिज्ञा पूरी हुई। सुग्रीव से भी यही कहा कि यह सब तुम्हारी ही कृपा है, तत्पश्चात हनुमान को आज्ञा दी कि हे हनुमान! विभीषण की सलाह लेकर सीता के पास जाओ और यह सब शुभ समाचार सुनाओ जिसे सुनकर वह बहुत प्रसन्न होगी। २८४ सीता जी जो कुछ भी पूछें वह सब विस्तारपूर्वक कहना और शीघ्र ही वापस आना। ऐसी आज्ञा पाकर विभीषण से परामर्श लेकर हनुमान सीता की ओर गये, जब सीता के पास हनुमान पहुँचे तो

सीताथ्यैं हनुमान् पुग्या रुखमनी सीता बस्याकी थिइन् ।
पाऊमा हनुमान् पऱ्या जननिले चुप् भै नजर् खुप् दिइन्।।२८५।।

चीह्लीन् ई हनुमान हुन् भनि र खुप् खूशी भईथिन् जसै ।
विस्तार् बिन्ति गऱ्या सबै जननिथ्यैं श्रीरामजीका तसै ।।
झन् खूशी जननी भइन् खुशि हुँदै क्यै बोलन लागिन् तहाँ ।
क्या दीन्या तिमिलाइ चीज हनुमान् खूशी गरायौ यहाँ।।२८६।।

तिम्रो यै प्रिय वाक्य तुल्य त अनेक् रत्नादिको हार् पनि ।
लाग्दैनन् अरु चीजदेखि त ठुलो यो चीज् दिन्या हो भनी ।।
झट् बिन्ती अरु चीजदेखि त ठुलो श्रीराम् जगत्का पति ।
खूशी खुप् हुनुहुन्छ ता खुशि म छू चाहिन्न दौलथ् रती।।२८७।।

यो बिन्ती सुनि खूशि भैकन तहाँ येती अह्लाइन् पनि ।
राम्को दर्शन गर्छु बिन्ति गर गै भेट् गर्न खोज्छिन् भनी ।।
सीताका इ वचन् सुनेर हनुमान् राम्का हजूर्मा गया ।
दर्शन्को मतलब् थियो जननिको सो बिन्ति गर्दा भया।।२८८।।

वह चुपचाप बैठी थीं। हनुमान जाते ही उनके चरणों में झुक गये। सीता जी ने भी आँखों-आँखों में ही आशीर्वाद दिया। २८५ सीता जी ने हनुमान जी को पहचाना और उन्हें देखकर बहुत ही प्रसन्न हुई। हनुमान ने विस्तारपूर्वक सब हाल कहा। सीता जी यह सब समाचार सुनकर बहुत ही प्रफुल्लित हुई और कहने लगीं कि तुमने ऐसी शुभ सूचना दी है जिसके प्रत्युपकार में तुम्हें क्या दूँ। २८६ हनुमान ने सीता जी के वचन सुनकर यह प्रार्थना की कि हे माता! तुम्हारे प्रिय वचन ही अनेक रत्नों से जटित हार से भी बढ़ कर हैं। आपके प्रेम भरे वाक्य ही इतने अमूल्य है कि उनके सामने हर वस्तु तुच्छ है। हनुमान ने इतनी विनती करके कहा कि श्रीराम तो इस संसार के मालिक हैं, उनकी कृपा मुझे प्राप्त है, अब इससे बढ़कर आप मुझे और क्या देना चाहती हैं। आप हमसे प्रसन्न हैं और मैं आपकी कृपा पाकर गौरवान्वित हुआ हूँ, अतः अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। २८७ हनुमान की ऐसी प्रेम भरी बातें सुनकर सीताजी अत्यन्त प्रेम विभोर हो गई और उन्होंने राम के दर्शन पाने की इच्छा प्रगट की और कहा कि मैं श्रीराम के पास चलना चाहती हूँ। सीता जी के इन वचनों को सुन कर हनुमान जी तुरन्त राम के पास गये। और सीता जी की अभिलाषा को राम के सामने प्रगट किया। २८८ सीता की इस इच्छा को सुनकर श्रीराम ने हनुमान और विभीषण दोनों को

यो बिन्ती हनुमानले हजुरमा ताहाँ गन्याथ्या जसै ।
मर्जी भो प्रभुको विभीषणजिको साथ् लागि आया तसै ।।
जाऊ ल्याउ सिताजिलाइ तिमिले सब् देह निर्मल् गरी ।
आउन् भेट्न सिता अनेक् तरहका भूषण् शरीर्मा धरी।।२८९।।

हूकूम्ले हनुमानलाइ सँगमा लीई विभीषण् गया ।
जल्दी स्नान गराउनाकन तहाँ खुप् यत्न गर्दा भया ।।
पैले स्नान गराइ शुद्ध कपड़ा पैह्राइ भूषण् पनि ।
दीया सुन्दर जुन् थिया खुशि हुँदै पैह्रन् सिताजी भनी।।२९०।।

डोली माथि सिता चढाइ खुशि भै हींड्या विभीषण् जसै ।
दर्शन् गर्न भनेर बानरहरू आयेर घेर्‍या तसै ।।
चौकी गर्न भनेर डोलि नजिकै जो ता रह्याका थिया ।
सब् वानर्हरुलाइ तेस् बखतमा तिन्ले हटाईदिया।।२९१।।

कोलाहल् अधिकै भयो प्रभुजिले सून्या नजर् भो पनि ।
हूकूम् भो रघुनाथको किन तहाँ वानर् हटाया भनी ।।
आमा जानि ति हेर्दछन् सब जना हेरून् ति वानर्हरू ।
डोलीमा किन चढ्दछिन् अब सिता पैदल्ति आउन् बरु।।२९२।।

सूनिन् स्वामितको हुकूम् र जननी जल्दी जमीन्मा झरिन् ।
पाऊ पर्छु भनेर खुप् खुशि हुँदै साम्ने अगाडी सरिन् ।।

आज्ञा दी कि नहा धोकर (निर्मल होकर) वे दोनों जाकर सीता जी को ले आवें तथा सीता जी से कहें कि वे अपने समस्त आभूषण शरीर में धारण करके सजी-संवरी हुई आयें । २८९ विभीषण हनुमान के साथ सीता जी को लेने गये । सीता जी स्नानादि करके शुद्ध वस्त्रों से सुसज्जित हुई और उन्होंने सारे आभूषण पहनकर अपना श्रृंगार किया । रामचन्द्र जी के भेजे हुए आभूषण पहनकर सीता जी अत्यन्त प्रसन्न हुई । २९० जैसे ही सीता जी को विभीषण ने डोली में बैठाया समस्त बानर उनके अंतिम दर्शन के लिए दौड़ पड़े और उन्हें चारों ओर से घेर लिया । जो लोग डोली की रखवाली कर रहे थे उन सब बानरों को उस समय वहाँ से हटा दिया गया । २९१ इतने बीच में वहाँ कोलाहल होने लगा । सबने देखा कि प्रभु जी आज्ञा दे रहे हैं और कह रहे हैं कि उन बानरों को वहाँ से क्यों हटाया गया सीता सभी की माता हैं, सभी उनका दर्शन पाने के लिए आ रहे हैं, अतः डोली में चढ़ कर आने की क्या आवश्यकता है अब सीता पैदल ही आयेंगी । २९२ सीता जी

काम्को सिद्ध गराउनाकन सिता माया लियाकी थिइन् ।
काम् हो रावण मार्नको कुल समेत् सब् सिद्ध पारीदिइन्॥२९३॥
अग्नीमा अघि राखियाकिकन फेर् लीन्या तहाँ सूर् गरी ।
दोष् दीया रघुनाथले किन यहाँ आयौ नजीकै भनी ॥
अर्काका घरमा बस्याकि भनि यो दोषै दिनूभो जसै ।
लक्ष्मण्लाइ हुकूम् दिइन् जननिले विश्वासखातिर तसै॥२९४॥
हे लक्ष्मण् ! तिमि अग्नि बाल अहिले ताहीं प्रवेश् गर्दछु ।
साँचै छू त म बाचुँला झुटि भया ऐल्हे तहीं मर्दछु ॥
हूकूम् लक्ष्मणले तहाँ जननिको सून्या र राम्को पनि ।
मत् पाईकन अग्नि खुप् गरि ठुलो बालीदिया बेस् भनी॥२९५॥
सीताजी पनि खुप् प्रदक्षिण गरिन् राम्को र भक्ती गरी ।
अग्नीको नजिकै खडा पनि भइन् केही अगाडी सरी ॥
द्यौता ब्राह्मण संज्ञि राम्चरण को ध्यान् भित्रि मन्मा धरिन् ।
सब्का साक्षिभनेर अग्निसित हात् जोरी पुकारा गरिन्॥२९६॥
जस्ता रीत्सित रामका चरणमा ध्यान्मा रह्याकी म छु ।
तस्तै रीत्सित अग्नि शीतल हऊन् तापै नलागोस् कछु ॥

ने प्रभु के आज्ञा भरे स्वर को सुना और तुरन्त ही जमीन में उतर पड़ीं । अत्यन्त हीं प्रसन्न होकर प्रभु के चरणों में प्रणाम किया और सबके सामने ही आगे बढ़ गयीं । कार्य सिद्ध होने के लिए सीता जी ने मायारूप धारण किया था अब वह सब कार्य सिद्ध हो चुके । रावण कुल सहित समाप्त हो चुका था । २९३ सीता जी तो पहले ही अग्नि में प्रवेश कर चुकी थीं क्योंकि रघुनाथ जी ने उनके ऊपर दोष लगाया था कि इतने दिन पराये घर में रहकर आयी हुई स्त्री शुद्ध नहीं हो सकती । उस समय सीता जी ने अपनी शुद्धता का विश्वास दिलाने के लिए लक्ष्मण से कहा— २९४ हे लक्ष्मण ! तुम अभी अग्नि की चिता जलाकर तैयार करो मैं उसमें प्रवेश करूँगी । अगर मैं शुद्ध हूँ तो बच जाऊँगी अन्यथा मर जाऊँगी । लक्ष्मण ने राम और सीता की आज्ञा सुनी, चिता तैयार की और उसमें आग लगा दी । एक बड़ी सी चिता तैयार हो गई । २९५ सीता जी ने अपने हृदय में राम की भक्ति और प्रेम को संजोकर अग्नि की परिक्रमा की । समस्त देवता, ब्राह्मण और रामचन्द्र जी को मन ही मन प्रणाम किया । सबको साक्षी करके दोनों हाथ जोड़ के अग्नि को संबोधित करके सीता जी ने कहा— २९६ हे अग्निमाता ! तुम साक्षी हो । मेरे

बोलिन् येति र अग्निमा पसिगइन् ताहाँ सिताजी जसै ।
सब्को ताप् मनमा भयो विरहका बात् गर्न लाग्या तसै॥२९७॥
सीता अग्निविषे जहाँ त पसिथिन् इन्द्रादि लोक्पाल्हरू ।
ब्रह्मा रुद्र समेत् सबै तहिँ गया जो देवता छन् अरू ॥
जम्मा भै रघुनाथको स्तुति गऱ्या सब् देवगण्ले पनि ।
ब्रह्माले पनि खुप् गऱ्या स्तुति तहाँ मालिक् यिनै हुन् भनी॥९८॥
अग्नीले पनि बिन्ति खुप् सित गऱ्या राम्का चरण्मा परी ।
भूषण् वस्त्र अनेक् धऱ्याकि जननी सीता अगाडी धरी ॥
सीताजीकन आजसम्म त यहाँ राखी दियाको थियाँ ।
काम्को सिद्ध भया लिनू अब हवस् सीताहजूर्मा दियाँ॥२९९॥
अग्नीले पनि बिन्ति बात् गरि तहाँ सीता जसै ता दिया ।
खूशी मन् रघुनाथको हुन गयो सीताजिलाई लिया ॥
सीताजीकन काखमा लिइ तहाँ ठाकुर् बस्याथ्या जसै ।
भक्तीले स्तुति इन्द्रले पनि गऱ्या खूशी भया सब् तसै॥३००॥
फेर् बिन्ती शिवले खुशी भइ गऱ्या राम्का हजूर्मा तहाँ ।
सीतानाथ् ! म त आउन्याछुपछि फेर् वाहीं अयोध्यामहाँ ॥

ध्यान में केवल राम ही राम रहे हैं और हर समय रहेंगे, यदि ऐसा है तो तुम शीतल हो जाओ और मुझे बिल्कुल भी तुम्हारा ताप न लगे। इतना कहकर सीता जी अग्नि में प्रवेश कर गयीं। यह देखकर वहाँ सारे उपस्थित जन अत्यन्त दुःखी हुए और सभी शोकयुक्त बातें करने लगे। २९७ सीता जी ने अग्नि में जहाँ पर प्रवेश किया था वहाँ पर इंद्रादि तथा समस्त लोकपाल प्रविष्ट थे। ब्रह्मा जी भी रुद्र सहित अन्य देवताओं के साथ आ पहुँचे। समस्त देवता रघुनाथ जी की वन्दना करने लगे। ब्रह्मा जी ने भी राम की घोर स्तुति की और कहने लगे कि श्रीराम मनुष्य नहीं साक्षात परमेश्वर हैं और तीनों लोक के मालिक हैं। २९८ श्रीराम के चरणों में गिरकर अग्नि ने भी स्तुति की और समस्त वस्त्राभूषणों से सुसज्जित सीता जी को उनके सम्मुख रख दिया और कहा कि यह वही सीता जी है जिनको आपने मुझमें प्रवेश कर दिया था। २९९ अग्नि ने विनती की कि अब सीता आपकी सेवा में हाजिर हैं। इतना कहकर सीता को ज्यों का त्यों राम के हाथों में लौटा दिया। रघुनाथ जी ने प्रफुल्लित मन से सीता को ग्रहण किया और एक राजा के समान सीता को अपने पास बैठाकर सुशोभित हुए। ऐसा सुहावना अवसर देखकर सभी के मन प्रसन्नता से झूम उठे। ३०० शिवजी ने पुनः प्रसन्न होकर

ऐले ई दशरथ् पिता हजुरका मिल्ला कि दर्शन् भनी ।
आया दर्शन आज बक्सनुहवस् स्वामित् प्रभूले पनि।।३०१।।

यो बिन्ती शिवको सुनेर दशरथ्- जीका हजूर्मा गई ।
पाऊमा शिर राखिबक्सनुभयो अत्यन्त खूशी भई ।।
आलिङ्गन् दशरथ्जिले पनि गऱ्या ताऱ्यौ मलाई भनी ।
बीदा भै दशरथ् खुशी भइ गया फेर् स्वर्ग लोक्मा पनि।।३०२।।

वानर्को जति फौज् मऱ्यो रणहुँदा ती सब् बचाऊ भनी ।
अमृत् वृष्टि गराउनाकन हुकूम् भो इन्द्रलाई पनि ।।
हूकूम् पाइ ति इन्द्रले पनि तहाँ अमृत् गिराया जसै ।
वानर्का सब फौज् खडा पनि भया राम्का कृपाले तसै।।३०३।।

बिन्ती ताहिं गऱ्या विभीषणजिले राम्का चरण्मा परी ।
मंगल् स्नान् गरिबक्सियोस् हजुरले यो स्नानको हो घरि।।
मंगल् स्नान् गरि वस्त्र भूषण धरी राज् आज याहीं हवस् ।
सेवक् हूँ करुणा निधान् ! हजुरको प्रीती म माथी रहोस्।।३०४।।

बिन्ती सूनि हुकूम् भयो हुन त हो जान्या त हो स्नान् गरी ।
क्यारूँ आज घरै छ भाइ त भरत् मै झैं जटाजूट् धरी ।।

श्रीराम के समक्ष विनती की । सीता नाथ ! मैं तो बाद में पुनः अयोध्या आऊँगा अभी तो आपके दशरथ पिता जी के दर्शन पाने की इच्छा से आया था अतः स्वामित् ! आज प्रभु आप भी दर्शन देने की कृपा करें । ३०१ शिवजी की यह विनती सुनकर दशरथ जी के पास जाकर पैरों में सिर रख दिया । अत्यन्त प्रसन्न होकर दशरथ जी ने भी आलिंगन करते हुए कहा कि मेरा भी आपने उद्धार किया । इस प्रकार प्रसन्न होकर दशरथ जी ने विदा ली और पुनः स्वर्गलोक को चले गये । ३०२ रणभूमि में जितने भी वानर सेना मारे गये थे उन सब को बचाने के लिए अमृत-वृष्टि कराने हेतु इन्द्र को भी आज्ञा दी । आज्ञा पाकर इन्द्र ने भी वैसे ही अमृत वृष्टि की । राम की कृपा से वानर सेना पुनः खड़ी हो गयी । ३०३ विभीषण ने भी श्रीराम के चरणों में पड़कर विनती की कि यह स्नान करने का समय है अतः आप कृपया मंगलास्नान करने का कष्ट करें । मंगलास्नान के पश्चात् वस्त्राभूषणादि धारणकर आज यहीं विराजने की कृपा करें । हे करुणानिधान ! मैं सेवक हूँ, श्रीमन की कृपादृष्टि मुझ पर रहे ! ३०४ विनती सुनकर कहने लगे— है तो ठीक ही । परन्तु क्या करूँ घर में भाई भरत मेरे ही समान जटाजुट होकर बैठा

त्यो भाई पर राखि आज म यहाँ कुन् रीतले स्नान् गरूँ।
सुग्रीव् वीर्हरु छन् इ देउ तिमिले यिन्लाइ खिल्लत् वरु ॥३०५॥

हूकूम् येति हुँदा विभीषणजिले रत्नादि वृष्टी गन्या।
जस्ले जुन् चिज खोज्छ सो चिज दिई सब् फौजको ताप् हन्या॥
सब फौज्लाइ बिदा पनी दिनुभयो राम्ले कृपा खुप् गरी।
फौज् वानर्हरुको पनी तरिगयो आनन्दमा खुप् परी॥३०६॥

काम् सब् सिद्ध भयो यहाँ किन वसूँ जान्छू अयोध्या भनी।
सीता लक्ष्मण साथमा लिइ चढ्या श्रीराम् विमान्मा पनि॥
सुग्रीव् अङ्गदजी विभीषण समेत् राम्का हजूर्मा थिया।
तिन्लाई पनि जाउ राज्गर भनी बीदा प्रभूले दिया॥ ३०७॥

ती सब्ले तहिं विन्ति खुप् सित गन्या जान्छौं अयोध्यै भनी।
सब्को आग्रह देखि खूशि हुनुभो ताहाँ रमानाथ् पनि॥
पुष्पकमा चढ आज झट्ट अब लौ भन्न्या हुकूम् भो जसै।
सुग्रीव् श्रीहनुमान अङ्गद चढ्या पुष्पक् विमान्मा तसै॥३०८॥

आफ्ना मन्त्रि लिई विभीषण पनी तेसै विमान्मा बस्या।
सेना सुग्रिवका पनी हुकुमले सम्पूर्ण ताहीं बस्या॥

है इसलिये भाई को अलग रखकर आज मैं यहाँ किस रीति से स्नान करूँ। सुग्रीव वीर आदि यहाँ है, इन्हें तुम आश्रय दो। ३०५ ऐसी आज्ञा होने पर विभीषण जी ने रत्नादि की वृष्टि की। जो जिस प्रकार की वस्तु आदि चाहते थे वही वस्तु देकर सब सेनाओं का ताप हरण किया। अति कृपाकर राम ने सब सेनाओं को विदा भी दे दी। वानर सेना भी अत्यन्त आनन्दित हो मुक्त हो गयी। ३०६ सब कार्य सिद्ध हो चुका है— अब यहाँ क्यों रहूँ, अयोध्या ही चला जाता हूँ। ऐसा सोचकर सीता और लक्ष्मण को साथ लेकर श्रीराम विमान में चढ़े। सुग्रीव, अंगद जी तथा विभीषण सब राम ही के पास थे। उन्हें भी जाकर राज करने को कहते हुए प्रभु ने विदा दी। ३०७ उन सबने भी अयोध्या ही जाने के लिये विनती की। सभी के इस आग्रह को देखकर श्रीरामनाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए। तब सबको पुष्प विमान में चढ़ने की जैसे ही आज्ञा दी; सुग्रीव, श्री हनुमान और अंगद पुष्प विमान में चढ़ गये। ३०८ अपने मंत्री को साथ में लेकर विभीषण भी उसी विमान में बैठ गये। सुग्रीव की सम्पूर्ण सेना भी आज्ञानुसार वहीं

सीतानाथहरू सबै बसि रही शोभा अधिक् गर्दथ्या ।
सो शोभाकन वानरादि विरले देखेर छक् पर्दथ्या ॥ ३०९ ॥

सेना समेत् सब विमान उपर् चढाई ।
हूकूम् दिया प्रभुजिले जब जानलाई ॥
आकाश मार्ग गरि जान विमान धायो ।
शोभा अपूर्व रघुनाथ चढ्या र पायो ॥३१०॥

दौड्यो पुष्प विमान् जसै हुकुमले आकाश बीच्मा पसी ।
पृथ्वीको पनि याद् सबै हुन गयो तेसै विमान्मा बसी ॥
जुन् जुन् काम जहाँ जहाँ अघिभयो याहाँ गऱ्याँ यो भनी ।
सीतालाइ नजर् गराउनु भयो खुश् भै प्रभूले पनि ॥३११॥

यो लङ्कापुरि हो अगम् छ बलले को जान सक्छन् अरू ।
त्यो भूमी रणभूमि हो तहिं मऱ्या ठूला ठुला वीर्हरू ॥
ताहीं रावण कुम्भकर्ण त मऱ्या भारी लडाई गरी ।
लक्ष्मण्ले तहिंइन्द्रजित्कन जित्या साम्ने अगाडी सरी ॥३१२॥

सागर्मा पनि हेर सेतु बलियो बाँध्याँ र सागर् तऱ्याँ ।
रामेश्वर् भनी नाम राखि शिवको स्थापन् किनार्मा गऱ्याँ ॥

बैठ गयी । सीतानाथ आदि सब वहाँ बैठे रहने से अधिक शोभायमान हो रहा था और उस शोभा से वीर वानरों का मन और हर्षित होता था । ३०९ सेना सहित सबको विमान में चढ़ाकर जब प्रभु ने चलने के लिये आज्ञा दी, विमान आकाश मार्ग से जाने लगा । श्रीरघुनाथ जी के विराजमान होने से विमान की शोभा और भी बढ़ गयी । ३१० आज्ञा पाकर पुष्प विमान आकाश के मध्य से उड़ने लगा तब श्रीरामचन्द्र जी को पृथ्वी की समस्त घटनाओं का स्मरण होने लगा । जहाँ-जहाँ जो-जो कार्य हुआ था इस-इस स्थान पर किया गया था, कहते हुए प्रसन्न होकर प्रभु सीता को दिखाने लगे । ३११ यह लंकापुरी है, अत्यन्त अगम-वलपूर्वक यहाँ कौन प्रवेश कर सकता है । वह भूमि रणभूमि है, जहाँ अनेक बड़े-बड़े वीर योद्धा मारे गये । वहीं पर भीषण युद्ध करके रावण और कुम्भकरण भी मारे गये । वहीं लक्ष्मण ने अग्रसर होकर इन्द्रजीत को भी परास्त किया था । ३१२ सागर पार करने के लिए एक दृढ़ पुल का निर्माण किया जिसके ऊपर से सारी सेना पार उतरी थी । किनारे पर शिव जी की स्थापना करके रामेश्वर नाम रखा । उसी जगह पर चार मंत्रियों सहित विभीषण

चार् मन्त्रीसँग ली विभीषण तहाँ आई शरण्मा पऱ्या ।
किष्किन्धा यहि हो यसै नगरिमा सुग्रीव राजा भया ॥ ३१३ ॥

वार्ता येति गऱ्या सितासित र फेर् तारा झिकाया पनि ।
सुग्रीव्लाइ हुकूम् भयो प्रभुजिको तारा झिकाऊ भनी ॥
तारा रानिहरू समेत् चढिसक्या ताहाँ विमान्मा जसै ।
सीतालाइ नजर् गराउनुभयो वाली गिऱ्याको तसै ॥३१४॥

सीता ! हेर अगाडि पञ्चवटि वेस् राक्षस् तहाँ धेर् मऱ्या ।
त्यो आश्रं पनि हो अगस्ति ऋषिका जस्ले कृपा खुप् गऱ्या ॥
तेसै पल्तिरको सुतीक्षण ऋषिका धेरै ऋषी छन् जहाँ ।
त्यो हो पर्वत चित्रकूट भरतले भेट्नै गयाथ्या जहाँ ॥३१५॥

जो आश्रम् यमुनाजिको छ तिरमा ताहाँ भरद्वाज छन् ।
गंगा हुन् इ अगाड़िकी नजरले देख्तै खुशी हुन्छ मन् ॥
जो देखछ्यौ अझ झन् परै सरयु हुन् ती हुन् अयोध्या पुरी ।
हे सीते ! गर लौ प्रणाम तिमिले भक्ति मनैमा धरी ॥ ३१६ ॥

सीताजीकन येहि रित्सित सबै खोलेरी विस्तार् गरी ।
भारद्वाज्कन गै प्रणाम पनि गऱ्या जल्दी जमिन्मा झरी ॥

आकर प्रभु की शरण में पड़ा था। यह देखो, किष्किन्धा पर्वत है जहाँ पर बसी हुई नगरी का राज्य सुग्रीव को दिया गया। ३१३ सीता जी के साथ इतनी बात करके तारा को बुलाने के लिए सुग्रीव को आज्ञा हुई। उनकी आज्ञानुसार तारा को बुलाया गया। तारा भी रानियों सहित जैसे ही विमान में चढ़ने जा रही थी उसी समय सीता जी को वह स्थान दृष्टिगत हुआ जहाँ बालि धराशायी हुआ था। ३१४ सीते ! देखो !! आगे पंचवटी को देखो। वह स्थान जहां अत्यन्त बलिष्ठ राक्षसगण मारे गये थे। वह आश्रम अगस्त्य ऋषि का है जिन्होंने बड़ी सहायता की थी। उसी के आगे सुतीक्ष्ण का आश्रम है जिसे चित्रकूट पर्वत कहते हैं जहां पर भरत जी हम लोगों से भेट करने आये थे। ३१५ यमुना नदी के किनारे जो आश्रम है वह भरद्वाज मुनि का है। आगे देखने से दूसरी गंगा नदी है जिसके दर्शन मात्र से मन आनंदित होता है। उसके भी आगे सरयू नदी है जिसके तट से लगी हुई अयोध्या नगरी है भक्तिपूर्वक शीश झुकाकर इस नगरी को प्रणाम करो। ३१६ श्रीरामचन्द्र सीता तथा लक्ष्मण सहित भरद्वाज मुनि के आश्रम में उनसे भेंट करने गये। वहां वे सब अयोध्या नगरी तथा अपने माता

हात् जोरीकन सोध्नुभो अनि यहाँ सब् जन् कुशल् छन् भनी ।
वृद्धै हुन् महतारिको छ गति क्या ज्यूँदै ति छन् की भनी ॥३१७॥
क्याबात् भाइ ठुला भरत् पनि भया सब्का उपर् काम् गरी ।
चौधै वर्ष रह्या व्रती भइ ति झन् चिन्ता म-माथी गरी ॥
भारद्वाज् ऋषिले पनी सब कुशल थीया बताईदिया ।
हे नाथ् ! छन् कुशलै सबै भरतका मात्रै विपत्ती थिया ॥ ३१८ ॥

हजुर पर हुनाले रोज् फलै मात्र खान्छन् ।
हजुर सरि खराऊ गादिमा राखि मान्छन् ॥
शिर भरि छ जटाजुट् वल्कलै छन् धन्याका ।
फकत हजुरमा छन् प्राण अर्पण् गऱ्याका ॥३१९॥

सब् जान्दछू हजुरले पनि काम् गऱ्याको ।
राक्षस् विनाश गरि भार् भुमिको हऱ्याको ॥

पिता व भाइयों का समाचार जानने के लिये उत्सुक होते हैं। सीता जी को मार्ग में आये हुए महत्वपूर्ण स्थानों के विषय में रामचन्द्र जी, विस्तारपूर्वक ज्ञान कराते हैं। इतने में ही आश्रम में पहुंच गये। वे तुरन्त ही पृथ्वी पर उतर गये और मुनि के पास जाकर शीघ्रता से झुककर प्रणाम किया। तत्पश्चात् हाथ जोड़कर सबकी कुशलता पूछते हैं। ३१७ वे सोचते हैं—मातायें वृद्धा हो गयी होंगी पर जीवित तो होंगी ही। उन्होंने प्रश्न किया तथा भरत के हाल पूछे। इस पर भरद्वाजजी कहते हैं कि भरत मानवों में सर्वोपरि है। वे राज्य-कार्य संचालन करते हुए भी एक व्रती के रूप में रह रहे हैं और चिंतन मनन में ही चौदह-वर्ष पूरे कर रहे हैं अर्थात् वे राज्य सुखों के बीच रहकर भी उनके भोग से उदासीन हैं। शेष सबकी कुशलता के बीच केवल भरत के ऊपर ही विपत्तियां छायी हुई हैं। ३१८ श्रीमान् से दूर रहकर भरत उपवास में रह रहे हैं। वे केवल फलाहार पर ही जीवन निर्वाह कर रहे हैं। राजगद्दी पर आसीन आपकी पादुकाओं में वे आपके ही रूपका दर्शन पाकर, आपही के ध्यान में खोये रहते हैं। सिर पर जटा-जूट धारणकर लिया है और आपके ही चरणों में अपने प्राण अर्पित किये हुए हैं। भरत आपके ही प्रेम में मग्न होकर आपके ही नाम से राज्य संचालन कर रहे हैं। ३१९ श्री भरद्वाज कहते हैं कि चौदह वर्ष वन में भ्रमण करके जो परोपकारी कार्य आपने किये है वह भी मैं भलीभांति जानता हूं। इस स्थान के दुष्ट राक्षसों को मारकर आपने पृथ्वी का भार हल्का कर दिया। यहां के ऋषि मुनि

हो सब् प्रसाद् हजुरको सब तत्त्व जान्याँ ।
जो ब्रह्म हो उ त हजूर्कन आज मान्याँ ॥३२०॥

लीला गरी हजुरले अवतार् धन्याको ।
ब्रह्मादि देवगणको पनि ताप् हन्याको ॥
जो ई चरित्रकन खुश् भइ गान गर्छन् ।
संसार् समुद्र सहजै सित पार तर्छन् ॥३२१॥

ब्रह्माजिका वचनले यहि रूप धारी ।
भार् हर्नुभो सकल रावणलाइ मारी ॥
सब् लोकको हित हुन्या अरु काम् गरीनन् ।
चौधै भुवन् हजुरका यसले भरीनन् ॥३२२॥

मेरो आज पवित्र घर् पनि हवस् एक् रात् यहाँ राज् गरी ।
भोली जानु असल् हुन्याछ पुरिमा बिन्ती छ पाऊ परी ॥
भारद्वाज् ऋषिले यती हजुरमा बिन्ती गर्‍या राज् भयो ।
सन्मान् सैन्य समेतको गरिलिया सम्पूर्णको ताप् गयो ॥३२३॥

सभी उनके आतंक से दबे हुए थे। हमारे यज्ञ-पूजा आदि में विघ्न डालनेवाले राक्षसों को समाप्त करके आपने हम सभी के ऊपर महान कृपा की है। उन प्रसाद स्वरूप तत्वों को आज जान गया हूँ जो ब्रह्म है वही आज आपको मान गये हैं। ३२० आपकी इस मानवलीला को जान लिया। पृथ्वी पर अवतार लेकर आपने दुष्टों को समाप्त किया तथा ब्रह्मादि देवगणों के तापों का हरण किया। आपके इस चरित्र से प्रसन्न होकर आज सभी आपकी इस महत्वपूर्ण लीला का भक्ति तथा प्रेम से गुणगान करते है। आपके ऐसे पुरुषार्थ भरे चरित्र का गुणगान करनेवाले सहज ही इस संसार सागर से पार हो जाते हैं। ३२१ ब्रह्मा जी के वचनों के अनुसार आपने यह मानव रूप धारण करके रावण को मारा और इस प्रकार सारे भू-मण्डल का भार हरण किया। यह समस्त पृथ्वी शान्ति का साम्राज्य बन गयी। इस प्रकार आपने इन कार्यों से समस्त लोक का हित किया। उनकी यही मनोकामना है कि इसी प्रकार लोकहित के और भी कार्य आप करें जिससे आपके यश-गान से चौदहों भुवन परिपूर्ण हों। ३२२ इतना सब कुछ कहकर ऋषि ने प्रभु के चरणों में झुककर विनती किया कि आज की रात आप यहीं मेरे आश्रम में ही व्यतीत करें और कल ही नगर को पधारें जिससे मेरा आश्रम भी पवित्र हो जाये यही

हूकूम् भो हनुमानलाइ हनुमान् ! लौ श्रृङ्गवेर्मा गई ।
मेरा खुप् प्रिय छन् सखा गुह तहाँ तिन्थ्यैं समाचार् कही ॥
नन्दीग्राम् गइ भाइलाइ गरि भेट् श्रीराम आया भनी ।
मेरो लक्ष्मणको सिताजिहरुको समृचार् बताऊ पनि ॥३२४॥

मैले काम जती गऱ्याँ भरतथ्यैं सम्पूर्ण विस्तार् गरी ।
वाहाँको समचार् लिईकन फिऱ्या सन्ताप् सबैको हरी ॥
हूकूम् यो हनुमानले जब सुन्या मानिस् सरीका बनी ।
जल्दी गै गुहलाइ सब् कहिदिया आया सिताराम् भनी॥३२५॥

फेर् जल्दी सरयू तरीकन गया देख्या अयोध्या पनि ।
नन्दीग्राम् जब देखियो तहिं गया जान्या उहीं हो भनी ॥
वैलाई रहँदा जउन् तरहले फूल सुक्छ फुस्रो भई ।
तेस्तै रैयतिको दशा नजर भो साह्रै करूणा भई ॥३२६॥

देख्या तहाँ भरतलाइ जटा धऱ्याका ।
श्रीरामका चरण-चिन्तन खुप् गऱ्याका ॥

अत्यंत शुभ होगा । प्रभु ने ऋषि की विनती स्वीकार किया और उस रात्रि वे सैन्य समेत वहीं रुक गये । भरद्वाज जी ने सब अतिथियों का सम्पूर्ण रूप से सम्मान सत्कार किया जिससे उनके मन को अलौकिक शान्ति मिली । ३२३ प्रभु ने हनुमान जी को आज्ञा दी कि तुरन्त श्रृंगवर्म चले जाओ और वहां मेरे परम मित्र गुह से मिलो । उनसे कहना कि वे नन्दी ग्राम जाकर भाई से मिल लें और मेरे आने का समाचार भी कह दें । मेरे साथ लक्ष्मण एवं सीता के समाचार भी अवगत करा दें । ३२४ यहां वन में रहते हुए मैंने जो कुछ भी कार्य कर डाले वे सब भरत को विस्तार-पूर्वक समझा दें । इस प्रकार वहां के सब समाचार लेकर तथा उनको हमारे कुशल समाचार देकर समस्त जनों के मन को शीतल करके तुम तुरन्त यहां लौट आओ । हनुमान ने जब यह आदेश सुना तो वे तुरन्त मनुष्य रूप को प्राप्त हो गये और गुह के पास पहुंचे तथा राम लक्ष्मण सीता सहित सबके वहां पहुँचने का समाचार दिया । ३२५ पुनः शीघ्रता से जाकर सरयू पार किया और अयोध्या नगरी का भी अवलोकन किया । नन्दी ग्राम जव देखा तो मन में सोचा कि यहीं जाना है अतः वे वहां गये । उन्होंने देखा समस्त जनता की ऐसी दशा हो गयी है जिस प्रकार मुर्झाया हुआ फूल सूखकर पीला पड़ जाता है । जनता की यह दशा देख उनका मन करुणा से भर उठा । ३२६ उन्होंने देखा भरत सिर पर जटा रमाये श्रीराम के चरणों में स्वयं को अर्पित

रामका खराउकन मालिक जानि मानी।
हूकूम् दिदा पनि त सेवक आफू जानी ॥३२७॥
सब् गेरुवा पहिरि मन्त्रि पनी बस्याका।
रामको भजन् तिर त कम्मर खुप् कस्याका ॥
देख्या भरत्कन र खुश् भइ हात जोडी।
बिन्ती गर्‍या भरतका सब ताप तोड़ी ॥३२८॥

जस्को चिन्तन गर्नुहुन्छ महाराज् सो नाथ् सिताराम् पनि।
आई पुग्नुभयो मलाइ अघि जा भेट् भाइलाई भनी ॥
हूकूम् भो रघुनाथको र म यहाँ आयाँ हूकूम्ले गरी।
सीता लक्ष्मणले सहित् कुशल छन् त्रैलोक्यका नाथ् हरि ॥३२९॥
येती वीर्हरु साथ छन् भनि कुशल् विस्तार् सुनाया जसै।
खूशी भैकन अङ्कमाल् पनि गर्‍या ताहाँ भरत्ले तसै ॥
रामको सुग्रिवको कहाँ हुन गयो भेट् सब् बताऊ भनी।
सोध्या ताहिं भरत्जिले र हनुमान्-ले सब् बताया पनि ॥३३०॥
सुग्रीब् सीत मित्यारि गर्नु पनि भो साहाय सुग्रीव् भया।
लंकामा रहिछन् सिता र रघुनाथ् ज्यूका सँगै ती गया ॥

किये हुए चिन्तन में डूबे हुए हैं। राम की पादुकाओं को ही स्वामी मानकर रखा है उन्हीं की पूजा उत्तम समझकर कर रहे हैं। राज्य शासन की आज्ञा पाकर भी वह स्वयं को सेवक ही जानते हैं। ३२७ भरत जी गेरुए वस्त्र धारणकर एक यती के समान प्रभु के ध्यान में मग्न हैं। चिंतन भजन में कमर कसकर बैठे हुए भरत को प्रसन्नता पूर्वक हाथ जोड़कर प्रणाम किया तथा उनके ध्यान को भंगकर विनती किया। ३२८ हे महाराज ! जिसके ध्यान में आप खोये हुए हैं वे नाथ सीता-राम भी आ गये हैं। आगे जाकर भाई से भेंट करने का आदेश पाकर ही मैं यहां आया हूँ। उन्होंने यह समाचार आपके पास भेजा है सीता, लक्ष्मण सहित प्रभु कुशलपूर्वक हैं। उनके संग अनेकों अन्य वीर भी हैं। ३२९ इतने वीर आदि साथ में कहते हुए कुशल समाचार सविस्तार सुनाया जिसे सुनते ही भरत जी ने प्रसन्न होकर उन्हें आलिंगन बद्ध कर लिया। उन्होंने पूछा कि राम और सुग्रीव की भेंट कहां और किस प्रकार हुई सब विस्तारपूर्वक कहो। तो हनुमान ने भी विस्तार-सहित सब कह सुनाया। ३३० हनुमान ने भरत को बताया कि सीता को रावण ने हरण किया और अत्यन्त

सीता रावणले हरेछ र बहुत् दुःखी सरीका भई।
सीताजीकन खोजि खोजि रघुनाथ् फेर् ऋष्यमूक्मा गई।।३३१।।

लंमामा गइ भारि युद्ध गरियो सब् रावणादी गिन्या।
लंकामा अधिराज् विभीषण गरी श्रीराम् अयोध्या फिन्या।।
सब् विस्तार् हनुमानदेखि रघुनाथ् ज्यूका सुन्याथ्या जसै।
भाईलाइ हुकूम् दिया नगरिको संस्कार-खातिर् तसै।।३३२।।

हे शत्रुघ्न ! गराउ सब् नगरिको संस्कार् अगाडी सरी।
सब् देवालयमा पुजा अब गरून् नाना विधान्ले गरी।।
सुत् वैतालिक बन्दि जन्हरु समेत् निस्कून् ति कस्वीहरू।
सब् जाउन् रघुनाथका हजुरमा जो जो यहाँ छन् अरू।।३३३।।

भारी फौज लियेर मन्त्रिहरुले सब् राजपत्नी लिया।
ब्राह्मण्लाइ अगाडि लायर हिडून् सब्लाइ ऊर्दी दिया।।
हूकूम् येति दिया तहाँ भरतले हुकूम् बमोजिम् गरी।
हात्मा भेटि लियेर लश्कर चल्यो खुप् हर्ष भो तेस् घरि।।३३४।।

दुःखित होकर प्रभु सीता को खोज रहे थे और उसी समय सुग्रीव भी उनके साथ सीता की खोज में ऋष्यमूक गये। इस प्रकार सुग्रीव और रघुनाथ की मित्रता घनिष्ट होती गयी। ३३१ हनुमान ने बताया कि लंका जाकर भीषण युद्ध करके रावण को मौत के घाट उतार दिया। तत्पश्चात रावण के भाई विभीषण को वहां का राज्य सौंपकर श्रीरामचन्द्र जी अयोध्या को लौटे हैं। इस प्रकार हनुमान द्वारा सविस्तार हालचाल ज्ञात होते ही भरत जी उठे और रामचन्द्र जी के स्वागतार्थ प्रबन्ध में लग गये। उन्हें बड़े सत्कार के साथ नगर में लाने की आज्ञा सारे नगर में दे दी। ३३२ हे शत्रुघ्न। आगे बढ़ो और नगर मे राम-आगमन की शुभ सूचना दो तथा भलीभांति नगर को सजाने का प्रबन्ध करो। कह दो सभी देवालयों में विधिवत् पूजा-हवन प्रारम्भ हो जाये। सभी नौकर, चाकर तथा बन्दीजन जो उपस्थित हैं वह इसी समय शीघ्र जाकर श्रीरघुनाथ के चरणों में पड़ जायें। ३३३ श्रीराम-आगमन की शुभ सूचना सारी अयोध्या नगरी में फैल गयी। असंख्य सेनानियों को लेकर समस्त मंत्रीगण सपत्नीक चल पड़े। ब्राह्मणों को आगे रखकर सब लोगों को चल पड़ने की आज्ञा हुयी। भरत की आज्ञानुसार सब लोग हाथों में पूजा-सामग्री तथा भेंट-सामग्री सहित अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक चल पड़े। ३३४ श्रीरामचन्द्र जी के

श्रीरामचन्द्रजिका खराउ शिरमा राखी तयारी भया।
भाई साथ लिई भरत् प्रभुजिथ्यैं हीडेर पैदल् गया ॥
आयो श्रीरघुनाथको पनि विमान् चन्द्रै सरीको बनी।
देखाया हनुमानले प्रभुजिको तेही विमान् हो भनी ॥३३५॥

देख्या श्रीरघुनाथको जब विमान् कीर्तन् सबैले गर्‍या।
घोडामा रथमा जती विर थिया ती सब् जमीन्‌मा झर्‍या ॥
पृथ्वीमा नझरीकनै प्रभुजिको दर्शन् मिलेथ्यो जसै।
टाढैबाट गर्‍या प्रणाम् भरतले खुप् हर्ष मान्या तसै ॥३३६॥

भाईलाइ विमानमा लिनुभयो ताहीं जमीन्‌मा झरी।
फेरी जल्दि पर्‍या भरत् चरणमा साष्टाङ्ग सेवा गरी ॥
काखैमा पनि राखिबक्सनुभयो राम्‌ले भरत् खुश् भया।
सीताजीकन दण्डवत् गरुँ भनी साम्ने अगाडी गया ॥३३७॥

स्वामित् ! हूँ म भरत् पर्‍याँ चरणमा यस्तो पुकारा गरी।
सीताका पनि पाउमा परिगया आनन्द सागर् परी ॥
लक्ष्मण् लाइपनी प्रणाम् तहिं गर्‍या काम्‌ले बड़ा छन् भनी।
आलिङ्गन् गरि सुग्रिवादि विरको दिल् खुश् गराया पनि॥३३८॥

खड़ाऊँ सिर पर रखकर अपने भाई को साथ लेकर भरत जी पैदल ही चल पड़े और दौड़ते हुए जाकर प्रभु के पास पहुँचे। श्रीरघुनाथ का विमान भी चन्द्रमा के विमान के समान आ गया। हनुमान ने उसी विमान की ओर संकेत किया, कहा कि यही प्रभु जी का विमान है। ३३५ श्रीरघुनाथ के विमान के दर्शन करते ही सबने एक साथ कीर्तन आरम्भ किया। घोड़ों तथा रथों पर सवार समस्त वीर उतर पड़े। पृथ्वी पर उतरने से पूर्व ही प्रभु के दर्शन मिल गये। भरत ने दूर से देखकर ही प्रणामकर हर्षोल्लास प्रगट किया। ३३६ पृथ्वी पर उतरकर भाई को आदर सहित ले जाकर विमान में बिठाया और भरत जी ने तत्काल ही श्रीराम के चरणों में पड़कर साष्टांग दण्डवत् किया। राम ने प्रेम-विभोर हो उन्हें गोद में उठा लिया। ऐसा प्रेम-आलिंगन पाकर भरत हर्षोन्माद में डूब गये। पुनः वे सीता जी को दण्डवत् करने के उद्देश्य से आगे बढ़े। ३३७ स्वामिन ! आपके चरणों में गिरा हुआ मैं भरत हूँ, ऐसा कहते हुए भरत ने सीता जी के पाँव पकड़ लिये और आनन्द-सागर में डूब गये। वहीं उन्होंने लक्ष्मण को भी प्रणाम किया क्योंकि कर्तव्यपरायण होने के कारण वे वरिष्ठ हैं। तत्पश्चात् सभी

सुग्रीवादि जती त वानर थिया ती मानिसै झैं भई ।
सोध्या प्रश्न कुशल् सबै भरतको आफ्नू कुशल् सब् कही ॥
मर्जी सुग्रिवलाइ तेस् बखतमा यस्तो भरत्को भयो ।
याहींबाट दया भयो प्रभुजिको सब् शत्रुको ज्यान् गयो ॥३३९॥

चारै भाइ थियौं अगाडि अहिले पाँचौं हुनूभो यहाँ ।
भाईका झइँ यो सहाय नभया राक्षस् जितिन्थ्या कहाँ ॥
यस्ता प्रेम्सित बात् गऱ्या भरतले सुग्रीवजीथ्यैं गई ।
श्रीराम्चन्द्रजिका पऱ्या चरणमा शत्रुघ्न खूशी भई ॥३४०॥

लक्ष्मण्जीकन दण्डवत् गरि सिता ज्यूका चरण्मा पऱ्या ।
सेवक् हूँ करुणानिधान् ! हजुरका यो ताहिं बिन्ती गऱ्या ॥
श्रीराम्चन्द्रजिका खराउ शिरमा राखी गयाका थिया ।
बेला भो पनि पाउमा भरतले ताहीं लगाई दिया ॥३४१॥

हात् जोरी विनती गऱ्या पनि तहाँ नासो लियाको थियाँ ।
यो गादी लिइबक्सियोस् हजुरले ऐले हजूर्मा दियाँ ॥

को प्रेम विभोर हो आलिंगन करके सबको आनन्दित किया । सुग्रीव तथा अन्य वीर उनके आलिंगन से अत्यन्त हर्षित हुए । ३३८ भरत ने सबकी कुशलता पूछी । सुग्रीव आदि जितने भी वानर थे सभी ने मनुष्य के समान होकर अपनी-अपनी कुशलता से उन्हें परिचित कराया । सबकी वीरता की कहानी सुनकर भरत जी उन सबके प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हुए और कहने लगे कि हे प्रभु जी ! आप लोगों की ही दया से हमारे समस्त शत्रुओं का नाश हुआ है । ३३९ वे कहने लगे पहले हम केवल चार भाई ही थे अब पांचवें आप हुए । भाई के समान यदि आप सहायक न होते तो राक्षसों पर विजय किस प्रकार मिलती । तत्काल ही सुग्रीव के निकट जाकर उन्होंने इस प्रकार प्रेमपूर्वक वार्तालाप किया । श्रीरामचन्द्र जी के पास जाकर शत्रुघ्न भी उसी समय उनके चरणों में पड़कर अत्यन्त प्रसन्न हुए । ३४० लक्ष्मण जी को भरत ने दण्डवत् की और सीता जी के चरणों में गिरकर कहने लगे, हे करुणा-निधान मैं आपका सेवक हूँ । इस प्रकार विनती करके वे राम की ओर अग्रसर हुए और जो राम की पादुकायें अपने सिर पर रखकर लाये थे उन्हें उचित अवसर देखकर उनके चरणों में पहना दिया । ३४१ उनके चरणों में पादुकायें धारण करवाकर वे विनती करने लगे—हे प्रभु । आपकी यह राजगद्दी मैंने अमानत के रूप में सुरक्षित रखी है आज यह

सब् कोशमा पनि अन्नको र धनको दस् खण्ड बढ्ता गरी।
राख्याको छु दयानिधान्! हजुरको सेवाविषे मन् धरी ॥३४२॥
यो बिन्ती खुशिले तहाँ भरतले साम्ने गऱ्याथ्या जसै।
देख्या भक्ति भरत्जिको खुशि भई सम्पूर्ण रोया तसै॥
नन्दीग्राम् पुगि उत्रिबक्सनु भयो ठाकुर् जमीन्मा पनि।
पुष्पक्लाइ बिदा पनी दिनुभयो कूबेरथ्यैं जा भनी ॥३४३॥
ताहाँ श्रीरघुनाथ् वशिष्ठ गुरुका पाऊ नमस्कार् गरी।
याहाँ राज्गरिबक्सियोस् भनि असल् आसन् अगाडी धरी॥
आसन्मा गुरुलाइ राखि नजिकै आसन् विषे राज् भयो।
पाया दर्शन रामको र सबको सम्पूर्ण सन्ताप् गयो ॥३४४॥
कैकेयी र भरत् मिलेर रघुनाथ् ज्यूका चरण्मा परी।
हात् जोरीकन राज्य अर्पण गऱ्या बिन्ती बहूतै गरी॥
जस्ले एक कटाक्षले सहज यो ब्रह्माण्ड सब् हर्दछन्।
जो ऐश्वर्य छ इन्द्रको उ पनि एक् क्षण्मा तयार् गर्दछन्॥३४५॥
यस्ता शुद्ध अनन्त पूर्ण सुख रूप् ब्रह्म स्वरूप्ले पनि।
क्या राज् गर्नु थियो तथापि लिनुभो खूशी हउन् ई भनी॥

सब कुछ आपको सौंप रहा हूं अब आपही इसे संभालें। यह सारी राज्य सम्पदा पुनः स्वीकार करने की कृपा करें। समस्त भंडार तथा कोषागार में अन्न तथा धन को दस गुना वृद्धि करके, मैं केवल श्रीमन् का ध्यान धर के सम्हालता रहा हूँ। ३४२ भरत की ऐसी भक्ति पूर्ण विनती सुनकर वहां के समस्त उपस्थित जन रो पड़े। नन्दी ग्राम पहुंचकर भगवन् भी पृथ्वी पर उतर पड़े। पुष्पक को कुबेर के पास जाने की आज्ञा देकर विदा दे दी। ३४३ श्रीरघुनाथ जी गुरु वशिष्ठ के पास पहुंचे और उनके चरणों में गिरकर प्रणाम किया। गुरू की ओर एक उत्तम आसन बढ़ाकर उनसे विराजने का अनुरोध किया। स्वयं भी उनके आसन के ही निकट आसन ग्रहण किया। समस्त उपस्थित जन उनके पावन दर्शनों को पाकर पापों से मुक्त हो गये। ३४४ कैकेयी और भरत दोनों ही रघुनाथ जी के चरणों में नत हो, हाथ जोड़कर राज्य-पाठ सौंपते हुए विनीत भाव में डूब गये। ऐसे महाशक्तिशाली प्रभु जिनके संकेत मात्र से सारा ब्रम्हाण्ड हिल उठता है तथा इन्द्र के ऐश्वर्य की भी रचना क्षण भर में कर देते हैं। ३४५ ऐसे शुद्ध अनन्त सुखसागर प्रभु जिनमें ब्रम्ह भेद छुपा पड़ा है जिसका पता कोई

पैल्हे स्नान् भरतादिले जब गऱ्या क्षौर्ले जटा साफ् गरी ।
स्नान् सीतापतिको पछी तहिं भयो तेस्तै प्रकार्ले गरी ॥३४६॥
माला चन्दन वस्त्र हार पहिरी आसन् विषे राज् भयो ।
राम्को स्नान् र सिताजिको तहिं सँगै हूँदा सबै ताप् गयो ॥
सीताराम् रथमा सवार् हुनुभयो सुग्रीव् विभीषण्हरू ।
हात्तीमा रथमा सवार् हुन गया घोडैमहाँ क्वै अरू ॥३४७॥
राम्का सारथि ता भरत् हुन गया सेवा म गर्छू भनी ।
सेतो छत्र लिया बहुत् खुशि हुँदै शत्रुघ्नजीले पनि ॥
षङ्खा लक्ष्मणले लिया प्रभुजिको सुग्रीवले ता चँवर् ।
अर्को चामर एक् विभीषणजिले खूशी भया सब् अवर्॥३४८॥
मानिस्ले त बखान् कहाँतक गरूँ सब् देवताले पनि ।
रम्को कीर्तन खुप् गऱ्या र सुनियो मीठो मधूरो ध्वनि ॥
भेरी शङ्ख मृदङ्ग आदि नगरा खुप् बज्न लाग्या पनि ।
श्रीराम्को पनि कुच् भयो रथ चढी जाऊँ अयोध्या भनी॥३४९॥

नहीं लगा सका, उन्हें क्या राज्य करना था उन्होंने तो सबके संतोष के लिए भरत द्वारा सौंपे हुए राज्य भार को स्वीकार किया। सर्वप्रथम भरत ने स्नान किया और अपनी जटाओं का कर्तन किया। उसी प्रकार सीतापति रामचन्द्र जी ने भी स्नानादि करके छुटकारा पाया। ३४६ रामचन्द्र जी सीता सहित स्नानादि से निवृत्त होकर वस्त्रादि धारण किये। उन्होंने चन्दन से अपना अंग सुगन्धित किया तथा मालाओं से सुसज्जित हुए। तत्पश्चात प्रभु सीता सहित आसन पर आरूढ़ हुए जिससे वहां के उपस्थित जनों के हृदय का सारा दुःख भूल गया और वहाँ एक सुखपूर्ण वातावरण बन गया। सीताराम रथ में सवार हुए। सुग्रीव विभीषणादि हाथी व रथ पर सवार हुए। अन्य लोग घोड़ों पर सवार हो गये। ३४७ भरत ने कहा मैं आपकी सेवा करूँगा और उनके सारथी बनकर उनके रथ पर बैठ गये। शत्रुघ्न ने अत्यन्त प्रसन्न भाव से छत्र हाथ में धारण किया। लक्ष्मण ने प्रभु पर पंखा झलने का काम लिया और सुग्रीव ने चंवर डुलाने का कर्तव्य पालन किया। एक और चंवर लेकर विभीषण भी तत्पर हो गये। ऐसे आनन्दमय वातावरण में अन्य सभी लोग आनन्द— विभोर हो गये। ३४८ ऐसे समय में मनुष्य द्वारा किये गये कीर्तन भजन का वर्णन कहाँ तक किया जाये यहां तक कि देवताओं ने भी प्रसन्न होकर कीर्तन-भजन अत्यन्त मधुर ध्वनि में गाया। घंटा, शंख, मृदंग तथा नगाड़ा आदि भी बज उठे। श्रीराम ने

श्रीराम्को पुरिमा प्रवेश् जब भयो सब् पौरवासी पनि ।
निस्क्या बालक वृद्ध दर्शन गरौं हेरौं तमाशा भनी ॥
देख्या श्रीरघुनाथलाइ रथमा थीया पिताम्बर् धरी ।
श्याम् सुन्दर् छ शरीर् किरीट शिरमा भूषण् शरीर्मा भरी ॥३५०॥

लाल् छन् नेत्र विशाल खुप् हृदयवेस् बेस् मोतिका हार छन् ॥
शोभा चन्दन पुष्पको पनि छ वेस् देख्तै भयो खूशि मन् ॥
सून्या स्त्रीहरुले पनि शहरमा आया सिताराम् भनी ।
सब्को चञ्चल चित्त भो र वहुतै हेरौं सिताराम् भनी ॥३५१॥

छोड्या काम् घरको चढ्या गृह-उपर् सब् स्त्री अटाली गईं ।
लावा पुष्प गिराउँदै प्रभुजिको दर्शन् गर्‍या खूश भैं ॥
राम्को मोहनमूर्तिमा जब नजर् सब् स्त्रीहरुका पर्‍या ।
खूशी भैकन अङ्कमाल मनले सब् स्त्रीहरुले गर्‍या ॥३५२॥

ईषत् हास्य गरी प्रजाकन नजर् दींदै रमानाथ् पनि ।
दर्वार् पौंचनुभो जहाँ त दशरथ् वस्थ्या उहीं जाँ भनी ॥

रथ में चढ़कर अयोध्या जाने की आज्ञा दी । ३४९ श्रीराम ने अयोध्या नगरी में जैसे ही प्रवेश किया समस्त नगरवासी उनके दर्शनार्थ दौड़ पड़े । वालक, वृद्ध सभी उस उत्सव पूर्ण मेले को देखने के लिए निकल पड़े । श्रीरामचन्द्र जी पीताम्बर धारण किए हुए रथ पर विराजमान थे । श्यामलगात में अत्यन्त सुन्दर आभूषण चमक रहे थे तथा उनके शीश पर मुकुट शोभायमान हो रहा था । ३५० सारी अयोध्या नगरी में राम के आगमन की सूचना फैल गयी । स्त्रियों ने भी इस शुभ सूचना को पाया जिससे उनके मन प्रभु के दर्शनों के लिये आतुर हो उठे । श्रीरामचन्द्र की शोभा अतुलनीय थी । उनके विशाल एवं गुलाबी नेत्र अत्यन्त सुन्दर लग रहे थे । उनके वक्षस्थल पर उत्तम मोतियों की माला शोभायमान हो रही थी । उनके चारों ओर चन्दन तथा पुष्पों की वहार थी जिसे देखते ही मन प्रसन्नता से प्रफुल्लित हो उठता था । ऐसे मनोरम रूप को देखने के लिये समस्त स्त्री-दल व्याकुल हो उठा । ३५१ सभी स्त्रियों ने तुरन्त घर के धन्धों को छोड़ दिया और ऊंची-ऊंची अट्टालिकाओं पर चढ़ गयीं । प्रेमानन्द से उमंगित होकर लावा तथा पुष्पों को वे लोग पावन रूप के ऊपर वरसाने लगीं । हृदय में प्रेम से ओत-प्रोत होकर वे प्रभु के दर्शन करने लगीं । जिसने उस भव्य रूप के दर्शन किये, मन ही मन उनके आलिंगन का अनुभव करने लगीं । ३५२ इसी प्रकार प्रजाजनों पर दृष्टिपात करते हुए

कौसल्याहरुलाइ योग्य रितले ताहाँ नमस्कार् गरी ।
सुग्रीव्को पनि वास् खटाउनु भयो साह्रै पियारो गरी ॥३५३॥

सुग्रीव्जीकन राख्न भाइ तिमीले पैल्हे म बस्थ्याँ जहाँ ।
सब्लाई तिमिले खटाउ बढिया घर् बस्नलाई यहाँ ॥
हूकूम् येति हुँदा तहाँ भरतले सोही बमाजिम् गऱ्या ।
सब्को वास खटन् भयो सब तहाँ आनन्दसागर् पऱ्या ॥३५४॥

आफैं श्रीरघुनाथ् हुकूम् अब गरुन् यो मन् भरत्ले गरी ।
सुग्रीव्लाइ अह्राउनू पनि भयो खुश् भै अगाडी सरी ॥
हे सुग्रीव ! खटाउनू अब पऱ्यो वीर् वीर् विचार् खुप् गरी ।
चारौंतर्फ गई समुद्र पुगि जल् ल्याउन् कलश्मा भरी॥३५५॥

श्रीराम्चन्द्रजिलाइ राज्य अभिषेक् गर्न्या बखत् भो भनी ।
मर्जी भो र भरत्जिको उहि बखत् ल्याई दिया जल् पनि ॥
जल् लीनाकन जाम्बवान् र हनुमान् अंगद् सुषेण् चार् गया ।
पौंच्या जल्दि समुद्रमा सहज जल् लीयेर दाखिल् भया॥३५६॥

श्रीरामचन्द्र जी ने दरबार में प्रवेश किया और उसी जगह पहुँचे जहां राजा दशरथ विराजते थे। उन्होंने माता कौशल्या से मिलकर यथायोग्य रीति से उन्हें प्रणाम किया तथा सुग्रीव के रहने की व्यवस्था करने का आदेश दिया। ३५३ उन्होंने कहा, हे भाई ! जहां पर मैं रहता था वही स्थान सुग्रीव के लिये उचित होगा। यह प्रबन्ध करने के लिये तुरन्त सबको भेजो। आज्ञा पाते ही तुरन्त ही भरत जी ने राम की इच्छानुसार सारी व्यवस्था कर दी। सब लोग उचित निवास स्थान पाकर विश्राम करने लगे और ऐसे सुखद मिलन की बेला में सभी लोग आनन्द में डूब गये। ३५४ भरत ने सारे आदेशों का पालन किया और पुनः उनके आदेश की प्रतीक्षा में खड़े हो गये। उन्होंने अग्रसर होकर सुग्रीव से अनुरोध किया कि हे सुग्रीव ! अब हमें जल की व्यवस्था करनी चाहिये और इसके लिये चारों दिशाओं में वीरों को भेजना होगा जिससे वे समुद्रों तक पहुँचकर कलश में जल भरकर ले आयें। ३५५ जल लेने के लिये जाम्ववन्त, हनुमान, अंगद तथा सुषेण नामक वीर गये। वे शीघ्रता से समुद्र तट पर पहुँचे और जल भरकर ले आये। भरत जी ने वीरों द्वारा लाये गये जल को लिया और श्रीरामचन्द्र जी के राज्याभिषेक की तैयारी में लग गये। ३५६ भरत जी जल लेकर गुरु

त्यो जल् साथ लिई बशिष्ठ गुरुका साम्ने भरत्जी गया ।
यो हो चार समुद्रको जल भनी यो बिन्ति गर्दा भया ॥
फेर् बिन्ती करजोरि खुप् सित गऱ्या यै जल् हजुर्ले छरी ।
श्रीराम्चन्द्रजिलाई राज्य अभिषेक् दिनू हवस् यस् घरि॥३५७॥

यस्तो बिन्ति सुनी वशिष्ठ गुरुले वेस् बिन्ति गर्छौं भनी ।
श्रीराम्चन्द्रजिलाइ राखनु भयो सिंहासनैमा पनि ॥
गौतम् वाल्मिकि वामदेव इ समेत् जावालि ताहीं थिया ।
ती सब्ले सँग भै वशिष्ठ गुरुले जल्दी अभीषेक् दिया॥३५८॥

कन्या ब्राह्मणले पनी तुलसिदल् हालेर कुश्ले असल् ।
मन्त्रै पूर्वक खूशि भैकन छऱ्या राम्का उपर् शुद्ध जल् ॥
सेतो छत्र लिया तहाँ प्रभुजिको शत्रुघ्नजीले गई ।
सुग्रीव्ले र तहाँ विभीषणजिले हाँक्याचमर् खुश् भई॥३५९॥
माला काञ्चन वायुले पनि दिया हार् इन्द्रजीले पनि ।
नाना रत्न खचित् गरायर दिया पैरून् सिताराम् भनी ॥
गाऊँछन् तहिं 'देवतागणहरू सब् अप्सरा नाच्तछन् ।
वर्ष्यो खुप् सित पुष्पवृष्टि नगरा बज्दा भयो खूशी मन्॥३६०॥

बशिष्ठ जी के समक्ष गये और विनीत भाव से बताया कि यह चार समुद्रों का जल है। उन्होंने उनसे नम्र निवेदन किया कि आप इस जल को छिड़ककर शीघ्रातिशीघ्र श्रीरामचन्द्र जी का अभिषेक करें और इस शुभ कार्य को सम्पन्न करने की कृपा करें। ३५७ भरत जी की विनती सुनकर गुरु जी ने कहा ठीक है और उन्होंने उसी समय श्रीराम को सिंहासन पर बिठाया। गौतम, बाल्मीकि, बामदेव एवं जावालि सब वहीं उपस्थित थे। उन सब ने मिलकर गुरु जी के साथ इस शुभ कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न किया। ३५८ ब्रम्हचारी ब्राह्मणों ने भी प्रसन्न होकर मन्त्रोच्चारण करते हुए कुश से तुलसी-दल तथा जल इत्यादि लेकर श्रीरामचन्द्र जी के ऊपर छिड़का। शत्रुघ्न ने उसी समय श्वेत छत्र लेकर प्रभू के ऊपर लगाया। आनन्द तथा प्रेम में डूबकर सुग्रीव और विभीषण ने भी चंवर डुलाया। ३५९ वायु ने कंचनहार प्रभु को पहनाया तथा इन्द्र ने प्रसन्न होकर रत्नजटित हार सीताराम को पहनने के लिये भेंट किया। देवगण गीत गा उठे तथा अप्सरायें नाचने लगीं, आकाश से पुष्प वर्षा होने लगी तथा नगाड़ों की ध्वनि गूंज उठी। समस्त वातावरण एक अद्भुत रस में डूब गया। ३६०

गम्भीर् श्यामशरीर् किसीट् छ शिरमा माला पिताम्बर् धरी ।
कोटी कामसमान सुन्दर स्वरूप् वाम्तर्फ सीता धरी ॥
सिंहासन् बसि सब् प्रजातिर नजर् दीनू भएथ्यो जसै ।
दर्शन् गर्न भनेर पार्वति समेत् आया सदाशिव् तसै ॥३६१॥

डिम् डिम् शब्द भयो तहाँ डमरुको नन्दी र भृङ्गी पनि ।
ताल् वेताल्हरु नाच्न लागि त गया आया सदाशिव् भनी ॥
शम्भूका पछि देवगण् सब तहाँ आएर हाजिर् भया ।
श्रीराम्को स्तुति खुप् गरेर खुशि मै सब् जल्दि फर्की गया ॥३६२॥

बाजा खुप् शब्द गर्छन् स्तुति गरि ऋषिगण् देवगण् पाउ पर्छन् ।
वर्षन्छन् पुष्प वृष्टि प्रभु-उपर अनेक् प्राणिले सौख्य गर्छन् ॥
सिंहासन्मा विराज्मान् सकल गुणनिधान् राम् हूनूभो जसै ता ।
सीता लक्ष्मण् सँगै छन् प्रभुकन हुनगो पूर्ण शोभा तसै ता ॥३६३॥

राजा श्रीरघुनाथ् हुँदा पृथिविमा सस्यादि खूबै बढ्यो ।
थीयानन् अति गन्ध जौन फुलमा तिन्मा सुगन्धी चढ्यो ॥

राज्याभिषेक के समय श्यामलगात श्रीरामचन्द्र जी के बायीं ओर सुमुखि सीता उनकी महारानी बनकर विराज रहीं हैं। प्रभु के तन में पीताम्बर तथा वक्षस्थल पर सुन्दर माला सुशोभित हो रही है। उनके मस्तक पर राज्य मुकुट चमक रहा है। राज्य सिंहासन पर सीता सहित सुशोभित प्रभु ने समस्त प्रजा पर एक दृष्टि भर देखने की कृपा की। उसी समय उनके दर्शनों की अभिलाषा से श्री शंकर पार्वती के साथ उपस्थित हो गये। ३६१ उनके पहुंचते ही उनके डमरू के डिम-डिम स्वर की ध्वनि गूँज उठी। नन्दी और भृंगी तथा ताल वेताल उनकी उपस्थिति का आभास पाकर नृत्य कर उठे। ततूपश्चात अन्य देवगण भी वहां पहुँच गये। सभी ने मिलकर बड़े हर्ष के साथ नाचते गाते हुए श्रीराम के राज्याभिषेक के अवसर पर धूमधाम से उत्सव सम्पन्न किया। तत्पश्चात् सन्तुष्ट मन से अपने-अपने निवास स्थान को लौट गये। ३६२ सकलगुण निधान श्रीरामचन्द्र जी सीता तथा लक्ष्मण के साथ जैसे ही सिंहासन पर विराजे, सम्पूर्ण दृश्य एक अद्भुत शोभा को प्राप्त हो जाता है। बाजे गाजों का तीव्र स्वर गूंज उठा। समस्त ऋषिगण स्तुतिकर उनके चरणों में पड़ जाते हैं। अनेकों प्राणी सुख का अनुभव करते हैं। प्रभु के ऊपर पुष्प-वर्षा होने लगती है। ३६३ श्रीरघुनाथ के आधीन राज्य होते ही

धेनूदान् वृषदान् गऱ्या प्रभुजिले तीस् कोटि सुन् दान् गरी ।
वस्त्राभूषण रत्न दान् पनि गऱ्या दारिद्र्य सब्को हरी ।।३६४।।

दान्ले ब्राह्मण खुश् गराइ रघुनाथ् सुग्रीवलाई पनि ।
माला सूर्य समानको दिनुभयो दीनू उचित् हो भनी ।।
मर्याद् खुप् गरी बाजु बन्ध दिनुभो अङ्गद्जिलाई पनि ।
ताहीं एक अमूल्य हार् दिनुभयो सीताजिलाई पनि ।।३६५।।

सीताले हनुमानलाइ दिन सूर् बाँधेर हात्मा लिइन् ।
कस्तो हुन्छ हुकूम् भनीकन नजर् स्वामित्तरफ्खु प्दिइन् ।।
जस्लाई दिन मन् छ देउ भनि यो हूकूम् भएथ्यो जसै ।
प्यारा श्रीहनुमान् थिया तहिं दिइन् त्यो हार् सिताले तसै।।३६६।।

झन् दर्जा हनुमानको तहिं बढ्यो फेरी प्रभूले पनि ।
क्या माग्छौ वरदान माग तिमिले दिन्छू म त्यो वर् भनी ।।
हूकूम् बक्सनुभो तहाँ र हनुमान् खुश् भै अगाडी सऱ्या ।
जो माग्न मनमा थियो हजुरमा हात् जोरि बिन्ती गऱ्या।।३६७।।

सारे राज्य में सुख चैन की वर्षा होने लगी। समस्त पृथ्वी पर ऐश्वर्य वैभव की वृद्धि हुई। प्रभु ने तीस करोड़ धेनु, वृक्ष तथा स्वर्ण दान करके तथा वस्त्र आभूषण तथा सभी को ऐसा दान दिया कि समस्त दरिद्रता का नाश हो गया। जिन पुष्पों में दुर्गन्धि थी उनमें प्रभु की कृपा से सुगन्धि आ गयी। ३६४ दान दक्षिणा से ब्राम्हणों को प्रसन्न करके प्रभु ने सुग्रीव की ओर ध्यान किया और उन्हें सूर्य के समान माल्यार्पण किया। मन ही मन उन्होंने अंगद का भी स्मरण किया और उन्हें एक बाजूबन्द देने की कृपा की। तत्पश्चात महारानी सीता की याद आई और उन्होंने उन्हें एक अमूल्य हार प्रदान करने की अनुकम्पा की। ३६५ सीता जी ने मन ही मन वह हार हनुमान को देने का निश्चय किया किन्तु आज्ञा की प्रतीक्षा में उन्होनें प्रभु की ओर देखा। प्रभु ने उन्हें स्वतंत्रता प्रदान की और कहा जिसे देना चाहो दे दो। स्वामी की आज्ञा पाते ही उन्होंने प्रिय हनुमान को जो वहीं पर उपस्थित थे, बुलाया और वह हार उनके हाथों में दे दिया। ३६६ इस प्रकार हनुमान की स्थिति में वृद्धि हुई और प्रभु ने उन्हें वरदान मांगने की आज्ञा दी। उन्होंने कहा मैं वरदान देता हूँ तुम जो मांगोगे वही मिलेगा। प्रभु की इस आज्ञा को पाकर हनुमान प्रसन्न होकर अग्रसर हुए और कुछ मांगने की इच्छा से वे हाथ जोड़कर प्रभु के सामने खड़े हो गये। ३६७

ख्वामित् ! नाम हजूरको जब तलक् लीनन् जगत्मा बडा ।
ताहींसम्म शरीर् रहोस् हजुरको नाम् सुन्नलाई खडा ।।
ख्वामित् ! नाम हजूरको स्मरणमा आनन्द जो पाउँछु ।
त्यो आनन्द कतै मिलेन महाराज् तेही नछूटोस् कछु ।।३६८।।

यो बिन्ती सुनि लौ भनी हुकुम भै फेरी कृपा भो पनि ।
बित्ला कल्प र यो बित्यापछि भन्या मुक्तै हुन्याछौ भनी ।
हूकूम् यो रघुनाथको हुन गयो फेर् जानकीले पनि ।
जो जो हुन् सुख भोग् सबै वश रहुन् तिम्रा हनूमान् भनी।।३६९।।

आशीर्वाद् यति बक्सनू जब भयो बीदा हनूमान् भया ।
आनन्दाश्रु गिराइ तप् गरुँ भनी हीमालयैमा गया ।।
फेर् ठाकुर् गुहका अगाडि गइ यो हूकूम् कृपाले गन्या ।
जाऊ लौ घरमै बसीरहु फकत् मन् मात्र मैमा धन्या।।३७०।।

यो प्रारब्ध ठुलो छ भोग नगरी टर्दैन कस्तै गरी ।
हून्यैछौ तिति मुक्त देह पछि ता संसार् सहज्मा तरी ।।

उन्होंने प्रभु से इस प्रकार निवेदन किया । हे स्वामी ! जब तक इस संसार में आपके नाम का जाप होता रहे तब तक श्रीमान का नाम सुनने हेतु यह शरीर रहे । आपके नाम मात्र के स्मरण से ही जो आनन्द प्राप्त होगा वह और कहीं भी नहीं । अतः यही आनन्द मुझसे न छूटने पाये । ३६८ हनुमान की भक्तिपूर्ण विनती सुनकर प्रभु ने तथास्तु कह कर पुनः आज्ञा करने की कृपा की, यह शरीर समाप्त होने के पश्चात तुम मुक्ति को प्राप्त हो जाओगे। रघुनाथ की ऐसी आज्ञा सुनकर जानकी जी ने भी उन्हें यह वरदान दिया कि समस्त सुख भोग हनुमान जी के वशीभूत होकर रहेंगे अर्थात किसी सांसारिक सुख की इच्छा अपने वश में करके उन्हें भक्ति मार्ग से हटा नहीं सकती । सीता माता से ऐसा आशीर्वाद पाकर हनुमान हर्ष से गद्‌गद हो गये । ३६९ भगवान के ऐसे आशीर्वाद एवं वरदान से भरे पूरे हनुमान वहाँ से विदा हुए । आनन्द के अश्रुपात करते हुए वे तपस्या करने के लिये हिमालय पर्वत की ओर चले गये । प्रभु ने पुनः गुह्य के सम्मुख जाकर उन्हें यह आज्ञा दी कि घर में बैठकर केवल मन से ही मेरा ध्यान करते रहो वही प्रेम सच्चा होगा । ३७० ये प्रारब्ध महान हैं । जितना कुछ भोगना भाग्य में आ चुका है उसे शान्तिपूर्वक भोगना ही उचित है वह कदापि टल नहीं सकता है । हृदय से मेरा ध्यान करने मात्र से ही इस शरीर से मुक्ति

हूकम् यो गरि मुख्य भक्त गुहका सामने अगाडी सरी ।
आलिगन् गरि भूषणादि दिनुभो राज्यै समेत् थप् गरी।।३७१।।
तत्त्वै ज्ञान् पनि बक्सनू तहिं भयो आनन्द सागर् परी ।
बीदा भै गुहजी गया घरमहाँ मन् राम्-चरण्मा धरी ।।
यस्तै रीत्सित सब् बिदा तहिं हुँदै सुग्रीव् विभीषण् गया ।
लक्ष्मण् सेवक छन् सदा हजुरमा राम् राज्य गर्दा भया।।३७२।।
आत्मा रूप् सब कर्मका अधिपती निर्मल् अकर्ता पनि ।
कर्ता भैकन लोकलाइ उपदेश् गर्न्या उचित् हो भनी ।।
गर्नालायक अश्मेधहरु जो ठूला ठुला यज्ञ हुन् ।
ती सब् यज्ञ पनी गऱ्या प्रभुजिले बाँकी रहन्थ्यो कउन्।।३७३।।
राजा राम् भइबक्सनू जब भयो प्राणी प्रजा खुश् भया ।
जो पर्थ्या अघि ताप् अनेक् तरहका ती सब् प्रजाका गया ।।

पाने के पश्चात तुम संसार सागर से पार हो जाओगे। ऐसी आज्ञा देने के बाद मुख्य भक्त गुह्य के सम्मुख जाकर आगे बढ़े और उन्हें अपनी बाहों में भरकर आभूपणों का दान दिया। ३७१ उसी समय उन्होंने उन्हें तत्वज्ञान से भी परिचित कराया। अतः सम्पूर्ण आनन्द में डूबकर गुह्य श्रीराम के चरणों में अपने मन को अर्पण कर चले गये। इसी प्रकार से सुग्रीव विभीषण सभी वहाँ से विदा हो गये। लक्ष्मण जी राम की सेवा में सदा के लिये ही उनके चरणों में ही रहे और राम-राज्य का अलौकिक आनन्द लेते हुए राम की सेवा में लीन रहे। ३७२ श्रीरामचन्द्र जी प्रत्येक कार्य के कर्त्ता हैं। वे आत्मास्वरूप हर कार्य में रहते हैं कुछ बड़े-बड़े कार्य उन्होंने स्वयं किये जिसे मानव ने समझा कि वे कार्य स्वयं प्रभु ने अपने हाथों सम्पन्न किया किन्तु कुछ कार्य वे मानव के अन्दर प्रेरणा बनकर करते हैं। उन्होंने राज्यकाज सम्हालने पर बड़े-बड़े अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न किये। समस्त संसार को अपने पावन उपदेशों से भर दिया। सारी प्रजा को सुख शान्ति तथा सन्तोष प्रदान किया। अब उनके लिये क्या करना शेष था। ३७३ श्रीराम जब राजा बने तो समस्त प्रजा में प्रसन्नता ही प्रसन्नता छा गयी। रामराज्य से पूर्व होने वाले सारे कष्टों का नाश हो गया। किसी विधवा का शोक विलाप नहीं रह गया। देश में रोग बीमारी का नाम तक नहीं रहा। किसी व्याधा का भयंकर प्रकोप भी नहीं रहा। चोरी या डकैती आदि घिनौने कार्य की प्रवृत्ति भी देश से मिट गयी। सबके हृदय छल, कपट तथा द्वेष से मुक्ति पाकर निर्मल हो गये। नगर में किसी को अपनी वस्तुयें

गर्दैनन् विधवा विलाप् मुलुकमा लाग्दैन : रोग्‌व्याध् पनि ।
सब् डाकू दबिया परेन कहिं ताप् यो चीज् हरायो भनी ।।३७४।।
बूढो बाँचि मरेन बालक कहीं यस्तो मुलुक्मा भयो ।
छोरा झैँ गरि पालिबक्सनु हुँदा सब् ताप् प्रजाको गयो ।।
गर्छन् राघवको भजन् जनहरू वर्षन्छ मेघ् कालमा ।
वर्णाश्रम् सब धर्म छन् दिन बित्या सब्का सुखै चालमा ।।३७५।।

अयुत वर्ष त राज् प्रभुको भयो ।
सकल ताप् दुनियाँहरुको गयो ।।
शिवजिले यति पार्वतिथ्यैं कह्या ।
सकल पाप् छुटिजान्छ सुनी रह्या ।।३७६।।
श्रीरामका यति कथानक जो कहन्छन् ।
सब् थोकले ति परिपूर्ण भई रहन्छन् ।।
धन् पुत्र राज्यहरु कम्ति हुँदैन केही ।
पाप् हर्नलाइ पनि मुख्य छ धर्म येही ।।३७७।।

जन्मन्छन् तर मर्दछन् पनि सबै जस्का त छोराहरू ।
तेस्ता स्त्रीहरुले भने यति सुन्या बाँच्छन् पछीका अरू ।।

खोने या चोरी हो जाने की आशंका ही नहीं रही । ३७४ अकाल मृत्यु से सब छुटकारा पा गये । वृद्धों के जीवित रहते हुए बालकों की मृत्यु कहीं नहीं देखी जाने लगी । प्रजा जनों का पालन राजा अपने पुत्र के समान कर रहे थे । अतः सबके हृदय दुःख तथा ताप से मुक्त थे । समस्त राज्य में राघव के गीत-भजन गूँजते थे । समय पर वर्षा होती तथा अकाल से मुक्ति मिली । वनाश्रमों में धर्म-कर्म होते अतः सबका जीवन सुख संतोषमय हो गया । ३७५ अनेकों प्रकार से लोग राजा के गुणगान करते । सबके मन सन्तुष्ट थे, सब सुखी थे किसी को किसी प्रकार का दुःख नही था । ऐसे राज्य की प्रशंसा सुनकर शिव ने पार्वती से कहा कि सुनते हैं ऐसे राम-राज्य के अन्दर निवास करने से ही सकल पापों का नाश होता है । ३७६ इस संसार में धन-पुत्र आदि से मोक्ष नहीं मिलता यह सब तो क्षण भंगुर है, बड़े-बड़े राज-पाठ भी अंतिम दशा को प्राप्त हो गये । अपने पापों को नाश करने का एक धर्म मार्ग यही है कि प्रभु के गुणगान किये जायें । श्रीराम की कथा जो कहता है वह मनुष्य सभी सुखों से परिपूर्ण रहता है । ३७७ श्रीराम के भजन से मनुष्य के जीवन की कोई भी कमी पूरी हो सकती है । कभी किसी के पुत्रादि जन्म लेकर तुरन्त ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं कितनी

बन्ध्या स्त्री पनि पाउँछे सुत असल् गर्छन् कृपा राम् धनी ।
आधिव्याधि अनेक दुःख भय ताप् पर्दैन कैल्यै पनि ।।३७८।।

श्रीरामको यति कथा जतिले त सुन्छन् ।
सब् देवता तिसँग खुप्सित खूशि हुन्छन् ।।
जो बिघ्न हुन् ति पनि नष्ट भएर जान्छन् ।
सम्पूर्ण जन् पनि तिनैकन आइ मान्छन् ।।३७९।।

आधि व्याधि त छुट्तछन् अरु उपर् धन्धान्य सन्तान् पनि ।
बढ्छन् इष्ट कुटुम्ब मित्रहरुका मान्न्या ति हुन्छन् भनी ।।
यस्ताको त बखान् कहाँतक गरूँ यो मन् प्रभूमा धरी ।
गर्छन् राम भजन् त मुक्ति पनि भै जान्छन् ति संसार् तरी।।३८०।।

शम्भूले सब वेद मन्थन गर्‍या श्रीरामको नाम् सरी ।
अर्को तत्त्व मिलेन केहि र लिया साह्रै पियारो गरी ।
सोही तत्त्व त पार्वतीकन दिया अध्यात्म रूप्ले गरी ।
जस्ले प्रेम् गरि सुन्छ यो सहज त्यो उत्रन्छ संसार् तरी ।।३८१।।

।। इति युद्धकाण्ड समाप्त ।।

ही स्त्रियाँ संतान पाने के सुख से ही वंचित रह जाती है एक वन्ध्या का जीवन ही व्यतीत करती हैं। प्रभु के स्मरण करते रहने से यह सभी व्याधायें, दुःख तथा भय नहीं रह जाते। ३७८ श्रीराम की इस पावन कथा को जो लोग सुनते या कहते हैं उनसे समस्त देवगण सदैव प्रसन्न रहते हैं और सदा सहायक रहते है। मानव जीवन में आने वाली समस्त विघ्न बाधायें दूर रहती हैं, समाज में उनका आदर बढ़ता है और सभी उनसे प्रेम-पूर्ण व्यवहार रखते है। ३७९ प्रभु की कृपा से आधि-व्याधि सभी नष्ट हो जाते हैं। धन-धान्य एवम् सन्तान से मनुष्य परिपूर्ण रहता है और दिन पर दिन उसके जीवन में इन सुखों की वृद्धि होती रहती है। इष्ट-मित्र तथा कुटुम्ब के सदस्य श्रद्धा-आदर तथा प्रेम देते हैं। प्रभु की प्रशंसा कहां तक की जाये। उनके भजन मन से जो करता है वह संसार की समस्त बाधाओं से मुक्ति पाकर तर जाता है।३८० शम्भु ने भी श्रीराम नाम के समान सब वेदों का मन्थन किया अर्थात् अध्ययन किया। उन्हें भी कोई दूसरे तत्व की प्राप्ति नहीं हुई। अतः उसी तत्व का ज्ञान प्राप्तकर उन्होंने प्रेमपूर्वक पार्वती जी को आध्यात्म रूपसे प्रदान किया। जो प्रेम-पूर्वक रामकथा को सुनता और कहता है वह सहज ही संसार से पार होकर किनारे आ जाता है। ३८१

।। इति युद्धकांड समाप्त ।।

उत्तरकाण्ड

शम्भूका मुखदेखि राज्य अभिषेक् रामको सुनीथिन् जसै ।
सोधिन् पार्वतिले सदाशिवजिथ्यैं लीला पछीका तसै ।।
पृथ्वीमा कति वर्ष राज् हुन गयो लीला तहाँ कुन् भया ।
कस्ता रीत्‌सित राज्य छोडि रघुनाथ् वैकुण्ठ धाम्‌मा गया ।। १ ।।

शम्भो ! श्रीरघुनाथका जति त छन् लीला कृपाले गरी ।
आज्ञा आज हवस् म सुन्छु भगवान्! बिन्ती छ पाऊ परी ।।
यो बिन्ती जब शम्भुका चरणमा श्रीपार्वतीले गरिन् ।
सब् लीला प्रभुका कह्या शिवजिले खुप् हर्षमा ती परिन् ।। २ ।।

रावण् मारि उतारि भारि भुमिको राम् राज्य गर्छन् भनी ।
जानी एक् दिन ता गया ऋषि अनेक् भेटौं सिताराम् भनी ।।
दुर्वासा भृगु अङ्गिरा इ पनि छन् कश्यप् र वाम्‌देव् भया ।
विश्वामित्र असित् र कण्व सहितै सप्तर्षि अत्री गया ।। ३ ।।

सब् शिष्यै सहितै अगस्तिजि गया द्वार्‌मा पुग्याथ्या जसै ।
हाजिर् जल्दि पठाइ मर्जि भइ सब् पौंच्या हजूर्‌मा तसै ।।

जब शम्भु के मुँह से श्रीराम के राज्याभिषेक के बारे में सुना, पार्वती ने सदाशिवजी से उसके बाद की लीला के विषय में प्रश्न किया। पृथ्वी पर कितने वर्ष तक राज्य किया गया और किस-किस प्रकार की लीला हुई और किस प्रकार श्रीरघुनाथ राज्य को छोड़कर बैकुण्ठधाम को पधारे। १ शम्भो ! श्रीरघुनाथ की जो कुछ भी लीलाएँ हैं कृपाकर आज बताने का कष्ट करें, मैं सुनना चाहती हूँ। भगवन् ! आपके शरण में मेरी यही विनती है। जब इतनी विनती पार्वती जी ने शम्भु के चरणों में रखी, शिवजी ने भी प्रभु की समस्त लीलाओं के बारे में बताया और ये जानकर वह अत्यन्त हर्षित हुई। २ रावण को वध कर तथा भू-भार को उतार कर राज्य करनेवाले श्रीराम को जानकर एक दिन अनेक ऋषि मुनि सीताराम से भेंट करने के लिए गये। दुर्वासा, भृगु, अंगिरा, कश्यप, वामदेव, विश्वामित्र, असित एवं कांडव सहित सप्तऋषि अत्रि आदि भी गये। ३ समस्त शिष्यों सहित जब अगस्ति जी द्वार पर पहुँचे थे, आने की सूचना देने पर तुरन्त बुलाने की आज्ञा हुई और सब प्रभु के पास पहुँच गये। प्रभु जी ने समस्त ऋषियों का

पूजा सब् ऋषिको गर्‍या प्रभुजिले सब्लाइ आसन् दिया ।
खूशी सब् ऋषिगण् भया हजुरमा जो जो गयाका थिया ।। ४ ।।

पैले प्रश्न गर्‍या तहाँ कुशलको राम्ले र आदर् गरी ।
सोध्या सब् ऋषिले पनी कुशलको विस्तार् वडो प्रेम् गरी ।।
बिन्ती सब् ऋषिले गर्‍या हजुरमा स्वामिन् ! ठुलो काम् भयो ।
पृथ्वीको अति भार इन्द्रजित हो भार् तेहि जाँदा गयो ।। ५ ।।

वीर् हुन् रावण कुम्भकर्ण त पनी यो इन्द्रजित् झन् जवर् ।
वीर् हो त्यो पनि मारिवक्सनुभयो को जित्न सक्थ्यो अवर् ।।
लङ्कामा यिनि दुष्टको मरण भो साँचा विभीषण् थिया ।
पाया राज्य कनक् झईँ र खुशिले चाकर् सदाका भया ।। ६ ।।

जो दक्षिणा अभयको अघि हो दियाको ।
सो पूर्ण गर्नकन दुष्ट हरी लियाको ।।
देख्याँ कृतार्थ हुनुभो रघुनाथ ऐल्हे ।
मर्थ्या इ राक्षसहरू अरुदेखि कैल्हे ।। ७ ।।

यो बिन्ती ऋषिको सुन्या प्रभुजिले आश्चर्य मान्या पनि ।
क्याले रावणदेखि झन् अति ठुलो भो इन्द्रजित् वीर् भनी ।।

पूजन करके सबको आसन अर्पित किया । समस्त ऋषिगण जो भी प्रभु के पास गये अत्यन्त खुश हुए । ४ श्रीराम ने सर्वप्रथम सबसे कुशलता के बारे में पूछा और आदर-सत्कार किया । सब ऋषियों ने भी अति प्रेमपूर्वक कुशलता सविस्तार बतायी । सब ऋषियों ने विनती की, स्वामिन् ! अत्यन्त बड़ा कार्य सम्पन्न हुआ । पृथ्वी का अति-भार इन्द्रजीत भी है और उसी के चले जाने से भार का हरण हुआ है । ५ वीर तो रावण तथा कुम्भकर्ण भी हैं परन्तु इनसे भी महाबली वीर इन्द्रजीत है, उसे भी मारने की कृपा की । इस प्रकार अन्य वीर भी कैसे टिकते । लंका में इन दुष्टों का अन्त हुआ । केवल सच्चे विभीषण थे और कनकरूपी राज्य पाकर तथा प्रसन्न होकर सदैव के लिए सेवक बन गये । ६ अभयदान के रूप में दी हुई दक्षिणा को पूर्ण करने के लिए दुष्टों का हरण किया हुआ देखा । श्रीरघुनाथ ! हम कृतार्थ हैं । ये राक्षसगण औरों के द्वारा किस प्रकार मारे जाते । ७ ऋषियों की ऐसी विनती सुनकर प्रभुजी ने आश्चर्य किया । इन्द्रजीत रावण से भी अति महान वीर कैसे हुआ,

सोध्या सब् ऋषिका अगाडि र तहाँ साम्ने अगस्ती थिया ।
यस्तो हो तब वीर् भन्याँ भनि सबै विस्तार् बताईदिया ॥ ८ ॥

ब्रह्माका सुत हुन् पुलस्त्य तपका खातिर् सुमेरू गया ।
राजर्षी तृणबिन्दुका नगिचमा आश्रम् ति गर्दा भया ॥
तप् गर्थ्या तहिं देवपुत्रिहरु सव आएर खुप् गान् गरी ।
नाच्थ्या हास्यकला अनेक् तरहका गर्छैं नजर्मा परी ॥ ९ ॥

तप्को विघ्न हुन्या पुलस्त्य ऋषिले बूझ्या बडा धीर् थिया ।
जुन् स्त्री देखछु म गर्भिणी उहि हवस् भन्न्या सराप् पो दिया ॥
भाग्या सब् तृणबिन्दु पुत्रि त सुनी साम्ने नजीक्मा गइन् ।
देख्या ताहिं पुलस्त्यले र ति उसै झट् गर्भिणी पो भइन् ॥ १० ॥

कामिन् खुप् डरले पितासित गइन् जान्या पिताले पनि ।
छोरी गर्भिणि भैछ आज ऋषिका साँचा वचन्ले भनी ॥
जानी छोरि पुलस्त्यजीकन दिया जल्दी नजीक्मा गई ।
ती कन्या ति पुलस्त्यले पनि लिया अत्यन्त खूशी भई ॥ ११ ॥

तिन्का पुत्र ति विश्रवा हुन गया खुप् ब्रह्म जान्न्या मुनि ।
भारद्वाज् ऋषिले तिनैकन दिया छोरी वडा गुण सुनी ॥

कहते हुए सब ऋषियों के सम्मुख जहाँ अगस्ति भी थे, प्रश्न किया। तब उसकी वीरता के विषय में सविस्तार वता दिया। ८ पुलस्त्य ब्रम्हा का पुत्र तपस्या करने के लिए सुमेरु पर्वत को गया। ' राजर्षि तृणबिन्दु के निकट आसन की स्थापना की और वहीं तपस्या करने लगे। वहाँ पर सब देव-पुत्रियाँ आदि आकर खूब गान करतीं, नृत्य करतीं तथा अनेक प्रकार की हास्यकला करते हुए नजरों के सामने पड़तीं। ९ पुलस्त्य ऋषि तपस्या में विघ्न होने की संभावना को जान गये। वे बड़े वीर थे। उन्होंने यह शाप दिया कि जिस स्त्री को मैं देखूंगा वह गर्भिणी हो जाये। सब-तृण विन्दु भाग गये और यह देव-पुत्री यह सुनकर निकट गयी। पुलस्त्य के उसे देखते ही तत्काल वह गर्भिणी हो गयीं। १० अत्यन्त भयभीत होकर काँपते हुए पिता के पास गयी, पिता ने भी जान लिया कि ऋषि के सत्य वचन से पुत्री आज गर्भिणी हुई है। यह जानकर शीघ्रता से निकट जाकर पुलस्त्य जी को पुत्री अर्पित कर दिया। पुलस्त्य जी ने भी उस कन्या को प्रसन्न होकर ग्रहण कर लिया। ११ उनके विश्रवा नामक पुत्र हुए जो ब्रह्म-गुणों से परिपूर्ण थे। भरद्वाज ऋषि ने उनके

तिन्का पुत्र कुबेर् भया गुणनिधान् तिन्ले तपस्या गरी।
ब्रह्मालाइ रिझाउँदा ति धनका मालिक् भया तेस् घरि॥१२॥

मालिक् दौलथका गरायर गरुन् यस्मा सयल् खुप् भनी।
ब्रह्माले तहिं फेरि पुष्पक विमान् तिन्लाइ दीया पनि॥
तेसैमाथि चढी पितासित गई तप्को सबै फल् कह्या।
सब् पायाँ तर वास् त पाइन कता जाऊँ म भन्दा भया॥ १३ ॥

सून्या बिन्ति कुबेरको र खुशि भै ती विश्रवाले पनि।
लङ्का खालि थियो र तेहि दिनुभो लौ राज्य गर् जा भनी॥
लङ्कामा अघि राज्य राक्षसहरू गर्थ्या बडा वीर् थिया।
तिन्कै खातिर विश्वकर्म खुशि भै लङ्का बनाई दिया॥ १४ ॥

आज्कल राक्षस विष्णुले जितिलिदा भागेर पातालमा।
लुक्ना-खातिर गै गया र शहरै खाली छ यस् कालमा॥
आज्ञा येति दिया कुबेर्कन तहाँ ती विश्रवाले जसै।
लंकामा ति कुबेर् गईकन बस्या राज् गर्न लाग्या तसै॥ १५ ॥

एक् दिन् कैकसि छोरि लीकन ठुलो राक्षस् सुमाली पनि।
डुल्थ्यो यस् पृथिवीविषे सब घुमी हेरूँ तमाशा भनी॥

महान गुण को सुनकर अपनी पुत्री दे दी। उनसे पुत्र कुबेर का जन्म हुआ। पूर्ण विधान-सुसंपन्न कुबेर के तपस्या कर ब्रह्मा को प्रसन्न करने पर वे उस समय धन के मालिक हो गये। १२ दौलत के स्वामी बनकर उसमें सुखी रह सकें यह सोच ब्रह्मा ने उन्हें पुनः पुष्पक विमान भी दिया। उसी में चढ़कर पिता के साथ तप करने हेतु गये। जो कुछ उसे फल प्राप्त हुआ, विस्तारपूर्वक बताया परन्तु मुझे रहने का कोई स्थान नहीं मिला और मैं किस ओर जाऊँ, सोचने लगा। १३ कुबेर की इस विनती को सुनकर विस्रवा ने भी प्रसन्न होकर लंका जो उस समय खाली थी उसी को राज करने के लिए दे दी। इससे पूर्व लंका में अत्यन्त वीर राक्षसगण राज्य करते थे। उन्हीं के लिए विश्वकर्मा ने प्रसन्न होकर लंका का सृजन किया। १४ आजकल राक्षस, विष्णु द्वारा पराजित होने के कारण भागकर छिपने के लिए पाताल को चले गये। अतः इस समय पूरा शहर खाली है। जैसे ही विस्रवा ने कुबेर को यह आज्ञा दी वैसे ही कुबेर लंका जाकर राज करने लगे। १५ एक दिन राक्षस सुमाली भी अपनी पुत्री कैकसी को लेकर पृथ्वी-तल

पाताल्‌बाट सयल् गरूँ भनि यहाँ आएर डुल्दा तहाँ।
पुष्पक्‌माथि चढेर खुप्‌सित सयल् गर्थ्या कुबेर्‌जी जहाँ॥ १६॥

लाग्यो दृष्टि सुमालिको र मनले मान्यो बडा हुन् भनी।
यस्तो वीर् कुलमा कसो गरि हुनन् यस्तो चितायो पनि॥
लाग्यो कैकसिलाइ भन्न अहिले पुत्री! यती काल् गयो।
कोही वर् पनि आउँ दैन गरुँ क्या यौवन् त तिम्रो भयो॥ १७॥

तस्मात् आज त विश्रवा ऋषिजिथ्यैं जाऊ र साम्ने गई।
हात् जोरी ऋतुदान माग तिमिले दासी चरण्‌की भई॥
यस्तै पुत्र हुनन् अवश्य इ उनै- का पुत्र हुन् वीर् भनी।
छोरीलाइ त विश्रवा सित तहाँ तेस्ले पठायो पनि॥ १८॥

जल्दी कैकसि विश्रवा सित गई साम्ने खडा भैं रहिन्।
पृथ्वी तर्फ नजर् दिई चरणले लेख्ती जमीन्मा भइन्॥
चेष्टा कैकसिको नजर् गरि-तहाँ ती विश्रवाले पनि।
कन्या कस्कि तँ होस् बता किन यहाँ आइस् अगाडी भनी॥ १९॥

सोध्या कैकसिलाइ लाज् हुन गयो लाज्‌का सकस्मा परिन्।
ध्यानैले सब जानिबक्सनुहवस् यस्तो त बिन्ती गरिन्॥

में तमाशा देखने हेतु पर्यटन कर रहा था। सैर करने के लिए जब यहाँ आकर घूम रहा था, वहीं कुबेर जी भी पुष्पक विमान पर चढ़कर खूब सैर करते थे। १६ सुमाली की दृष्टि उनपर भी पड़ी और मन में सोचने लगा कि वह एक महान हस्ती है। ऐसे ही अपने कुल में किस प्रकार होगा सोचने लगा और कैकसी से कहा—"पुत्री! अभी काफी समय व्यतीत हो चुका है कोई वर ही नहीं आता है। क्या करूँ तुम्हारा यौवन ऐसे ही बीता जा रहा है। १७ अतः आज तुम विस्रवा ऋषि के पास जाकर करबद्ध होकर उनके चरणों की दासी के रूप में ऋतुदान की माँग करो; तब ऐसा ही पुत्र अवश्य प्राप्त होगा जिस प्रकार उनके वीर पुत्र हैं। इस प्रकार अपनी पुत्री को विस्रवा के पास भेजा। १८ कैकसी भी तुरन्त ही विस्रवा के पास गयी और सामने जाकर खड़ी रही। पृथ्वी की ओर नजरकर अपने पांव से जमीन पर लिखने लगी। कैकसी की चेष्टा को देखकर विस्रवा ने भी प्रश्न किया कि तुम कौन हो? किसकी कन्या हो? और यहाँ क्यों आयी हो? १९ कैकसी लज्जित हुई। लज्जा के वशीभूत कैकसी ने विनती की कि आप स्वयं अपनी दृष्टि से ज्ञात करने की कृपा करें कि मैं क्या हूँ। यह विनती सुनकर तत्काल

सून्या बिन्ति र झट् विचार् पनि गर्‍या मालुम् भयो सब् जसै ।
छोरा पाउन आइछस् भनि तहाँ बोल्या ऋषीले तसै ॥ २० ॥
बेला दारुण पारि आज ऋतुदान् मागिस् म दिन्छू पनि ।
दोटा पुत्र हुनन् भयंकर स्वरूप् बेला सरीका भनी ॥
यस्ता बात् गरि दान् दिया र ऋतुको ती बात् जसै ता सुनिन् ।
कुन् रीत्ले अब पाउँ पुत्र बढिया यस्तो बहूतै गुनिन् ॥ २१ ॥
बिन्ती कैकसिले गरिन् उहि बखत् स्वामित् पती भै पनि ।
तेस्ता पुत्र बुझाउँला म कसरी यो झन् कठिन् भो भनी ॥
सून्या बिन्ति तहाँ दया पनि उठ्यो ती विश्रवाको अनि ।
तेस्रो पुत्र हुन्याछ राम्चरणको दास् बुद्धिमान् खुप् भनी॥२२॥
पत्नी कैकसिलाइ येति ऋषिले दीया कृपा खुप् गरी ।
खूशी कैकसि भैगइन् ऋषि रह्या ध्यान्मा बहुत् मन् धरी ॥
जन्म्यो रावण पूर्ण गर्भ जब भो शिर् दश् भुजा बीस् धरी ।
उल्का आदि भया अनेक् तरहका कामिन् भुमीखुप् गरी॥२३॥
रावण्का पछि कुम्भकर्ण अति वीर् जन्म्यो उसैका मनि ।
जन्मी शूर्पणखा पछी गुण निधान् जन्म्या विभीषण् पनि ॥

विचार किया और सभी बातों का ज्ञान कर लिया। और कहा कि तुम यहाँ पुत्र-प्राप्ति के लिए आयी हो। २० कठिन अवसर देखकर आज तूने ऋतु-दान की माँग की है जिसे मैं देता हूँ। तेरे दो भयंकर स्वरूप वाले बलिष्ठ पुत्र होंगे। इस प्रकार गहरी बात करके ऋतु-दान किया। कैकसी ने जब ऐसी बातें सुनीं तो कहने लगी कि ऐसे गुणी और उत्तम पुत्र अब मैं किस प्रकार प्राप्त करूँगी। २१ उसी समय कैकसी ने ऐसा प्रश्न किया स्वामिन्! पति होने पर भी वैसे पुत्र मैं किस प्रकार प्रस्तुत करूँगी, यह मन साक्षी नहीं देता है। ऐसी विनती सुनकर विस्रवा के मन में भी दया उत्पन्न हुई और कहा कि रामचरण के दास एवं अत्यंत बुद्धिमान तेरा तीसरा पुत्र भी होगा। २२ ऋषि ने पत्नी कैकसी को यह सब कृपा प्रदान की। कैकसी प्रसन्न होकर चली गयी और ऋषि अत्यन्त ध्यान-मग्न होकर बैठे रहे। जब गर्भ पूर्ण हुआ, दस सिर और बीस भुजाएँ धारण कर रावण ने जन्म लिया। अनेक प्रकार का उलकापात हुआ और भूमि भी अत्यन्त कम्पित हुई। २३ रावण के पश्चात् अतिवीर कुम्भकर्ण का जन्म हुआ। उसके बाद शूर्पणखा ने जन्म लिया तत्पश्चात् गुणनिधान विभीषण भी उत्पन्न

शान्तामा बढिया विभीषण भया बस्थ्या ति शास्त्रै सुनी ।
दुष्टात्मा अति कुम्भकर्ण हुन गो डूलेर खान्थ्यो मुनि ।। २४ ।।

बैह्नी शूर्पणखा भई जगतमा दुष्टात्म भै डुल्दथी ।
नक्कट्टी भइ गै पछी, हजुरका तेज्ले कहाँ बाँच्तथी ।।
रावण्को त बखान् कहाँ तक गरौं सब् लोकको रोग् सरी ।
लाग्यो रावण वढ्न रोज् भय दिंदै तीन् लोक् वशैमा गरी ।।२५।।

सर्वान्तिर्यामि साक्षी हृदय हृदयमा आत्मरूप्ले रह्याका ।
निर्मल् सर्वज्ञ पूर्णै प्रभु पनि नरको रूप ऐले भयाका ।।
सोध्नभो आज लीला गरिकन त सबै रावणादीहरूको ।
विस्तार् बिन्ती म गर्छू अरु पनि भगवान् ! तेज्‌हर्‍यो जो अरूको।।२६।।

ब्रह्म स्वरूप् प्रभु भनेर हजूरलाई ।
जानेर डुल्छु म अनुग्रह केहि पाई ।।
यस्तो अगस्ति ऋषिले जब बिन्ति लाया ।
साँचा कुरा प्रभुजिले ऋषिथ्यैं बताया ।। २७ ।।

माया छ यो सब जगत् भनि नित्य जानी ।
आनन्द यस् विषयमा रतिभर् नमानी ।।

हुआ । विभीषण सर्वोत्तम एवं शान्तात्मा हुए और सदैव वे शास्त्रों का श्रवण करते रहते थे । २४ बहन शूर्पणखा जगत में दुष्टात्मा के रूप में घूमती फिरती थी । नाक कट जाने के पश्चात् प्रभु के तेज-प्रकाश में कहाँ जीवित रह सकती थी । रावण के बारे में कहाँ तक कहूँ । सर्वलोक के रोग के समान रावण के भय का विस्तार रोज होने लगा । इस प्रकार तीनों लोक उसके वशीभूत होने लगे । २५ सर्वअन्तर्यामी साक्षी जिसके, हृदय में आत्मरूप धारण कर रहते हैं ऐसे सर्वज्ञ निर्मल एवं पूर्ण प्रभु भी अभी नर का रूप धारण किये हुए हैं । ऐसी लीलाएं करते हुए आज प्रश्न करने की कृपा की अतः रावण आदि तथा अन्य लोगों की शक्ति का हरण करने के बारे में मैं सविस्तार विनती करता हूँ । २६ आपको नम्रस्वरूप प्रभु जानकर आपके अनुग्रह को प्राप्तकर मैं इधर-उधर घूमता हूँ । जब अगस्ति ऋषि ने इस प्रकार की विनती की तो प्रभु जी ने ऋषि को सत्य बात कह सुनायी । २७ सदैव इस जगत को मायारूपी जानकर तथा इस विषय में किंचित मात्र भी आनन्दित न होकर मेरे ही भजन करते रहने से सब पाप का हरण होता है तथा सरलता से

मेरो भजन् गरिरहोस् सब पाप हर्न्या।
येही उपाय छ सहज्‌सित पार तर्न्या ॥ २८ ॥

एक्‌दिन् पुष्पकमा चढाकन कुबेर् आया पिताथ्यैं जसै।
देखिन् कैकसिले र पुत्रसित गै क्यै भन्न लागिन् तसै ॥
देख्यौ पुत्र ! कुबेरलाइ तिमिले सब् द्रव्यका छन् धनी।
गर्छन् पुष्पकमा सयल् खुशि हुँदै तेजस्वि देख्तै पनि ॥ २९ ॥

जस्तो यत्न गरेर हुन्छ तिमिले सो यत्न ऐले गरी।
सब्‌को मालिक भै सयल् गर अनेक् यस्तै यिनैले सरि ॥
रावण्‌ले इ वचन् सुनी जननिकै साम्ने प्रतिज्ञा गर्‍यो।
हे मातर् ! म बडै भएर रहुँला क्या आज चिन्ता पर्‍यो॥३०॥

यस्तो बात् तहिं कैकसीसित गरी तप् गर्न रावण् गयो।
गोकर्णेश्वरमा गई दृढ़ भई तप् गर्न लाग्दो भयो ॥
रावण्‌का सँग कुम्भकर्ण विभीषण् भाई दुवै ती गया।
ईश्वर्‌लाइ गरौं प्रसन्न भनि खुप् तिन्ले पनी मन् दिया ॥३१॥

तप् गर्दा हुँदि कुम्भकर्ण विरको ताहाँ अयुत् वर्ष गो।
टेकी एक चरण् विभीषणजिको पाँचै हजार् मात्र भो ॥

संसार तरने का यही एक उपाय है। २८ एक दिन वह पुष्पक विमान में चढ़कर जैसे ही अपने पिता के पास आया कैकसी ने उसे देखा और पुत्र के निकट जाकर कुछ कहने लगी। देखा पुत्र ! कुवेर को तुमने सब द्रव्यों का मालिक बना दिया है, प्रसन्न होकर पुष्पक में पर्यटन करता है। देखने में भी तेजस्वी प्रतीत होता है। २९ जिस प्रकार से भी हो तुम ऐसा यत्न करो कि सबके मालिक होकर इसी की तरह अनेकानेक पर्यटन करो। रावण ने माँ के ऐसे वचनों को सुनकर प्रतिज्ञा की, हे माता, मैं बड़ा ही होकर रहूँगा; आप व्यर्थ ही चिंतित क्यों होती हैं। ३० कैकसी के साथ इस प्रकार की बात कहकर रावण तप करने चला गया। गोकर्णेश्वर में जाकर दृढ़ता पूर्वक तप करने लगा। रावण के संग कुम्भकर्ण तथा विभीषण दोनों भाई भी गये। ईश्वर को प्रसन्न करने के उद्देश्य से उन लोगों ने भी अत्यंत मन लगाकर ध्यान किया। ३१ तपस्या करते हुए वीर कुम्भकर्ण को वहाँ अनेक वर्ष वीते। विभीषण जी को एक ही चरणों पर टेककर तपस्या करते हुए केवल पाँच हजार वर्ष बीते। रावण के वारे में कहाँ तक वर्णन किया जाय ? उसने तो अत्यंत एकाग्र होकर प्रतिदिन प्रभु जी का ध्यान मन में धरकर तपस्या

रावण्को त बखान् कहाँतक गरौं ठूलो तपस्या गर्‍यो।
खुप् एकाग्र भएर रोज् प्रभुजिका ध्यान्मा बहुत् मन् धर्‍यो॥३२॥

दश् हज्जार् जब दिव्य वर्ष बितिगो एक् शिर् तसै होम् गरी।
यस्तै रीत्सित नौ त शिर् पनि हुम्यो भक्ती प्रभूमा धरी॥
नौ शिर् होम् गरि शिर् दशै पनि तहाँ दीनै तयार् भो जसै।
ब्रह्मा आइ हटाइ वर् दिन तयार् हुनूभयो पो तसै॥ ३३ ॥

हे रावण ! वर माग दिन्छु अहिले इच्छा बमोजिम् भनी।
ब्रह्माबाट दया भयो र खुशि भै माग्यो तहाँ वर् पनि॥
हे नाथ् ! वर् त अमर् म पाउँ नमरूँ क्वै वीरदेखी कसै।
मानिस्को त डरै म मान्दिनँ रती मेरा सदा छन् बसै॥ ३४ ॥

ब्रह्माले पनि लौ भनेर वरदान् मागे बमोजिम् दिया।
काट्याका पनि शिर् तयार् गरिदिया जस्तै अगाडी थिया।
ब्रह्माजी तहिं फेर् विभीषणजिका साम्ने नजीक्मा गया।
इच्छा क्या मनमा छ माग उहि वर् दिन्छू म भन्दा भया॥३५॥

मागे वर् खुशि भै विभीषणजिले हे नाथ् ! निरन्तर् मति।
धर्मैं तर्फ रहोस् अधर्मतिर ता कैल्यै नलागोस् रती॥

की। ३२ जब दस हजार दिव्य वर्ष व्यतीत हुए तब एक सिर अर्पण किया। इसी प्रकार प्रभु में भक्ति दर्शाकर शेष नौ सिरों को भी हवन कर दिया। नौ सिरों को हवन करने के पश्चात् जब दसवाँ सिर भी देने के लिए तैयार हुआ तब ब्रह्मा ने वहाँ आकर उसे हटाया और वरदान देने के लिए तैयार हुए। ३३ हे रावण ! तू वर माँग ले, मैं तेरी इच्छा के मुताबिक अभी प्रदान करता हूँ। ब्रह्मा की इस दया दृष्टि से प्रसन्न होकर उसने भी वर माँगा। हे नाथ ! मुझे आप ऐसा वरदान दें कि मैं अमर हो जाऊँ और किसी भी वीर के द्वारा न मरूँ। मनुष्यों का तो मुझे किंचित मात्र भी भय नहीं है क्योंकि वे सब मेरे ही बस में हैं। ३४ ब्रह्माजी ने भी तथास्तु कहकर उसकी माँग के अनुसार वरदान दिया। जो सिर कट चुका था उसे भी पुनः पहले के समान ठीक कर दिया अर्थात् बना दिया। ब्रह्मा जी फिर वहीं पर विभीषण जी के निकट गये और कहने लगे कि मन में जो इच्छा हो माँग लो मैं तुम्हें वही वरदान दूँगा। ३५ विभीषण जी ने भी प्रसन्न होकर वर माँगा—हे नाथ ! मेरा ध्यान निरन्तर धर्म की ओर रहे तथा मेरी बुद्धि कदाचित् भी अधर्म की ओर आकृष्ट न हो। ब्रह्मा जी ने भी

ब्रह्माले अधिकै दया गरि दिया होला तँलाई भनी।
मागेनन् तपनी तहाँ गरिदिया कल्पान्त आयू पनि ।। ३६ ।।

फेर् कुम्भकर्ण विरका अगि जल्दि आई।
आज्ञा भयो अब त दिन्छु म वर् तँलाई ।।
क्या माग्दछस् भनि दया हुन गो जसै ता।
जिह्वाविषे गयर वाणि बसिन् तसै ता ।। ३७ ।।

वाणीले जब मोह खुप् सित भयो घत्को बिघत्को पनि।
थाहा केहि भएन तेस्कन तहाँ यस्तो म मागूँ भनी ।।
माग्यो मूढ भएर येहि वरदान् निद्रा छ मैहूना परोस्।
एक् दिन् मात्र मलाइ खान पिनका खातीर निद्रा टरोस् ।। ३८ ।।

यस्तो वाक्य सुनेर तेहि वरदान् दीया प्रभूले जसै।
सून्या त्यो वरदान देवगणले खूशी भया सब् तसै ।।
जिह्वादेखि सरस्वती जब गइन् खेद् तेस् बखत्मा पर्‍यो।
इच्छा ईश्वरकै रहेछ बलवान् भन्या विचार् यो गर्‍यो।।३९।।

बाबू कैकसिको सुमालि खुशि भो पायो र यो सब् खबर्।
आयो जल्दि तहाँ प्रहस्तहरु धेर् सङ्गमा थिया वीर् जबर् ।।

अत्यधिक दया करते हुए उनका कल्याण किया और अन्य कोई वर न माँगने पर भी उसे वरदान दिया। ३६ पुनः वीर कुम्भकर्ण को, आगे शीघ्रतापूर्वक आकर आज्ञा देने की कृपा की कि अब तो मैं तुझे वरदान दूँगा। अतः क्या माँगते हो ऐसा कहने की कृपा हुई तो उसी समय जिह्वा के बीच में जाकर वाणी ने वास किया। ३७ वाणी ने जब मन-बेमन अनेक प्रकार से अपने मोह के वशीभूत किया, उसे कुछ भी ज्ञान नहीं रहा कि मैं अमुक वर माँगू। वरन् मूर्ख होकर ऐसा वरदान माँगा जिससे उसे छः महीने तक निद्रा आ जाये और केवल भोजन आदि के लिए मेरी एक दिन निद्रा टूटे। ३८ ऐसे वाक्यों को सुनकर प्रभु ने भी उसे वही वरदान दिया। देवगण भी उस वरदान के बारे में सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। जिह्वा से जब सरस्वती निकलकर चली गयीं उस समय उसे अत्यधिक खेद हुआ और सोचा कि ईश्वर की इच्छा ही बलवान है। ३९ कैकसी के दरबारियों को इसका आभास हुआ और यह सब समाचार लेकर अनेक जब्बर वीर साथ में लेकर भेदिये लोग वहाँ आये। रावण के सम्मुख जाकर प्रसन्नता-पूर्वक कहने लगे, हे पुत्र ! तुमने एक महान काम किया है। पहले तो विष्णु

रावण्का अघि गै भन्यो खुशि हुँदै हे पुत्र ! खुप् काम् गऱ्यौ ।
विष्णूको अघि डर् थियो अब गयो सन्ताप् तिमीले हऱ्यौ ॥ ४० ॥
लङ्कामा अघि राज्य राक्षसहरू गर्थ्या बडा खुश् थिया ।
वष्णूले गइ छिन्नभिन्न गरि सब् राक्षस् धपाईदिया ॥
क्यारौं जोर् नपुगेर भागिकन सब् पाताल् गयाका थियौं ।
तिम्रो आज सहाय पाइकन पो आई बताईदियौं ॥ ४१ ॥
आज्काल् राज्य कुबेरको छ तिमिले मागी बलात्कार् गरी ।
जुन् पाठ्ले गरि हुन्छ लेउ अहिले स्थान् छैन लका सरी ॥
राजाको त हुँदैन बन्धु सितको बन्धुत्व धर्मैं पनि ।
यो सन्देह नमान कत्ति कसरी लङ्का म लीऊँ भनी ॥ ४२ ॥
यस्तो बिन्ति सुमालिको सुनि भन्यो लंका कसोरी हरूँ ।
दाज्यू हुन् पितृ तुल्य छन् तहिं बसुन् अन्तै बसूँला बरु ॥
यस्तो रावणको वचन् सुनि तहाँ साम्ने प्रहस्तै सऱ्यो ।
रावण्को मन फेर् फिराउन बहुत् सिप् लाइ बिन्ती गऱ्यो ॥४३॥
हे नाथ् ! कश्यप पुत्रहुन् इ जति छन् द्यौता र राक्षस्हरू ।
लड्थ्या ती पनि ता भन्या त अरुको बिन्ती कहाँतक् गरूँ ।

का डर था परन्तु अब तुमने सम्पूर्ण संताप को हरण कर लिया है। ४० आदिकाल में लंका में राक्षस आदि राज्य करते थे और बड़े खुश रहते थे परन्तु विष्णु ने जाकर सबको छिन्न-भिन्न कर दिया और सब राक्षसों को भगा दिया। क्या किया जाय, शक्तिविहीन और लाचारी के कारण भागकर हम सब पाताल को चले गये थे, परन्तु आज तुम्हारा सहयोग पाकर यहाँ आकर ये सब बता दिया। ४१ आजकल कुबेर का राज्य है अतः तुम बल के प्रयोग से हो अथवा जिस उपाय से भी हो ले लो क्योंकि इस समय लंका के समान और कहीं स्थान नहीं है। राजा के बन्धुओं के साथ किसी प्रकार का बन्धुत्व नहीं होता है यद्यपि धर्म के अनुसार उसे निभाना ही पड़े। इसकी मन में किंचित मात्र भी शंका उत्पन्न न करो कि मैं लंका को किस प्रकार ले लूं। ४२ सुमाली की ऐसी विनती को सुनकर रावण कहने लगा कि लंका को कैसे हरण करूँ वहाँ भ्राता जी रहते हैं जो पितृ तुल्य है अतः वे वहीं रहें मैं कहीं अन्यत्र ही रह लूंगा। रावण के इस वचन को सुन प्रहस्त ने सामने अग्रसर होकर रावण के मन में परिवर्तन लाने के उद्देश्य से अत्यन्त चातुर्य्य पूर्वक विनती की। ४३ हे नाथ ! देवता एवं राक्षस आदि जितने भी हैं ये सब कश्यप-पुत्र हैं। वे भी तो परस्पर लड़ते थे तब अन्य लोगों

तस्मात् आज कुबेर छन् त पनि सो लङ्का लिन्या हो भनी।
हात् जोरी विनती गर्‍यो र सुनि त्यो बिन्ती त मान्यो पनि ॥४४॥
बेसै बिन्ति गरिस् भनी उहि बखत् दौडी त्रिकूटमा गयो।
छोड्यो दूत प्रहस्तलाइ र कुबेर्‌लाई निकाल्दो भयो॥
बाबूको मतलब् बुझीकन कुबेर् छोडेर कैलास् गया।
तप गर्दा शिव खुश् गराइ शिवथ्यैं बिन्ती ति गर्दा भया ॥४५॥

इच्छा माफिकको बनाउन कुशल् जो विश्वकर्मा थिया।
तिन्ले बेस् अलकापुरी पनि कुबेर्‌लाई बनाई दिया॥
दिक्पाल् भै ति कुबेर् रह्या शिवजिले तिन्मा दया खुप् गर्‍या।
शम्भूको करुणा हुँदा त अरु झन् आनन्द सागर् पर्‍या ॥ ४६ ॥

रावण् राक्षस सब् लिएर खुशि भै लङ्का सहर्‌मा बस्यो।
तप्‌को जोर् बलवान् जित्यो सब जगत् संताप् सबैमा पस्यो॥
विद्युज्जिह्व ठुलो निशाचर थियो तेस्‌लाइ बैनी दियो।
ती मन्दोदरिलाइ आइ मयले दीयो र तेस्‌ले लियो ॥ ४७ ॥

ती मन्दोदरिलाइ दीकन दियो शक्ती अमोघ् खुश् भई।
बीहा भो पछि कुम्भकर्ण विरको प्रह्लाद कुल्‌मा गई॥

के बारे में कहाँ तक विनती करूँ। यदि वहाँ कुबेर भी हों तथापि उस लंका को तो लेना ही होगा। इस प्रकार हाथ जोड़कर विनती की और उसे सुनकर रावण ने मान भी लिया। ४४ यह कहते हुए कि तुमने ठीक ही कहा है उसी क्षण दौड़कर त्रिकूट को चला गया। दूत प्रहस्त आदि को छोड़कर, कुबेर को वहाँ से निष्कासित किया। कुबेर, पिता के आशय को समझकर उस स्थान को छोड़कर कैलाश चला गया। शिव जी को तप द्वारा प्रसन्न कर वे उससे विनती करने लगे। ४५ कुशल विश्वकर्मा जो था उसने इच्छा के अनुरूप कुबेर के लिए अलकापुरी का सृजन कर दिया। कुबेर दिग्पाल होकर वहाँ रहा। शिव जी ने उन पर महान कृपा की। शम्भु की करुणा से वे और भी आनन्दसागर में डूब गये। ४६ रावण सब राक्षसों को लेकर प्रसन्नतापूर्वक लंका शहर में रहने लगा। तप के बल से बलवानों को जीता, सम्पूर्ण जगत में संताप छा गया। विद्युज्जिह्व एक भयंकर निशाचर था। उसने अपनी बहन मंदोदरी को उसे (रावण को) दिया और उन्होंने भी स्वीकारा। ४७ उसे मंदोदरी को देकर अत्यन्त प्रसन्न होकर एक अमोघ शक्ति भी प्रदान की। वीर कुम्भकर्ण के विवाह के पश्चात्

शैलुष् नाम हुन्या बहूत बलवान् गन्धर्वराज् क्वै थिया ।
तिन्की छोरि थिइन् विभीषण बड़ा जानेर छोरी दिया ॥ ४८ ॥
जन्म्यो रावणलाइ पुत्र बलवान् जो जन्मदैका घरि ।
लाग्यो रून र शब्द भो अति ठुलो खुप् गर्जन्या मेघ् सरि ।
मेघ् झैं शब्द गर्‍यो भनेर तहिं नाम् तेस्को रह्यो मेघनाद् ।
यस्को बल् यतिसम्मको छ भनि यो लागेन तेस्को त साँध् ॥ ४९ ॥
निद्राले पनि कुम्भकर्णकन खुप् पकड्यो सकस्मा पर्‍यो ।
हे नाथ् ! सुत्छु म ठाउँपाउँ भनि यो हात् जोरि बिन्ती गर्‍यो ।
तेस् बीचमा तहिं सुत्नलाइ बढिया गूफा तयारी गर्‍यो ।
ताहीं गैकन कुम्भकर्ण विरको खुप् मस्त निद्रा पर्‍यो ॥ ५० ॥
इन्द्रादी सब देव दैत्यहरुको जो श्री थियो सब् हरी ।
लाग्यो रावण नाश् गराउन अनेक् रङ्का उपद्रव् गरी ।
पाया थाह कुबेरले र किन यो गर्छस् उपद्रव् नगर् ।
भन्ना-खातिर दूत् पठाउनुभयो बोलाक् चतूरो जबर् ॥ ५१ ॥

प्रह्लाद-कूल में चले गये। वहाँ एक महा बलवान सैलूस नामक गंधर्व राजा थे। उनकी एक कन्या थी। विभीषण को बड़ा समझ कर उस कन्या को दे दिया। ४८ रावण को एक बहुत बलवान पुत्र प्राप्त हुआ जो जन्म होते ही रोने लगा। अत्यन्त भयंकर शब्द निकला और मेघ के समान गर्जन करने लगा। मेघ के समान शब्द करनेवाले इस बालक का नाम मेघनाद रखा। यह अनुमान लगाना कठिन था कि इसकी शक्ति की सीमा कहाँ तक है। ४९ कुम्भकर्ण को निद्रा ने वशीभूत किया जिससे वह अत्यन्त संकट में पड़ा। हे नाथ ! अब मैं सोता हूँ मुझे स्थान देने की कृपा करें। हाथ जोड़कर ऐसी विनती की। उसी क्षण सोने के लिए वहाँ एक सुन्दर गुफा का निर्माण कर दिया गया। वहाँ जाकर वीर कुम्भकर्ण अत्यन्त मस्त निद्रा में मग्न हो गया। ५० इन्द्र आदि देवों एवं दैत्यों की जो महानता थी सब हरण करके रावण उन सबको नष्ट करने के लिए अनेक प्रकार के उपद्रव करने लगा। कुबेर को जब यह मालूम हुआ तब अपने एक चतुर दूत बोलाक को भेजा ताकि वह उसे (रावण को) जाकर कहे कि ऐसा क्यों करते हो, उपद्रव आदि न करे। ५१ दूत ने जाकर जब उससे विनती की तब और भी रुष्ट होकर अत्यन्त क्रोधित हो उठा। शीघ्रतापूर्वक जाकर उसने कुबेर को पराजित कर पुष्पक विमान को भी हरण किया। कुबेर को

दूत् गै बिन्ति गर्‍यो त झन् विखुशिभै ऊठ्यो ठुलो रिस् गरी ।
जल्दी गै ति कुबेरको जिति लग्यो पुष्पक् विमानै हरी ॥
कूबेर्‌लाइ जिती यमै पनि जित्यो जीत्यो वरूणै पनि ।
पौंच्या स्वर्गविषे पनी खुशि हुँदै फेर् इन्द्र जित्छू भनी ॥ ५२ ॥

एक् ठक्कर् लडि इन्द्रिले त सहजै पक्डेर पाता कस्या ।
हुर्मत् रावणको गयो खुशि भई सम्पूर्ण देव्‌ता वस्या ॥
यो थाहा भइ मेघनाद रिसले आयो अगाड़ी सरी ।
जीत्यो इन्द्रजिलाइ तेस् बखतमा भारी लडाईं गरी ॥ ५३ ॥

रावण्‌लाइ फुकाइ इन्द्रकन ली फर्केर लंका गयो ।
जीत्यो इन्द्र र इन्द्रजित् भनि ठुलो नाम् ताहिंदेखी भयो ॥
ब्रह्मालाइ खबर् भयो र खुनका खातीर दौडी गया ।
धेरै वर् दिइ मेघनाद्‌कन खुशी गर्दै फुकाउँदा भया ॥ ५४ ॥

ब्रह्मा इन्द्रजिलाइ फोइकन फेर् जानू भयो धाममा ।
लाग्यो रावण फेर् जगत् जितुँभनी संग्रामका काममा ॥
कैलास् पर्वत यो ठुलो छ गह्रुँको होला कहाँ तक् भनी ।
कैलास् हातमहाँ लिएर सहजै एक्‌दिन् त तौल्यो पनि॥५५॥

जीतकर यमराज एवं वरुण को भी जीता। इस प्रकार प्रसन्न होते हुए स्वर्ग में भी पहुंच गया और इन्द्र को भी जीत लेने की ठानी। ५२ एक ही बार लड़कर इन्द्र ने सरलता से पकड़कर उसे बाँध लिया। रावण की मर्यादा नष्ट होते देख सम्पूर्ण देवगण प्रसन्न हुए। यह मालूम होने पर मेघनाद क्रोधित होकर सामने आया। उस समय घमासान युद्ध के पश्चात् इन्द्र जी को पराजित किया। ५३ रावण को पाशमुक्त करके इन्द्र को भी साथ लेकर लंका लौट गया। इन्द्र को जीतने के कारण उसी समय से वह इन्द्रजीत के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ब्रह्मा को जब यह मालूम हुआ तो अपने रक्त के लिए दौड़कर गये और मेघनाद को अनेक वरदान देकर प्रसन्न करते हुए अपनी ओर आर्कषित किया। ५४ ब्रह्मा इन्द्र जी को मुक्त कर पुनः स्वर्गधाम की ओर गये। रावण पुनः जगत विजय करने के लिए संग्राम की तैयारी में जुट गया। कैलाश पर्वत अत्यन्त विशाल है। यह जानने के लिए कि वह कितना भारी है, एक दिन कैलाश पर्वत को सरलता से अपने हाथ में लेकर तोल भी लिया। ५५ नंदीश्वर को क्रोध उत्पन्न हुआ और क्रोधित होकर शाप भी दिया कि मनुष्य एवं वानर तेरे

नन्दीश्वर्कन रिस् उठ्यो र रिसले दीया सरापै पनि ।
मानिस् वानर शत्रु भैकन सहज् मारून् तँलाई भनी ।।
ताहाँ देखि त कार्तवीर्य सित गो संग्राम खातिर् जसै ।
पुग्थ्यो तिन्सित जोर् कहाँ सहजमा पाता कस्या पो तसै ।। ५६ ।।
मेरो नाति भनी पुलस्त्य ऋषिले आएर बिन्ती गरी ।
बन्धन्देखि फुकाइ बक्सनु हुँदा लाज् भै फिन्यो तेस् घरि ।।
फेरी रावण बालि जित्छु भनि गो साथ्मा अनेक् वीर् गया ।
बालीले पनि पक्रि तेस्कन तहाँ खुप् काखि चेप्ता भया।।५७।।
काखीमा मिचि चार् समुद्र घुमि फेर् छोड़ी दियाथ्या जसै ।
मैत्री गर्छु भनी मित्यारि गरि खुप् लाज् मानि फर्क्यो तसै ।।
ई बाहेक् अरु वीर् सबै वश गर्‍यो तीन् लोक्विषे छन् जति ।
यस्ता वीर्हरु मारिबक्सनु भयो बिन्ती गरूँ यो कति ।। ५८ ।।
नारायण् हुनुहुन्छ विष्णु भगवान् सब् यो चराचर् पनि ।
जो देखिन्छ कहिन्छ शास्त्रहरुले नारायणै हो भनी ।।
ख्वामित्का अघि नाभिमा कमल भो ब्रह्माजि ताहीं भया ।
वाणीले सँग अग्नि ता हजुरका मुख् देखि निस्की गया।।५९।।

शत्रु होकर तुझे सहज ही मार डालें। उसके पश्चात् वहाँ से कार्तिवीर्य के साथ संग्राम हेतु प्रस्थान किया। बेचारे का कार्तिवीर्य से क्या जोर चल सकता था, उसे सहज ही बाँध दिया गया। ५६ जब पुलस्त्य ऋषि अपना पोता कहकर वहाँ आये और विनती करने के बाद उसे उस बन्धन से मुक्त कराया तब उस समय उसे अत्यन्त लज्जा हुई। रावण पुनः बालि पर विजय पाने के उद्देश्य से अनेक वीरों को अपने साथ लेकर गया। और बालि ने उसे वहाँ पकड़कर अपने बगल के नीचे कसकर दबा दिया। ५७ इस प्रकार अपने बगल के नीचे दबाते हुए वे चार समुद्र की परिक्रमा लगाकर वहाँ आये और पुनः उसे तब मुक्त किया तब उसने मित्रता का सम्बन्ध कायम करने की प्रार्थना की और बालि से तदनुसार मित्रता करने के पश्चात लज्जित होकर लौट गया। इसके अतिरिक्त अन्य सभी वीरों को भी अपने वश में किया जो कि तीनों लोक में रहते हैं। आपने ऐसे वीरों को मारने की कृपा की है इससे अधिक क्या विनती करूँ। ५८ भगवान् विष्णु नारायण और ये चराचर आदि जो भी दृष्टिगत होते है शास्त्रज्ञ लोग उन्हें भी नारायण कहते हैं। पहले श्रीमन् जी के नाभि से कमल उत्पन्न हुआ और उसी से ब्रह्मा जी प्रकट हुए।

बाहूदेखि लोकपाल् हुन गया ई चन्द्र सूर्यै पनि।
आँखादेखि भया दिशाहरु भन्या कान् देखि शब्दै भनी।।
सब्को प्राण तयार् भयो हजुरका प्राण्देखि मुक्तै भई।
नासादेखि त वैद्य अश्विनिकुमार् वेदाङ्गमा पार् गई।। ६०।।

जङ्घा जानु उरू जघन् यति शरीर् देखी भुवर्लोक् हरू।
कोखादेखि त चार् समुद्र हुन गो वर्णन् कहाँतक् गरूँ।।
निस्क्या स्तन् दुइदेखि इन्द्र र वरुण् दूवै दिशाका पति।
रेतैदेखि त बालखिल्यहरु सब् निस्क्या तपस्वी अति।।६१।।

धर्माधर्म विवेकका इ यमराज् ती लिङ्गदेखी भया।
मृत्यू ता गुददेखि रुद्र त हजूर्-का रीसदेखी भया।।
हाड् देखी जति पर्वतादिहरु छन् केश् देखि सब् मेघ् पनि।
जो छन् औषधि रोम देखि ति भया नख् देखि सब् स्वर् पनि।।६२।।

विश्वात्मा हुनुहुन्छ नाथ! पुरुष रूप् माया त शक्ती लिन्या।
खूशी भैकन देवताकन सदा अमृत पियाईदिन्या।।
ख्वामित्कै त छ सृष्टि सब् जति छ यो संसार् चराचर् धरी।
बाँच्याको पनि देखिइन्छ भगवान्! आधार् हजूर्कै गरी।।६३।।

वाणी के प्रभाव से आपके मुख से अग्नि निकलकर चला गया। ५९ बाहों से तो लोकपाल प्रकट हुए और आँखों से चन्द्र सूर्य तथा दिशाओं का ज्ञान हुआ तथा कान से शब्दों का उच्चारण हुआ। इन सब में प्राणों का संचार हुआ जिसमें श्रीमन् का प्राण मुख्य हुआ। नाक से वैद्य अश्विनी कुमार जो वेदाङ्ग में प्रवीण थे, हुए। ६० जाँघ से उरू जघन की और शरीर से भू-लोक हुआ। बगल से चार समुद्र का निर्माण हुआ, कहाँ तक वर्णन किया जाय? स्तन से दोनों दिशाओं के पति इन्द्र और वरुण उत्पन्न हुआ। वालू से बालखिल्य आदि निकले जो अत्यन्त तपस्वी थे। ६१ धर्म-अधर्म के विवेक का रक्षक यमराज लिंग द्वारा प्रकट हुआ। मृत्यु मल से उत्पन्न हुआ और रुद्र श्रीमन् के क्रोध से हुआ। हड्डियों से जितने पर्वत आदि हैं बने और केश से मेघ उत्पन्न हुआ। जो औषधि है वह शरीर के छिद्र से हुआ और नाखूनों से सब स्वर बने। ६२ हे नाथ! आप हैं पुरुष-रूपी विश्व-आत्मा हैं। माया तो केवल शक्ति मात्र है। उसके बल पर प्रसन्न होकर देवताओं को आप सदा अमृत-पान कराते रहते हैं। जो कुछ भी इस संसार में ये चराचर हैं, सब श्रीमन् की ही तो सृष्टि हैं। आप ही के आधार पर जीवितों

ज़स्तै दूधविषे रहन्छ भरिपुर् घीऊ उही रीत् गरी ।
सब चीजमा हजुरै पसी रहनुभो सर्वान्तरात्मा हरि ॥
हुन्छन् सूर्य्यहरू प्रकाश् हजुरकै तेज्ले हजुर् सब् धनी ।
खवामित् लाइतनाथ् ! प्रकाश् गरिदिन्या छैनन् अरूक्वैपनि ॥ ६४ ॥

ज्ञानी जन्हरु देख्तछन् सकल रूप् अज्ञानि अन्धा सरी ।
देख्तैनन् प्रभुलाइ मूढ हुनगै घुम्छन् विपत्मा परी ॥
योगी भैकन वेदशीर्षहरुले खोज्छन् त देख्छन् पनि ।
यस्ता रीत् सित यो चराचर विषे श्रीराम् रह्याछन् भनी ॥६५॥

बक्वाद् गर्‍याँ प्रभु ! हजूर्सित रिस् नमानी ।
रक्षा हवस् प्रभु ! अनुग्रहपात्र जानी ॥
चिन्मात्र अद्वितिय नित्य हजूरलाई ।
भज्छू निरन्तर टहल् गरी हर्ष पाई ॥ ६६ ॥

वाली सुग्रिव इन्द्र सूर्य्य-सुत हुन् भन्न्या सुन्याको त छुं ।
कस्ता रीत्सित जन्म भो इ दुइको विस्तार् समेत् खोज्दछु ॥
विस्तार् सुन्न म पाउँ सब् भनि हुकूम् राम्को भएथ्यो जसै ।
विस्तार् खूशि भई अगस्ति ऋषिले बिन्ती गर्‍या सब् तसै ॥६७॥

ब्रह्मा चार् सय कोशको गरि सभा सूमेरु माथी थिया ।
ईश्वर्लाइ रिझाउनाकन तहाँ खुप् योगमा मन् दिया ॥

को भी देखा जाता है। ६३ सब चीजों में श्रीमन् ही विराजित हैं, सर्वान्तरात्मा हरि हैं। सूर्य तथा प्रकाश श्रीमन् ही के तेज से उत्पन्न हैं अतः आप ही इन सबके स्वामी हैं। अतः श्रीमन् को प्रकाश प्रदान करनेवाला और कोई नहीं है। ६४ ज्ञानीजन सबको हरि-रूप में देखते है परन्तु अज्ञानी जन अंधे के समान प्रभु को नहीं देखते हैं। मूर्ख वनकर विपत्तियों में घिरे घूमते रहते हैं। योगी होकर वेद शीर्ष आदि लोग ढूँढते हैं देखते कुछ नहीं हैं। इस रीति से चराचर में श्रीराम वसते हैं। ६५ ऐसी वकवास मैंने क्रोध रहित होकर श्रीमन् के साथ की है, अनुग्रह का पात्र जानकर श्रीमन् मेरी रक्षा करें। चित्त में नित श्रीमन् को रखकर मैं निरन्तर भजता रहूँ तथा सेवा करके मुझे हर्ष प्राप्त हो। ६६ वालि-सुग्रीव के इन्द्र और सूर्य के पुत्र होने के बारे में मैंने सुना तो है। किस प्रकार इन लोगों का जन्म हुआ सविस्तार जानना चाहता हूँ। श्रीराम ने जब सविस्तार वर्णन सुनने की आज्ञा दी तब अगस्ति ऋषि ने प्रसन्न होकर सम्पूर्ण

योगमा चित्त बढ्यो र भक्तिरसले आँसू खसाया जसै ।
आँसूको तहिं वीर वानर बन्यो आश्चर्य मान्या तसै ।। ६८ ।।
ब्रह्माका मनमा दया पनि उठ्यो बोल्या वचन्ले पनि ।
मेरा नित्य नजीकमा रहु यहाँ कल्याण होला भनी ।।
ब्रह्माका इ वचन् सुनेर खुशि भै वाहीं नजीक्मा रह्यो ।
फल् फूल् खायर तेहि पर्वत विषे त्यो नित्य डुल्दो भयो ।।६९।।
लाग्यो पानि पियास कूप नजिकै देख्यो र पौंच्यो तहाँ ।
आफ्ना छाइँविषे नजर् परिगयो त्यो कूप हेर्दा महाँ ।।
आर्कै वीर् सरि मानि तेहि कुपमा कूदी पसेथ्यो जसै ।
आर्को कोहि नदेखि फेरि झटपट् उफ्रेर निस्क्यो तसै ।। ७० ।।
निस्क्यो बाहिर कूपदेखि त असल् स्त्रीको स्वरूप् पो बनी ।
लाग्यो खेद् मनमा कसो गरि भयाँ स्त्रीको स्वरूप्को भनी ।।
देख्या इन्द्रजिले र तेहि बिचमा तिन्मा बहुत् मन् भयो ।
पक्ऱ्या इन्द्रजिले र वीर्य त गिरी सब् बाल देश्मा गयो ।।७१।।
ताहाँ वीर्य त एक् कुमार् हुन गयो बाल्मा गिऱ्याको पनि
बालैदेखि भयो भनीकन रह्यो नाम् वालि वीर् भो भनी ।।

विस्तार वर्णन किया । ६७ ब्रह्मा चार सौ कोस दूर पर्वत में तपस्या कर रहे थे । ईश्वर को प्रसन्न करने के उद्देश्य से योग में अत्यन्त ध्यान दिया । योग में रुचि बढ़ी और भक्ति रस से जैसे ही अश्रु प्रवाह किया उन अश्रुओं से एक वीर वानर की सृष्टि हुई जिसे देखकर वे अत्यन्त आश्चर्य चकित हुए । ६८ ब्रह्मा के हृदय में दया भी उत्पन्न हुई और आपने कहा कि नित्य मेरे निकट रहो जहाँ तुम्हारा कल्याण होगा । ब्रह्मा के इन वचनों को सुनकर प्रसन्नता के साथ वहीं निकट रहने लगा । फल-फूल खाकर उसी पर्वत में वह घूमने लगा । ६९ जब उसे प्यास लगी निकट ही उसने कुँआ देखा और पहुँच गया । उस कुँए में जब झाँका तो उसे अपना प्रतिबिम्ब दिखाई दिया । उस प्रतिबिम्ब को दूसरा वीर सोचकर वह उस कुँए में जैसे ही कूद पड़ा वैसे ही किसी को वहाँ न देखकर शीघ्रता से बाहर निकल आया । ७० कुँए से बाहर निकल तो आया परन्तु सचमुच वह स्त्री का रूप धारण किए हुए था । मन में अत्यन्त खेद हुआ कि मैं किस प्रकार स्त्री के रूप में परिवर्तित हो गया हूँ । इन्द्र जी ने उसे देखा और उस पर उसी क्षण मन्त्र-मुग्ध हो गये । इन्द्र जी ने उसे पकड़ लिया और वीर्य पात होकर सब बाल देश (केशों में) में चला गया । ७१ उसी वीर्य से

माला काञ्चनि पुत्र जानि बढिया एक् इन्द्रजीले दिया ।
बाबूको करुणा बुझेर खुशि भै त्यो बालि वीर्‌ले लिया ।।७२।।
तेस् बीच्‌मा तहिं सूर्य आयर नजर् लाया उसै स्त्रीमहाँ ।
सूर्य्यैको पनि वीर्य्यपात् हुन गयो ग्रीवाविषे पो तहाँ ।।
तेही बीज् पनि बेस् कुमार् जब बन्यो ग्रीवाविषे एक् जसै ।
ग्रीवादेखि भयो भनेर तिनको सुग्रीव नाम् भो तसै ।।७३।।
सूर्य्यैले पनि पुत्रलाइ बलवान् साहाय दिन्छू भनी ।
वीर् मध्ये बलवान् थिया र हनुमान् ज्यूलाइ दीया पनि ।।
सुग्रीव्‌का सँगमा रह्या ति हनुमान् श्रीसूर्य्य धाम्‌मा गया ।
वाली सुग्रिव दूइ पुत्र सहजै ती वानरीका भया ।।७४।।
वाली सुग्रिव दूइ पुत्र सँगमा ली सुत्न खातिर् गइन् ।
प्रातःकालविषे त फेरि अघि झैं ती स्त्री पुरूषै भइन् ।।
स्त्री रूप् भैकन वालि सुग्रिव दुवै जन्म्या इ पूरुष् भया ।
ब्रह्मालाइ गरूँ प्रणाम् भनि दुवै छोरा सँगै ली गया ।।७५।।
ब्रह्मालाइ खबर् भयोर खुशि मन् तिन्को गराया पनि ।
किष्किन्धापुरि दीन मन्‌सुव भयो आश्रित् अनाथ् हो भनी ।।

एक कुमार उत्पन्न हुआ जो केशों में गिरा था। बाल से उत्पन्न होने के कारण ही उसका नाम वीर बालि पड़ा। माला कांचिनि का पुत्र जानकर इन्द्र जी ने उसे एक माला अर्पण की। पिता की करुणा समझकर वीर बालि ने उसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। ७२ उसी बीच सूर्य ने वहाँ आकर उस स्त्री पर दृष्टिपात किया। सूर्य का भी उसके ग्रीव (गरदन) पर वीर्यपात हुआ। उस वीर्य से भी जो ग्रीवा पर गिरा था एक उत्तम कुमार उत्पन्न हुआ। ग्रीवा से उत्पन्न होने के कारण उनका नाम भी सुग्रीव पड़ा। ७३ सूर्य ने भी यह कहकर कि इस पुत्र को एक बलवान सहायक दूंगा, हनुमान जी को जो वीरों में अत्यन्त बलवान था, दे दिया। वह हनुमान श्री सूर्यधाम में जाकर सुग्रीव के साथ रहने लगे। बालि और सुग्रीव दो पुत्र इस प्रकार उस वानरी को प्राप्त हुए। ७४ वह बालि और सुग्रीव दोनों पुत्रों को साथ में लेकर सोने के लिए चली गयी। परन्तु प्रातः होते ही वह स्त्री पूर्ववत् पुरुष हो गयी। स्त्री रूप पाकर बालि और सुग्रीव दोनों उत्पन्न हुए और इसके पश्चात् वह पुनः पुरुष हो गया। इस तरह दोनों पुत्रों को साथ लेकर ब्रह्मा को प्रणाम करने के लिए चला गया। ७५

थीए एक् तहिं देवदूत बलवान् हाजिर र मर्जी पनि।
ब्रह्माको हुन गो लगेर गरिदे यस्लाइ राजा भनी ।।७६।।
किष्किन्धा पुरिमा लगी तिलक दे खुप् राज सोख्मा परोस्।
सात् द्वीप्मा जति वानरादिहरू छन् तिन्मा हुकूम् यो गरोस्।।
ईश् नारायण भार हर्न भुमिको राम्चन्द्र हूनन् जसै।
तीनैलाइ सहाय दीनकन ता तत्पर् हवस् यो तसै ।।७७।।
किष्किन्धापुरिमा लगी तिलक दे भन्न्या हुकूम् भो भनी।
तेस् ऋक्षाधिपलाइ लगीकन त झट् राजा बनाया पनि।।
त्यो ऋक्षाधिपका ति पुत्र दुइ हुन् वाली र सुग्रीव् भनी।
सब् विस्तार गरीसक्याँ हजुरमा मालुम् थियो तापनि ।।७८।।
किष्किन्धा तहिंदेखि वानरकि भै सुग्रीव्हरू छन् तहाँ।
सर्वेश्वर् हुनुहुन्छ ता हजुरमा क्या धेर् बताऊँ यहाँ।।
नित्यानन्द चिदात्म नाथ् ! हजुरले लीला स्वरूप् यो धरी।
ब्रह्माजीकन खुश् गराउनुभयो सम्पूर्ण भूभार् हरी ।।७९।।

बाली र सुग्रिव दुवैकन धर्म जानी।
कीर्तन् गरोस् त गुण जन्म सबै बखानी।

ब्रह्मा को यह समाचार सुनकर मन में खुशी हुई। आश्रित एवं अनाथ जानकर किष्किन्धापुरी देने की इच्छा की। एक बलवान देवदूत जो निकट ही बैठा हुआ था उसे ब्रह्मा ने आज्ञा दी कि इसे ले जाकर राजा बना दो। ७६ किष्किन्धापुरी में ले जाकर तिलक कर दो ताकि यह राज्य कार्य में व्यस्त हो जाये। सात द्वीपों में जितने भी वानर आदि हैं उन पर यही शासन करे। श्री नारायण भू-भार हरण करने हेतु जब रामचन्द्र जी होकर आयेंगे उन्हीं को उस समय सहायता देने के लिए तत्पर रहें। ७७ किष्किन्धापुरी में ले जाकर तिलक कर देने की आज्ञा होने पर उस रिक्षाधिप को ले जाकर तुरन्त राजा बना दिया। उसी रिक्षाधिप के वे दो पुत्र बालि और सुग्रीव हैं। इस प्रकार जो कुछ मुझे मालूम था श्रीमन् की सेवा में सविस्तार वर्णन कर चुका हूँ। ७८ उसी समय से किष्किन्धा वानर का हो गया और वहीं सुग्रीव आदि हैं। प्रभु सर्वेश्वर हैं अतः इस विषय पर मैं अधिक क्या बताऊँ। नित्यानन्द तथा आत्मानाथ प्रभु ने अपना लीला-स्वरूप धारण किया। ब्रह्मा जी को भी खुश करने की कृपा की तथा सम्पूर्ण भू-भार का हरण किया। ७९ वालि और सुग्रीव दोनों धर्म को जानकर जन्म-गुण

सम्बन्ध केहि रघुनाथ् सित पर्न जाई।
पाप् छुट्छ धर्म पनि बढ्दछ तेसलाई ॥८०॥

वर्णन् या यति कर्मले हजुरको हूँदैनथ्यो तापनि।
वर्णन् गर्छ जगत् यहाँ कि रघुनाथ् सब् ताप् हरौंला भनी॥
आर्को आज कथा कहन्छु रघुनाथ्! सीताजिलाई पनि।
रावण्ले हरि लीगयो त यहि हो तेस्को इरादा भनी ॥८१॥

रावण्को र सनत्कुमार ऋषिको एक् दिन् भयो भेट कहीं।
सोध्यो रावणले परी चरणमा क्यै बात् ऋषीथ्यैं तहीं॥
ब्रह्मन्! को बलवान् छ देवहरुमा आधार कस्को गरी।
जित्छन् सब् रिपुलाइ देवगणले साम्ने अगाड़ी सरी ॥८२॥

कस्को पूजन गर्दछन् द्विजहरू जो योगि हुन् ती पनि।
कस्को ध्यान्कन गर्दछन् सहजमा संसार् तरौंला भनी॥
यस्को निश्चय कत्ति पाइनँ अनेक् कस्तै विचार्दा पनि।
ठूलो कुन् छ बताइबक्सनु हवस् येही छ ठूलो भनी ॥८३॥

सून्या प्रश्न सनत्कुमार ऋषिले यस्ता ड्बल्को जसै।
जान्या रावणको र आशय उसै माफिक् बताया तसै॥

सबकी व्याख्या करते हुए कीर्तन करें जिससे श्री रघुनाथ के संग कुछ संबंध स्थापित हो जाता और वह पाप से मुक्त हो जाता। ८० उसमें धर्म-वृद्धि होती। प्रभु का वर्णन इतने ही कर्म से नहीं होता था तथापि यहाँ जगत वर्णन करता है कि रघुनाथ पाप और ताप का हरण करेंगे। आज मै एक अन्य कथा कहता हूँ रघुनाथ! रावण सीता जी को हरण कर ले गया और यही उसका इरादा भी था। ८१ रावण और सनत्कुमार ऋषि की एक दिन कहीं भेंट हो गयी। रावण ने चरणों में पड़कर ऋषि से कुछ बात पूछी। ब्राह्मण! देवों में से बलवान कौन है? और किसके आधार से देवगण सामने अग्रसर होकर समस्त शत्रुओं को जीतेंगे? ८२ योगी होने के लिए द्विज लोग किसका पूजन करते हैं, सहज संसार तरने की इच्छा से किसका ध्यान करते हैं। अनेक प्रकार से विचार करने पर भी मैं यह निश्चय नहीं कर सका कि कौन बड़ा है, अतः यह बताने की कृपा करें कि यही श्रेष्ठ है। ८३ जब सनत्कुमार ऋषि ने इस प्रकार के महत्व-पूर्ण प्रश्न को सुना तब रावण के आशय को जानकर उसी प्रकार बताया—सुनो रावण! एक हरि के समान महान अन्य कोई नहीं

सून्यौ रावण ! एक् हरी सरि ठुलो मिल्दैन आर्को कवै ।
द्यौताका तब दानवादिहरुका आधार् इनै हुन् सबै ॥८४॥
जस्ले नाभिकमल् विषे त भगवान् ब्रह्माजि पैदा गरी ।
ती-द्वारा जगतै बनाउनु भयो ठूला तिनै हुन् हरि ॥
इन्द्रादीहरु जित्तछन् रिपु सबै आधार् यिनै हुन् हरि ।
ध्यान्ले योगिहरू तिनैकन भजी जान्छन् सहज् पार् तरी ॥८५॥
रावण्ले इ वचन् सुन्यो र ऋषिका विन्ती गऱ्यो फेर् तहाँ ।
विष्णूले जति मार्दछन् रणमहाँ ती वस्न जान्छन् कहाँ ॥
दोस्रो प्रश्न सुन्या तहाँ ति ऋषिले यस्ता प्रकार्को जसै ।
उत्तर् फेरि दिया कृपा गरि तहाँ तेस्लाइ तिन्ले तसै ॥८६॥
द्यौताले जति मार्दछन् ति त अनेक् स्वर्गादिको भोग् गरी ।
कालान्तर् पछि जन्म हुन्छ तिनको पृथ्वी तलैमा झरी ॥
जस्लाई हरि मार्दछन् उ त तसै जान्छन् तुरुन्तै अनि ।
मुक्तै भैकन बस्छ जन्म तसको हूँ दैन कैले पनि ॥८७॥
यस्ता सत्य वचन् सुनी मन बुझ्यो रावण् भयो खुश् अनि ।
संग्राम् श्रीहरिथ्यैं गरी तहिं मरी मुक्तै म हुन्छू भनी ॥

है; देवों तथा दानव आदि के आधार सब वही हैं। ८४ जिसकी कृपा से भगवान के नाभि से उत्पन्न कमल ने ब्रह्मा जी को पैदा किया उन्हीं के द्वारा जगत के सृजन का हेतु वही महान हरि है। इन्द्रादि भी अपने शत्रुओं पर उन्हीं हरि के ही आधार पर विजय प्राप्त करते हैं और योगी लोग उन्हीं का ध्यान एवं भजन करके सहज ही पार तर जाते हैं। ८५ रावण ने इन वचनों को सुना और पुनः ऋषि से विनती की। विष्णु द्वारा रण में जितने भी मारे जाते हैं वे रहने के लिए कहाँ जाते हैं। इस प्रकार का दूसरा प्रश्न सुनकर ऋषि ने उन्हें पुनः कृपापूर्वक उत्तर दिया। ८६ देवताओं द्वारा जितने भी मारे जाते हैं वे अनेक स्वर्गादि को भोग करते हुए कालान्तर में पृथ्वी तल पर जन्म लेते हैं। हरि जिसे मारते हैं वह तो तुरन्त मुक्त हो जाता है और उसका कभी भी जन्म नहीं होता। ८७ ऐसे सत्य वचनों को सुनकर रावण के मन में सन्तोष हुआ और साथ ही प्रसन्नता भी। यह सोचकर कि श्रीहरि के साथ संग्राम कर उनके द्वारा मारे जाने पर मुक्त हो जाऊंगा, ऐसा निश्चय मन में कर दृढ़ संकल्प लिया जो ऋषि ने भी जान लिया और प्रसन्न होकर सनत्कुमार ऋषि ने उसे

यस्तो सुर् मनमा जसै दृढ गऱ्यो जान्या ऋषीले पनि ।
खूशी भै ति सनत्कुमार ऋषिले आशीष दीया पनि ।।८८।।
हे रावण् ! सुन वत्स ! जो छ मनमा स्वाभीष्ट सिद्धी सबै ।।
तिम्रो लौ परिपूर्ण हुन्छ मनमा शंका नामान्या कबै ।।
रूप् जस्तो हरिको छ भन्छु अहिले यस्ता हरी छन् भनी ।
स्थावर् जङ्गम सूर्य चन्द्र पृथिवी शेष् दैत्य दानव् पनि ।।८९।।
ई रूप् हुन् हरिका अनेक् तरहका यो रूप् विराट् रूप हो ।
पीताम्बर् घनश्याम् त सूक्ष्म रुप हो देख्छू कृपैले छ यो ।।
यो रूप् देखन मन्सुबा छ त हुनन् इक्ष्वाकु कुल्मा हरि ।
छोरा हुन् दशरथ्जिका भनि जगत् भन्नन् तिराम्नाम्गरी।।९०।।
सीता लक्ष्मण साथमा लिइ पिता जीका हुकूम्ले गरी ।
जानन् दण्डक वन्महाँ भजिलिया चीन्ह्या तिनै हुन् हरि ।।
यो विस्तार सनत्कुमार ऋषिका मुख्देखि जस्सै सुन्यो ।
चीन्ह्यो स्वामितलाइ तेस् बखतमा तेस्ले र यस्तो गुन्यो ।।९१।।
श्रीराम्चन्द्रसितै विरोध् गरि तिनै का हातदेखी मरी ।
संसार् सागर पार् तरेर सहजै जान्छू जहाँ छन् हरि ।।
यस्तो आशयले सिताकन हऱ्यो रावण् त हो बुद्धिमान् ।
लक्ष्मी हुन् इ सिता भनीकन चिन्ह्यो मान्थ्यो कहाँ हो अजान्।।९२।।

आशीष भी दिया । ८८ हे रावण ! सुनो वत्स, तुम्हारे मन में जो भी आकांक्षा है वह सब परिपूर्ण होगी, कभी मन में शंका न करो । हरि का रूप कैसा है ? मैं अभी तुम्हें बताता हूँ कि हरि ऐसे हैं—ग्रह, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, देव, दानव आदि भी । ८९ ये रूप जो हरि का है अनेक प्रकार के ये रूप विराट रूप हैं । पिताम्बर, घनश्याम आदि सूक्ष्म रूप, ये सब उन्हीं की कृपा से दिखायी देते हैं । यह रूप देखने की इच्छा यदि हो तो इक्षवाकु कुल में हरि का जन्म होगा । राम-नाम धारी को दशरथ जी का पुत्र जानकर जगत कहेगा । ९० सीता-लक्ष्मण को साथ में लेकर पिता जी की आज्ञा के फलस्वरूप राम दण्डकवन में जायेंगे । उनको ही हरि जानकर पहचानो । ऐसा विस्तार सनत्कुमार ऋषि के मुँह से सुनते ही उस समय उसने स्वामी को पहचाना और ऐसा मन में सोचा । ९१ श्रीरामचन्द्र जी का विरोध करके उन्हीं के हाथों मरकर संसार-सागर से पार तर कर सहज ही हरि जहाँ है वहीं जाऊँगा । इसी कारण सीता का हरण किया । रावण तो बुद्धिमान व्यक्ति है, सीता

जो यो कथाकन खुशी भइ पाठ गर्छन् ।
सुन्छन् कहीं कहिं सुनायर पाप हर्छन् ॥
खुप् आयु वढ्छ तिनको अति सौख्य हुन्छन् ।
धन् लाभ हुन्छ बहुतै जब नित्य सुन्छन् ॥९३॥

एक् दिन् नारदजी डुली सकल लोक् आया नजीक्मा जसै ।
देख्यो रावणले र पाउ परि एक् बिन्ती गर्‍यो यो तसै ॥
हे सर्वज्ञ मुने ! लडाकि बलिया वीर् छन् कहाँ सो कही ।
पाऊलाग्नु हवस् गर्‍यो विनति यो खुप् लड्न इच्छा भई ॥९४॥

रावण्का इ वचन् सुनेर मुनिले मन्ले विचार् खुप् गरी ।
भन्छन् को भनुँ छैन वीर अरु ता याहाँ तिमीले सरी ॥
तिम्रो मन्सुब पूर्ण गर्न सकन्या वीर् श्वेतद्वीप्मा गया ।
मिल्छन् जाउ तहीं नजाउ कहिं लौ खुप् लड्न मगसूब् भया॥९५॥

जो विष्णुको पूजन नित्य गर्छन् ।
जो विष्णुका बाहुलिदेखि मर्छन् ॥
तेस्ता महात्मा तहिं बस्न जान्छन् ।
त्रैलोक्यका वीर् तति तुच्छ मान्छन् ॥९६॥

को लक्ष्मी जानकर पहचान लिया । वह अन्जान कहाँ हो सकता था । ९२ जो इस कथा को प्रसन्नतापूर्वक पाठ करता है तथा कहीं सुनता है और कहीं इसे सुनाता है उसके पापों को हरते है, उसकी आयु में वृद्धि होती है तथा अत्यन्त सुख पाता है । धन का भी नित्य उसे लाभ होता है । ९३ एक दिन नारद जी सकल लोकों का भ्रमण कर जैसे ही उनके निकट आये रावण उन्हें देखते ही तुरन्त उनके पाँवों पर गिर पड़ा और विनती करने लगा । हे सर्वग्य मुने ! लड़ाकू वलिष्ठ वीर कहाँ हैं, बताने की कृपा करें, मेरा प्रणाम स्वीकार करें; मुझे लड़ने की अत्यन्त इच्छा हो रही है। ९४ रावण के इस वचन को सुनकर मुनि ने मन में गम्भीरता से विचार कर कहा कि किसको वताऊँ, तुम्हारे समान तो यहाँ और कोई वीर नहीं है। तुम्हारी मंशा पूर्ण कर सकनेवाला वीर श्वेतद्वीप में चला गया है। अतः वहीं जाओ, मिल जायेगा। और कहीं न जाओ, यदि सचमुच ही तुम्हें लड़ने की इच्छा हो । ९५ जो विष्णु का पूजन नित्य करते हैं जो विष्णु की वाहों द्वारा मरते हैं, वे महात्मा वहीं रहने के लिए जाते हैं। त्रिलोक के वीरों को तो वे वहुत ही तुच्छ मानते हैं। ९६ नारद के इस वचन को सुनकर शीघ्रता

नारद्का इ वचन् सुनीकन त झट् पुष्पक् विमान्मा चढी ।
श्वेतद्वीप् पनि पुग्दछू भनि चल्यो रावण् त तेसै घडी ।।
श्वेतद्वीप नजीक् पुगेपछि विमान् पुष्पक् नचल्न्या भयो ।
ओर्ल्यो पुष्पकदेखि हिक्मत थियो पैदल् दगुर्दै गयो ।।९७।।

श्वेतद्वीप पुगी प्रवेश् गरुँ भनी मन्सुब् गरेथ्यो जसै ।
धाया सुन्दर नारि घेरि चहुँओर् आश्चर्य मान्यो तसै ।।
अर्कीले पनि देखि पक्रिकन सब वृत्तान्त सोद्धी भई ।
अर्कीले अझ अर्किले धरिलिंदा चेत्यो वहाँ पो गई ।।९८।।

उम्क्यो स्त्रीहरुदेखि बल्ल र यहाँ आश्चर्य मान्यो पनि ।
मर्छू मै पनि विष्णुदेखि र यहाँ आएर बस्छू भनी ।।
जल्दी मर्न निमित्त खुप् छल गरी सीताजिलाई हर्‍यो ।
लंकामा लगि मातृवत् जननिको सेवा पनी खुप् गर्‍यो ।।९९।।

राम् नाम्ले परमेश्वरै हुनुभयो मालुम् छ सब्का पनि ।
क्या बिन्ती गरुँ धेर् हजुर् त सबका साक्षी जगत्का पनि ।।
मेरो येहि चरित्र गायर रहोस् यो लोक संसार् भनी ।
गर्नूहुन्छ यहाँ अनेक् तरहका संसारि लीला पनि ।।१००।।

से पुष्पक विमान में सवार होकर श्वेतद्वीप ही पहुँचूँगा, ऐसा सोचकर रावण उसी क्षण चल पड़ा। श्वेतद्वीप के निकट पहुँचने के पश्चात् पुष्पक विमान चलना बन्द हो गया। अतः पुष्पक से उतरा—साहसी था अतः पैदल ही दौड़ता हुआ गया। ९७ श्वेतद्वीप पहुँचकर उसमें प्रवेश करने की इच्छा करते ही सुन्दर नारियों ने आकर उसे चारो ओर से घेर लिया, यह देख उसे आश्चर्य हुआ। दूसरी भी उसे पकड़ कर सब वृत्तान्त पूछने लगीं। इस प्रकार सभी के एक के बाद एक द्वारा पकड़ लेने पर उसे वहाँ जाने पर पश्चाताप हुआ। ९८ बड़ी कठिनता से उन स्त्रियों से छुटकारा मिला और उसे बहुत ही आश्चर्य भी हुआ। मैं भी विष्णु द्वारा ही मरूँगा अतः यहीं आकर रहता हूँ ऐसा सोचकर तुरन्त ही मरने के लिए अत्यन्त छल द्वारा सीता जी का हरण किया। लंका में ले जाकर मातृ व जननी की सेवा भी लगन से की। ९९ राम-नाम के द्वारा परमेश्वर का जन्म हुआ, यह सबको ज्ञात ही है अधिक क्या विनती करूँ; श्रीमन् सबके साक्षी और जगतपति हैं। वेही मेरे चरित्र का गान करते हुए यह लोक-संसार में रहें। वे यहाँ अनेक प्रकार की सांसारिक लीला भी करते हैं। १०० इसी रीति से

येही रीत् सित रामको स्तुति गरी खुश् भै अगस्ती गया।
संसारी सरि भै अनेक् विषय-भोग् श्रीराम गर्दा भया।।
फर्क्यो पुष्प विमान् कुबेर् सित गई रामूकै हजूर्मा गयो।
फर्क्यो नाथ्! म कुबेरका हुकुमले यो बिन्ति गर्दो भयो।।१०१।।
पैल्हे रावणले जितीकन लियो सेवा उसैको गरिस्।
ऐल्हे श्रीरघुनाथले जितिलिदा उन्का अधीन्मा परिस्।।
खुप् यो योग्यभय अझैं पनि तँजा सेवा प्रभूकै गरी।
आउनू तईंले यहाँ जब त राम् वैकुण्ठ जान्छन् हरि।।१०२।।
हूकूम् येति कुबेरले पनि गर्‍या स्वामित् पुग्याथ्याँ जसै।
मंजूर सोहि हुकूम् गरीकन फिर्‍याँ खुश् भै हजूर्मा तसै।।
पुष्पक्‌को विनती सुनेर रघुनाथ् जीको हुकूम् भो पनि।
ऐले जा तँ म सम्झुँला त उ बखत् चाँडो तँ आएस् भनी।।१०३।।
पुष्पक्‌लाइ बिदा दिया र रघुनाथ् ले राज्य को भोग् गर्‍या।
जस्‌का राज्यमहाँ बुढ़ा पछि रही बालक् न कैल्यै मर्‍या।।
यस्तो राज् प्रभुले गर्‍या सकलको आनन्दमै काल् गयो।
श्रीराम्‌का तहिं राज्यमा पनि ठुलो आश्चर्य एक् दिन् भयो।।१०४।।

अगस्ति प्रसन्न होकर राम की स्तुति करते हुए चले गये। श्रीराम सांसारिक मनुष्यों के समान अनेक प्रकार के विषय-भोग आदि करने लगे। कुवेर के पास जो पुष्पकविमान था लौटकर पुनः राम ही के पास चला गया और कहने लगा कि, हे नाथ! मैं कुवेर की आज्ञा से आपके पास लौट आया हूँ। १०१ पहले रावण के जीतने के कारण उसे दिया गया और उसी की सेवा की। अभी श्री रघुनाथ जीत लेने पर उनके अधीन हो गया। अब अति योग्य होकर अभी तू जाकर प्रभु की सेवा कर। तू यहाँ तब आना जब राम रूपी हरि वैकुण्ठ को चले जायें। १०२ मैं जैसे ही पहुँचा कुबेर की इतनी आज्ञा हुई। स्वामी! मैं उसकी आज्ञा को शिरोधार्य कर प्रसन्नता से श्रीमन् के पास लौट आया। पुष्पक की ऐसी विनती सुनकर श्री रघुनाथ की भी आज्ञा हुई—अभी तो तू चला जा, मैं जिस समय तुझे स्मरण करूँगा तू उसी समय तुरन्त आना। १०३ इस प्रकार पुष्पक को विदाकर रघुनाथ राज भोगने लगे। जिसके राज्य में वृद्धाओं को पीछे रखकर बालकों की कभी मृत्यु नहीं हुई। प्रभु द्वारा ऐसे राज्य का सञ्चालन किया गया जिसमें सकल जनों का समय आनन्दमय व्यतीत हुआ। श्रीराम के भी उसी राज्य में एक दिन

ब्राह्मण्को लड़िका मरेछ र पिता रूँदा रह्याछन् कहीं।
देख्या श्री रघुनाथले तब विचार् राख्या प्रभूले तहीं ॥
क्यालेयो विधिभो भनीकन विचार् गर्दा भयो याद् जसै।
तप् गर्थ्यो तहिं शूद्र जङ्गलविषे उस्लाइ मार्‍या तसै ॥१०५॥

तप् गर्दा जब शूद्र मारिदिनु भो ऊठ्यो लडीका अनि।
ब्राह्मण् खूशि भया, गयो परमधाम् त्यो शूद्र चाहीं पनि ॥
यस्तै रीत् सित पालना गरि लिंदा दुःखी भएनन् कहीं।
कोटी लिङ्ग पनि स्थलै स्थलविषे थाप्या प्रभूले तहीं ॥१०६॥

संसार्को सुख भोग् गराउनु भयो सीताजिलाई पनि।
येही गायर लोक् तरुन् भनि गर्‍या स्थापन् कथाको पनि ॥
सीता मात्र थिइन् प्रिया प्रभुजिकी राजर्षिको चाल् धरी।
शिक्षा खातिर गादिमा बसि अनेक् राज्का अनेक् काम् गरी ॥७॥

दश्हज्जार् जब वर्ष राज्गरि बित्या काल् ता यसै बीच् यहाँ।
सीताले रघुनाथका चरणमा बिन्ती गरिन् एक् तहाँ ॥
स्वामित्! नित्य हजूरका चरणमा दासी म हूँ तापनि।
पर्छन् आयर पाउमा म सित खुप् ब्रह्मादि द्यौता पनि ॥१०८॥

अत्यन्त आश्चर्यजनक घटना घटी। १०४ एक ब्राह्मण के लड़के की मृत्यु हुई थी और श्री रघुनाथ ने उसके पिता को रोते विलाप करते देख अपने मन में विचार किया और सोचने लगे कि यह सब कुछ क्यों और कैसे हुआ। तब उन्हें याद आया कि एक जंगल में एक शूद्र तप करता था और श्रीराम ने उसे मारा था। १०५ तप करते हुए उस शूद्र के श्रीराम द्वारा मारे जाने के कारण, अब वह मृत लड़का जी उठा, यह देख वह ब्राह्मण अत्यन्त प्रसन्न हुआ और इस प्रकार वह शूद्र बन्धु परमधाम को चला गया। ऐसे ही रीति से लोगों का पालन करने के कारण कहीं कोई भी दुखी नहीं हुआ। प्रभु ने स्थान-स्थान में कोटि लिंगों की स्थापना भी की। १०६ सीता जी को भी संसार के सुख भोग कराने की कृपा की। इसी कथा की स्थापना करके और इसीका गान करते हुए लोक को संसार तर जाने की बात कही गयी है। माता सीता प्रभु जी की प्रिया हुई। राजश्री का वेश धारण कर शिक्षा हेतु गद्दी पर बैठ अनेक प्रकार के कार्य किये। १०७ जब राज्य करते हुए दस हजार वर्ष व्यतीत हुए— इसी बीच में सीता ने श्री रघुनाथ के चरणों में एक विनती की, हे स्वामी! प्रभु की नित चरण की दासी होते हुए भी ब्रह्मा आदि

गर्छन् बिन्ति हजूर् अघी गइदिया आफैं प्रभू राम् पनि ।
पाऊ लाग्नु हुन्या छ युक्ति यहि हो वैकुण्ठ जान्या भनी ॥
भन्छन् बिन्ति गऱ्याँ हजूर् सित सबै ब्रह्मादिको मत् पनि ।
जस्तो गर्न उचीत हो उहि हवस् स्वामित्! जनायाँ भनी ॥९॥

सीताले बिनती गरिन् र रघुनाथ् ज्यूको हुकुम् भो तहाँ ।
बेस् भन्छन् सब गर्नु पर्दछ यसो बैकुण्ठ जाँदा महाँ ॥
लोक्को एक् अपवाद् लगायर तिमी लाई बडो वन्महाँ ।
लान्छू त्याग् पनि गर्छुजानु तिमिले वाल्मीकि आश्रम् जहाँ ॥११०॥

ऐले गर्भ छ जन्मनन् दुइ कुमार वीर् वीर् तिमीले पनि ।
लोक्को यो अपवाद मेटछु अब ता पस्छू म नीया भनी ॥
याहीं आयर लोकका बिचमहाँ न्यायै पसौली जसै ।
फाट्निन् धर्ति र ताहिंबाट तिमिले वैकुण्ठ जानू तसै ॥१११॥

यस्रीत्लेतिमि जाउली जब अघी क्यै काल् बसी मै पनि ।
आऊँला किन बस्तछू कहिसक्याँ यै सुर् छ मेरो भनी ॥
जानाको यहि सूर निश्चय गरी श्रीमान् सभामा गया ।
हाम्रो यश् अपयेश के छ दुनियाँ मा येहि सोद्धा भया ॥११२॥

देवगण भी आकर मेरे पाँव पड़ते हैं। १०८ प्रभु राम स्वयं ही यदि आगे चले जाते तो पाँव पड़कर प्रभु से विनती करते और इसी उपाय द्वारा बैकुण्ठ को जाते। सब ब्रह्मादि की ओर से मैंने प्रभु से विनती की है अतः स्वामी जो आप उचित समझें उसे बताने की कृपा करें। १०९ सीता ने ऐसी विनती की और श्री रघुनाथ जी की भी आज्ञा हुई कि सही कहते हैं—अब वही करना होगा—बैकुण्ठ जाने के पहले लोगों पर एक अपवाद थोपकर तुम्हें बियाबान वन में ले जाकर परित्याग करूँ और तुम बाल्मीकि के आश्रम में चली जाओ। ११० सीता इस समय गर्भिणी हैं और दो वीर कुमारों को जन्म देंगी, लोक के इस अपवाद को मिटाने के लिए अब न्याय हेतु प्रवेश करता हूँ। यहीं आकर जब तुम लोक के बीच न्याय पाने के लिए प्रवेश करोगी, वैसे ही धरती फट जायेगी और वहीं से तुम बैकुण्ठ चली जाना। १११ इस रीति से तुम जाओगी और मैं कुछ समय तक रहकर आऊँगा। मैं यहाँ क्यों रहना चाहता हूँ यह मैं बता चुका हूँ और यही मेरा विचार है। जाने का निश्चय कर श्रीराम सभा में चले गये। दुनिया में यश-अपयश क्या है यही सब प्रश्न करने लगे। ११२ सबने विनती की कि

सब्ले बिन्ति पनी गऱ्या हजुरमा बोल्छन् यशैयश् भनी ।
एकाले पछि क्याभन्योकि महाराज् एक् सुन्छु अप्यश् भनी ॥
रावण्ले वनमा हरी लगिगयो क्यै दिन् त राख्यो पनि ।
यस्ती हुन् इ सिता उनैकन घरै ल्याए छ चोखी भनी ॥११३॥

यस्ती स्त्री पनि चोखि हो भनि यहाँ राजै त राखछन् भन्या ।
चोखी कुन् रहली यहाँ अब उपर् सम्पूर्ण वेश्यै बन्या ॥
भन्छन् अप्यश येहि मात्र भनि यो बिन्ती गरेथ्यो जसै ।
लक्ष्मण् जी कनडाकिल्याउन हुकूम् दीया प्रभूले तसै ॥११४॥

हूकूम्ले रघुनाथका हजुरमा लक्ष्मण् पुग्याथ्या जसै ।
सुन्नैलाइ कठिन हुन्या अति कठोर् हूकूम् भयो यो तसै ॥
हे भाई ! इ सिताजिलाइ अहिले त्याग् गर्न मैले पऱ्यो ।
चोखी जानिलिंदा त दुर्यश बहुत् लोक्ले मलाई गऱ्यो ॥११५॥

सीतालाइ चढाइ जल्दि रथमा वाल्मीकि आश्रम् जहाँ ।
हो ताहीं नजिकै गएर वनमा छाडेर आऊ यहाँ ॥
उत्तर् केहि गऱ्यौ भन्या त तिमिले माऱ्यौ म ऐले मऱ्याँ ।
भाई ! भोलि बिहान लानु वनमा हूकूम् यै हो गऱ्याँ ॥११६॥

प्रभु में यश ही यश व्याप्त है। परन्तु एक ने बाद में कहा कि महाराज ! मुझे तो एक अपयश सुनायी देता है। रावण ने बन में हरण करके जिसे ले जाकर कुछ दिन रखा था वैसी स्त्री जो सीता है, उसको पवित्र मानकर वापस ले आये। ११३ ऐसी स्त्री को भी पवित्र कहकर राज दरबार में रख लिया जाता है तो फिर अब आगे सम्पूर्ण वेश्या बनने पर कौन पवित्र रहेगी। अतः ऐसे अपयश मात्र को सुनकर यह विनती करते ही प्रभु ने लक्ष्मण को बुला लाने की आज्ञा दी। ११४ श्री रघुनाथ की आज्ञा के अनुसार लक्ष्मण जैसे ही उनके सम्मुख पहुँचे थे वैसे ही सुनने में अति कठोर एवं कठिन आदेश देने की कृपा की। हे भाई ! मुझे इसी समय सीता जी को त्याग करना है क्योंकि पवित्र जानकर अपना लेने पर लोगों ने मुझ पर अपयश लगाया। ११५ सीता को अविलम्ब रथ में चढ़ाकर बालमीकि-आश्रम के निकट बन में छोड़कर चले आओ। यदि तुमने मुझसे प्रतिवाद किया तो तुम जानो कि मैं अभी मरा। अतः भाई ! कल सुबह होते ही बन में ले जाना, यही मेरी तुम्हें आज्ञा है। ११६ लक्ष्मण ने जब यह आदेश सुना तो वे एक महान संकट में पड़ गये। प्रातःकाल उठे और एक उत्तम

लक्ष्मण्ले जब यो हुकूम्‌कन सुन्या ठूलो सकस्‌मा परी ।
प्रातःकालमहाँ उठेर बढिया एक्‌ रथ्‌ तयारी गरी ॥
सीतालाइ चढाइ जल्दि वनमा छोडेर आया पनि ।
लागिन्‌ गर्न विलाप्‌ सिताजि वनमा छाड्या मलाई भनी ॥११७॥

रुन्थिन्‌वाल्मिकिशिष्यलेसुनिकह्या वाल्मीकिजीथ्यैं गई ।
सून्या वाल्मिकिले र पूजन गऱ्या सीताजिको याद्‌ भई ॥
ल्यांया आश्रममा र लोकजननी सीता इनै हुन्‌ भनी ।
स्त्री जन्‌लाइ लगाइ खुप्‌सित गऱ्या सेवासिताको अनि ॥११८॥

ती विप्रपत्निहरुले पनि लक्ष्मि जानी ।
पूजा सिताकन गऱ्या अति भाग्य मानी ॥
सीतापती पनि विरक्त भएर सुख्‌ भोग्‌ ।
छोडी मुनी सरि भया मनले लिई योग्‌ ॥११९॥

अथ रामगीता

लीला मेरि भनी सुनीकन तरून्‌ ई लोक संसार्‌ भनी ।
लोकैका हितका निमित्त भगवान्‌ मानिस्‌ स्वरूप्‌का वनी ॥
लीला गर्नुभयो र वृद्धहरुले जो गर्दथ्या सो गरी ।
सत्‌कामै गरि दिन्‌ बिताउनु भयो वाधा सवैको हरी ॥१२०॥

रथ तैयार किया । सीता जी को उसी में चढ़ाकर वन में ले गये और छोड़कर चले आये । सीता जी वन में अपने को छोड़ी गयी जानकर विलाप करने लगीं । ११७ वाल्मीकि महर्षि के शिष्य ने उनके रुदन को सुनकर तुरन्त वाल्मीकि जी के पास जाकर सूचना दी । यह सुन कर सीता जी को याद करके पूजन किया और जाकर उन्हें आश्रम में ले आये । लोकजननी सीता यहीं हैं ऐसा जानकर उनकी सेवा में स्त्रियों को लगा दिया । ११८ उन विप्र-पत्नियों ने भी लक्ष्मी जानकर तथा सौभाग्य मानकर सीता जी की पूजा की । सीतापति श्रीराम भी विरक्त होकर सुख-भोगों को त्यागकर मुनि के समान हो गये और मन में योग ले लिया । ११९ इस लोक में संसार इन लीलाओं को सुनकर कहता है कि लोकहित के निमित्त भगवान ने मनुष्य का स्वरूप धारण कर लीलायें कीं और वृद्धों द्वारा किए गये कर्मों के समान सत्कार्य करते हुए दिन व्यतीत किये; यही सबके हरि थे । १२० लक्ष्मण जी प्रभु के पास ही थे । उन्होंने प्रश्न किया कि सबसे महान

साथ्मा लक्ष्मणजी थिया प्रभुजिथ्यैं कुन् हो ठुलो विष् भनी ।
सोध्या लक्ष्मणले र सब् कहनुभो विस्तार् प्रभूले पनि ॥
ब्रह्मस्वै विष हो भनी नृगजिको विस्तार् सुनाथ्या जसै ।
बूझ्यो चित्त र फेरि लक्ष्मणजिले क्यै सोध्न लाग्या तसै ॥१२१॥

हे नाथ् ! ज्ञान स्वरूप देहहरुका आत्मा अधीन् भै पनि ।
भूभार् हर्नुभयो अनेक् तरहका यस् आकृतीका बनी ॥
लीला हो इ त आत्मरूपि भगवान् भक्तै फगत् जान्दछन् ।
यो लीला त दया निमित्त हुनगो यस्तो पनी मान्दछन् ॥१२२॥

यस्ता मालिक जानि पाउ तलमा स्वामित् ! पर्याको म छु ।
संसार् रूपि गभीर् समुद्र सहजै कुन् पाठले तर्दछु ॥
सोही युक्ति बताइ बक्सनु हवस् जुन् पाठले यो तरी ।
पुग्न्याछू पछि धाममा सहजमा आनन्दको भोग् गरी ॥१२३॥

लक्ष्मणका इ वचन् सुनेर रघुनाथ् मूखै हँसीलो गरी ।
आपना भक्त ति भाइ लक्ष्मणजिको सम्पूर्ण सन्ताप् हरी ॥
तत्त्व-ज्ञान पनी तहीं दिनुभयो जुन्लाइ वेद्ले पनि ।
भन्छन् लोक्हरुलाई तर्न सजिलो साँघू छ येही भनी ॥१२४॥

विष कौन है । प्रभु ने तब विस्तारपूर्वक बताने की कृपा की कि ब्रह्मस्व ही महान विष है । इस प्रकार नृग जी के बारे में विस्तारपूर्वक सुना और मन में सन्तोष करने के पश्चात पुनः लक्ष्मण जी कुछ और पूछने लगे । १२१ हे नाथ ! ज्ञानरूपी देह आदि आत्माओं के अधीन होने पर भी ऐसी आकृति धारण कर अनेक प्रकार के भू-भार हरण करने की कृपा की । केवल भक्त लोग ही जानते हैं कि यही तो आत्मिक भगवान की लीला है । ये भी माना जाता है कि ये लीला दया के निमित्त की गयी । १२२ ऐसे मालिक जानकर हे स्वामी ! मैं आपके चरणतल में पड़ा हूँ । संसार रूपी गम्भीर समुद्र किस पाठ के द्वारा सहज ही तर सकते हैं वही युक्ति सिखाने की कृपा करें ताकि उसी पाठ के द्वारा आनन्द भोगकर सहज ही उस स्थान पर पहुँच सकूँ । १२३ लक्ष्मण के इन वचनों को सुनकर रघुनाथ प्रसन्न मुद्रा में अपने भक्त व भाई लक्ष्मण जी के सम्पूर्ण ताप का निवारण कर तत्वज्ञान आदि ही बताने की कृपा की । जिनके बारे में वेदों में भी कहा गया है कि यही मनुष्यों के लिए एक सरल साधना है । १२४ इस वर्णाश्रम की क्रियायें जो कुछ भी हैं उन्हें पहले करके दशेन्द्रियों एवं मन को

ई वर्णाश्रमका क्रिया जति त छन् तिन्लाइ पैल्हे गरी।
दश् इन्द्रीय र मन् जितेर गुरुका साम्ने अगाडी परी॥
आत्मज्ञान मिलोस् भनेर गुरुको सेवा निरन्तर् गर्‍या।
आत्मज्ञान् पनि मिल्छ येहि रितले संसार कतीले तऱ्या॥१२५॥

फल् इच्छा गरि कर्म गर्छ यदि ता फेर् देह यस्तै लिई।
त्यो फल् भोग् पनि गर्छ गर्छअरु फेर् कर्मै बहुत् मन् दिई॥
तेस्को फेर् पनि बन्छ देह करले येसै जगत्मा परी।
यस्तै रीत्सित घुम्छ त्यो भुवनमा अत्यन्त चक्रैसरी॥१२६॥

अज्ञानै छ घुमाउन्या सकलको शत्रू सरीको यहाँ।
ज्ञानैले गरि नष्ट हुन्छ पनि सो लीनू यही मन्महाँ॥
अज्ञान्को र इ कर्मको छ कति फेर् तस्मात् क्रियाले गरी।
अज्ञान् नष्ट हुँदैन छैन अरु थोक् ऊपाययै ज्ञान् सरी॥१२७॥

अज्ञान् नष्ट हवस् न राग् न त छुटोस् अज्ञानका कर्मले।
कर्मै गर्छ त घुम्छ यै जगतमा त्यै कर्मका धर्मले॥
तस्मात् ज्ञान विचार गर्नु जनले ज्ञान्ले कती पार् भया।
ज्ञान् छाडीकन कर्मले जनहरू संसारपार् को गया॥१२८॥

जीतकर गुरु के सम्मुख आगे जाकर निरन्तर गुरु की सेवा करते हुए आत्मज्ञान की प्राप्ति की कामना करने से आत्मज्ञान भी मिल जाता है और इसी रीति से अनेक लोगों ने संसार तर लिया। १२५ यदि फल की इच्छा करके कर्म को करते हैं तो ऐसी देह को धारण करके भी उस फल का भोग करते है और अत्यन्त मन लगाकर अन्य कर्मो को भी करते हैं जिसके प्रभाव से इसी जगत में उन्हें पुनः देह प्राप्त होती हैं। इसी रीति से चक्र के समान वह जग में घूमता रहता है। १२६ अज्ञान ही शत्रु के समान है जो सबके मन को घुमाता रहता है। अतः मन में यह समझ लेना कि ज्ञान से ही अज्ञान का नाश होता है और इन कर्मों का कितना महत्व है—मात्र क्रिया को करने से अज्ञान नष्ट नहीं होता है, अतः ज्ञान के समान अन्य कोई उपाय नहीं है। १२७ अज्ञान-कर्मो से न तो अज्ञानता ही नष्ट होती है और न ही रोग से छुटकारा मिलता है। कर्म ही सब कुछ करता है, कर्म के ही धर्म से प्राणी इस जगत में घूमता रहता है। अतः लोग यह विचार कर लें कि ज्ञान के द्वारा कितने लोग तर गये। ज्ञान को छोड़कर कर्म के ही द्वारा संसार में कौन लोग तर गये। १२८ वेद भी कहता है कि

बिद्यालाइ सहाय कर्म छ ठुलो भन्छन् इ वेद्ले पनि।
तस्मात् कर्म अवश्य गर्नु जनले साहाय होला भनी॥
कोई यसो पनि भन्दछन् त ति भनून् साहाय कोही रती।
विद्यालाइ त चाँ हिदैन नुझ यो विस्तार् बताऊँ कति॥१२९॥
हुन्छन् कर्म त देह गेहहरुमा परा अभीमान् भई।
विद्या हुन्छ त जो छ तेहि अभिमान् देहादिमा को गई॥
विद्याको र इ कर्मको त छ विरोध् साहाय हुन्थ्यो कहाँ।
विद्यै एक् छ समर्थ मुक्ति दिनमा यै जान्नु सब्ले यहाँ॥१३०॥
बाजीका श्रुति तैत्तिरीय कहिन्या श्रूतीहरूले पनि।
भन्छन् येहि कुरा सहाय अरुको खोज्दैन विद्या भनी॥
तस्मात् कर्म विरोधि जानि जनले सब् कर्म छाडीदीनू।
विद्यै मात्र ठुलो बुझेर यसमा यो मन् लगाई लीनू॥१३१॥
जो यो तत्त्वमसी छ वाक्य यसको वाक्यार्थ जानी लीनू।
यस्मा तीन् पद छन् ति तीन पदका तात्पर्यमा मन् दिनू॥
तत्को अर्थ परात्म हो ति पदमा त्वं भन्नु जीवात्म हो।
इन्को ऐक्य बुझाउन्या असि छ पद् रात्दिन् विचार् गर्नु यो॥१३२॥

विद्या का सहायक कर्म ही है। अतः लोग अवश्य ही कर्म करें ताकि वह सहायक बन सके। कोई लोग ऐसा भी कहते हैं कि विद्या (ज्ञान) को किंचित मात्र भी सहायक की आवश्यकता नहीं होती है। —इसी विस्तार को समझो और कहाँ तक बताऊँ। १२९ कर्म तो देह होता है और देह में अभिमान व्याप्त हो जाता है। और विद्या जो है उसी अभिमान-युक्त देहादि में जाकर जब मिल जाती है तो परस्पर विरोध होता है। इस प्रकार विद्या और कर्म के परस्पर विरोध में एक दूसरे के कहाँ सहायक हो सकते हैं। विद्या ही एक मुक्ति दे सकने में समर्थ है, यही सब लोग जान लें। १३० श्रुतियों को सुननेवाले लोग भी यही बात कहते हैं। विद्या (ज्ञान) को छोड़कर अन्य किसी का सहारा नहीं ढूँढते हैं। अतः कर्म को विरोधी जानकर लोगों को चाहिए कि सबकर्मो को छोड़ दें और केवल विद्या को ही महान समझकर इसी में मन को लीन करें। १३१ जो ये तत्वमसी वाक्य हैं इसके वाक्यार्थ को जान लेना चाहिए। इसमें तीन पद विद्यमान हैं। उन तीनों पदों का तात्पर्य मन को अर्पण करना है। तत् का अर्थ परात्मा है, उस पद में, "त्वम्" कहना जीवात्मा है। इनको एक ही बोध करने वाले "असि" जो पद में हैं उसीका रात दिन ध्यान करना। १३२

मायाले त बन्यो शरीर सब यो आखीर् छ मर्न्या पनि ।
देखनू पञ्च महाभुतैं छ सबमा यस्ता प्रकार्को बनी ॥
संसार्को सुख दुःख साधन स्वरूप् देखिन्छ जो देह यो ।
सूक्ष्मोपाधि भनी कहिन्छ सबले यो नाम् यसैको त हो ॥१३३॥

दश् इन्द्रीय र मन् अपञ्चिकृत भूत् यो सोह्र जम्मा छ जो ।
स्थूलोपाधि भनी कहिन्छ सबको मूल् भोग साधन् छ यो ॥
येसै स्थूल उपाधि भित्र छ सदा इन्को वियोग् भो जसै ।
स्थूलोपाधि गलेर जान्छ सबको टिक्तैन एक् क्षण् कसै ॥१३४॥

जीव् ता मुक्त छ शुद्ध निर्मल फटिक् जस्तो उपाधी गरी ।
सो निर्मल् पनि हुन्छ सङ्ग गुणले उस्तै उपाधी सरि ॥
ईनै द्वइ उपाधिदेखि बुझ जब् होला फरक् जीव् जसै ।
तस्सै मुक्त हुन्याछ छैन नहि ता आर्को उपायै कसै ॥१३५॥

राताका सँगमा रह्या स्फटिक ठीक् देखिन्छ रातै सरि ।
तस्तै आत्म पनी उपाधि सँग भैं हुन्छन् उपाधी सरि ॥
आत्मामा छ उपाधि केहि न फटिक् मा क्यै छ रातो कतै ।
झूट्टै मात्र छ त्यो झलक् यहि विचार् खुप् राखनु जत्तातत्तै ॥१३६॥

माया से ही शरीर का सृजन हुआ है और अन्त में यह सब मृत्यु को प्राप्त होता है। देखना, इन सबों में पंचमहाभूत व्याप्त हैं। इस प्रकार संसार के सुख दुःख, साधन-स्वरूप इस देह में दृष्टिगोचर होता है। सब इसे "स्थूलोपाधि" कहते हैं और इसका यही तो नाम है। १३३ दशइन्द्रिय और मन और पञ्चभूत—ये कुल सोलह है और इन सबको "सूक्ष्मोपाधि" कहते हैं और इनका साधन ही मूल भोग है। इस स्थूलोपाधि के अन्दर सदा ही इनका वियोग होता रहता है सबका स्थूलोपाधि गलकर विलीन हो जाता है क्षण भर भी नहीं टिकता है। १३४ जीव तो शुद्ध, निर्मल एवं फटिक के समान मुक्त उपाधि युक्त है। अतः सद्‌गुणों के प्रभाव से उसी उपाधि के समान निर्मल भी होता है। इन दोनों उपाधियों के द्वारा समझने पर जीव को हम पृथक् जब अनुभव करेंगे तब ही मुक्ति प्राप्त होगी अन्यथा और कोई उपाय नहीं है। १३५ रात्रि के संग में रहने पर स्फटिक भी ठीक उसी रात्रि के समान दिखायी देता है, उसी प्रकार आत्मा भी उपाधि के संग उपाधि के समान हो जाता है। आत्मा ही उपाधि है जैसे स्फटिक में कहीं भी लाल दाग नहीं होता है केवल वह चमक झूठी है यही मन में समझ लो। १३६ जागृत-स्वप्न-सुसुप्ति-वृत्तियाँ ये ही बुद्धि के तीन अंश है। भ्रम से ही

जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति वृत्ति तिन छन् यस् बुद्धिका ई पनि।
झुट्टै देखिलिइन्छ नित्य सुखरूप् यस् ब्रह्म रूप्मा भनी।।
जानी वृत्ति निरोध् गरेर जनले यो आत्म जानी लिनू।
आत्मा भिन्न उपाधिलाइ त झुटा जानेर छोडी दिनू।।१३७।।

आत्मा हो सुख रूप दुःख रुपको संसार् छ उस्मा कहाँ।
अज्ञान्ले गरि मात्र सत्य रुपले झल्कन्छ आत्मामहाँ।।
ज्ञान्ले लीन् पनि हुन्छ डोरिकन साँप् बुझ्नू छ जस्तो फगत्।
तेस्तै ईश्वरमा अनेक् तरहका देखिन्छ नाना जगत्।।१३८।।

अध्यास् हुन्छ चिदात्समा इ सबको जो छन् अहंकारका।
इच्छादी पनि बुद्धि धर्म बुझनू छैनन् कुनै सारका।।
आत्मासाक्षि छ यो पृथक् इ सबमा सब्मा घुस्याको पनि।
जस्तै घुस्तछ अग्नि लोहहरुमा तस्तै प्रकार्को बनी।।१३९।।

यै आत्माकन चिह्नु पर्छ गुरुका वेद्का वचन्ले गरी।
आत्मालाइ चिन्ह्यो भन्या बुझिलिनू त्यो मुक्त भो तेस् घरि।।
तस्मात् आत्म विचार गर्नु जनले यस् रूपको हूँ भनी।
अज्ञान् नष्ट गराउनाकन अवर् छैनन् उपायै पनि।।१४०।।

इस ब्रह्म-रूप में नित्यसुख का रूप धारण किया जाता है। इन वृत्तियों को रोककर लोग इस आत्मा को पहचान लें। आत्मा के अन्दर उपाधि को झूठ जानकर इसे छोड़ दो। १३७ आत्मा सुख का रूप है—उसमें दुःख-रूपी संसार कहाँ है। अज्ञानता के कारण आत्मा में सब कुछ सत्य-रूप झलकता है। ज्ञान सर्प को भी समेटकर ले लेता है, केवल इसे समझ रखो। वैसे ही ईश्वर में यह जगत अनेक प्रकार का दिखायी देता है। १३८ इन सबको जो अभिमान है उसे आत्मा के अन्दर पहचानने का अभ्यास होता है। इच्छा आदि भी बुद्धि-धर्म भी जानना जिसका कोई सार नहीं है। आत्मा साक्षी है कि इन सबमें यह अलग है और सबमें व्याप्त भी है। जिस प्रकार अग्नि लोहा में व्याप्त हो जाता है। १३९ गुरु के वेद-वचनों के द्वारा इसी आत्मा को पहचानना चाहिए। आत्मा को पहचानने से यह समझ लेना कि वह उसी क्षण मुक्त हो गया। अतः लोगों को यह विचार करना चाहिए कि आत्मा का रूप इस प्रकार का है और अज्ञान नष्ट करने के लिए अन्य कोई उपाय भी नहीं। १४० आत्मा को इस प्रकार पहचाना जाता है कि वह पहले एकान्त में जाकर बैठ जाये, दशइंद्रियों को वश में कर मन को

आत्मा यस् रितले चिह्निछ पहिले एकान्तमा गै बसोस् ।
दश् इन्द्रीय जितेर मन् पनि जिती आत्मै विचार्मा परोस् ॥
जानोस् जो छ जगत् प्रकाश् सकल यो हो आत्म सत्ता भनी ।
येही तत्त्व बुझी त पूर्ण रुपको होइन्छ आफू पनि ॥१४१॥

ओङ्कार् वाचक हो सबै जगतको अज्ञान् अवस्थामहाँ ।
ज्ञानोत्तर् हुन सक्छ वाचक कहाँ लीन् हुन्छ आत्मै महाँ ॥
आत्मामा जब लीन् भया अउम तीन् विश्वादि साक्षी सहित् ।
आत्मै मात्र रहन्छ तेस् वखतमा निर्मल् उपाधीरहित् ॥१४२॥

सोही आत्म म हूँ भनी दृढ़ भयो ज्ञान्का विचार्ले जसै ।
जीवन् मुक्त भनी कहिन्छ जन त्यो पर्दैन ताप्मा कसै ॥
सब् इन्द्रीय शमन् गरेर बलवान् कामादिको नाश् गरी ।
अभ्यास् गर्नु समाधिमा त सहजै देखिन्छ साम्ने हरि ॥१४३॥

येही पूर्ण अनन्त आत्मरुपको ध्यान् नित्य गर्दै रहोस् ।
जो प्रारब्ध छ सो बुझेर बलियो ई दुःख सुख् सब् सहोस् ॥
येही रीत्सित दिन् विताउँछ भन्या यो देह छुट्ला जसै ।
संसार्का सब दुःख छोडिकन त्यो लीन् हुन्छ मैमा तसै ॥१४४॥

जीतकर आत्मा के विचार में लीन हो जाये। सकल लोक यह जान ले कि जो जगत में प्रकाश है वही आत्मसत्ता है। इन्ही तत्वों को समझ करके ही तो स्वयं भी पूर्णरूप को प्राप्त होता है। १४१ सर्वजगत को अज्ञान अवस्था में कहे जाने वाला शब्द ओंकार है। ज्ञान का उत्तर अर्थात् वाचक आत्मा में कैसे लीन हो सकता है। जब आत्मा में लीन हो जाता है तब अ-ऊ-म इन तीन विश्व के साक्षी-सहित उस समय केवल 'आत्मा' ही उपाधि-रहित निर्मल रहती है। १४२ जैसे ही ज्ञान द्वारा विचार करने से यह बात दृढ़ हो जाती है कि मैं ही वह आत्मा हूँ। तब कहा जाता है कि जीव जीवनमुक्त हो जाता है और वह मनुष्य कदापि ताप से पीड़ित नहीं होता है। सब इन्द्रियों को एकाग्र एवं सशक्त करके कामादि को नाश करते हुए समाधि में अभ्यास करनेवाला सहज ही अभ्यास करता हुआ मैं दिखता हूँ। १४३ हमेशा इसी आत्मरूप का ध्यान करते रहो और जो कुछ भी कठिन और सरल अर्थात् जो कुछ भी सुख-दुःख तुम्हें मिलेगा उसे साहस के साथ सहन करो। इसी तरह यदि तुम सम्पूर्ण समय व्यतीत कर लोगे तो एक दिन संसार के सारे दुःखों को छोड़कर तुम्हारा शरीर मुक्त

आदीमा न त अन्त्यमा न बिचमा यो देहधारी बनी ।
पूर्णानन्द हुँदैन जान्नु सबले यो सत्य बात् हो भनी ।।
तस्मात् यो विधि छोडि गर्नु जनले आत्मै विचार् खुप् गरी ।
त्यो मैमा मिलिजान्छ जल् जलधिमा पौंचेर मील्या सरि ।।४५।।

आत्मा मात्र छ सत्य यो सब जगत् झुट्टै छ झूटो पनि ।
डोरी सर्प बुझ्या सरी बिबुझमा देखिन्छ साँचो भनी ।।
जान्नू जानिइएन यो भनि भन्या मेरा चरण्मा परी ।
सेवा गर्नु र जान्दछन् नतर ता टर्दैन कस्तै गरी ।।१४६।।

वेद्को सार रहस्य यो सब कह्याँ जो यो बिचार् गर्दछन् ।
कोटी जन्म सहस्रका सकल पाप् तिन्का सहज् टर्दछन् ।।
तस्मात् भाइ ! विचार यो सब जगत् झूटो चटक् झैं भनी ।
मैमा भक्ति सदा लगायर रहू आनन्द रूपी बनी ।।१४७।।

मेरो येहि सगुण् स्वरूप्कन खुशी मानी भजन् जो गरून् ।।
वा निर्गुण् परिपूर्ण आत्मरुपमा लाएर यो मन् धरुन् ।।
ती दूवै मइ तुल्य हुन् ति मइ हुन् ती मै सरीका बनी ।
गर्छन् सब् भुवनै पवित्र तिनले कुल्ची दिदामा पनि ।।१४८।।

हो जायेगा और मुझमें लीन हो जाओगे । १४४ प्रारम्भ में, न तो अन्त में न बीच में, यह देहधारी बनकर पूर्ण आनन्द को प्राप्त नहीं होता और यह सत्य बात मानकर सब लोग इसे जान लें । इसलिए इस विधि को सर्वजन त्यागकर आत्मा में गम्भीरता से विचार करें । वैसे ही लोग मुझमें विलीन हो जाते है जिस प्रकार जल जलधि में पहुँच कर । १४५ यह सर्वजगत झूठा है, केवल आत्मा ही सत्य है । जैसे डोरी को सर्प समझने के समान अज्ञानता में सच ही दिखायी देता है । यदि ज्ञान की बात ज्ञात न कर सकने पर मेरे चरणों में (भक्ति द्वारा) पड़कर सेवा करेगा । तभी उसे सर्वज्ञान प्राप्त होगा अन्यथा वह किसी प्रकार तर नहीं सकता । १४६ वेदों का सार-रहस्य सब कुछ कह चुका हूँ । जो इसे विचार करता है, उसके कोटि जन्मों के सहस्र सकल पाप सहज ही विनाश हो जाते हैं । इसलिए भाई ! इस जगत को झूठे जादू के समान समझकर सदा मेरी भक्ति में मन लगाकर और अनन्त-रूपी बनकर रहना । १४७ मेरे इन सद्‌गुणों से पूर्णस्वरूप को प्रसन्नता से भजन करें अथवा निर्गुण गायें । परिपूर्ण आत्मरूप में ले जाकर इस मन को रखें । वे दोनों मेरे ही समान हैं और वह मैं ही हूँ । अतः वे जो मेरे समान बन सम्पूर्ण भुवन को अपने पाँव से कुचल देने पर

श्रद्धा भक्ति रहोस् गुरू चरणमा मेरा वचन्‌मा पनि ।
यस्‌लाई श्रुतिसार् बुझीकन पढोस् मूल् तत्त्व यै हो भनी ॥
यस्ता रीत्‌सित यो पढ्या पनि भन्या अज्ञानको नाश् गरी ।
मै रै रूप् बनिजान्छ जान्छ सहजै संसार सागर् तरी ॥१४९॥

इति रामगीता

एक् दिन् श्रीयमुनाजिका तिरमहाँ बस्न्या मुनीश्वर्‌हरू ।
भार्गव्‌मा च्यवनै थिया इ सँगमा बस्न्या थिया जो अरू ॥
आया श्रीरघुनाथका हजुरमा आपत्ति छुट्नन् भनी ।
आदर् खुप् रघुनाथबाट रहँदा खुश् भो ऋषीगण् पनि ॥५०॥

सेवक् ब्राह्मणको म हूँ अति कृपा गर्नूभयो धन्य हो ।
सेवक्‌लाइ अह्राइ बक्सनुहवस् कुन् काम् छ च्छा छ जो ॥
सेवक् हूँ सब सिद्ध गर्छु भनि यो राम्‌को हुकूम् भो जसै ।
आपत् बिन्ति गर्‍या तहाँ च्यवनले राम्‌का हजूर्‌मा तसै ॥१५१॥

हे नाथ् ! क्वै मधुनाम दैत्य शिवका प्यारा महात्मा थिया ।
तिन्लाई शिवले त्रिशूल् पनि अमोघ् खूशी हुँदामा दिया ॥
रावण्‌की बहिनी थि कुम्भिनसि एक् बीहा गर्‍याको थियो ।
जन्म्यो पुत्र त लोक कण्टक सबै चाल् राक्षसैको लियो ॥५२॥

पवित्र हो जाते हैं। १४८ गुरु-चरणों में तथा मेरे वचन में श्रद्धा भक्ति रहें इसे श्रुति-सार समझकर पढ़ें और इसे मूल तत्व समझें। इस रीति से पढ़ने से भी अज्ञानता का नाश होकर मेरा ही रूप धारण कर लेता है और संसार-सागर से सहज ही तर जाता है। १४९ एक दिन यमुना जी के तीर पर रहनेवाले मुनीश्वर आदि जो भार्गव तथा च्यवन ऋषियों के साथ थे, श्री रघुनाथ की सेवा में आये ताकि उनको विपत्ति से छुटकारा प्राप्त हो। रघुनाथ के द्वारा अत्यन्त आदर-सत्कार मिलने पर वे ऋषिगण प्रसन्न हुए। १५० ब्राह्मणों का मैं सेवक हूँ। आप लोगों ने अति कृपा की है जिसके लिए अति धन्यवाद! सेवक को आदेश देने की कृपा करें कि क्या काम है और क्या इच्छा है। सेवक हूँ सब कुछ सिद्ध कर दूंगा, कहते हुए जब राम की आज्ञा हुई तब च्यवन ने श्रीराम के समक्ष विपत्तियों के बारे में विनती की। १५१ हे नाथ! मधु नामक कोई एक दैत्य शिव का बहुत प्यारा भक्त था। उसे शिव ने अत्यन्त प्रसन्न होकर एक अमोघ त्रिशूल प्रदान किया था। रावण की बहिन कुम्भनखी के साथ विवाह किया था।

तेस्को नाम लवण् छ राक्षसि छ चाल् तेस्ले त्रिशूल् त्यै लिई ।
आपद् सब् ऋषिलाइ गर्छ रघुनाथ् बाधा अनेकन् दिई ।।
यो आपत्ति छुटोस् भनी हजुरमा आयौं भन्याथ्या जसै ।
तेस्को ताप नमान्नु मार्छु अहिले यस्तो हुकूम् भो तसै ।।५३।।
यै बीच्मा सब भाइलाइ रघुनाथ् ले सोध्नुभो को गई ।
मार्छौं कण्टक तेस् लवण्कन ऋषी का प्राणदाता भई ।।
हात् जोरी विनती गर्‍या भरतले स्वामित् ! म जान्छू भनी
ताहीं फेर् विनती गर्‍या अति उचित् शत्रुघ्नजीले पनि ।।१५४।।
लक्ष्मण्ले पनि काम् गर्‍या अधि बडा साथै हजूर्मा गई ।
दुःखै भोग भरत्जिले पनि गर्‍या योगी सरीका भई ।।
स्वामित्! आज हुकूम् भया त खुशि भै जान्छू म ऐले तहाँ ।
राम् ठाकुर् बहुतै खुशी हुनुभयो यो बिन्ति सुन्दामहाँ ।।५५।।
यस्तो हूकुम भो बहुत् खुशि भई शत्रुघ्नलाई तहाँ ।
गादी आज म दिन्छु राज् पछि गर्‍या पूरी बनाई तहाँ ।।
पैले जल्दि त मारिहाल लवणै लैजाउ यो वाण् पनि ।
वाण्मा मुख्य जउन्थियो उहि झिकी दिनूभयो वाण्पनि ।।१५६।।

उससे लोककण्टक नामक पुत्र का जन्म हुआ और उसका सम्पूर्ण व्यवहार राक्षस के समान था । १५२ उसका नाम लवण है, व्यवहार राक्षस का है । वह उसी त्रिशूल को लेकर सब ऋषियों को सता रहा है । हे रघुनाथ ! अनेक बाधा उत्पन्न कर रहा है । अतः इन आपत्तियों से छुटकारा प्राप्त करने की अभिलाषा से आपके पास आये हैं । ऐसी विनती सुनते ही आज्ञा हुई कि आप उससे भयभीत न हों, अभी मैं उसका वध करता हूँ । १५३ इसी बीच रघुनाथ ने सब भाइयों से प्रश्न किया कि कौन जायेगा और उस कण्टक लवण को मारकर ऋषियों का प्राणदाता बनेगा । भरत ने हाथ जोड़कर विनती की, स्वामी ! मैं जाता हूँ । उसी समय शत्रुघ्न ने भी अति उचित विनती की । १५४ पहले श्रीमन् के साथ जाकर लक्ष्मण ने भी अनेक महान कार्य किये । इसी प्रकार भरत ने भी योगी के समान बनकर दुःख भोग किया । स्वामी ! आज्ञा देने की कृपा करें । मैं अति प्रसन्नतापूर्वक अभी वहाँ जाता हूँ । इस विनती को सुनकर राम ठाकुर अत्यन्त प्रसन्न हुए । १५५ अत्यन्त प्रसन्न होकर शत्रुघ्न को यह आज्ञा दी, आज मैं तुम्हें गद्दी देता हूँ, बाद में वहाँ नगर बनाकर राज करना । सर्वप्रथम इस वाण को लेकर जाओ और लवण का वध शीघ्र ही कर डालो ।

अर्ती क्या दिनुभो कि भाइ ! शिवको त्रीशूल् छ तेस्का घरै ।
पूजा नित्य गरेर जान्छ वनमा आहार खातिर् परै ।।
तेस्ले त्यो शिवको त्रिशूल् लिन भनी जानै नपावस् घरै ।
फिर्दामा तहिं लड्नु हान्नु यहि शर् मर्ला र गिर्ला परै ।।१५७।।
पायो त्यो शिवको त्रिशूल् लिन भन्या तेसै त्रिशूल्ले गरी ।
सब्को नष्ट गराउन्याछ यहि सुर् राख्नू विचार् खुप् गरी ।।
यो मान्या पछि तेस् मधूवनमहाँ एक् बेस् वनाऊ शहर् ।
जस्मा बस्न मिलोस् भनी सकलले खुप् बस्न मानून रहर् ।।५८।।
तेस्को नाम् मथुरा हुन्याछ नगरी त्यै राजधानी गरी ।
राज् गर्नू तिमिले अनेक् तरहका सब्का विपत्ती हरी ।।
एक्लै गै अघि मार राक्षस पछी आऊँछ सेना पनि ।
तीस् चालीस हजार राज् गर तहाँ राम्ले दिया राज्भनी ।।५९।।
आशीर्वाद् दिइ साथ जाऊ ऋषिका भन्न्या हुकूम् भो जसै ।
हूकूम् माफिक काम् गर्‍या सँग गई शत्रुघ्नजीले तसै ।।
राक्षस् मार्नुभयो तुरुन्त र तहाँ पूरी मथरा बनी ।
हूकूम् माफिक राज् गर्‍या तहिं बसी शत्रुघ्नजीले पनि ।।१६०।।

बाणों में जो मुख्य था वही निकालकर देने की कृपा की । १५६ भाई । तुम्हें क्या शिक्षा दूँ— उसके घर में शिव का त्रिशूल है, नित्य पूजा करके आहार के लिए वह वन में जाता है । अतः वह उस शिव के त्रिशूल को लेने घर न जाने पावे—लौटते समय वहीं उसके साथ लड़ना और इसी बाण से प्रहार करना तभी वह धराशायी हो जायेगा । १५७ यदि उसे शिव के उस त्रिशूल को लेने का अवसर मिल गया तब उसी त्रिशूल से सबको नष्ट करेगा । इस बात का खूब विचार तथा ध्यान रखना । इसे मारने के पश्चात् उसी वन में एक उत्तम शहर का सृजन करो जिसमें लोग रहने के लिए उत्सुक होकर रहने लगें । १५८ उसका नाम मथुरा नगरी होगा, उसे ही राजधानी बनाकर अनेक प्रकार के लोगों की विपत्तियों का हरणकर तुम राज करना । अकेले आगे जाकर राक्षस को मार डालो पीछे-पीछे तीस चालीस हजार सेनायें भी आ जायेंगी । और वहीं राम का दिया राज्य करना । १५९ आशीर्वाद देकर ऋषि के साथ जाने के लिए जैसे ही आज्ञा हुई वैसे ही आज्ञानुसार शत्रुघ्न जी ने ऋषि के साथ जाकर कार्य किया । तुरन्त राक्षस का वध किया और वहीं मथुरा नगरी की स्थापना हुई । आज्ञानुसार शत्रुघ्न जी ने भी वहीं रहकर राज्य किया । १६० सीता जी

सीताका पनि दुइ पुत्र सुकुमार् जम्ल्याह पैदा भया ।
वाल्मीकी ऋषिले ति पुत्र दुइको नाम्-कर्म गर्दा भया ।।
जेठाको कुश नाम् धरया लव भनी जुन् चाहिँ कान्छा थिया ।
तिन्को नाम धरया क्रमैसित अनेक् शास्त्रै पढाई दिया ।।१६१।।

वेलैमा व्रतबन्ध कर्म पनि भो वेदार्थ जानून् भनी ।
लाग्या वेद् पनि पढ्न शास्त्रहरुको तात्पर्य जान्न्या पनि ।।
उत्तम् निर्मल सूर्य-वंश बिचमा पैदा भयाका थिया ।
यो अभ्यास थिएन भन्नु त उसै फोस्रो कुरा पो थिया ।।१६२।।

वाल्मीकिले सकल राम-चरित्रलाई ।
गान् गर्न काव्य रितले कविता बनाई ।।
गान् गर्दथ्या खुशि भएर पढाइदीया ।
त्यो गाउँदा त्रिभुवनै वश पारिलीया ।।१६३।।

जम्ल्याहा दुइ भाइ सुन्दर कुमार् हात्मा सितारा लिई ।
पूरा सुर् सित गाउँथ्या दुइ जना ताल् सुर् मिलाई दिई ।।
खुश् हुन्थ्या ऋषिगण् सबैति वनका सूनेर तेस् गानले ।
प्यारो खुप् सित गर्दथ्या ति दुइको ठूला भनी मानले ।।१६४।।

यैँ रीतले रामचरित्र गाई ।
सम्पूर्णको मन् पनि खुश् गराई ।।

के भी दो जुड़वे सुकुमार पुत्र पैदा हुए । बाल्मीकि ऋषि ने उन दोनों पुत्रों का नामकरण किया । ज्येष्ठ का नाम 'कुश' रखा और जो कनिष्ठ था उसका नाम 'लव' रखा । क्रम-से उनके नाम रखे गये और उन्हें अनेक शास्त्रों की शिक्षा दी गयी । १६१ वेदार्थ आदि जानने के लिए समय से ही उनका व्रतवन्ध कर्म भी किया गया । वेदों का मनन करने लगे और शास्त्रों के तात्पर्य वे जान गये । उत्तम एवं निर्मल सूर्यवंश कुल के बीच पैदा हुए थे । वैसे कहने का अभ्यास नहीं था, यद्यिपि ये बातें व्यर्थ ही थीं । १६२ बाल्मीकि ने सकल रामचरित्र का गान करने हेतु काव्यरीति से कविता बनायी । प्रसन्न होकर उसका गान करते थे । अतः पढ़कर उसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया । उसे गाकर त्रिभुवन को अपने वश में कर लिया । १६३ दोनों जुड़वे सुकुमार भाई हाथों में सितार लेकर पूरे स्वर से एवं सुरों को मिलाकर गाते घूमते थे । वन के वे ऋषिगण उस गान को सुनकर प्रसन्न होते थे और उन दोनों को महान समझकर प्यार से आदर करते थे । १६४ इसी रीति

वाल्मीकिकै आश्रममा रहन्थ्या ।
गर्थ्या सधैं वाल्मिकि जो त भन्थ्या ॥१६५॥

यै बीच्मा सब अश्वमेध्हरु गरा रामले अनेक् दान् दिया ।
सीताजी वनमा थिइन् र सुनकी सीता बनाईलिया ॥
ब्रह्मर्षी र बडा बडा पृथिविका राजाहरू ती पनि ।
ब्राह्मण् क्षत्रिय वैश्य सब् तहिं पुग्या हेरौं तमासा भनी ॥१६६॥

वाल्मीकी ऋषिका सँगैति कुशलव् हिड्थ्याति जान्थ्या जहाँ ।
पाया फुर्सत सोध्नको र कुशले सोध्या कुरा क्यै तहाँ ॥
हे सर्वज्ञ गुरो ! कउन् तरहले बन्धन् विषे पर्दछन् ।
कुन् पाठ्ले सब बन्धनै पनि सहज् तोडेर पार् तर्दछन् ॥१६७॥

बाँधिन्छन् यहि रीतले यति गऱ्या संसार तर्छन् भनी ।
यस्को तत्त्व बताइ बक्सनु हवस् जानूँ म मूढो पनि ॥
यस्तो प्रश्न सुन्या जसै ति कुशको ती वाल्मिकीले पनि ।
यस्को तत्त्व बुझाइ बक्सनुभयो बाँधिन्छ यस्ले भनी ॥१६८॥

यस् जीब्ले बिहकै बिचार नगरी मंत्री अहङ्कार लिंदा ।
मन्त्रीले जति आफुमा गुण थिया जीवमा मिलाईदिंदा ॥

से रामचरित्र का गान करते हुए सम्पूर्ण जन के मनों को भी प्रसन्न करते थे। बाल्मीकि के ही आश्रम में रहते थे। बाल्मीकि जी जो कहते थे, सदैव वही करते थे। १६५ इसी बीच में राम ने अश्वमेध यज्ञ करके अनेक दान दिये। सीता जी वन में थीं अतः सोने की सीता बनायी। वड़े-वड़े ब्रह्मर्षि एवं पृथ्वी के बड़े-वड़े राजाओं और अन्य ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य सब वहाँ तमाशा देखने पहुँचे। १६६ कुश और लव बाल्मीकि ऋषि के संग, जहाँ वे जाते थे वहीं चल पड़ते थे। प्रश्न करने का अवसर मिला और कुश ने कुछ बात पूछी—हे सर्वज्ञ गुरु! किस प्रकार से लोग बन्धन में पड़ जाते हैं। कौन सा पाठ करने से सभी बन्धनों को सहज ही तोड़कर जीव पार तर जाता है। १६७ जिस रीति को करने से बन्धन में फँस जाते हैं और जिसको करने से संसार से तर जाते हैं इसके विषय में जो तत्व हैं, बताने की कृपा करें ताकि मेरे ऐसे मूर्ख भी इसे जान सकें। बाल्मीकि ने भी कुश के ऐसे प्रश्न को सुनकर वन्धन में बँध जाने के बारे में जो तत्व थे, सविस्तार समझाने की कृपा की। १६८ इस जीव द्वारा किसी बात पर विचार किये बिना, अहंकार मंत्री की मंत्रणा से उसमें जो भी गुण

मन्त्रीका वशमा परेर यहि जीव् मै हूँ अहङ्कार् भनी ।
लाग्यो भन्न भन्या गिन्यो विषयमा बाँधिन्छ यो जीव् पनि ।।१६९।।

जो छन् सत्त्व रजस् तमस्त्रिगुण यी रूप् हुन् अहंकारका ।
यी तीनै मनले विचार् गरिलिदा छैनन् कुनै सारका ।।
इच्छा सत्त्व विषे धन्या पनि भन्या ऐश्वर्य भोग्छन् पनि ।
संसार्कै व्यवहार बढ्छ रजले स्त्री पुत्र मेरा भनी ।।१७०।।

जो ता छन् तमगूणमा खुशि हुन्या तेस्ता त कीरा भई ।
फिर्छन् नित्य विपत्तिमा सुख सयेल् मिल्दैन काहीं गई ।।
जो यो तीन् गुणलाइ तुच्छ बुझि खुप् आत्मै विचार् गर्दछन् ।
सब् बन्धन्हरुलाइ तोडि सहजै संसार् तिनै तर्दछन् ।।१७१।।

तस्मात् अहङ्कार्कन तुच्छ मानी ।
आत्मा म हूँ पूर्ण भनेर जानी ।।
आत्मै विचार्मा तिमि चित्त देऊ ।
साँचो भन्याँ यो तिमि जानिलेऊ ।।१७२।।

वाल्मीकिदेखी यति तत्त्व पाई ।
ज्ञान् भैगयो ती कुशवीरलाई ।।

थे उसी जीव में मिला देता है और मन्त्री के ही वश में आकर अपने को अहंकारी बनाता है। विषय आदि में उसी अहंकार के कहने से ही लग जाने से यह जीव भी बन्धन में बँध जाता है। १६९ सत्व, रज एवं तम ये त्रिगुण इसी अहंकार के रूप हैं। इन तीनों के बारे में मन में विचार करने से इनमें कोई तथ्य दिखायी नहीं देता। सत्व, विषय की ओर इच्छा करने पर ही ऐश्वर्य का भोग करता है। रजोगुण से संसार के व्यवहार में वृद्धि होती है और स्त्री पुत्र को अपना बताता है। १७० जो तम गुण में प्रसन्न होता है वैसे लोग तो कीड़े होते हैं। नित्य विपत्तियों से घिरे रहते हैं, कहीं भी सुख-शान्ति नहीं मिलती है। जो इन तीन तुच्छ गुणों को समझकर अपनी आत्मा में गम्भीरतापूर्वक विचार करता है वह सब बन्धनों को तोड़कर सहज ही संसार से तर जाता है। १७१ इसलिए अहंकार को तुच्छ समझकर आत्मा को स्वतः पूर्ण जानकर आत्मिक विचार में तुम अपने चित्त को लगाओ—ये मैंने सत्य वर्णन किया है, अतः तुम इसे जान लेना। १७२ बाल्मीकि द्वारा इन तत्वों को पाकर उस वीर कुश को ज्ञान का बोध हो गया। नित्य वे मुक्त ही थे, तथापि संसार में वे कार्य करते रहे। १७३ एक

मुक्तै थिया नित्य तथापि याहाँ ।
गर्दैं रह्या कार्य त लोकमाहाँ ॥१७३॥

एक् दिन् बाल्मिकिले त अर्ति दिनुभो हे पुत्र हो ! गाउँछौ ।
तिम्रो गान् सुनि खूशि हुन्छ दुनियाँ अत्यन्त यश् पाउँछौ ॥
श्रीराम्का पनि गान सुन्नकन मन् आयो र गाऊ भनी ।
लाया गाउन यो भन्या दुइ जना मीलेर गाया पनि ॥१७४॥

गान्ले खुश् भइ केहि बक्सिस भयो बक्सिस् भयाको जति ।
चीज्छन् सब् तृण झैं गरेर तिमिले केही नलीया रती ॥
अर्ती बाल्मिकिदेखि पाइ कुशलव् अत्यन्त खूशी भई ।
लाग्या गाउन दूइ भाइ ऋषिका साम्ने अगाड़ी गई ॥१७५॥

सून्या तेहि अपूर्व गान् र रघुनाथ् ज्यूका पनी मन् गयो ।
मेरो मन् पनि गानले हरिलिया को हुन् इ भन्न्या भयो ॥
साम्ने डाकि म सुन्छु फेरि यहि गान् भन्न्या इरादा धरी ।
राजा पण्डित वृद्ध जन्हरु बहुत् राखी सभा खुप् गरी ॥१७६॥

गान् सुन्छू अब डाक याहिंति कुमार् आऊन् सभामा भनी ।
हूकूम् भो र हुकूमले दुइ कुमार् आया सभामा पनि ॥
देख्या मूर्ति कुमारका र सबले आश्चर्य मान्या पनि ।
कस्का हुन् इ कुमार् कसो गरि भया रामै सरीका भनी ॥१७७॥

दिन बाल्मीकि ने शिक्षा देने की कृपा की। हे पुत्रो ! तुम लोग गाते हो। तुम्हारा गान सुनकर दुनिया के लोग प्रसन्न होंगे और तुम अत्यन्त यश प्राप्त करोगे। श्रीराम को भी गान सुनने का मन हुआ और आकर उन्हें गाने के लिए कहा और उन दोनों जनों ने मिलकर गाया। १७४ गान सुनकर प्रसन्न होकर कुछ उपहार देंगे। उपहार में जो भी वस्तु होगी, सबको तृण समझकर कुछ भी न लेना। बाल्मीकि की इस शिक्षा को पाकर कुश और लव अत्यन्त प्रसन्न हुए और आगे चलते हुए दोनों भाई गान करने लगे। १७५ उस अपूर्व गान को सुनकर रघुनाथ का मन भी उस ओर आकृष्ट हुआ। ऐसे गान से मेरे मन को हर लेने वाले ये बालक कौन है ? सामने बुलाकर यही गान मैं पुनः सुनूँगा ! ऐसा मन में निश्चय कर राजाओं, पंडितों तथा अनेक वृद्धजनों को बुलाकर सभा का आयोजन किया। १७६ वे कुमार सभा में आ जायें और अब यहीं उनके गान का श्रवण करता हूँ। ऐसी आज्ञा को सुनकर दोनों कुमार सभा में आये। इन कुमारों की मूर्ति देखकर सभी आश्चर्य में

रामैका सरि वस्त्र भूषण भया रामचन्द्र कुन् हुन् भनी ।
चिन्हैलाइ कठिन् हुन्याछ यहि बात् सब् बोल्न लाग्या पनि ।।
लाग्या गाउन भाइ दूइ जब ता गान्धार सुर्‌ले गरी ।
गान् सुन्दा बहुतै खुशी हुनुभयो त्रैलोक्यका नाथ् हरि।।१७८।।

हूकूम् ताहिं भरत्‌जिलाई दिनुभो लौ देउ खिल्लत् भनी ।
दस् हज्जार् रुपियाँ लगीकन दिया जल्दी भरत्‌ले पनि ।
दस् हज्जार् रुपियाँ दिया तपनि त्यो सब् तृण् सरीको गरी ।
जाहाँ वाल्मिकिजी थिया उहिं गया धन् छोडि तेसै घरि ।।१७९।।

जान्या श्रीरघुनाथले इ त सिता- जीका कुमार् हुन् भनी ।
त्यै बीच्‌मा प्रभुले हुकूम् दिनुभयो शत्रुघ्नलाई पनि ।।
हे भाई तिमि जल्दि जाइ अहिले वाल्मीकिजी छन् जहाँ ।
सीताजी र ति वाल्मिकीकन लिई दौडेर आऊ यहाँ ।।१८०।।

सीतालाइ नियाँ म दिन्छु अहिले सीताजि नीयाँ पसून् ।
आफ्नू दोष अफालि निर्मल भई खुश् भै सिताजी बसून् ।।
हूकूम् श्रीरघुनाथको यति हुँदा शत्रुघ्न जल्दी गया ।
वाल्मीकी ऋषिको परी चरणमा सब् बिन्ति गर्दा भया ।।१८१।।

पड़ गये और कहने लगे कि ये कुमार किसके हैं जो राम के समान दिखते हैं। १७७ यदि राम के समान वस्त्र-आभूषणों से सुसज्जित होते तो राम कौन हैं, पहचानना भी कठिन होता। यही चर्चा सब लोग करने लगे। जब दोनों भाई गान्धर्व स्वरों में गाने लगे। सुमधुर गान सुनकर त्रैलोक्यनाथ हरि अत्यन्त प्रसन्न हुए। १७८ उसी समय भरत जी को आज्ञा दी कि उन्हें यह पुरस्कार दे दो। भरत ने भी शीघ्रता से दस हजार मुद्रा ले जाकर दीं। दस हजार मुद्रा देने पर भी उसे तृण बराबर समझकर उस धन को वहीं छोड़कर उसी समय वे कुमार, जहाँ वाल्मीकि मुनि थे, चले गये। १७९ श्रीरघुनाथ ने तो जान लिया कि ये कुमार सीता जी के हैं। उसी बीच प्रभु ने शत्रुघ्न को आज्ञा दी— हे भ्रात! तुम शीघ्र वाल्मीकि जी के यहाँ जाओ और वाल्मीकि जी एवं सीता को साथ में लेकर शीघ्र यहाँ आओ। १८० मैं सीता को न्याय प्रदान करूँगा। अब परीक्षा देने के लिए सीता जी अपने दोषों का परित्यागकर निर्मल एवं प्रसन्न होकर रहें। श्रीरघुनाथ की ऐसी आज्ञा पाकर शत्रुघ्न तुरन्त चले गये और बालमीकि ऋषि के चरणों में पड़कर विनती करने लगे। १८१ विनती सुनकर राम का जो आशय था, मुनि ने वह जान लिया और तुरन्त उत्तर

सून्या बिन्ति र जुनूत आशयथियो रामूको उ जानी लिया ।
पस्लिन् भोलिनियाँ सिताभनि तहाँ उत्तर् तुरुन्तै दिया ॥
उत्तर् वाल्मिकिदेखि पाइकन ता शत्रुघ्न फर्की गया ।
श्रीराम्चन्द्रजिका पुगी हजुरमा त्यो बिन्ति गर्दा भया ॥१८२॥

सून्नूभो जब उत्तरा ति ऋषिको ताहीं प्रभूले पनि ।
पस्छिन्भोलिसितानियाँभनि हुकूम् भो लोक जानून् भनी ॥
हूकूम् येति सुन्या र लोक पनि सब् हेरौं तमासा भनी ।
ब्राह्मण् क्षत्रिय वैश्य शूद्र जति छन् आया महर्षी पनि ॥१८३॥

आया वाल्मिकिताहिं तेहि बिचमा सीताजिलाई लिई ।
सीताजी पनि यज्ञमा पुगिगइन् श्रीराममा मन् दिई ।
सीताजीकन देखि लोकहरु सब् वेस् भो बहुत् वेस् भनी ।
लाग्या बोल्न तहाँ तसै बखतमा तीवाल्मिकीजी पनि ॥१८४॥

श्रीराम्जीसित बिन्ति गर्दछु भनी राम्का अगाडी सन्या ।
सीताजी अति शुद्ध छन् भनि बहुत् विन्ती हजूर्मा गन्या ॥
छोरै हुन् कुश लव् पनी हजुरका बिन्ती कहाँतक् गरूँ ।
क्यै शंका मनमा रह्या हजुरमा गर्छू शपथ् मै बरु ॥१८५॥

बोल्याँ केहि झुटो भन्या हजुरमा बोल्यो झुटो वात् भनी ।
निष्फल् आज गरून् प्रभू जतिथिया मेरा तपस्या पनि ॥

दिया कि कल सीता परीक्षा देंगी । वाल्मीकि से उत्तर पाकर शत्रुघ्न लौट गये और श्रीरामचन्द्र जी की सेवा में उपस्थित होकर वह विनती करने लगे । १८२ जब प्रभु ने भी ऋषि के उत्तरों को सुनने की कृपा की तभी सीता द्वारा कल परीक्षा दिये जाने की सूचना से लोगों को अवगत कराने की आज्ञा हुई । ऐसी आज्ञा को सुनकर सर्वलोकजन भी कौतुक देखने के लिए, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र जो भी थे तथा महर्षिगण, सभी चले आये । १८३ कुछ क्षणों के पश्चात् सीता जी को लेकर महर्षि बाल्मीकि भी वहाँ आ गये । सीता जी भी श्रीराम में ध्यान धरकर यज्ञ के निकट पहुँच गयीं । सीता जी को देख सर्वजन परस्पर कहने लगे कि यह बहुत ही उत्तम हुआ । १८४ उसी समय वाल्मीकि भी श्रीराम से विनती करने के लिए उनके आगे आये । विनती करते हुए कहने लगे कि सीता जी अति शुद्ध हैं । कुश-लव भी आप ही के पुत्र हैं । इस विषय पर कहाँ तक विनती करूँ । श्रीमन् अपने मन में किंचित् मात्र भी शंका न रखें, इसके लिए मैं शपथ देता हूँ । १८५ यदि

सून्या वाल्मिकिको शपथ् र रघुनाथ् ज्यूको हुकूम् यो भयो ।
मेरो संशय छैन कत्ति मनमा साँचो शपथ् हुन्छ यो ।।८६।।

लंकामा पनि एक् नियाँ अघि दिंदा जीतिन् र सीता लियाँ ।
ऐले पो अपवाद् गर्‍या र जनले सो मेट्न छाडीदियाँ ।
अर्कांले अपवाद् गर्‍या भनि उसै साँचै सिता त्याग् गर्‍या ।
तेस्तै भो त पनी रिसानि नहवस् यस्मा क्षमापन्गर्‍या ।।८७।।

मेरै पुत्र त हुन् दुवै इ कुश लव् जम्ल्याह पैदा भया ।
सीताजी पनि शुद्ध छन् सब बुझ्याँ सन्देह मेरा गया ।।
हूकूम् यो रघुनाथको हुन गयो हूकूम् भयो तापनि ।
सीताजी त तयार् भइन् तस बखत् पस्छू म नीयाँ भनी ।।१८८।।

ब्रह्मादीहरु लोकपाल्हरु सबै आया सीता छन् जहाँ ।
ब्रह्मादीहरुका अगाडि ति सिता क्यै बोल्न लागिन् तहाँ ।।
जस्तो भक्ति छ रामका चरणमा मेरो उ जानीलिउन् ।
साँची छू त मलाइ जान अहिले बाटो भुमीले दिउन् ।।१८९।।

यस्तो वाणि सिताजिको पृथिविले सूनी सकीथिन् जसै ।
बेस् सिंहासन एक् तयार गरि सिता जीलाइ राखिन् तसै ।

मैंने श्रीमन् से कुछ भी असत्य कहा है तो मेरे असत्य से जो भी मेरी तपस्या है उसे आज आप निष्फल कर दें। बाल्मीकि की शपथ को सुनकर रघुनाथ की यह आज्ञा हुई कि मेरे मन में कुछ भी संशय नहीं है, यह शपथ सब सत्य है। १८६ पहले लंका में भी एक बार परीक्षा लेने पर सीता सफल उतरीं और सीता को साथ ले आया। परन्तु उसके बाद लोक द्वारा अपवाद किये जाने के कारण उसे मिटाने हेतु परित्याग किया। और अन्य लोगों के द्वारा अपवाद किये से ही मैंने सीता का त्याग किया। ऐसा होने पर आप कृपया क्रोधित न हों और इसके लिए मुझे क्षमा करें। १८७ कुश-लव ये दोनों मेरे ही तो पुत्र हैं जो जुड़वे उत्पन्न हुए। सीता जी भी शुद्ध हैं। मैं सब समझ गया और मेरा सन्देह भी दूर हो गया। ऐसा रघुनाथ द्वारा कहे जाने पर सीता जी परीक्षा के लिए इस समय भी तत्पर हो गयीं। १८८ सीता जहाँ थीं वहाँ ब्रह्मादि एवं लोकपाल सब आ गये। ब्रह्मादि के सम्मुख सीता कुछ कहने लगीं कि मेरी जैसी भक्ति राम के चरण में है उसे जान ले और मैं सच्ची हूँ तो मुझे जानने के लिए भूमि मुझे अभी मार्ग दे। १८९ सीता जी की ऐसी वाणी जब पृथ्वी ने सुनी तो एक सुन्दर सिंहासन प्रकट कर सीता जी को उसी में

त्यै सिंहासनमा बसी जननिले औदास्य मन्मा लिइन् ।
सीताजीकन जानलाइ बढिया बाटो भुमीले दिइन् ॥१९०॥

यस् रीत्ले जननी सीता जब गइन् खुप् मोहमा लोक् पऱ्या ।
इन्द्रादिहरुले त खु खुप्शि हुँदै वेस् पुष्पवृष्टी गऱ्या ॥
सीताको तहिं शोक् गऱ्याप्रभुजिले संसारि जस्ता भई ।
ब्रह्मादीहरुले बुझाउनुभयो साम्ने अगाडी गई ॥१९१॥

बूझीबक्सनु भो र शोक् पर गरी बाँकी रह्याका थिया ।
सब् सम्पूर्ण गरेर नान् दिनुभयो ब्राह्मण् तहाँ सब् थिया ॥
जो ता यज्ञमहाँ थिया जनहरू धन्ले ति पूर्ण भया ।
बीदा बक्सनुभो र देशि जति हुन् बीदा हुँदै सब् गया ॥१९२॥

सीताजी सितको वियोग् जब भयो श्रीराम् विरक्तै भया ।
यज्ञस्थान्कन छोडि पुत्र सँग ली जल्दी अयोध्या गया ॥
कौसल्या जननी पनी खुशि भइन् श्रीराम आया भनी ।
लक्षण् अन्त्य निहारि ज्ञानकि कथा चर्चा गरिन् बेस् भनी ॥९३॥

कौसल्या रामलाई त्रिभुवन पतिका नाथ् रमानाथ जानी ।
कुन् पाठ्ले बन्ध छुट्ला भनिकन मनमा खुप् ठुलो पीर मानी ॥

रख लिया । उसी सिंहासन पर बैठकर जननी सीता ने अपने मन में उदासीनता का अनुभव किया । तदनन्तर भूमि ने सीता जी को जाने के लिए एक सुगम मार्ग खोल दिया । १९० इसी रीति से जब सीता चली गयीं, सब लोग अत्यन्त मोह में पड़ गये । इन्द्रादि ने अत्यन्त प्रसन्न होते हुए उत्तम पुष्पवृष्टि की । वहीं प्रभु जी ने सांसारिक मनुष्य की भाँति सीता के लिए शोक किया और ब्रह्मादि ने आगे आकर प्रभु को समझाया । १९१ सबको समझाकर, शोक को दूर करके जो भी कार्य शेष थे, सब पूर्ण किये और जो ब्राह्मण वहाँ थे उन्हें दान आदि दिये । यज्ञ में जो लोग थे उन्हें धन से पूर्ण कर दिया । वन्धु-बान्धव जो भी थे सबको विदा देने की कृपा की । इस प्रकार सब विदा होकर चले गये । १९२ सीता जी से जब वियोग हुआ, श्रीराम पर विरक्ति छा गयी । यज्ञ स्थान को छोड़कर पुत्रों को साथ में लेकर तुरन्त अयोध्या चले गये । जननि कौशल्या श्रीराम के आ जाने पर प्रसन्न हुई । लक्ष्मण की ओर ध्यान से देखकर ज्ञान की चर्चा की । १९३ कौशल्या राम को त्रिभुवन पति के नाथ रमानाथ अत्यन्त जानकर क्लेषयुक्त मन से यह जानने के लिए कि किस विधि से बंधन से छुटकारा प्राप्त

आइन् पाऊ परी फेर् विनति पनि गरिन् रामजीका चरण्मा ।
कुन्पाठ्लेबधछुट्छन्, यतिमकन् कहू आज आयाँ शरण्मा ।।९४।।
यस्तो बिन्ती सुनी खुपखुशि पनि हुनुभो बन्ध छुट्न्या उपाई ।
सब्भन्दा येहि ठूलो भनि कहनुभयो भक्तियोग् माइलाई ।।
भक्तीयोग्मा पनी जो त्रिगुण रहितकी भक्ति छन् सोहि गर्नू ।
गङ्गाजीका प्रवाहै सरि गरि यस मन्लाइ मैमाथि धर्नू ।।१९५।।

मै माथी चित्त धर्न्या जनहरु सहजै भक्तिमान् होइजान्छन् ।
चार् छन् मुक्ती ति चारैकन पनि तिनले तृण् सरीका त मान्छन् ।।
मै माथी चित्त धर्न्या भनिकन बुझिल्यौ साधना गर्नमाहाँ ।
तेस्को वर्णन् म गर्छू अब सब बुझिल्यौ सब् खुलस्ता छ याहाँ ।।९६।।

इच्छा कांहि नराखनू विषयमा सब् धर्म थाम्नू पनि ।
सत् काम् गर्नु विचार राख्नु मनमा हिंसा घटीया भनी ।।
मेरो दर्शन गर्नु खुप् स्तुति पुजा गर्नू स्मरण् खुप् गरी ।
पाऊमा परि दण्डवत् गरिलिनू जान्छन् यसैले तरी ।।१९७।।

सब् प्राणीहरुमा म छू यति विचार् राख्नू असङ्गी भई ।
साँच्चो बोल्नु, बड़ा मिल्या चरणमा पर्नू तुरुन्तै गई ।।

होगा, राम के पास आकर उनके पाँव में पड़कर विनती करने लगीं। किस पाठ के द्वारा बन्धन मुक्त होता है, बस यही आज मुझे बता दें। इसीलिए शरण में आयी हूँ। १९४ राम ऐसी विनती सुन अत्यन्त प्रसन्न हुए और बंधन से छुटकारा पाने का उपाय जो सबसे महान् है, उसे भक्तियुक्त माता को बताने की कृपा की। भक्तियोग में भी जो त्रिगुण-रहित भक्ति है उसे ही करना। मन को, गंगा के प्रवाह के समान बनाकर मुझपर ही लगाना। १९५ मुझ पर मन लगानेवाले जन सहज ही भक्ति से युक्त हो जाते हैं। मुक्ति चार प्रकार की है। फिर भी उन चारों को तृण के समान मानकर मुझ पर चित्त लगाने के लिए साधना को समझते हुए त्यागकर उसके सम्बन्ध में मैं यहाँ वर्णन करता हूँ। जो बिल्कुल स्पष्ट है उसे समझ लो। १९६ अन्य किसी विषय की ओर इच्छा को प्रेरित न होने देना। सब धर्मों का पालन करना, मन में हिंसा को बहुत ही क्षुद्र समझकर सदैव सत्कार्य करना। मेरे दर्शन करना तथा ध्यान से स्मरण करके पूजा एवं स्तुति भी करना। पाँव में नतमस्तक होकर दण्डवत करना जिसके फलस्वरूप संसार से तरण हो जायगा। १९७ मैं सब प्राणियों में व्याप्त हूँ, यही विचार निस्संकोच

गर्नू दु:खि-उपर् दया सम भया तिन्मा त मैत्री पनि ।
सेवा गर्नु यमादिको पनि असल् बाटा यिनै हुन् भनी ॥१९८॥
वेदान्तैकन सुन्नु गर्नु खुशि भै कीर्तन् पनी नामको ।
सज्जन्को सतसङ्ग गर्नु-दिन दिन् सोझो भई कामको ॥
मेरो देह भन्याउन्या अति ठुलो छोड्नू अहङ्कार् पनि ।
यो मन् शुद्ध गराइ बुझ्नु जति छन् सब् धर्म मेरा पनि ॥१९९॥
जस्तै गन्ध रहन्छ फूलहरुमा फूल्मा रह्याको पनि ॥
वायूका वशमा परीकन उडी आऊँछ नाक्मा पनि ॥
तेस्तो योग विषे दियो मन भन्या त्यै योग वायू बनी ।
गन्धै झैं गरि मन् उडायर सहज् ल्याऊँछ मैमा अनि ॥२००॥
सर्वात्मा म छु जो त येति नबुझी पूजा फकत् गर्दछन् ।
तीदेखी खुश हुन्न कत्ति ति गरुन् व्यर्थै शरीर् हर्दछन् ॥
पूजा गर्नु त तेहि हो उ नगर्‍या तिन्ले पुजा कुन् गर्‍या ।
मृत्यूको भय हुन्छ तिन्कन सदा संसारमा ती पर्‍या ॥२०१॥
सर्वात्मा म छु येति जानि सब् जीव् लाई नमस्कार् गरून् ।
जीवात्मा परमात्म एक् बुझि सदा अन्त:करण्मा धरून् ॥

अपने मन में रखना । सच बोलना, वड़ों से मिलने पर तुरन्त चरण पर पड़ जाना; दुखियों पर दया करना और शत्रु होने पर भी उनसे मित्रता रखना, यम आदि की सेवा करना भी एक उत्तम मार्ग समझना । १९८ वेद आदि का श्रवण करना, प्रसन्न होकर सदैव उस नाम का कीर्तन करना, सज्जनों की संगत करना तथा प्रतिदिन कर्तव्य के प्रति निष्ठावान् रहना । मेरा देह अतिमहान् है, कहकर अहंकार न करना । इस मन को शुद्ध करके सब धर्मों को जो भी हों अपना ही समझना । १९९ जिस प्रकार फूल तथा फलों की सुगंध वायु के वशीभूत होकर उड़ते हुए नाक में आ जाती है, उसी प्रकार जिस योग विषय की ओर ध्यान दिया जाता है वही योग वायु भी महक के समान ही मन को उड़ाकर सहज ही मुझमें ले आती है । २०० सर्वात्मा तो मैं हूँ और जो इसे बिना समझे पूजा नहीं करते हैं उससे मैं किंचित् भी प्रसन्न नहीं होता हूँ । ऐसे लोग अपने शरीर को व्यर्थ ही गँवाते हैं । वही तो पूजा है और उसे भी न किया तो उसने कौन सी पूजा की । ऐसे लोग जब संसार में आते हैं तो सदैव मृत्यु से भयभीत रहते हैं । २०१ सर्वात्मा मैं हूँ, यही जानकर सब जीवों को नमस्कार करना । जीवात्मा तथा परमात्मा को एक

मातर् ! मार्ग त तर्नलाइ सजिलो यै हो छ यस्तै गरी ।
संसार्का कति पार् गया सहजमा संसार सागर् तरी ॥२०२॥
याहाँलाइ त झन् सहज् छ म त हूँ पुत्रै र पुत्रै भनी ।
संझी मात्र दिनू हवस् यति गऱ्या छुट्नन् इ बन्धन् पनि ॥
कौसल्या रघुनाथको यति हुकूम् सूनिन् र मुक्तै भइन् ।
कैकेयी पनि देह छोडि दशरथ् जीका हजूर्मा गइन् ॥२०३॥

तस्तै सुमित्रा दशरथ्कि रानी ।
संसारका सौख् पनि तुच्छ जानी ॥
प्रारब्धका बन्धनलाइ तोडी ।
पौंचिन् पतीथ्यैं यहिं देह छोडी ॥२०४॥

पापात्मा अति दुष्ट शत्रु सबका तीन् कोटि गन्धर्व छन् ।
ई सब्लाइ मराउनू अब पऱ्यो बढ्नन् नमाऱ्या त झन् ॥
यस् सुर्ले रघुनाथका हजुरमा एक् दिन् युधाजित् गया ।
पाऱ्या बिन्ति भरत् गई हुकुमले गन्धर्व मार्दा भया ॥२०५॥

पूरी एक् तहिं पुष्करावति बनी पुष्कर् त राजा भया ।
अर्को तक्षशिला पुरी बनि तहाँ राज् तक्ष गर्दा भया ॥

ही समझकर सदैव अपने अन्तःकरण में ध्यान रखना । हे माता ! यही सब मार्ग हैं जिसके द्वारा संसार से सरलतापूर्वक तर सकते है । संसार के कितने ही लोग इस प्रकार सहज ही संसारसागर से पार हो गये । २०२ माता ! आपके लिए तो और भी सरल है,—मुझे अपना पुत्र और पुत्री जानकर केवल स्मरण मात्र यदि करती है तो इन बन्धनों से मुक्ति मिल जायेगी । रघुनाथ के इन वचनों को कौशल्या ने सुन लिया और मुक्ति प्राप्त की । कैकेयी भी देह त्यागकर दशरथ जी के पास चली गयीं । २०३ उसी प्रकार दशरथ की रानी सुमित्रा संसार के सर्वसुख-भोगों को जानकर प्रारब्ध के उन समस्त बन्धनों को तोड़कर शरीर यहीं त्यागकर पति के पहुँच पास गयीं । २०४ अत्यन्त दुष्ट शत्रु पापात्मा गन्धर्वों की संख्या तीन कोटि है इन सबको अब मार डालना होगा, अन्यथा इनकी संख्या में और वृद्धि होगी । इस विचार से एक दिन युधाजित रघुनाथ के समक्ष गये और विनती की । इस पर आज्ञानुसार भरत ने जाकर गन्धर्वो का संहार कर डाला । २०५ वहीं एक पुष्करावति पुरी की स्थापना भी हुई, और उस पुरी का राजा पुष्कल हुआ । दूसरी तक्षशिला पुरी बनी जहाँ तक्ष राज करने लगे ।

छोरा पुष्कर तक्षलाइ तिमिले राज् गर्नु याहीं भनी ।
फर्की श्रीरघुनाथका हजुरमा पौंच्या भरत्‌जी पनि ॥२०६॥
लक्ष्मण्‌लाइ पनी हुकूम् तहिं भयो भाई ! तिमीले पनि ।
छोरालाइ लगेर पश्चिम मुलुक्‌मा राज्य देऊ भनी ॥
पश्चिम्‌मा अति दुष्ट भिल्लहरु छन् तिन्‌लाइ संहार् गरी ।
दूई पूरि बनाउनू पनि तहाँ रत्नादि दौलत् भरी ॥२०७॥
राजा अंगद चित्रकेतु इ दुवैलाई बनाया तहाँ ।
छोरालाइ रजाइँ दीकन तिभी आया तुरुन्तै यहाँ ॥
हूकूम् श्रीरघुनाथको यति हुँदा लक्ष्मण् तुरुन्तै गया ।
जो जो हुन् अति दुष्ट भिल्लहरु सब् तिन्‌लाइ मार्दा भया ॥२०८॥
पूरी दूइ बनाइ लक्ष्मणजिले ताहीं रजाई दिया ।
छोरालाइ र जल्दि लक्ष्मण गया जाहाँ रघूनाथ् थिया ॥
एक्‌दिन् काल् ऋषि झै भएर रघुनाथ् ज्यूलाइ भेट्छू भनी ।
आया श्रीरघुनाथ्‌जिका पुरिमहाँ चिन्दैन कोही पनि ॥२०९॥
पौंच्या द्वार तलक् जसै प्रभुजिका चौकी त लक्ष्मण् थिया ।
द्वार्‌मा एक् ऋषि छन् खडा भनि गई हाजिर् पुर्‍याई दिया ॥

पुत्र पुष्कल तथा तक्ष को वहीं राज्य करने की अनुमति देकर भरत लौटकर पुनः रघुनाथ के पास पहुँच गये। २०६ उसी समय (भगवान् राम ने) लक्ष्मण जी को भी आज्ञा दी—भाई ! तुम भी अपने पुत्र को ले जाकर पश्चिम देश का राज्य दे दो। पश्चिम में अति दुष्ट मल्ल आदि है, उनका संहारकर रत्न आदि से भरपूर कर दो नगरियों की स्थापना करो। २०७ अंगद एवं चित्रकेतु इन दोनों को वहाँ का राजा बनाओ; और पुत्र को राज्य देकर तुम तुरन्त यहाँ लौट आओ। श्रीरघुनाथ की इतनी आज्ञा होने पर लक्ष्मण तुरन्त चले गये और जितने भी अति दुष्ट मल्ल आदि थे उन सबों का वध किया। २०८ दो नगरियों की स्थापना कर लक्ष्मण जी ने अपने पुत्र को राज्य सौंपकर तुरन्त जहाँ रघुनाथ थे, चले आये। एक दिन काल ऋषि का रूप धारणकर रघुनाथ से भेंट करने के लिए आया। उसने यह सोचा कि श्रीरघुनाथ जी की नगरी में उसे कोई पहचान नहीं पायेगा। २०९ जब द्वार तक पहुँचा, उस समय प्रभु जी के रक्षक के रूप में लक्ष्मण वहाँ थे। द्वार पर एक ऋषि के आने की सूचना तुरन्त जाकर रघुनाथ को दे दी। ये समाचार सुनकर प्रभु जी ने उन्हें तुरन्त ले आने की आज्ञा दी। लक्ष्मण भी शीघ्रता

हाजिर् सूनि हुकूम् भयो प्रभुजिको ल्याऊ तुरुन्तै भनी ।
लक्ष्मण्ले पनि जल्दि गै हजुरमा ल्याया इनै हुन् भनी ॥२१०॥
पौंच्या श्रीरघुनाथका हजुरमा काल् विप्ररूप्ले जसै ।
'त्वं वर्धस्व' भनेर आशिष दिया श्रीरामलाई तसै ॥
सत्कार् श्रीरघुनाथले पनि गर्‍या पैल्यै कुशल् क्षेम् गरी ।
तिन्को आशय बुझ्नलाइ हरिले सोध्या अगाडी सरी ॥२११॥

कुन् काम गर्नू छ र जल्दि आई ।
भेट् गर्नुभो आज यहाँ मलाई ॥
हूकूम् प्रभूको जब येति पाया ।
ती काल् पुरुष्ले पनि बिन्ति लाया ॥२१२॥
हे नाथ् ! चरण्मा अहिले म पर्छु ।
एकान्त बक्स्या हुँदि बिन्ति गर्छु ॥
मेरा कुरा कोहि नसुन्न पाउन् ।
सुन्नन् त मारीदिनु दूर जाउन् ॥२१३॥
ती काल्पुरुष्को यति बिन्ति सूनी ।
बेसै इ भन्छन् भनि भित्र गूनी ॥
हूकूम् भयो लक्ष्मणलाइ ताहाँ ।
कोही नआउन् अब भित्र याहाँ ॥२१४॥

से जाकर (ऋषिरूपी) काल को प्रभु के सम्मुख ले आये। २१० जैसे विप्र रूप काल श्रीरघुनाथ की सेवा में पहुँचे वैसे ही श्रीराम को "त्वंम् वर्धस्व" कहकर आशीर्वाद दिया। श्रीरघुनाथ ने भी प्रथम उनका स्वागत सत्कार किया और उनके आने का आशय समझने के लिए सर्वप्रथम कुशल-क्षेम पूछा। २११ कौन सा कार्य शीघ्र करना है, जिस हेतु यहाँ आकर आज आपने मुझसे भेंट करने की कृपा की। जब प्रभु की इतनी आज्ञा पायी तो उस काल पुरुष ने विनती की। २१२ हे नाथ ! मैं चरण में उपस्थित हूँ, यदि आप एकान्त का अवसर देने की कृपा करें तो कुछ विनती करूँ। मेरी वार्ता अन्य कोई न सुनने पाये। यदि कोई सुन लेगा तो उसका जीवन हरण कर लूँगा। अतः दूर ही रहना चाहिए। २१३ उस काल-पुरुष की यह विनती सुनकर तथा अन्तरात्मा में यह जानकर कि ये ठीक ही कहते हैं, लक्ष्मण को आदेश देने की कृपा की कि अब यहाँ अन्दर किसीका प्रवेश न होने पाये। २१४ यदि कोई अन्दर आता है तो वह ये जान ले कि उसे मरना है। वह अत्यन्त संकट में फँस जायेगा। एकान्त यहाँ

क्वै आउनन् भित्र त मर्न जानन् ।
अत्यन्त गोता विहकै ति खानन् ॥
एकान्ततक् कोहि यहाँ नआउन् ।
यो उर्दि सब्ले तिमिदेखि पाउन् ॥२१५॥

सून्यो हुकूम् येति र काल बोल्यो ।
आफ्ना सबै आशय ताहि खोल्यो ॥
हे नाथ् ! म हूँ काल् सबलाइ हर्न्या ।
मालुम् छ यो सब् किन विन्ति गर्न्या ॥२१६॥

ब्रह्माजिको विन्ति लिएर आयाँ ।
खुप् भाग्यले दर्शन आज पायाँ ॥
ब्रह्माजिको विन्ति म आज गर्छु ।
होला हुकूम् जो उहि शीर धर्छु ॥२१७॥

सृष्टीदेखि अगाड़ि पूर्ण रुपले आत्मा स्वरूप् एक् थियो ।
नारायण् जलशायि रूप त पाछी यै सृष्टि खातिर् लियो ॥
स्वामित्का तहिं नाभिका कमलमा एक्लै म पैदा भयाँ ।
सृष्टी गर्न हुकूम् हुँदा हुकुमले लोक् सृष्टि गर्दै गयाँ ॥२१८॥
जस्ले दुःख दिया प्रजाकन तिनै- लाई म मारूँ भनी ।
युग् युग्मा अवतार् समेत् लिनुभयो यस्तै अगाडी पनि ॥

कोई भी न आये। ऐसी आज्ञा की जानकारी सब लोग तुमसे प्राप्त करें। २१५ यह आज्ञा सुनने के पश्चात् काल ने अपना सम्पूर्ण आशय सविस्तार वर्णन किया। हे नाथ ! मैं सबका हरण करनेवाला हूँ। ये सबको मालूम है। अतः क्या विनय करूँ। २१६ मैं ब्रह्मा जी का संदेश लेकर आया हूँ और अत्यन्त सौभाग्य से आज आपके दर्शन प्राप्त कर रहा हूँ। आज मैं आपके सम्मुख ब्रह्मा जी की विनति प्रस्तुत करता हूँ; जो आज्ञा होगी उसे ही शिरोधार्य करूँगा। २१७ (ब्रह्मा जी का कथन है—) आप सृष्टि के पूर्व आत्मस्वरूप एक ही पूर्णरूप थे। जल में विराजमान नारायण का रूप तो इसी सृष्टि के निमित्त बाद में आपने धारण किया है, स्वामी के नाभि से निकले हुए कमल से मैं अकेला ही उत्पन्न हुआ। उपरांत सृष्टि रचने की आज्ञा हुई, और तदनुसार मैं लोक-सृष्टि करता गया। २१८ प्रजाओं को जिन्होंने सताया उन्हें मारने के निमित्त युग-युग में अवतार भी लेने की कृपा की। इसी प्रकार पहले भी अवतरित होते रहे। अभी भी यह अवतार पृथ्वी के भार हरने के लिए ही

ऐले यो अवतार् पनी पृथिविकै भार् हर्न खातिर् धरी ।
भूको भार् पनि टारिबक्सनुभयो सब् दुष्ट संहार् गरी ।।२१९।।
एघारै म हजार वर्ष रहुँला जाँदा हुकूम् जो भयो ।
सोही वर्ष गणीतले गनिलिदा एघार हज्जार् गयो ।।
बस्नैको अरु मन् छ पो त भगवान् ! इच्छा हजूर्को हवस् ।
याहाँ आउन मन् भया बखत भो लौ जल्दि पाल्नूहवस ।।२०।।
ब्रह्माको विनती सुनेर रघुनाथ् हाँसी तिनै कालका ।
साम्ने बात्चित गर्नुभो पनि बहुत् सब् जानकै चालका ।।
दुर्वासा यहि बीचमा तहिं गया राम्लाइ भेट्छू भनी ।
लक्ष्मण् द्वारमहाँ थिया र ऋषिले तिन्लाइ भेट्या पनि ।।२२१।।
लक्ष्मण्लाइ तहाँ भन्या त ऋषिले हाजिर् गराऊ भनी ।
लक्ष्मण्लाइ कठिन् भयो कठिनले बिन्ती लगाया पनि ।।
भित्रै जान हुँदैन जाउँ कसरी विस्तार् कहाँतक् गरूँ ।
जुन् काम् खातिर आज आउनु भयो सो पूर्ण गर्छू बरु ।।२२२।।
लक्ष्मण्ले यति ती मुनीकन तहाँ बिन्ती गऱ्याथ्या जसै ।
दुर्वासा ऋषि हुन् बडा त पनि खुप् रीसाइ बोल्या तसै ।।

आपने लिया है । भू-भार को भी सब दुष्टों का संहार के करने बाद हरण करने की कृपा की । २१९ आते समय यह आज्ञा देने की कृपा की थी कि मैं ग्यारह हजार वर्ष रहूँगा । गणित के अनुसार उक्त वर्षों की गणना करने पर ग्यारह हजार का युग पूरा हो गया । अतः भगवन् ! यहाँ रहने की और इच्छा तो नहीं है ? बताने की कृपा करें । यदि यहाँ से चलने की इच्छा हो तो समय हो गया है तुरन्त चलने की कृपा करें । २२० ब्रह्मा की इन बातों को सुनकर रघुनाथ जी हँसते हुए उस काल के समक्ष इस प्रकार बोले, जिससे उनके वास्तव में जाने का संकेत हुआ । इसी बीच दुर्वासा ऋषि राम से भेंट करने के लिए वहाँ आये । द्वार पर लक्ष्मण जी थे, अतः ऋषि की उन्हीं के साथ भेंट हुई । २२१ ऋषि ने लक्ष्मण जी से श्रीराम के समीप ले चलने के लिए कहा । लक्ष्मण जी को कठिनाई अनुभव हुई । अतः असमंजस के साथ उन्होंने इस प्रकार विनती की कि महाराज ! अन्दर जाने के लिए निषेध है । अतः किस प्रकार जाया जाये और इस सम्बन्ध में मैं कहाँ तक विस्तार कहूँ । जिस कार्य के लिए आपने यहाँ आने की आज कृपा की है उसे मैं ही पूर्णकर्ता हेतु प्रस्तुत हूँ । २२२ लक्ष्मण ने मुनि से जैसे ही इतनी

लैजाऊ अझ रामका चरणमा वाहीं शरण् पर्दछु ।
लैजान्नौ त मलाइ भित्र त कुलै- को भस्म झन् गर्दछु ॥२२३॥

सून्या येति वचन् र लक्ष्मणजिले मन्मा विचार् यो गऱ्या ।
कुल्कोनाश्नहवस् कुशल् सब रहून् क्या हुन्छ मै एक् मऱ्या ॥
ऐले भित्र त जान निश्चय पऱ्यो यस्तो विचार् खुप् गरी ।
लक्ष्मण् भित्र गया जहाँ प्रभुथिया त्रैलोक्यका नाथ्हरि ॥२४॥

द्वार्मा हाजिर छन् ऋषी भनि तहाँ बिन्ती गऱ्याथ्या जसै ।
ती काल्लाइ बिदा गरेर रघुनाथ् बाहीर आया तसै ॥
दुर्वासासित भेट् भयो जब तहाँ राम्ले नमस्कार् गरी ।
सोध्नू भो ऋषिलाइ आउनु भयो कस्तो इरादा धरी ॥२२५॥

इच्छा भोजनमा थियो ति ऋषिको सो बिन्ति गर्दा भया ।
भोजन् बक्सनुभो र भोजन गरी ऋषी खुशी भै गया ॥
यै बीच्मा तहिं संझि बक्सनुभयो राम्ले प्रतिज्ञा पनि ।
लक्ष्मण्लाइ कसोरि मारुँ अहिले यै हो विपत्ती भनी ॥२२६॥

सन्ताप् श्रीरघुनाथमा जब पऱ्यो लक्ष्मण् चरण्मा पऱ्या ।
मारीबक्सनुहोस् मलाइ भगवान् ! यो ताहिं बिन्ती गऱ्या ॥

विनती की थी, वैसे ही दुर्वासा ऋषि अत्यन्त क्रोधित होकर कहने लगे कि अभी ही मुझे राम के चरणों में ले जाओ, वहीं शरण पड़ूँगा। यदि मुझे अन्दर नहीं ले जाओगे तो मैं सम्पूर्ण वंश को (शाप से) भस्म कर दूँगा। २२३ इन वचनों को सुनकर लक्ष्मण जी ने मन में विचार किया— मेरे जैसे एक के मरने से क्या हो जायेगा, सब कुशल से रहें, वंश का नाश न हो। ऐसा विचारकर उसी समय अन्दर जाने का निश्चय किया और लक्ष्मण जहाँ प्रभु त्रैलोक्यनाथ हरि थे, अन्दर चले गये। २२४ द्वार में ऋषि की उपस्थिति की सूचना देते हुए विनती करते ही, उस काल को विदा देकर श्रीरघुनाथ बाहर निकल आये। जब दुर्वासा जी से भेंट हुई तो राम ने नमस्कार करते हुए ऋषि से प्रश्न करने की कृपा की कि आप किस विचार को लेकर यहाँ पधारे हैं। २२५ उस ऋषि का विचार भोजन की ओर था अतः विनती की कि भोजन देने की कृपा करें। तदनुसार ऋषि भोजन कर प्रसन्न होकर चले गये। इसी समय राम को प्रतिज्ञा का स्मरण हुआ और सोचने लगे कि लक्ष्मण को कैसे मालूम हो ? यह एक महान् विपत्ति आ गयी है। २२६ जब रघुनाथ को यह संताप हुआ तो लक्ष्मण ने तुरन्त चरण में पड़कर यह विनती की कि भगवन् !

ठूलो भन्नु छ धर्म हो उहि रहोस् बिन्ती गऱ्या यो जसै ।
यस्को निश्चय गर्नलाइ हुनगो ठूलो सभा एक् तसै ।।२२७।।

सब्ले बिन्ति गऱ्या बुझी हजुरमा त्याग् मात्र गर्नू हवस् ।
मारीहाल्नु त योग्यछैन अधिराज् ज्यान् आज इन्को रहोस् ।।
ज्यान् हर्नू र वियोग गर्नु इ बरा- बर् हुन् भन्याथ्या जसै ।
लक्ष्मण्लाइ पनी बिदा दिनुभयो श्रीरामजीले तसै ।।२२८।।

लक्ष्मण्जी सरयू गया तस बखत् राम्का चरण्मा परी ।
प्राणायाम् तिरमा गरीकन गया जाहाँ रहन्थ्या हरि ।।
यस् रीत्ले नरलोक छोडिकन ती लक्ष्मण् जसै ता गया ।
भेट्ना-खातिर शेषका हजुरमा ब्रह्मादि जम्मा भया ।।२२९।।

लक्ष्मण्जी सितको वियोग् जब भयो दुःखी सरीका बनी ।
साह्रै दिक्क भएर मन्त्रिहरुथ्यैं यस्तो हुकूम् भो पनि ।।
जान्छू लक्ष्मण छन् जता म त उता यो राज् भरत्ले गरून् ।
राजा भैकन जो प्रजाहरु इ छन् यिन्को सबै ताप् हरून् ।।२३०।।

जस्सै येति हुकूम् सुन्या भरतले मूर्छित् सरीका भई ।
यस्ता बिन्ति गऱ्या तहाँ भरतले राम्का हजूर्मा गई ।।

मुझे मार डालने की कृपा करें। धर्म ही महान् है, अतः प्रतिज्ञा का पालन करने की कृपा करें। जैसे ही यह विनती की गयी, तब इसे निश्चित करने के लिए एक विराट सभा का आयोजन हुआ। २२७ सबने विचार-विमर्श करने के पश्चात् विनती की कि श्रीमन्! केवल निर्वासित करने की कृपा करें। हे अधिराज! इन्हें मार डालना उचित नहीं है, अतः आज इनके प्राण रहने दें। प्राणों का हरण करना तथा पृथक करना दोनों ही समान कहे जाते हैं। ऐसे कथन को सुनकर श्रीराम जी ने लक्ष्मण जी को विदा किया। २२८ उस समय राम के चरण में नतमस्तक होकर लक्ष्मण जी सरयू की ओर चले गये। नदी के तट पर प्राणायाम् करके जहाँ हरि थे, उसी धाम को चले गये। इस प्रकार नरलोक को छोड़कर जैसे ही लक्ष्मण परमधाम पहुँचे, ब्रह्मादि शेष की सेवा में भेंट करने के लिए एकत्र हो गये। २२९ जब लक्ष्मण जी के साथ वियोग हुआ तब भगवान् राम ने अति दुखी होकर, अत्यन्त व्यथित होकर, मन्त्रियों को ऐसी आज्ञा दी कि मैं तो जहाँ लक्ष्मण गये हैं, वहीं जाता हूँ। यह राज्य अब भरत करें। वे ही राजा होकर इन सब प्रजाजनों के तापों को दूर करें। २३० जब भरत ने इस

बस्थ्याँ ख्वामितलाइ छोडि म कहाँ तीन् लोक बक्स्या पनि ।
छोरै छन् अधिराज् प्रभू ! हजुरका राज्का इनै हुन् धनी ।।२३१।।

जेठा पुत्र हजूरका इ कुश वीर् राज् कोसलैमा गरुन् ।
उत्तर्मा बसि राज् गरी इ लवले सम्पूर्णको ताप् हरुन् ।।
दूई भाइ चलाउँछन् इ जति छन् सब् राज्यको काम् यहाँ ।
दूत् जाउन् मथुरा विषे किन उसै शत्रुघ्न बस्छन् तहाँ ।।२३२।।

सूनून् लक्ष्मणको पनी ति समचार् पौंच्या परम् धाम् भनी ।
साथै जान हजूरका चरणमा दौडेर आऊन् पनि ।।
यस्तो बिन्ति हजूरमा भरतले गर्दा प्रजाले पनि ।
पाया थाह र ताप् भयो मनमहाँ जानन् कि छोडी भनी ।।२३३।।

बिन्ती एक वशिष्ठले तहिं गर्‍या लान्छन् कि छोड्छन् भनी ।
रुन्छन् सब् दुनियाँ यहाँ हजुरको पाउन् प्रसाद् ई पनि ।।
सुन्नूभो तहिं यो वशिष्ठ ऋषिले बिन्ती गर्‍याको जसै ।
ठाकुर्को पनि खुप् दया हुन गयो ती सब् प्रजामा तसै ।।२३४।।

आज्ञा को सुना तब मूर्छित के समान उन्होंने राम की सेवा में उपस्थित होकर ऐसी विनती की कि यदि मुझे तीनों लोक भी देने की कृपा करें तब भी मैं श्रीमन् को छोड़कर कहाँ रहता ? अधिराज प्रभु श्रीमन् के पुत्र हैं वे ही इस राज्य के स्वामी हैं। २३१ श्रीमन् के ज्येष्ठ पुत्र वीर कुश कोशला में राज्य करें। उत्तर में रहकर कुमार लव सम्पूर्ण लोक के ताप को हरें। ये दोनों भाई राज्य के सम्पूर्ण कार्य जो भी हों, संचालन करेंगे। मथुरा में जहाँ शत्रुघ्न रहते हैं, दूत को भेजा जाये। २३२ लक्ष्मण के परमधाम को चले जाने का समाचार भी सुन लें और आपके प्रस्थान होने की सूचना से भी अवगत हो जायें, ताकि वे तुरन्त दौड़कर आपके चरणों में आ सकें। भरत द्वारा श्रीराम की सेवा में ऐसी विनती करने पर प्रजाओं को भी उनके छोड़कर जाने की बात का पता चल गया और वे सब मन में अत्यन्त पीड़ित हुए। २३३ उसी समय वशिष्ठ जी ने विनती की कि वे सबको अपने साथ लेते जायेंगे अथवा सबको छोड़ देंगे। श्रीमन् का प्रसाद प्राप्त करने के लिए यहाँ सारा लोक रुदन करेगा। वशिष्ठ जी के द्वारा की गयी इस विनती को सुनने पर उन सब प्रजाओं के ऊपर ठाकुर (राम को) को बहुत दया आयी। २३४ बताओ, क्या इच्छा है ? सब पूर्ण करूंगा। ऐसी आज्ञा होने पर सबने साथ जाने के लिए प्रभु से विनती की, और

इच्छा क्या छ बताउ पूर्ण गरुँला भन्न्या हुकूम् भो पनि ।
सब्ले बिन्ति गर्न्या प्रभू सित तहाँ सब् साथ जान्छौं भनी ।।
इच्छा पूर्ण हवस् भनी हुकुम भो सब् ती प्रजा खुश् भया ।
उत्तर् कोसलमा दुवै ति कुश लव् राज् गर्न खातिर गया ।।२३५।।

केही दूत् मथुरा तरफ् प्रभुजिले जल्दी पठाईदिया ।
दूत् पौंच्या रघुनाथका हुकुमले शत्रुघ्न जाहाँ थिया ।।
दूत् देखी समचार् सुन्या प्रभुजिको शत्रुघ्न जीले जसै ।
छोरालाइ रजाइँ दीं प्रभुजिथ्यैं ती जान आँट्याँ तसै ।।२३६।।

जेठा पुत्र सुबाहुलाइ मथुरा नै राजधानी दिया ।
युप्लाई विदिशा दिया र ति गया जाहाँ रघूनाथ् थिया ।।
जल्दी गैकन पाउमा परि तहाँ यो बिन्ति लाया पनि ।
साथै जान भनेर आज रघुनाथ् आयाँ हजूर्मा भनी ।।२३७।।

लौ मध्याह्न हुँदा तयार् भइ रह्या यस्तो हुकूम् भो तहाँ ।
आया राक्षस ऋक्ष वानरहरू सब् एति सुन्दा महाँ ।।
जान्छौं आज सँगै प्रभो ! हजुरका यै बिन्ति सब्ले गर्न्या ।
सुग्रीव्जी पनि बिन्ति गर्न रघुनाथ्- जीका अगाडी सर्न्या ।।३८।।

अङ्गद्लाइ रजाइँ दीकन यहाँ जाँलाँ म साथै भनी ।
आयाको छु दयानिधान् ! हजुरमा यो बिन्ति लाया पनि ।।

प्रभु ने सबकी इच्छा पूर्ण होने का आशीर्वाद दिया । वे सब प्रजाजन भी प्रसन्न हुए । उत्तर कोशल में वे दोनों कुश और लव राज्य करने के निमित्त चले गये । २३५ कुछ दूतों को प्रभु जी ने मथुरा की ओर तुरंत भेज दिया । रघुनाथ जी की आज्ञा से दूत शत्रुघ्न के समक्ष पहुँचे । जैसे ही शत्रुघ्न जी ने दूत के द्वारा प्रभु जी का समाचार सुना, उन्होंने भी अपने पुत्र को राज्य सौंपकर प्रभु जी के साथ जाने की तैयारी की । २३६ ज्येष्ठ पुत्र सुबाहु को मथुरा की राजधानी सौंप दी । और यूप को विदिशा सौंपने के पश्चात् वे शीघ्र रघुनाथ के पास चले गये । तुरन्त जाकर पाँवों में पड़कर यह विनती की कि—हे रघुनाथ ! मैं आज आपके साथ जाने के लिए सेवा में उपस्थित हुआ हूँ । २३७ मध्याह्न होने पर तैयार रहने की आज्ञा दी गयी । यह सुनते ही सब राक्षस, रिक्ष तथा वानर आदि आ पहुँचे और सबने सेवा में यही विनती की कि प्रभु ! हम भी सब साथ ही चलेंगे । सुग्रीव जी भी रघुनाथ जी के सम्मुख विनती करने हेतु अग्रसर हुए । २३८ उन्होंने अनुरोध किया कि अंगद को राज देकर मैं

सुग्रीव्को अरुको ति ऋक्षहरुको बिन्ती सुन्याथ्या जसै ।
प्यारा भक्त जहाँ विभीषण थिया ताहाँ गया राम् तसै ॥२३९॥

ताहाँ गैकन यो हुकूम् पनि भयो बस्नू तिमीले यहीं ।
प्रारब्धै बलवान छ जान सबको छुट्तैन सो ता कहीं ॥
जाहाँसम्म रहन्छभूमि तहिं तक् राज् गर्नु याहीं बसी ।
शिक्षा गर्नु सबै प्रजाकन बहुत् अन्यायिलाई कसी ॥२४०॥

यस्को उत्तर छैन चुप् रहु भनी हूकूम् भएथ्यो जसै ।
तेसै ठाउँ महाँ तुरुन्त हनुमान् जीलाइ देख्या तसै ॥
हूकूम् भो हनुमानलाइ हनुमान्! चीरञ्जिवी भै रह्या ।
मेरो जुन् छ हुकूम् उ गर्न सब दिन् अत्यन्त तत्पर् भया ॥२४१॥

बुद्धीमान् तहिं जाम्बवान् पनिथिया जालाँ म साथै भनी ।
तिन्लाई पनि यो हुकूम् हुन गयो बस्नू तिमीले पनि ॥
द्वापर्मा कछु युद्ध गर्नु तिमिथ्यैं पर्न्याछ सोही गरी ।
स्वर्गमा तिमि जाउला पछि भन्या ऐले त यस्तै परी ॥२४२॥

यस्ता रीत् सित जो अह्राउनु थियो सो सब् अह्राई वरी ।
सब् प्राणीहरु साथमा हिंड भनी हूकूम् भयो तेस् घरी ॥

भी साथ जाऊँगा। अतः दयानिधान, मैं श्रीमन् की सेवा में आया हूँ। इस प्रकार सुग्रीव तथा अन्य रिक्ष आदिकों का कथन सुनने के बाद राम, उनके परम भक्त विभीषण जहाँ थे, वहाँ चले गये। २३९ वहाँ जाकर आज्ञा देने की कृपा की कि तुम यहीं रहना। समय अत्यन्त बलवान है, अतः कहीं भी सबको छुटकारा नहीं मिलता। इसे जानो। जब तक धरती रहेगी तब तक यहीं रहकर रास करना। सब प्रजाजनों को शिक्षा देना और अन्यायियों को अनुशासित करना। २४० इसका कोई उत्तर नहीं है! अतः जैसे ही चुप रहने के लिए आज्ञा देने की कृपा की, उसी स्थान पर तुरन्त हनुमान जी को उपस्थित पाया। हनुमान को आज्ञा दी कि हे हनुमान! चिरंजीवी होकर रहो और मैं जो कहूँ उसका पालन करने के लिए सदैव तत्पर रहना। २४१ बुद्धिमान जामवंत भी साथ ही जाने के उद्देश्य से वहाँ आ गये थे परन्तु उन्हें भी वहीं रहने की आज्ञा हुई, कहा कि द्वापरयुग में तुम्हारे साथ युद्ध करना होगा और उसके समापन होने पर तुम स्वर्ग को जाओगे, अतः अभी इसी प्रकार रहो। २४२ इस रीति से जो कुछ भी बताना था, सब कहने के पश्चात् सब प्राणियों को साथ में चलने की आज्ञा दी। श्रीरघुनाथ की आज्ञा सुनकर

हूकूम् श्रीरघुनाथको जब सुन्या आनन्द मानी तब ।
आफाफ्ना परिवार् लिएर सँगमा जम्मा भए ती सब ।।२४३।।

आफ्ना पुरोहित् ति वशिष्ठलाई ।
हूकूम् भयो मङ्गल गर्नलाई ।।
मङ्गल् अनेकन् ऋषिले गराया ।
राम् स्वर्ग जानाकन निस्कि आया ।।२४४।।
सीताजिले रूप अघिको छिपाइन् ।
लक्ष्मी भई वाम्तिर बस्न आइन् ।।
दक्षिण् तरफ् भूमि बसिन् हरीका ।
सब् ताहिं आया भुवनै भरीका ।।२४५।।
शस्त्रास्त्र सब् ती पनि रूप धर्दै ।
हिंड्दा तहाँ मंगल शब्द गर्दै ।।
गायत्रि चार् वेद् पनि ताहिं आया ।
रूप् धारि मंगल् यश शब्द गाया ।।२४६।।
जो ता अयोध्या पुरवासि थीया ।
तिन्ले सँगै सब् परिवार लीया ।।
बालो बुढो कोहि रहेन ताहाँ ।
सब्को गयो मन् उहिं राममाहाँ ।।२४७।।
सुग्रीव्हरू वानर मुख्य आया ।
सब् पाप छूट्यो भनि हर्ष पाया ।।

सब आनन्दित हुए और अपने-अपने परिवारों को साथ लेकर वे सब एकत्रित हुए । २४३ अपने पुरोहित वशिष्ठ को मंगल करने के लिए आज्ञा दी । ऋषि ने भी अनेक प्रकार से मंगल किया । भगवान् राम ने स्वर्ग जाने के लिए प्रस्थान किया । २४४ सीता जी ने पहले के रूप का त्याग किया और लक्ष्मी बनकर बाँयीं ओर बैठने के लिए आ गयीं । हरि के दक्षिण की ओर धरती विराजमान् हुई । भुवन भर के सब प्राणी वहीं आ गये । २४५ शस्त्रास्त्र भी सब रूप धारण करते हुए मंगल-शब्दों का उच्चारण करते हुए चले । गायत्री तथा चार वेद सभी आये और रूप धारणकर मंगल-यश का गान करने लगे । २४६ जो अयोध्यापुरी के निवासी थे, उन्होंने सब परिवारों को साथ ले लिया । बाल-वृद्ध कोई भी वहाँ शेष नहीं रहा । सभी के मन भगवान् राम में समा गये । २४७ सुग्रीव तथा वानर आदि मुख्य रूप से आये और यह

जो लोक् थियो राम्सित जान गैगो ।
गुल्जार् अयोध्या पनि शून्य भैगो ॥२४८॥
छोडी शहर् क्यै गइ भूमिमाहाँ ।
देख्या प्रभूले सरयू र ताहाँ ॥
आफ्नो विराट् रूप्कन संझिलीया ।
आफै त सब्का पनि नाथ थीया ॥२४९॥
ब्राह्मा ऋषी देव र सिद्ध आया ।
आकाश् विमान्ले भरि छुट्टिट छाया ॥
श्रीराम् उपर् खुप्सित पुष्पवृष्टि ।
सब् गर्न लाग्या उहि लाइ दृष्टि ॥२५०॥

गाऊँछन् कहिं नाच्तछन् प्रभुजिकै यश् मात्र कीर्तन् गरी ।
यै बीच्मा रघुनाथ् पस्या सरयुमा सब्का अगाडी सरी ॥
ब्रह्माको पनि ताहिं औसर पऱ्यो हात् जोरि बिन्ती गरऱ्या ।
सब्को ताप् अब गैगयो सकल लोक् आनन्द सागर् पऱ्या ॥२५१॥
स्वामित्ले अब विष्णुको रुप लिने बेला भएथ्यो भनी ।
पाऱ्या बिन्ति र होइ बक्सनु भयो श्रीराम् चतुर्भुज् पनि ॥
जो शत्रुघ्न भरत् थिया दुइ जना ती शंख चक्रै बनी ।
स्वामित्का तहिं बाहुमा बसिगया बस्न्या यहीं हो भनी ॥२५२॥

जानकर कि सब पापों से छुटकारा मिला, अत्यन्त हर्षित हुए। राम के साथ जो जानेवाले थे, सब साथ चले गये। रमणीक अयोध्या में निस्तब्धता छा गयी। २४८ शहर छोड़कर कुछ दूर चले जाने के बाद प्रभु ने सरयू के दर्शन किये और वहाँ अपने विराट् रूप का स्मरण किया, जो स्वयं ही सबके नाथ थे। २४९ ब्रह्मा, ऋषि, देव तथा सिद्ध लोग भी आये। आकाश विमानों से घिर गया। श्रीराम के ऊपर महान् पुष्प वृष्टि की गयी। सब लोग उन्हीं की ओर दृष्टि लगाये थे। २५० सब लोग प्रभु के यश का कीर्तन और नृत्य करते हैं। इसी बीच श्रीरघुनाथ ने सबके समक्ष आगे बढ़कर सरयू में प्रवेश किया। ब्रह्मा को भी वही अवसर प्राप्त हुआ और हाथ जोड़कर विनती की। सबका ताप अब हरण हो गया है तथा सकललोक आनन्दसागर में मग्न है। २५१ श्रीमन् द्वारा अब विष्णु का रूप धारण करने का समय हो गया है। ऐसी विनती करने पर चतुर्भुज श्रीराम ने हँसने की कृपा की। शत्रुघ्न और भरत दोनों शंख और चक्र बन गये और स्वामी की बाँहों में विराजमान

ब्रह्माण्डै सब देवगण् खुशि भया यो रूप देख्या जसै ।
ब्रह्मालाइ हुकूम् गऱ्या प्रभुजिले सब् प्राणि खातिर् तसै ॥
हे ब्रह्मन् जति जन् थिया शहरमा सब् साथ छान्छौं भनी ।
आया सब् परिवार् लिएर सँगमा लाग्या पछाडी पनि ॥२५३॥
यिन्लाई शुभ लोक देउ तिमिले सत् लोकमा बास् गरून् ।
आफ्ना सब् परिवारले सँग रही आनन्दमा ई परून् ॥
ब्रह्माले प्रभुको हुकूम् यति सुनी हूकुम् शिरोपर् लिया ।
सब्लाई सुखभोग गर्नकन एक् लोकै खटाई दिया ॥२५४॥
ती लोक्ले पनि खुश् भएर सरयू- मा स्नान सब्ले गऱ्या ।
जुन् सान्तानिक लोक हो उहिं पुगी आनन्दमा ती पऱ्या ॥
सुग्रीव् सूर्य्यविषे गई मिलिगया अंशै हुनाले गरी ।
भूभार् यै रितले हरेर रघुनाथ् वैकुण्ठ पौंच्या हरि ॥२५५॥
येती मात्र कह्या सदाशिवजिले ती पार्वतीथ्यै पनि ।
जस्ले यस्कन पाठ गर्छ मनले अत्यन्त खूशी बनी ॥
तिन्का जन्म सहस्रका जति त छन् पाप् भस्म हुन्छन् भनी ।
सब् षट्शास्त्र बताउँछन् पढिलिया तर्छन् दुनीयाँ पनि ॥२५६॥

हो गये, क्योंकि उनका वही स्थान था। २५२ ब्रह्मा के सब देवगण उस रूप को देखकर प्रसन्न हुए। प्रभु जी ने सब प्राणियों के लिए ब्रह्मा को आज्ञा दी। हे ब्रह्मा! शहर में जो लोग थे सब साथ चलने के लिए सब परिवारों को साथ लेकर पीछे-पीछे चले आये हैं। २५३ इन्हें तुम शुभ लोक दे देना जिसमें ये सब जन रहें। अपने सब परिवारों के संग रह कर आनन्द में मग्न रहें। प्रभु की इस आज्ञा को सुनकर ब्रह्मा ने इसे शिरोधार्य किया। सबको सुख भोग करने हेतु एक लोक ही की सृष्टि कर दी। २५४ उस लोक में भी सबने प्रसन्न होकर सरयू में स्नान किया। जो सांतातिक (वंश उत्पन्न करनेवाले) जन थे, वहाँ पहुँचकर आनन्द में मग्न हो गये। सुग्रीव सूर्य का अंश होने के कारण उसीमें जाकर विलीन हो गये। इस रीति से भू-भार को हरण करके श्रीरघुनाथ वैकुण्ठपुरी पहुँचे। २५५ सदाशिव ने पार्वती जी से कहा कि जो मन से इस राम-चरित्र को अत्यन्त महान् समझकर इसका पाठ करता है उनके सहस्र जन्मों के पाप जो कुछ भी हों, सब भस्म हो जाते हैं। सब षटशास्त्रों का कथन है कि इसके पाठ से संसार से तरण हो जाता है। २५६ शम्भु द्वारा पार्वती को अत्यन्त प्रसन्न होकर प्रेमपूर्वक कही गयी ये सब बातें

शम्भूले पार्वतीथ्यैं खुशि भइ बहुतै प्रेम पूर्वक् कह्याको ।
संसार् पार् तर्नलाइ सबकन सजिलो साँघु झैं भै रह्याको ॥
जानी यस्‌लाइ जो ता जनहरु बहुतै प्रेमले पाठ गर्छन् ।
संसार्का सौख्य सब् भोग् गरिकन दुनियाँ सब् सहज् पार तर्छन् ॥

॥ श्री उत्तरकाण्ड समाप्त ॥

सबके लिए संसारपार तरने के लिए एक सरल मार्ग रूप हैं। इसे जानकर जो लोग अत्यन्त प्रेम से पाठ करते हैं, संसार के सब सुखों को भोगकर संसार से तर जाते हैं। २५७

॥ भानुभक्त विरचित नेपाली रामायण समाप्त ॥